अनुक्रमणिका / Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल 06

03. सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 07

04. निर्णायक मण्डल 08

05. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

06. 10 Beautiful And Rare Plants Have Found In Hamidia College, Bhopal (M.P.) 12
(Prof. Nirbhay Sing Solanki, Prof. S.C. Mehta)

07. Seasonal Variations In The Zooplanktons Diversity Of River Berach, Chittorgarh, Rajasthan 16
(Poonam Shrimali, R.K. Dashora)

08. Impact Of Zinc Sulphate On Behavioral Responses On The Freshwater Fish Labeo Rohita 19
(Poonam Shrimali, R.K. Dashora)

09. Human Health And Disease (Yashavini Lawania) 22

10. Working Of Space And Virtual Space Mouse (Ushmita Nigam) 24

(Home Science / गृह विज्ञान)

11. Screening Management Of Severe Acute Malnutrition 27
(Dr. Rashmi Shrivastava, Swati Jyotishi)

12. Adolescent Adjustment With Self, Peer Group And School As A Correlate 29
Of Prosocial Behavior Among Adolescents (Dr. Ankita, Dr. Chandra Kumari)

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

13. Comparative Analyse of Customer's Satisfaction regarding Milk Products in 35
'Bhilwara- Chittorgarh Dugdh Utpadak Sahakari Sangh Ltd' Saras and 'Gokul Dairy'
(Dr. N.S. Rao, Shruti Mathur)

14. Comparative Analysis Of Job Satisfaction Of The Employees In BSL & Mayur Fabrics 38
Industry (Dr. N.S. Rao, Shruti Mathur)

15. Technological Development In Indian Banking (Dr. Jaya Sharma) 42

16. Indian Tax Policy : Risk & Challenges(Dr. Pradeep Chaurasia) 45

17. Structure Of Capital Market In India During The Globalisation 47
(Dr. Ratneshwar Prasad Dwivedi, Dr. Abhay Kumar Pandey)

18. International Accounting Standards (Dr. Vivek Patel, Dr. Pallavi Mishra) 49

19. SEZ In India (Dr. S.K. Maheshwari, Ankita Pipada) 52

20. Impact Of Globlization In India (Dr. S.K. Maheshwari, Ankita Pipada) 55

21. India's Capital Market (Dr. S.K. Maheshwari, Trapti Maheshwari) 57

22. प्रधानमंत्री रोजगार योजना के माध्यम से लाभांवित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित रोजगार के नवीन अवसरों का विश्लेषण (डॉ. लक्ष्मण परवाल, डॉ. गेन्दालाल चौहान) 60

23. प्रधानमंत्री रोजगार योजनांतर्गत स्थापित की गई इकाईयों की लाभदायकता का विश्लेषण (मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. लक्ष्मण परवाल, डॉ. गेन्दालाल चौहान) 63

24. मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम का क्रियान्वयन (शाजापुर जिले के विशेष संदर्भ में एक विश्लेष्णात्मक अध्ययन) (डॉ. केशव मणि शर्मा) 68

25. आदिवासी बहुल जिले अलीराजपुर में पर्यटन विकास की संभावनाएं (डॉ. केशव मणि शर्मा) 71

26. मानवाधिकार एवं भारत में खाद्य सुरक्षा कानून 2013 (डॉ. आर. के. वर्मा) 74

27. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित,का कृषि वित्त में योगदान (धार जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. हेमसिंह मण्डलोई) 77

28. घड़ी व्यवसाय का वर्तमान स्वरुप एवं संभावनाएँ (इन्दौर नगर के विशेष संदर्भ में)(डॉ. राकेश माथुर, गौरव राठौर) 80

29. भारतीय कृषि : नीतियॉं, योजनाऐं , चुनौतियाँ एवं संभावनाऐं (डॉ. मनोहरलाल गुप्ता) 82

30. आर्थिक वैश्वीकरण का भारत पर प्रभाव (डॉ. आर.के. गुप्ता) 84

31. समूह –वर्तमान प्रबन्धन की महती आवश्यकता (डॉ. दिनेश कुमार चौधरी) 86

32. जल संग्रह करने के प्रयास में पानी रोको अभियान का योगदान (थांदला ब्लॉक के संदर्भ में) (डॉ. सतीश माहेश्वरी, मोहनसिंह वास्केले) 88

33. धार कृषि उपज मण्डी की वित्त व्यवस्था का अध्ययन (डॉ. सतीश माहेश्वरी, मोहनसिंह वास्केले) 90

34. कृषि उपज मण्डी समिति बदनावर का आय–व्यय (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन) (डॉ. सतीश माहेश्वरी, मोहनसिंह वास्केले) 92

35. भील जनजाति में सोने चांदी के आभूषणों का उपयोग एवं महत्व(म.प्र. की जनजाति के संदर्भ में) (डॉ. सतीश माहेश्वरी, तृप्ति माहेश्वरी) 95

36. पलायन आजीविका : समस्याएं और सुझाव (भारत के संदर्भ में) (डॉ. सतीश माहेश्वरी, तृप्ति माहेश्वरी) 97

37. भारत में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की स्थिति का अध्ययन (डॉ. सतीश माहेश्वरी, किशोर मोरे) 99

(Economics / अर्थशास्त्र)

38. Socio Economic Conditions, Diet And Nutrient Intake Of Lactating Mothers Residing In Rural Area Of Chhindwara District (Archna Mathewe) 101

39. Changing World By Women In Cooperatives (Dr. Preeti Joshi) 105

40. Effect Of Devaluation Of Indian National Rupee On Saving And Consumption Pattern Of Common Man : A Meticulous View (Visarg Mishra) 106

41. अर्थव्यवस्था और पर्यटन (डॉ. अनीता कौशल) 110

42. निर्वाह योग्य विकास की अवधारणा (सीमा नागर) 112

43. भारत में कृषि के विकास के लिये योजनाऐं, नीतियाँ एवं कार्यक्रम – एक अध्ययन(डॉ. आर. एस. मण्डलोई) 114

44. महिला सशक्तिकरण में स्वसहायता समूह की भूमिका (डॉ. ए. के. पाण्डेय) 117

45. भारत में बढ़ती जनसंख्या एवं उसका आर्थिक प्रभाव (नमिता गुप्ता) 119

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

46. सामाजिक न्याय का स्वरूप और भारतीय दर्शन (डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह) 121
47. दलितों के मसीहा : बाबा साहेब अम्बेडकरव्यक्तित्व एवं कृतित्व : एक मूल्याकंन (डॉ. अनिल कुमार जैन) 124
48. भारत में समाजवादी क्रांति के उन्नायक डॉ.राममनोहर लोहिया (डॉ. अनिल कुमार जैन) 127
49. मानवेन्द्रनाथ राय का नव मानववाद (डॉ. अनिल कुमार जैन) 130
50. भारतीय राजनीति व क्षेत्रीयतावाद (डॉ. सिंधु लाहोरिया) 133
51. पं. जवाहर लाल नेहरू का चिंतन (डॉ. मीनाक्षी व्यास) 136
52. न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया में बदलाव की प्रस्तावित अवधारणा (डॉ. श्रीकांत दुबे)..... 137
53. एक समान नागरिक संहिता एवं महिला अधिकार (डॉ. ममता शर्मा) 139
54. विवेकानन्द का राजदर्शन : एक अध्ययन (प्रो. हरीसिंह कुशवाह, प्रो. भावना कुशवाह) 142

(Sociology / समाजशास्त्र)

55. Family And Status Of Muslim Women In Bhopal 145
(Dr. Indira Burman, Mudassir Assad, Shabeer Ahmad Ganaie)
56. महिलाओं के विरुद्ध घरेलु हिंसा – निर्णय का अधिकार (कृष्णा शर्मा) 148
57. भारतीय जनजाति के सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन में विकास योजनाओं की भूमिका (डॉ. कंचन ठाकुर) 150
58. वैश्वीकरण का भारतीय समाज में सामाजिक आर्थिक प्रभाव (प्रो. प्रिशिला अन्देय्स) 152
59. महिलाओं की सामाजिक स्थिति एवं पुलिस का अपेक्षित व्यवहार (डॉ. राजश्री शाह) 153
60. न्याय में विलंब– कारण एवं परिणाम (संध्या देव) 154
61. विशेष पिछड़ी भारिया जनजाति के विकास में भारिया विकास प्राधिकरण की भूमिका (डॉ. इंदिरा बर्मन, कंचन ठाकुर) 155
62. शिक्षा के द्वारा ही महिला उत्थान एवं सशक्तिकरण (जागृति आर्य) 157
63. बालश्रम एवं कानूनी दृष्टिकोण (अंशुल खरे) 158

(History / इतिहास)

64. Contibution Of Jabalpur In The Quit India Movement (Dr. Madhumita Bhattacharya) 160
65. दमोह जिले का भौगोलिक इतिहास (डॉ. सुनिता शुक्ला) 162
66. शैव धर्म का उद्‌भव और उत्कर्ष (डॉ. जगमोहन सिंह पूषाम) 165
67. मुगल काल में बादशाह के विशेषाधिकार (प्रो. आकाश ताहिर) 169
68. प्रशासन का लोक कल्याणकारी स्वरुप –एक ऐतिहासिक अध्ययन (डॉ. बिंदिया महोबिया) 171
69. गोंड जनजाति एवं धार्मिक परंपराएँ(छिन्दवाड़ा जिले के विशेष संदर्भ में) (धनाराम उइके) 174

(Geography / भूगोल)

70. Implementation Of FRA And Its Implications In Madhya Pradesh (Dr. Prabhakar Mishra) 178

71. कृषि में तकनीकी नव प्रवर्तन : मन्दसौर जिले के सिंचाई विकास के संदर्भ में स्थानिक तथा कालिक विश्लेषण 180
(डॉ. अख्तर बानो)

72. महिला सशक्तिकरण : दशा एवं दिशा (दीप्ति यादव, डॉ. एस.एस. बघेल) 183

73. भारत की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में (10वीं, 11वीं, और 12 वीं) कृषि एवं ग्रामीण विकास 185
(दीप्ति यादव, डॉ. एस. एस. बघेल)

(Music / संगीत)

74. संगीत (डॉ. श्रीपाद् आरोणकर) 188

75. संगीत में मल्हार एवं वर्षा चौमासा(डॉ. बी. वर्षा) 190

(Psychology / मनोविज्ञान)

76. Study Of Awareness About RTI And Media (Dr. Mamta Barman) 192

77. क्रीड़ा कौशल विकास: मनोवैज्ञानिक विश्लेषण (सुधा शाक्य) 193

(Drawing / चित्रकला)

78. भारतीय मानवाकृतियों का अद्भुत सौंदर्यीकरण– 'अजंता'(डॉ. यतीन्द्र महोबे) 195

(Philosophy / दर्शनशास्त्र)

79. सामाजिक विकृतियों को दूर करने में धर्म की भूमिका (डॉ. पुष्पा कपूर) 198

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

80. आधुनिक हिन्दी कहानी के बदलते स्वरूप : विशेष संदर्भ,प्रेमचंद व जैनेन्द्र की कहानी (डॉ. अमित शुक्ल) 199

81. जबलपुर के पत्रकार और पत्रकारिता : जन–संवेदना, जन–मानस की अभिव्यक्ति का 'मिशन'(डॉ. लक्ष्मीकान्त चंदेला) ... 202

82. संघर्ष और मानव – मूल्य (डॉ. टीकमणि पटवारी) 204

83. नवजागरण कालीन नारी चिंतन और प्रेमचन्द के उपन्यास साहित्य में नारी विमर्श (डॉ. इन्दु हुड्डा) 206

84. महिलाओं पर होने वाले अत्याचार एवं उनके निवारण का विवेचनात्मक अध्ययन 208
(डॉ. पी. एस. परमार, डॉ. मनोज कनेरिया)

85. गोविन्द मिश्र के कथा–साहित्य में सामाजिक चेतना (सरिता देवी) 211

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

86. Indian Thought And Emerson's 'Brahma' (Dr. Ashwani Kumar Bajpai) 215

87. Reasoning And Mysticism In Amitav Ghosh's' The Calcutta Chromosome 217
(Dr. Saurabh Emmanuel Lal)

88. Reflections Of Indian Tradition And Culture In Rama Mehta's Inside The Haveli 220
(Dr. Swati Chandorkar)

89. Impact Of Environmental Pollution On Human Life(Dr. Manjari Agnihotri) 222

(Education / शिक्षा)

90. बी. एड. प्रशिक्षणार्थियों में प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता 224
एवं समर्पण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. सुशीलकुमार शमा, जसवंतसिंह)

(Others / अन्य)

91. गोधनं राष्ट्रवर्धनम् (डॉ. नितिन सहारिया, डॉ. उमाशंकर पटेल) 227

92. छिन्दवाडा जिले में आदिवासी विकास परियोजनाओं के आर्थिक एवं सामाजिक प्रभाव का विश्लेषण (डॉ. आलोक यादव) 230

93. जलसत्ता : वर्तमान युग की मॉग (आर.एन.श्रीवास्तव) 235

(Naveen Shodh Sansar / नवीन शोध संसार)

94. Guideline for Authors/Research Scholars 237

95. Copyright Agreement Form 238

96. Membership Cum Author's Bio-Data Form 239

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(02) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(03) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(04) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(10) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(13) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(17) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(19) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. शिव कुमार दुबे ..... प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(23) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(25) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(29) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारीया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्डरे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार .... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

****

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अशोका श्रीवास्तव .... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर .... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता ..... अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(18) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

नवीन शोध संसार के बढ़ते कदम

मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा के नये आयाम–विशेषांक का विमोचन करते हुए
माननीय श्री दीपक जोशी (उच्च शिक्षा राज्य मंत्री) म.प्र. शासन, माननीय श्री ओमप्रकाश सकलेचा (विधायक) जावद, (म.प्र.) आशीष शर्मा (सम्पादक) नवीन शोध संसार, नीमच (म.प्र.)

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. वी. कुलश्रेष्ठ, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

**** प्रबंध संकाय ****

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

**** व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. कमलेश श्रीवास्तव, विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरार, ग्वालियर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा (प्रोक्टर),** विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(3) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मदनलाल पंवार,** पूर्व प्राचार्य शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डी.डी. विश्वकर्मा, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

✲✲✲ *गृह विज्ञान संकाय* ✲✲✲

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो.डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✲✲✲ *शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

✲✲✲ *शारीरिक शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *ग्रन्थालय विज्ञान संकाय* ✲✲✲

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डी.एस. फिरोजिया ..... शासकीय महाविद्यालय, रामपुरा, जिला नीमच (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ.पी.डी. ज्ञानानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ.गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. अरूणा दुबे ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. कहकशा खान ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) डॉ. भारती जोशी ..... अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नीतिन साहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. नटवरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. श्रीमती भारती खरे ..... एस.एस.एल. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, विदिशा (म.प्र.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरकुमार जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, मऊगंज, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. रामचन्द्र चौहान ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(88) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(89) श्रीमती सुमन वशिष्ठ ..... राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

10 Beautiful And Rare Plants Have Found In Hamidia College, Bhopal (M.P.)

Prof. Nirbhay Sing Solanki * **Prof. S.C. Mehta** * *

Abstract - 10 Beautiful plants like a *Putranjiva roxburghii ,Dillenia indica,Coroupita guianensis,Revanala madagascariensis, Cordia sebestena ,Bauhinia acuminate,Gardenia gummifera,Erythrina variegate, Cananga odorata,saraca indica.* Some plants are exotic as well as indiginous. These plants are very rare in Central part of India. some plants have medicinal and ornamental value along with cultural value in Hindu Mythology.
Keywords - Exotic,Indiginous, Mythology,Prodogious.

Study Area - Hamidia College campus, Bhopal:- The geographical location of the Bhopal City lies within North Latitude 23 Degree 16' and East Longitude 77 degree 36'.The location of Bhopal falls in the northwestern portion of Madhya Pradesh. Bhopal is the central most region of the India . The city of Bhopal shares its border with two large lakes. Like few other big cities of the country, Bhopal is also divided into two parts- the old City and the new one. Hamidia College is situated near chhota talab, Budhwara, hamidia college is lead college of Bhopal.

Methodolgy - I have taken Photographs by Digital Camera.

Descriptions Of Plants –

1. Plant Botanical name- *Cananga odorata*, commonly called ylang-ylang.family-annonaceae. Cananga tree, ilang-ilang, *kenanga* in Indonesian , fragrant cananga, Macassar-oil plant or perfume tree. The ylang-ylang is a large tree, to 10-16 m tall, which produces highly fragrant flowers. Leaves are dark green, up to 20 cm in length, alternate, simple, entire, elliptic-oblong, slightly pubescent, and with a prominent midrib and drip tip. It flowers throughout the year in axillary, umbellate hanging clusters of 4–10 flowers.The flower has three sepals and six petals up to 8 cm long. The petals are twisted when young, then limp and drooping when mature. Flowers are very fragrant, greenish yellow at first, then turning a deep yellow/yellow brown when mature.

Uses- One of the most popular uses for *Cananga odorata* medicinally is for the circulatory and nervous system. The plant is said to lower the user's blood pressure and also to slow a rapid heartbeat, whether it is brought on by stress, anger, or anxiety. It is also used to control heart palpitations as well as anxiety.

2. Plant botanical name- *Putranjiva roxburghii* , Other name- Putranjiva , *Putranjivaceae* (Puranjiva family).

Indian Subcontinent (India, Pakistan, Bangladesh, Nepal, Sri Lanka), Indochina, Malaysia, Indonesia, New Guinea.Putranjiva is a famous, moderate-sized, evergreen tree, growing up to 12 m in height. It has pendant branches and dark grey bark having horizontal lenticels. Leaves are simple, alternately arranged, dark green, shiny, elliptic-oblong, distantly serrated. Male flowers, with short stalks, in rounded axillary clusters, female flowers 1-3 in leaf axil. Fruits ellipsoid or rounded drupes, white velvety; seed normally one, stone pointed, rugose, very hard.

Uses- Bark and leaves used as medicine; leaves and fruits used as medicine for rheumatism. It is used in colds and fevers. They are believed to be productive of impregnation. Leaves and stems are given in decoction for cold, fever, and rheumatism.

3. Plant Botanical name *Ravenala madagascariensis*, other name- Traveler Tree, Family-Strelitziaceae.

Traveler tree is a species of plant from Madagascar, It is not a true palm (family Arecaceae) but a member of the bird-of-paradise family, Strelitziaceae.*Ravenala madagascariensis* is the sole member of the genus ***Ravenala***, and is closely related to the southern African genus *Strelitzia* and the South American genus *Phenakospermum* Some older classifications include these genera in the banana family (Musaceae).

Tree 3-7 m long leaves distichous , spreading out fan–wise lamina ovate–oblong, truncate at apex ,broadly rounded-subcordate at base,.inflorescence arising from axis ,flower sessil. Outer tapels 3, yellow inner tapels three, free. Anther long than the filaments. Capsules loculicidally 3-volved . Seed with a blue or purple fimbriate aril.

Uses-Tea made from young leaves are drunk at night against diabetes. Seed has been found to have antiseptic properties.

4. Plant Botanical name- *Gardenia gummifera* , other name-Dekamali , Rubiaceae (coffee family).

Gardenia is a genus of about 250 species of flowering plants. They are evergreen shrubs and small trees growing to 1-15 m tall. The leaves are opposite or in whorls of three or four, 5-50 cm long and 3-25 cm broad, dark green and glossy with a leathery texture. The flowers are solitary or in small clusters, white or pale yellow, with a tubular-based corolla with 5-12 lobes (petals) from 5-12 cm diameter.

Uses- The gum resin of Nadihingu has great medicinal value and is used for medicinal purpose, externally as well as internally. The gum powder mixed with honey is used to

*Asst.Prof. (botany) Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) ** Prof. (Botany) Govt. P.G. College, Jaora (M.P.) INDIA

massage the gums in teething troubles. It is also an effective painkiller, antiseptic as well as a wound healer, used in the dental aches and infections.

5. Plant botanical name- *Dillenia indica*, other name- Elephant tree, family-Dilleniaceae (Karmal family).

Elephant Apple is an evergreen large shrub or small to medium-sized tree growing to 15 m tall. It is native to southeastern Asia, from India and Sri Lanka east to southwestern China and Vietnam, and south through Thailand to Malaysia and Indonesia. The leaves are 15-36 cm long, with a conspicuously corrugated surface with impressed veins, like potato chips. The flowers are large, up to 4- 5 inches across, with five white petals and numerous yellow stamens. Flowers arise solitary at the ends of the twigs, facing downward. The sepals are rounded and yellowish green. The fruit is a 5-12 cm diameter aggregate of 15 carpels, each carpel containing five seeds embedded in an edible pulp. The fruit pulp is used in Indian Cuisine in curries, jam, and jellies.

Uses-Fruit juice is mixed with sugar is used as cooling beverage against fever. Fresh fruit juice is used as a cardio tonic. Leaves and bark are used as laxative. Different leaf extracts have anti-inflammatory action.

6. Plant Botanical name- *Erythrina variegate*,Other name- Pangara, fabaceae
Subfamily: Papilionoideae.

Dapdap is a deciduous tree reaching a height of 15 meters, the branches and the branchlets stout and armed with short, few to many sharp prickles. Leaflets are broadly ovate and 7 to16 centimeter long with pointed tip and broad base .

Racemes are terminal, hairy, dens, and up to 2.5 centimeters long . flower are papilionaceous ,large and numerous. Calyx is about four centimeters long and minutely five toothed at the tip ,the mouth being very oblique. Petals are bright red and shorter than the calyx, the standard being 7to 9 centimeters long and the wings and keels sub equal. Stamen are 10, upper filaments free nearly to the base or more or less connate with others ovary many ovuled , style incurved. Racemes terminal, hairy .fruit are pods, 10 to 25 centimeters long.

Uses – 1.Decoction of leaves used for coughs and asthma.
2. Dried bark decoction or infusion in alcohol used for lumber and leg pain .
3.In the Malay peninsular ,bark used for curing toothaches, rounded and pushed in to the cavity or hollow tooth.

7. Plant botanical name- *Bauhinia acuminate*, Other name-Safed kachnar,Family- fabacae, Sub family-Caesalpiniaceae(Gulmohar- family).

The dwarf white bauhinia is native to Asia. This is a perfect little tree for places where you don't want anything wild to take over. It will grow no more than two or three meters, and won't take up much space or get in anyone's way. It really is quite inoffensive. Beautiful white flowers cover this tree in spring and fill the air with a sweet clean fragrance. The white flowers look like snowflakes hanging on the branches.

Uses-plant is used for various skin diseases, worms, tumours and diabetes.

8. Plant botanical name -*Couroupita guianensis*, Other name- Cannonball Tree, Family –lecithidaceae.

Cannonball Tree is a large deciduous tropical tree tall and indigenous to the Amazon rainforest. The leaves, up to 6" long, are simple with serrate margin.

It flowers in racemes which cauliflorus. The amazingly complex, yellow, reddish and pinks flower of the Cannonball Tree are heavenly scented - a cross between a fine expensive perfume and a wonderful flower scent. These are 3" to 5" waxy, pink and dark-red flowers growing directly on the bark of the trunk. The tree bears, directly on the trunk and main branches, large globose woody fruits. They look like big rusty cannonballs hanging in clusters, like balls on a string. The fruit contains small seeds in a white, unpleasant smelling white jelly, which are exposed when the upper half of the fruit goes off like a cover. The long dangling fruity branches give the tree an unkempt appearance.

Uses- The leaves have antibiotic,antifungal and antiseptic properties as well as bringing pain relief and are chewed to relieve toothache.

9. Plant botanical name -*Cordia sebestena*,

Other name- Lal Lasora that is native to the American tropics. It ranges from southern Florida in the United States and The Bahamas southwards throughout Central America *Boraginacceae*(Forget-me-not family).

It is native to the northern coast of South America. This plant, on account of its large tubular scarlet flowers, is one of the most beautiful of the West Indian trees. This dense, rounded, evergreen native tree grows slowly to a height of 25 feet with an equal spread and can develop a trunk 12 inches thick. The large, seven-inch-long, stiff, dark green leaves are rough and hairy, feeling much like sandpaper. Appearing throughout the year, but especially in spring and summer, are dark orange, two-inch-wide flowers which appear in clusters at branch tips.

10. Plant botanical name -*Saraca indica*, Other name- Ashoka, Family- Fabacaeae, Caesalpinioideae subfamily.Indigenous to India, Burma and Malaya, it is an erect tree, small and evergreen, with a smooth, grey-brown bark. The crown is compact and shapely. Flowers are usually to be seen throughout the year, but it is in January and February that the profusion of orange and scarlet clusters turns the tree into an object of startling beauty. Pinned closely on to every branch and twig, these clusters consist of numerous, small, long-tubed flowers which open out into four oval lobes. Yellow when young, they become orange then crimson with age and from the effect of the sun's rays. From a ring at the top of each tube spread several long, half-white, half-crimson, stamens which give an hairy appearance to the flower clusters. In strong contrast to these fiery blooms is the deep-green, shiny foliage. The foot-long leaves each have four, five or six pairs of long, wavy-edged, leaflets. Young leaves are soft, red and limp and remain pendent even after attaining full size. The ashoka tree is considered sacred throughout the Indian subcontinent, especially in India and

Sri Lanka. This tree has many folklorical ,religious and literary associations in the region. Highly valued as well for its handsome appearance and the color and abundance of its flowers, the ashoka tree is often found in royal palace compounds and gardens as well as close to temples throughout India. The ashoka tree is closely associated with the yakshi mythological beings.

Uses- The bark of Ashoka Tree is used for its medicinal value and it is reported to have a stimulating effect on the endometrium and ovarian tissue. The bark is useful in all cases of uterine bleeding where ergot is indicated.It is also useful in menorrhagia due to uterine fibroids, in leucorrhea and in internal bleeding.

Discussion -There was a botany Teacher's training in Hamidia College, Bhopal (M.P.) . During the period of training I observed such a Prodogious Art of Nature in the form of Beautiful plants in campus of this college. When I did analysis about these plants I got Information that these plants have medicinal, ornamental and cultural value in the society. These plants are very rare so we need to save them.

References -

1. http://herbs-treatandtaste.blogspot.in/2011/05/cannonball-tree-couroupita-guianensis.html
2. http://sanjeetbiotech.blogspot.in/2012/12/sanjeet-kumar-dillenia-indica-l.html
3. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Elephant%20Apple.html
4. http://en.wikipedia.org/wiki/Couroupita_guianensis
5. *ntbg.org/plants/plant_details.php*
6. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Gummy%20Gardenia.html
7. http://www.jaycjayc.com/livistona-chinensis-chinese-fanpalm/
8. http://www.toxicologycentre.com/English/plants/Botanical/vellamandram.html
9. Singh N.P, khanna k.k., mudgal v. dixit r.d.(2001) flora of m.p. vol.3 botanical survey of India
10. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Guest%20Tree.html
11. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Scarlet%20Cordia.html
12. http://www.mapsofindia.com/india/where-is-bhopal.html
13. http://en.wikipedia.org/wiki/Cordia_sebestena
14. http://en.wikipedia.org/wiki/Saraca_asoca
15. http://agroforestry.org/images/pdfs/Erythrina-coraltree.pdf
16. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Sita%20Ashok.html
17. http://www.stuartxchange.com/Dapdap.html
18. http://en.wikipedia.org/wiki/Putranjiva
19. http://herbs.indianmedicinalplants.info/index.php/sanskrit-names-of-plants
20. http://en.wikipedia.org/wiki/Cananga_odorata
21. http://en.wikipedia.org/wiki/Ravenala
22. http://www.rareflora.com/cananga.html
23. http://toptropicals.com/html/toptropicals/articles/trees/cananga.htm
24. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Ylang%20Ylang.html
25. http://in111065401.trustpass.alibaba.com/product/1 1 1 507670-101706035/Nadihingu _ Gardenia _ Gummifera .html
26. http://greencleanguide.com/2013/03/03/economic-importance-of-putranjiva-roxburghii/
27. http://botanyboy.org/the-chinese-fan-palm-livistona-chinensis/
28. http://www.rarexoticseeds.com/en/livistona-chinensis-seeds-chinese-fan-palm-seeds.html
29. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Putranjiva.html
30. http://www.ntbg.org/plants/plant _ details . php ? plantid =10217
31. http://ayurveda-foryou.com/ayurveda_herb/ashok.html
32. http://www.tropilab.com/cordia-seb.html
33. http://www.wisegeek.com/what-are-the-medical-uses-of-cananga-odorata.htm
34. http://www.weiku.com/products/3060263/Nadihingu _ Gardenia_Gummifera_.html
35. www.google.in
36. en wikipedia.org
37. http://nopr.niscair.res.in/bitstream/123456789/8532/1/IJTK%204%284%29%20345-357.pdf

1.Cananga odorata plant

2.Putranjiva roxburghii

3.Ravenala madagascariensis plant

4.Gardenia gummifera plant

5.Dillenia indica plant

Dillenia indica flower

6.Erythrina variegate plant

7.Bauhia acuminate plant

8.couroupita guianensis observe by prof.mehta

Flower couroupita guianensis

9.Cordia sebestena plant

10.saracaindica (seeta ashok)

Seasonal Variations In The Zooplanktons Diversity Of River Berach, Chittorgarh, Rajasthan

Poonam Shrimali * R.K. Dashora **

Abstract - Zooplanktons are minute aquatic animals that are non motile or are very weak swimmers. They serve as good indicators of changes in water quality. The present study was undertaken to observe the seasonal fluctuations in diversity of zooplankton of Berach river. Zooplankton study of the river was carried out on monthly basis for the period of one year from January 2011 to December 2011 at three different sampling station of the river. Zooplanktons were sampled using plankton net. The result revealed that Zooplanktons belong to mainly Rotifera, Cladocera, Copepoda. This study also reveals that different group of Zooplankton have their own peak periods of density, which is affected by local environmental conditions prevailing at that time.

Keywords - Seasonal Variation, Zooplankton, Aquatic, Diversity .

Introduction - Zooplankton play an integral role and serve as bio- indicators and is a well suited tool for understanding pollution status of water (Rajagopal et al., 2010). Different environmental factors that determine the character of water have great importance upon the growth and abundance of Zooplankton. Zooplankton are cosmopolitan in nature and inhabit of fresh water habitats of the world, including polluted, industrial and municipal waste waters. Zooplankton form an important link in food chain, food webs, energy flow and cycling of matter, thus playing a meaningful ecological role in all functional aspects of an aquatic ecosystem. The fresh water Zooplankton comprises Protozoans, Rotifers, Cladocerans, Copepods and Ostracods.

Rotifers, the tiny wheel animalcules and considered nature's water purifier. They are prominent group among the Zooplankton of a water body irrespective of its trophic status. This may be due to the less specialized feeding, parthenogentic reproduction and high fecundity. Among the Zooplankton, Rotifers respond more quickly to environmental changes and used as changes in water quality (Gannon and stemberger, 1978). Cladocerans are tiny aquatic crustaceans and are also known as water fleas. They are highly responsive against pollutants and hence serve as good biological indicators of water pollution. Copepods have been known to the most abundant Zooplankton in the river systems. They dominant most aquatic ecosystems because of their resilience and adaptability of changing environmental stresses (Barnes et al, 1988). Ostracods are mainly dwellers of lakes. They live on detritus and dead Phytoplankton.

Investigation of fresh water Zooplankton community structure have significant potential for assessing aquatic ecosystem health. Their dominance and seasonality are highly variable in different water bodies according to nutrient status, age morphometry and locational factors. Therefore, changes in aquatic environment accompanying anthropogenic pollution are a cause of growing concern and require monitoring of surface water and organisms inhabiting them. So the present study was carried out to understand the diversity and seasonal variation of Zooplanktons in Berach river, a freshwater lotic perennial system in Chittorgarh.

Materials and Methods - Three sampling station of berach river were selected for the present study. They were Mungo ka kheda, Nagari and Billia. Monthly samples were collected from these study sites during January 2011 to December 2011. For Zooplankton analysis, samples were collected from Berach river of Chittorgarh and 50 liter of water was filtered by passing water through plankton net made up of bloting silk cloth having mesh size of 30 µm and samples were preserved in 4% formaldehyde solution. Quantitative analysis was done by putting 1 ml. of the preserved sample on a Sedgwick –Rafter cell and studying it under an inverted microscope and result were expressed in nol^{-1}, for qualitative analysis, the methods given by Edmondson (1966), Needham and Needham (1962) , Pennak (1978), and Tonapi (1980) were followed.

Result and Discussion - Zooplankton community of Berach river comprised of 28 species belonging to Cladocera (11 species), Copepoda (9 species) and Rotifera (8 species).The relative abundance of Zooplankton population in this river depicted in figure 1 shows during summer, Rotifers were dominated (39.36%) followed by Copepods (33.53%) and Cladocerans (27.11%).

Cladocera- The Cladocerans population identified from Berach river during the present study were represented by 11 species, the group was represent by Ceriodaphnia cornuta, Bosmina longirostris, Diaphanosoma excisum, Bosmina fatalis, Daphnia carinata, Monia micrura, Alona verrucosa, Chydorus ventricosus, Alona quadraangularis, Alona rectangula and Macrotrix spinosa. In this study, minimum numbers of Cladocerans were reported in winter season (25N/L) at Nagari (Table 2). This group exhibit highest

* Research Scholar, Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA
** Research Guide, Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA

peak at Billia, during monsoon with seasonal mean peak value of (45N/L) . This observed maximum monsoonal density may be due to high Phytoplankton density. Similar observation was earlier made by Santhanam and Perumal (2003). The decrease in the density of Cladocerans may be due to seasonal variation. Therefore, a clear seasonal variations in the density of Cladocerans and statistically significant ($P<0.05$).

The Copepoda population identified from Berach river during the present study were represented 9 spices. Among them, Mesocyclops leuckarti, Eucyclops serrulatus, Trophocyclops prascinus, Mysis species, Pseudodiaptomus Nostradamus,Microcyclops varicans,Mesocyclops hyalinus,Filipinodiaptomus insulanus and Nauplius larvae. Copepoda exhibit highest peak at all 3 station during winter season and the seasonal mean peak value was 44.67 N/L (Table 3). It can be explained as the result of settling of rain water and return of favourable condition. The minimum number was found in monsoon season with seasonal mean value of 32.67 N/L. Similar observation was earlier made by Padmavati and Goswami (1996). The decrease in the density of Copepod may be due to environmental variation. So there exist seasonal fluctuation in the density of Copepod population of river. The seasonal variation in the density of Copepods are statistically significant ($P<0.05$).

The Rotifer group was represent by 8 species Brachionus angularis dominated by Brachionus calciflorus, Keratella tropica, Asplanchna priodonta, Brachionus bidentatus, Brachionus quadridentata, Brachionus plicatilis, Trichocera rattus. Rotifers are chiefly fresh water forms and presence of these organisms in abundance is related to suitable conditions for their survival (Dhanapati, 2000). In this study, minimum numbers of Rotifers were reported in monsoon (28N/L) Nagari station (Table 4). This group exhibit highest peak at station 3 Billia, during summer(48N/L). Arora and Mehra (2003) while analyzing seasonal dynamics of Rotifers in relation to physico -chemical conditions of lotic water body made similar observation in increased densities in summer and reduced densities in winter. In Summer, the absence of inflow of water brings stability to the water body. The availability of food is more due to production of organic matter and decomposition. These factors contribute for high species density.

In most of the aquatic ecosystem different Zooplankton groups acts as one of the major primary consumer as a result, their diversity, abundance and seasonality affects the other biotic components there in. The Zooplankton population of the concerned habitat was found to be dominated by Cladocerans both in number and diversity followed by Copepods and Rotifers. Therefore the present study on qualitative and quantitative changes occurring in the riverine ecosystem is necessary in order to understand and preserve the biodiversity of river.

List of Zooplankton species identified from Berach river during the study -

S. No.	Species/Seasonas	Sum-mer	Mon-soon	Win-ter
A	**Rotifera**			
	Family-Brachionidae			
1.	Brachionus angularis	+	+	+
2.	Brachionus calyciflorus	+	+	+
3.	Brachionus bidentatus	+	+	+
4.	Brachionus quadridentata	+	-	+
5.	Brachionus plicatilis	+	+	+
6.	Keratella tropica	+	+	+
	Family-Asplanchnidae			
7.	Asplanchana pridonta	+	+	+
	Family- Trichocercidae			
8.	Trichocera rattus	+	+	+
B	**Cladocera**			
	Family-Daphnidae			
9.	Cerodaphnia cornuta	+	+	+
10.	Daphnia carinata	-	+	+
	Family-Bosminidae			
11.	Bosmina longirostris	+	+	+
12.	Bosmina fatalis	+	+	-
	Family-Sididae			
13.	Diaphanosoma excisum	+	+	-
14.	Monia micrura	+	+	-
	Family-Chydoridae			
15.	Chydorus ventricosus	-	+	+
16.	Alona quadrangularis	-	+	-
17.	Alona rectengula	-	+	-
18.	Alona verrucosa	+	+	-
	Family-Macrotricidae			
19.	Macrotrix spinosa	-	+	-
C	**Copepoda**			
	Family-Cyclopidae			
20.	Mesocyclops leuckarti	+	+	+
21.	Mesocyclops hyalinus	+	-	+
22.	Trophocyclops prascinus	+	+	+
23.	Eucyclops serrulatus	+	+	+
24.	Microcyclops varicans	+	-	+
	Family-Diaptomidae			
25.	Filipinodiaptomus insulanus	+	-	+
	Family- Pseudodiaptomidae			
26.	Pseudodiaptomus	+	-	+
	Nostradamus			
27.	Mysis spcies	+	+	+
28.	Nauplis larve	+	-	+

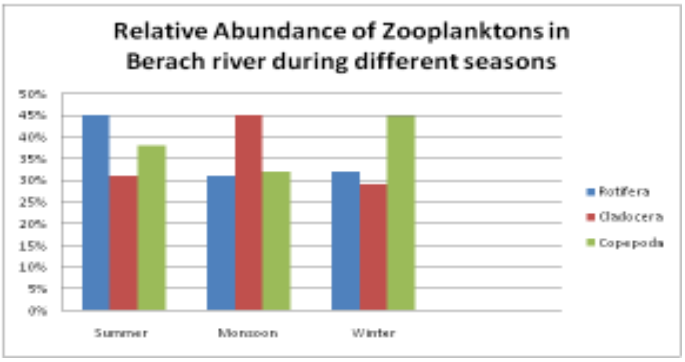

Table 2 - Seasonal variation in the density of Cladocera population in Berach river during the study.

Season	Mungo Ka kheda	Nagari	Billia	Seasonal Mean ± SE
Summer	32	26	35	31± 2.64
Monsoon	46	40	49	45± 2.64
Winter	28	25	34	29± 2.64
Annual Mean	35.33	30.33	39.33	

Table 3 - Seasonal variation in the density of Copepod population in Berach river during the study.

Season	Mungo Ka kheda	Nagari	Billia	Seasonal Mean ± SE
Summer	42	38	35	38.33± 2.03
Monsoon	31	34	35	32.67± 0.88
Winter	45	41	48	44.67± 2.03
Annual Mean	39.33	37.66	38.66	

Table 4 - Seasonal variation in the density of Rotifer population in Berach river during the study.

Season	Mungo Ka kheda	Nagari	Billia	Seasonal Mean ± SE
Summer	48	42	45	45± 1.73
Monsoon	31	28	34	31± 1.73
Winter	36	30	32	32.67± 1.77
Annual Mean	38.33	33.33	37	

References -

1. Ansari, S. and Raja, W. (2007). Zooplankton diversity in fresh water bodies in Aligarh region. Proceedings of DAE – BRNS National symposium on limnology, 170-175 .
2. Arora, J. and Mehra, N.(2003).Seasonal dynamics of rotifers in relation to physical and chemical conditions of the river Yamuna(Delhi),india. Hydrobiologia.491,101-109.
3. Barnes, R.S.K, Calow, P and Olive, P.J.W, (1988).The invertebretes: a new synthesis. Blackwell Scientific Publication, London.
4. Beenamma, J. and Yamakanamardi , S.M.(2010). Winter summer and rainy seasonal changes in the abundance and biomass of Zooplankton in relation to environmental variables in Kukkarahlli lake of Mysore, Karnataka State, India. J. Aqua. Biol, 25,8-17.
5. Gannon,J.E. and Stemberger,R.S.(1978) . Zooplankton especially crustaceans and rotifers as indicators of water quality.Trans. Am. Micros. Soc.97,16-35.
6. Gary, L.L, McIntire, C.D., Buktenica, M.W., Girdner,S.F. and Truitt, R.E. (2007). Distribution and abundance of Zooplankton population in Crater lake. Oregan. Hydrobiol. 574,217-233.
7. Padmanabha, B. and Belagali, S.L.(2008). Ostracod as indicators of pollution in the lake of Mysore. J. Environ. Biol. 29,711-714.
8. Padmavati,G and Goswami,C.(1996). Zooplankton ecology in the Mandovi-Zuari esturine system of Goa,West coast of India. Int. j. ecol. Environ. Sci.31,273-278.
9. Pullie, J.S. and Khan, A.M. (2003) .Studies on Zooplankton community of Isapur dam water India. Poll.Res. 22, 45-455.
10. Rajagopal,T., Sekar,M., and Archunan,G. (2010). Zooplankton diversity and physico-chemical condition in three perennial ponds of virudhunagar district, Tamilnadu,J. environ. biol.31,265-272.
11. Sadguru Prakash, Ansari,K. and Sinha, Mukul (2002). Seasonal dynamics of Zooplankton in a freshwater pond developed from the waste water pond developed from the waste land of brick Kiln. Poll. Res, 21, 81-83.
12. Santhanam, P. and Perumal, P,(2003) Diversity of Zooplankton in Parangipettai coastal waters, Southeast costal of India. J. Mar. Biol. Assoc. India, 145(2003) 144-151.
13. Somani, V. and Pejwar, M. (2004). Crustacean Zooplankton population of the lake masunda, Thanl Maharashtra : J. Aqua. Biol. Vol. 19(1) : 57-56.
14. Subbamma, D.V. (1992) .Plankton of a temple pond near Machli Patnam, Andhra Pradesh. J. Aqua Biol. , 17(12), 17-21.

****

Impact Of Zinc Sulphate On Behavioral Responses On The Freshwater Fish Labeo Rohita

Poonam Shrimali * **R.K. Dashora** * *

Abstract - The static bioassay test was conducted to determine the toxicity of zinc sulphate on fresh water fish Labeo rohita. Fishes were exposed to percent mortality was recorded. Objectives of this study were to understand the relationship between mortality and abnormal behavioral responses of fresh water fish Labeo rohita exposed to zinc sulphate. Labeo rohita in toxic media exhibited erratic and darting movements with imbalanced swimming activity, which might be due to the malfunctioning of neurotransmitters, followed by hyper and hypo opercular activity, loss of equilibrium and mucus secretion all over the body were observed. The 96h LC 50 for the fish was determined using interpolation method and found to be 30 Mg//. **Key words -** Toxicity, behavioral, Zinc Sulphate Labeo rohita.

Introduction - Heavy metal contamination of aquatic ecosystem has long been recognized as a serious problem, Heavy metal contamination may have lethal effect on ecological balance on recipient environment and diversity of aquatic organism (Farombi et.al.,2007). These heavy metal pollution posses a great threat to fishes. When fishes are exposed to elevated level of metal in polluted aquatic ecosystem, they tends to take these metals up from their direct environment (Hoo et.al., 2004). The fish constitutes a valuable commodity from the stand point of human consumption. So heavy metal contamination of fresh bodies and aquatic biota becomes a serious concern from human health point of view. Heavy metal pollution of aquatic ecosystem poses a serious environmental hazard because of their persistence and toxicity.

Industrial effluents contributing to aquatic pollution contain a vast array of toxic substances, which include heavy metals. If leads to alteration in physical, chemical and biochemical properties of water bodies as well as that of environment. The aquatic environment has always been subjected to different types of pollutants of industrial, domestic and agriculture wastes. (Mance, 1987; Farkas et. at; 2000) and severely affect the aquatic organisms. The problems of environmental pollution and its deleterious effects on aquatic biota, including fish is receiving focus during the last few decades. (Jagadeesan et. al; 2001 Zipic and Stajan, 2001).

Level of trace elements in water and fish has been studied by Ikem et. al; 2003. Discharges of heavy metals into the aquatic environment can change both aquatic species diversity and ecosystems, due to their toxicity and accumulative behaviour. Aquatic organisms including fish accumulate metals many times higher than present in water or sediments (Madhusudan et. al; 2003, Surec, 2003; Olaifa et. al; 2004), thus causing an adverse effect on the aquatic organisms (Ohe et. al; 2004)

These heavy metals toxicants are accumulated in the fish through general body surface which affect severally their life support system. Once these toxic substance enters into body, they damage and weaken the mechanism concerned leading to physiological, pathological and biochemical disorders (Arasta et.al; 1999).

Hence the present study was aimed to investigate the toxic effect of zinc sulphate on detoxifying organs of fresh water fish Labeo rohita at laboratory condition.

Material and Method - The fresh water fish Labeo rohita were obtained from natural system and they were treated with 0.5% $Kmno_4$ for five minutes for dermal disinfection. Then they were acclimatized for period of 3 days to laboratory condition and were feed on small pieces of earthworm. The fish weighing 5.1 to 11.4 gm. and 7.6 to 11.7 cm. length. The physicochemical parameters of the aged tap water was determined periodically as per standard method (APHA 1998). The zinc sulphate was selected as a heavy metal toxicant for the experiment Static bioassay was carried out as per standard method (APHA 1998) to determine 96h LC 50 (Table). The fishes are exposed to different concentration of zinc sulphate for 96 hours. The acclimatized 10 fishes were transferred to glass aquaria (60 x 30 x 30) cm. containing 25 liters of toxicants treated water. After exposure of the fish to various concentrations of the toxicants, observations were made on the behavioral and morphological responses of fish at 24, 48, 72 and 96 hours. Control fish were monitored along with the toxicant concentrations to provide a reference for assessing any behavioral or morphological changes. Responses were recorded if they differed from the control and occurred in 10% of the fish in each test tank. The behavioral and morphological indicators

* Research Scholar, Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA
* * Research Guide, Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA

observed include; loss of equilibrium, general activity, startle response, hemorrhage, and deformity (including, postural indicators). Each test tank was observed for 10 to 15 minutes which allowed sufficient time for an accurate evaluation of each fish. Startle responses were monitored by the following procedures in sequence: passing hand over the test tank (overhead moving visual stimulus), rapping on the tank (vibration stimulus), and lightly touching the fish with a stick (tactile Stimulus).

Table 1- Physicochemical parameters of water

1.	pH	7.6
2.	Water temperature	25.9
3.	Co_2	2.05
4.	Alkalinity	221.6
5.	Hardness	619
6.	Dissolve Oxygen	5.26
7.	Nitrate nitrogen	0.5262
8.	Phosphate	0.0375
9.	COD	181.98
10.	BOD	39.39
11.	T.D.S.	799.6
12.	E. Conductivity	1382

Table 2- (See the next Page)

LC 50 = 30 mg/l (Graph see the next Page)

Result and Discussion - LC 50 value obtained through sigmoid curve is 30 mg/l behavioral changes are physiological responses shown by the animal, which are often used as the sensitive measure of stress syndrome in the organism experiencing it, consequently the behavioral changes were observed in control and exposed fish.

Control fish - Fishes were observed to scrap the bottom surface. When startled, they instantly formed a tight school that was maintained briefly. They were sensitive to light moved to bottom of the tank when light was passed into tank. Except a less response to form a dense school towards the end of the study, no other extraordinary behaviour was observed.

Experimental fish - The experimental fish exposed to sublethal concentration of zinc sulphate exhibited abnormal behavioral response. During exposure time, fish initially showed rapid movement, faster opercular activity, surfacing and gulping air. They showed erratic swimming with jerky movements, hyper excitability, convulsions and tendency of escaping from aquaria. These activities were increased initially and subsequently reduced. Beside an interesting observation was noted that there was remarkable reduced body pigmentation along with profuse mucus secretion and its coagulation all over the body. This was followed by loss of equilibrium and fish slowly moved upward in a vertical direction. Thereafter fish become progressively lethargic and lost their sense of equilibrium completely. Ultimately the fish lay down on the bottom of the aquaria with their belly upward before death. In conclusion, the present study proved that the heavy metals salts i.e. zinc sulphate impacts on behavioral responses in fresh water fish Labeo rohita. In the present study the abnormal changes in the fish exposed to lethal concentration of zinc sulphate are time dependent.

References -

1. APHA (1998): American Public Health Association: Standard Method for Examination of water and waste water. 20th ED. Lenore S.C., Arnold E.G. and Andrew D.E.
2. Arasta T., Bais V.S. and Thakur P.B. (1999): Changes in selected biochemical parameters in liver and muscles of the fish *Mystus vitlatus* exposed to aldrin, Environmental pollution management (Ed. V.S. Bais Creative Pub; Sagar. 109-112).
3. Drummond, R.A., Russom, C.L., Gleger, D.L., and Defoe D.L. (1986).Behavioral and morphological changes is fathead minor (*Pimphales promelas*) as diagnostic end points for screening chemicals according to mode of Action. In T.M. Poston and R. Pruddy (eds).Aquatic Toxicology and Environmental fate. 9: 415-435.
4. Drummond, R.A., Russom, C.L.(1990).Behavirol Toxicity Syndromes: A promising tool for assessing toxicity mechanisms in juvenile fat head minnows :Environmental Toxicology and Chemistry .9:35-46.
5. Farombi E.O., Adelowo and Arioso. (2007): Biomarkers of oxidatives stress and heavy metal levels as indicator of environmental pollution in African *(Clarias gariepinus)* from Nigeria ogun River. International Journal of Environmental Research and Public health 4: 158-165.
6. Hoo, L.S., Samat, A., and Othman, M.R., (2004). The level of selected heavy metals (Cd, Cu, Fe, Mn, Pb and Zn) at residential area nearby Labs river system river bank, Malaysia. Res. J. Chem. Environ. 8: 24-29.
7. Ikem, A., Egiebor, N., and Nyavor, K. (2003). Trace elements in water, fish and sediments from Tuskegee Lake, Southeastern USA. Water, Air and Soil Pollut. 149 : 51-75.
8. Madhusudan, S., Fatma ,L., and Nadim, C. (2003): Bioaccumulation of Zn and Cd in fresh water fishes. Indian J. fish 50(1) : 53-65.
9. Olaifa, F., Olaifa, A.K., Adelaja, A. A., and Owalabi, A.G.(2004).Heavy metal contamination of *Clarias garipinus* from a lake and fish farm in Ibaden, Nigeria, African J. Biomed. Res., 7: 145-148.
10. Ohe, T., Watanabe, T., and Wakabayashi, K., (2004). Mutagens in surface waters : A review mutat, Res., 567 : 109-149.
11. Surec, B.(2003). Accumulation of heavy metals by intestinal helminthes in fish: an overview and perspective parasitology, 126 : 53-60.

Table 2- Mortality of Labeo rohita in different concentration of zinc sulphate at 96h exposure period.

Sr. No.	Concentration of zinc sulphate (Mg//.)	No. of fish	Exposure time				% Mortality
			24	48	72	96	
1.	26	10	0	0	1	1	20%
2.	28	10	0	1	1	2	40%
3.	30	10	1	1	1	2	50%
4.	32	10	1	1	2	3	70%
5.	34	10	2	2	2	3	90%
6.	36	10	2	3	4	1	100%

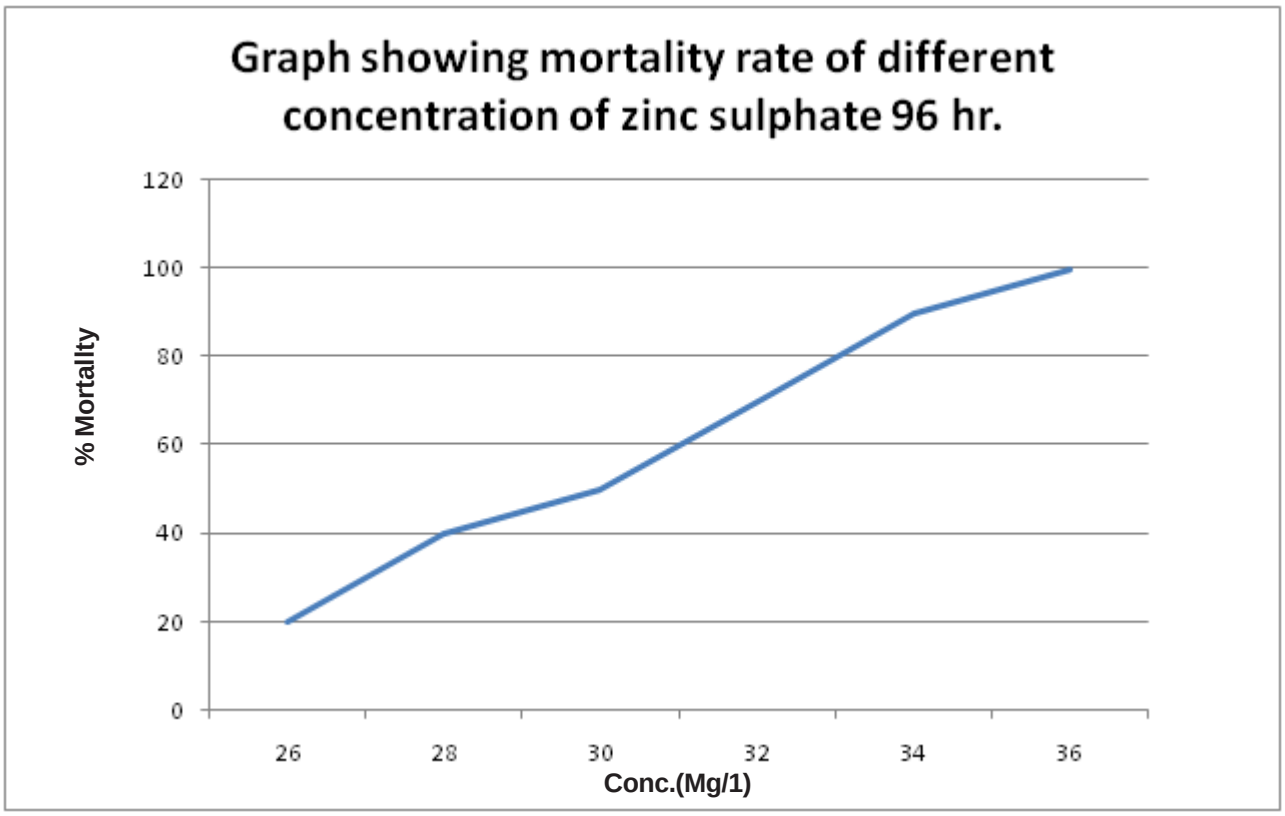

****

Human Health And Disease

Yashavini Lawania *

Introduction - Health, for a long time, was considered as a state of body and mind where there was a balance of certain 'humors'. We can say that Health is a state of complete physical, mental and social well being and not merely an absence of disease or infirmity. Biology stated that mind influences, through neural system and endocrine system, our immune system and that our immune system maintains our health. Hence, mind and mental state can effect our health.

There are even some fatal diseases like AIDS caused by HIV and cancer which are major causes of death all over the globe. In some of these cases treatment is possible option upto some extent but it may not be affordable by all so, in these cases prevention is the best option.

What is health ?

Health, for a long time, was considered as a state of body and mind where there was a balance of certain 'humors'. We can say that Health is a state of complete physical, mental and social well being and not merely an absence of disease or infirmity. Biology stated that mind influences, through neural system and endocrine system, our immune system and that our immune system maintains our health. Hence, mind and mental state can effect our health.

What is Disease ?

Any change from normal state that causes discomfort or disability or impairs the health is caused as disease. Diseases are mainly of two types (a) Congenital or Genetic Disorder (b) Acquired Disorder. Genetic disorders are those which are inherited from parents and are transferred from generation to generation white acquired disorders are those which are acquired during the lifetime.

Common Human Diseases their symptoms and causing pathogens -

Communicable or infections Disease

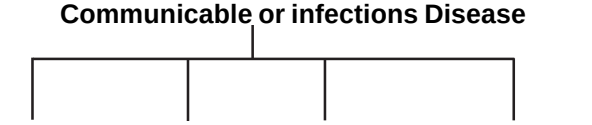

Bacterial Diseases - (Table see the Nex page)

Some common fatal Diseases -

Aids -The word AIDS stands for Acquired immuno Deficiency syndrome. This means deficiency of immune system, acquired during the lifetime of an individual indicating that it is not a congenital disease. 'Syndrome' means a group of Symptoms.

AIDS is caused by the Human immuno deficiency virus (HIV), a member of a group of viruses called Retrovirus, which have an envelop enclosing the RNA. genome. Transmission of HIV- Infection generally occurs by (a) Sexual contact with infected person. (b) by transfusion of contaminated blood and blood products, (c) by sharing infected needles (d) from infected mother to her child through placenta there is always a time- lag between the infection and appearance of AIDS Symptoms.

Prevention of AIDS - As AIDS has no cure, prevention is the best option In our country the National AIDS control organization (NACO) and other NGOS are doing a lot to educate people about AIDS. Making blood safe from HIV, ensuring the use of only disposable needles, controlling drug abuse are some such steps taken up.

Cancer - Uncontrolled, Abnormal and Excessive mitotic division of cells is called cancer is one of the most dreaded diseases of human beings and is a major cause of death all over the globe. In our body, cell growth and differentiation is highly controlled and regulated. Normal cells show a property called contact inhbition by the virtue of which contact with other cells inhibits their uncontrolled growth cancer cells appears to have lost this property.

Causes of cancer - Transformation of normal cells into cancerous Neo plastic cells may be induced by physical, chemical or biological agents. These agents are called carcinogens. Further more, several genes called cellular on cogenes have been identified in normal cells which, when activated under certain conditions, could lead to oncognic transformation of the cells.

Cancer Detection and Diagnosis - Early detection of cancers is essential as it allows the disease to be treated successfully in many cases. Some important investigations are like Blood examination, Biopsy, F.N.A.C., CT Scan, MRI, X-rays, mammography, pap smear etc.

Antibiotics against cancer- specific antigens are also used for detection of certain cancers.

Treatment of cancer - The common approaches for treatment of cancer are surgery, radiation theraphy and immunotherapy. Most cancers are treated by combination of surgery, radiotherapy and chemotherapy. Some patients are given substances called biological response modifiers such as alpha- interferon which activate their immune system and help in destroying the tumor.

Conclustion - The age old saying of 'Prevention is better than cure' holds true here also because in some cases even after the disease is cured, it may leave some disabilities in the body forever.

As we know health is not just the absence of disease. It is a state of complete Physical, mental, social and

* **M.B.B.S I Year, Pravara Institute of Medical Sciences, Ahmednagar (Maharashtra) INDIA**

psychological well being. Diseases like typhoid, cholera, pneumonia, fungal infections of skin, malaria and many others are a major cause of distress to human beings.

So besides personal cleanliness and hygiene, public health measures like proper disposal of waste, decontaminations of drinking water, control of vectors like mosquitoes and immunization are very helpful in preventing these diseases. There are even some fatal diseases like AIDS caused by HIV and cancer which are major causes of death all over the world.

In some of these cases treatment is possible option upto some extent but it may not be affordable by all so, in these cases prevention is the best option.

Reference -

1. Biology - National council of educational research and training.
2. Biology module - Allen institute
3. India today - August month 2014
4. Internet source.

Bacterial Diseases -			
S.No.	Disease	Pathogens	Symptoms
1	Tuberculosis	Mycobacterium tuberculosis mode of infection droplet infection.	Chronic cough, fever, weakness, bloody sputum, breathless ness.
2	Cholera	Vibrio choleric mode of infection feaco-oral route	Diarrhoea, dehydration, vomiting
3	Pneumonia	Strep to occurs pneumonia mode of infection Droplet infection	Infection in lungs, difficulty in breathing, high fever, chill, cough, headache. In severe caser lip and finger nails may turn bluish.
4	Tetanus (Lock Jaw)	Clostridium tetani	Sustained contraction of body muscles, spasms lock jaw, unconsciousness, opisthotonus Risus sardonic us.
5	Typhoid fever	Salmonella typhi	Stomach pain, constipation, headache, sustained high fever, loss of appetite, intestinal ulcers, bradycardia and perforation.
Viral Diseases :-			
S.No.	Disease	Pathogenes	Symptoms
1	Polio	Polio Virus (Group- Picorna Virus)	Fever, headache, Paralysis.
2	Influenza	Orthomixovirus mode of infection droplet infection.	Sudden fever after headache, nasal discharge.
3	Measles	Paramyxovirus mode of infection droplet infection	High grade fever, white-brown patches on body and blisters
4	Chicken pox	Pox virus (varicella- herper virus) Para myyxovirus	Rashes on body with fever, painful swelling in parotid grand.
5	Dengue fever Or Break bone fever	Arbovirus flavi vector- Aedes agypti	Fever, pain in muscles and joints, hemorrhagic condition in body
6	Chikun gunya	Togavirus (Flavi) Vector- Aedes agypti	Fever, Joint pain, arthritis
7	Rabies (Hydrophobia)	Rab do virus or street virus. Vector- Rabid, dog, cat and wild animals.	Affect CNS – Madness, hydrophobia due to laryngeal spasm and 100% death occur.
8.	HepatitisA, B, C, D, E	Enterovirus, Hep.B = DNA Virus Others = RNA Virus	Jaundice
Protozoan Diseases -			
S.No.	Diseases	Pathogens	Symptoms
1	Malaria	Plasmodium Sps.	Nigh fiver with chill of intermittent periodicity, pain in joints.
2	Amoebiasis(Amitotic dysentery)	Entamoeba histolyticaMode of infection far co- oral route	Internal sperms, dysentery, stool with excess mucous + blood cues, constipation.
Heminth Diseases -			
S.No.	Diseases	Pathogens	Symptoms
1	Elephantiasis or Filariasis	Wuchereria Bancrofti causes slowly developing inflammation of lymphatic vessels vector- female culex	Swelling of hands, scrotum, testis (genital organ are often affected) and breasts.

****

Working Of Space And Virtual Space Mouse

Ushmita Nigam *

Abstract - Space mouse opens a new age for man-machine communication. This device is based on the technology used to control the first robot in space and has been adapted for a wide range of tasks including mechanical design, real time video animation and visual simulation. It has become a standard input device for interactive motion control of three-dimensional graphic objects in up to six degrees of freedom. Space mouse works with standard serial mouse interface without an additional power supply. The ergonomic design allows the human hand to rest on it without fatigue. Thus flying an object in six degrees of freedom is done without any strain.

Introduction - Every day of your computing life, you reach out for the mouse whenever you want to move the cursor or activate something. The mouse senses your motion and your clicks and sends them to the computer so it can respond appropriately. An ordinary mouse detects motion in the X and Y plane and acts as a two dimensional controller. It is not well suited for people to use in a 3D graphics environment. Space Mouse is a professional 3D controller specifically designed for manipulating objects in a 3D environment. It permits the simultaneous control of all six degrees of freedom - translation rotation or a combination. . The device serves as an intuitive man-machine interface

The predecessor of the space mouse was the DLR controller ball. Space mouse has its origins in the late seventies when the DLR (German Aerospace Research Establishment) started research in its robotics and system dynamics division on devices with six degrees of freedom (6 dot) for controlling robot grippers in Cartesian space. The basic principle behind its construction is mechatronics engineering and the multisensory concept. The space mouse has different modes of operation in which it can also be used as a two-dimensional mouse.

How does computer mouse work?Mice first broke onto the public stage with the introduction of the Apple Macintosh in 1984, and since then they have helped to completely redefine the way we use computers. Every day of your computing life, you reach out for your mouse whenever you want to move your cursor or activate something. Your mouse senses your motion and your clicks and sends them to the computer so it can respond appropriately

2.1 Inside a Mouse - The main goal of any mouse is to translate the motion of your hand into signals that the computer can use. Almost all mice today do the translation using five components:

Fig.2.1 The guts of a mouse

1. A ball inside the mouse touches the desktop and rolls when the mouse moves.

Fig 2.2
The underside of the mouse's logic board: The exposed portion of the ball touches the desktop.

2. Two rollers inside the mouse touch the ball. One of the rollers is oriented so that it detects motion in the X direction, and the other is oriented 90 degrees to the first roller so it detects motion in the Y direction. When the ball rotates, one or both of these rollers rotate as well. The following image shows the two white rollers on this mouse:

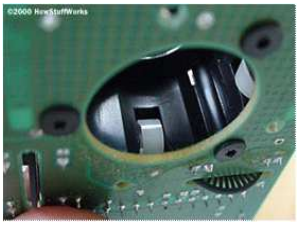

Fig.2.3 The rollers that touch the ball and detect X and Y motion

3. The rollers each connect to a shaft, and the shaft spins a disk with holes in it. When a roller rolls, its shaft and disk spin. The following image shows the disk:

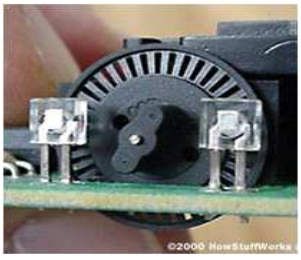

Fig.2.4 A typical optical encoding disk: This disk has 36 holes around its outer edge.

4. On either side of the disk there is an infrared LED and an infrared sensor. The holes in the disk break the beam of light coming from the LED so that the infrared sensor sees pulses of light. The rate of the pulsing is directly related to the speed of the mouse and the distance it travels.

* Lecturer, Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P) INDIA

Fig.2.5 A close-up of one of the optical encoders that track mouse motion: There is an infrared LED (clear) on one side of the disk and an infrared sensor (red) on the other.

5. An on-board processor chip reads the pulses from the infrared sensors and turns them into binary data that the computer can understand. The chip sends the binary data to the computer through the mouse's cord.

Fig 2.6 The logic section of a mouse is dominated by an encoder chip, a small processor that reads the pulses coming from the infrared sensors and turns them into bytes sent to the computer. You can also see the two buttons that detect clicks (on either side of the wire connector).

In this optomechanical arrangement, the disk moves mechanically, and an optical system counts pulses of light. On this mouse, the ball is 21 mm in diameter. The roller is 7 mm in diameter. The encoding disk has 36 holes. So if the mouse moves 25.4 mm (1 inch), the encoder chip detects 41 pulses of light.

Each encoder disk has two infrared LEDs and two infrared sensors, one on each side of the disk (so there are four LED/sensor pairs inside a mouse). This arrangement allows the processor to detect the disk's direction of rotation. There is a piece of plastic with a small, precisely located hole that sits between the encoder disk and each infrared sensor. This piece of plastic provides a window through which the infrared sensor can "see." The window on one side of the disk is located slightly higher than it is on the other — one-half the height of one of the holes in the encoder disk, to be exact. That difference causes the two infrared sensors to see pulses of light at slightly different times. There are times when one of the sensors will see a pulse of light when the other does not, and vice versa.

Basic principle - The new system used 6 one-dimensional position detectors. This system received a worldwide patent. The basic principle is as follows. The measuring system consists of an inner and an outer part. The measuring arrangement in the inner ring is composed of the LED, a slit and perpendicular to the slit on the opposite side of the ring a linear position sensitive detector (PSD). The slit / LED combination is mobile against the remaining system. Six such systems (rotated by 60 degrees each) are mounted in a plane, whereby the slits alternatively are vertical and parallel to the plane. The ring with PSD's is fixed inside the outer part and connected via springs with the LED-slit-basis. The springs bring the inner part back to a neutral position when no forces / torque are exerted: There is a particularly simple and unique. This measuring system is drift-free and not subject to aging effects.

The whole electronics including computational processing on a one-chip-processor was already integrable into the ball by means of two small double sided surface mount device (SMD) boards, the manufacturing costs were reduced to below $1,000, but the sales price still hovered in the area of $3,000.

The original hopes of the developers group that the license companies might be able to redevelop devices towards much lower manufacturing costs did not materialize. On the other hand, with passing of time, other technologically comparable ball systems appeared on the market especially in USA. They differed only in the type of measuring system. Around 1990, terms like cyberspace and virtual reality became popular. However, the effort required to steer oneself around in a virtual world using helmet and glove tires one out quickly. Movements were measured by electromagnetic or ultrasonic means, with the human head having problems in controlling translational speeds. In addition, moving the hand around in free space leads to fairly fast fatigue. Thus a redesign of the ball idea seemed urgent.

Features And Benefits -

Features -

a. Ease of use of manipulating objects in 3D applications.
b. Calibration free sensor technology for high precision and unique reliability.
c. Nine programmable buttons to customize users preference for motion control
d. Fingertip operation for maximum precision and performance.
e. Settings to adjust sensitivity and motion control to the users preference.
f. Small form factor frees up the desk space.
g. Double productivity of object manipulation in 3D applications.
h. Natural hand position (resting on table) eliminates fatigue.

Benefits - As the user positions the 3D objects with the Magellan device the necessity of going back and forth to the menu is eliminated. Drawing times is reduced by 20%-30% increasing overall productivity. With the Magellan device improved design comprehension is possible and earlier detection of design errors contributing faster time to market and cost savings in the design process. Any computer whose graphics power allows to update at least 5 frames per second of the designed scenery, and which has a standard RS232 interface, can make use of the full potential of Magellan space mouse. In 3D applications Magellan is used in conjunction with a 2D mouse. The user positions an object with space mouse while working on the object using a mouse. We can consider it as a workman holding an object in his left hand and working on it with a tool in his right hand. Now Magellan space mouse is becoming something for standard input

device for interactive motion control of 3D graphics objects in its working environment and for many other applications.

Future Scope - Magellan's predecessor, DLR's control ball, was a key element of the first real robot in space, ROTEX-(3), which was launched in April 93 with space shuttle COLUMBIA inside a rack of the spacelab-D2. The robot was directly teleported by the astronauts using the control ball, the same way remotely controlled from ground (on-line and off line) implying "predictive" stereo graphics. As an example, the ground operator with one of the two balls or Magellan's steered the robot's gripper in the graphics presimulation, while with the second device he was able to move the whole scenery around smoothly in 6 dot Predictive graphics simulation together with the above mentioned man machine interaction allowed for the compensation of overall signal delays up to seven seconds, the most spectacular accomplishment being the grasping of a floating object in space from the ground. Since then, ROTEX has often been declared as the first real "virtual reality" application.

Visual Spacemouse - A most intuitive controlling device would be a system that can be instructed by watching and imitating the human user, using the hand as the major controlling element. This would be a very comfortable interface that allows the user to move a robot system in the most natural way. This is called the visual space mouse. The system of the visual space mouse can be divided into two main parts: image processing and robot control. The role of image processing is to perform operations on a video signal, received by a video camera, to extract desired information out of the video signal. The role of robot control is to transform electronic commands into movements of the manipulator.

Conclusion - The graphics simulation and manipulation of 3D volume objects and virtual worlds and their combination e.g. with real information as contained in TV images (multi-media) is not only meaningful for space technology, but will strongly change the whole world of manufacturing and construction technology, including other areas like urban development, chemistry, biology, and entertainment. For all these applications we believe there is no other man- machine interface technology comparable to Magellan in its simplicity and yet high precision. It is used for 3D manipulations in 6 dot, but at the same time may function as a conventional 2D mouse.

References -

1. J. HeintB, G. Hilzinger "Device for programming movements of a Robot"
2. J. Dietrich, G. Plank, H. Krans "Optoelectronic System Housed in Plastic Sphere"
3. G. Hirzmger and J. Dietrich, B. Gombert, J. Heindi, K. Landzettel, J. Schott "The sensory and telerobotic aspects of the spare robot technology experiment ROTEX", Int. Symposium "Artificial Intelligence, Robotics and Automation, in Space"
4. http://www.en.wikipedia.com/ Mechatronics

****

Screening Management Of Severe Acute Malnutrition

Dr. Rashmi Shrivastava * Swati Jyotishi **

Introduction - The magnitude of severe acute Malnutrition (SAM) continue to remain an alarming situation all over the India. The State of Madhya Pradesh alone has burden of 12.6% cases of SAM children as per NFHS-3 (2005-06). To address this drastic problem. Large number of children suffer from various sub-clinical form of SAM like under weight stunting and wasting.

Clinical forms of SAM represent only a small proportion of the total cases of SAM in a community in rural India. Growth retardation is not only an important and objective manifestation of SAM, but is also the first response to rehabilitation in such case, anthropoment body measurement is extensively used to detect various degree of sub-clinical forms of SAM. Body weight is by for the most sensitive and frequently used parameter of nutritional status particularly in preschool children. Several methods have been suggested for classification of PEM in children based either on body weight alone or in combination with standing height/ length.

Sub- Clinical Screening of SAM Child

Oedema - Oedema refers to accumulation of fluid in the tissues and usually begins with a slight swelling in feet gradually spreading up the legs. Later hands and face may also have Oedema. If Oedema is present a depression is formed when you apply pressure with your thumb on lower part of shin or the dorsal part of foot for about half a minute.

Degree of Oedema (0 to +++ is assessed each day)

1. +++ Gross oedema (Generalized, all over the body)
2. ++ Moderate oedema (up to thigh and hands)
3. + Mild oedema (dorsum of both feet)

Weight - This is the most common anthropometric method. It is useful in detecting PEM since, it is one of the best indicators of growth failure in all age group. It is necessary to take into account length, frame size, proportions of fat, muscle and bone and the presence of pathological weight due to edema or splenomegaky.

A study, inexpensive, easily transportable and accurate scale must be use. It must be checked frequently. Beam balances must be preferred to spring balances. For weighing very small children.

The butcher's steelyard is an ancient, simple and inexpensive weighing apparatus.

Young children should be weighed nude. For older preschool age children who are large and more active, the mother should be weighed alone and weighed again with the child.

For school children and adults, the platform beam balance is mostly used.

Weighing shout avoided after a full meal. Ordinary, simple clothes must be worm while weighing.

Weight assessment in community investigations is concerned with determining degrees of underweight mainly resulting from PEM in developing countries. Ouch assessment is given below.

Gomez classification of Malnutrition in Children

Overview - The child's weight is compared to of a normal child (50th percentile) of the same age. It is useful for population screening and public health evaluations.

Percent of reference weight for age = [(patient weight)/(weight of normal child of same age)] x100

Percent of reference weight for age	Level of Mal--nutrition	Grade
90-110%	Mid	normal
75-89%	Moderate	Grade I
60-74%	severe	Grade II
<60%		Grade III

Limitations - Edema consequent to increase the body weight, resulting in an interpretation less than warranted.

2. Linear Measurements Two common measurements are:

(a) Height (or length) or the whole body.

(b) Certain circumferences especially of head and chest.

(a) Height (or length) - of an individual is made up of the sum of four parts- legs, pelvis, spine and skull.

In field nutritional anthropometry, only the total weight is measuring rod or a scale fixed to a wall can be used.

The height must be measured without shoes and the subject must stand on a flat floor by the scale. His feet should be parallel with the heels, buttocks, shoulders and back of head touching the upright portion of the scale. The head should be comfortably held erect. The arms should be relaxed and held in a natural manner. The headpiece should be either a metal bar or a wooden block and lowered slowly so as to touch the hair and make contact with the top of the head.

* Asst. Professor (Home Science) Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P) INDIA
** Research Scholar, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P) INDIA

For infants and preschool children, the crown-heel length or recumbent length must be measured. This is usually carried out with a wooden length-board. The child is laid on the board, the head is positioned firmly against the fixed headboard, the knees are extended and feet flexed at right angles. The upright sliding footpiece is moved to obtain firm contact with the heels. The length is then read off. Given below is the **Waterloo Classification of Malnutrition in Children**

Waterloo Classification of Malnutrition in Children

Overview - Chronic malnutrition affects a child's growth, eventually resulting in reduced stature (stunting). Malnutrition also affects the child's body proportions, eventually resulting in body wastage.

Percent weight for height = [(weight of patient) / (weight of the normal child of the same height)] x 100

Percent Height for Age = [(Height of patient) / (Height of the normal child of the same Age)] x 100

	weight for height (wasting)	Height for Age (stunting)
Normal	**>90**	**>95**
Mild	**80-90**	**90-95**
Moderate	**70-80**	**85-90**
Severe	**<80**	**<85**

Source - Jakson A A, Golden MHN. Severe malnutrition. 8.12-8.29. IN :

Weatherall D J, Ledingham J G G, Warrelll D A. Oxford Taxtbook of Medicine, 2nd edn. Oxford University Press. 1987.

(b) Head circumference - It is a standard procedure for infants and children. It can be used to detect pathological conditions with certain accuracy. It is mainly related to the brain size but it also includes the thickness of the scalp and the skull.

Nutritional status causes changes to occur in these parameters.The chest to head circumference ratio is of value, especially in detecting PCM in early childhood. The head circumference can be used as rough guide in age assessment.A narrow, less than I cm, flexible, non-stretch tape either made of steel or fibre can be used to measure. Cloth tapes stretch in use and hence, must be avoided.

(c) Chest - It is of practical field use especially in the second and third year of life. At 12 months of age both these measurements are the same but later the skull grows slowly and the chest more rapidly; therefore, a chest/head circumference ratio of less than I may be due to failure to develop.

(2) Muscle - Poor muscle development or muscle wasting are typical features of all forms of PEM, especially of one has suffered it in childhood. In older children muscle mass could be increased with exercise. Muscle may be judged using various techniques:

(i) Total :(a) by body analysis (at autopsy)
(b) by measuring body radio-active potassium
(c) by chemically analysing urine.

(ii) Localized - by soft tissue radiology of the body, particularly by physical anthropometry.

The most practical method, especially in the field, is by measuring the muscle mass of a limb by direct physical anthropometry. The two portions which are used are roughly circular and heavily muscled, i.e the mid-calf and the mid-upper arm. The latter is most convenient as this region is easily accessible. A flexble steel or fiberglass tape may be used. Two measurements are taken-one, while the mid-arm is hanging freely at its mid-point and the other while the over-lying sub-coetaneous fat is measured in the triceps region with skin fold calipers. From these two measurements one can calculate the inner circle, which is composed mainly of muscle, with a small central core of bone. Assuming that the bone is relatively constant in size, the calculated value is termed "mid-arm muscle circumference".

" The best way to protect children from the deadly disease is to prevent them from getting it in the first place"

References –

1. A stewart Truswell, *ABC of Nutrition, 2nd end Panther publishers Pvt Ltd. 1992, India.*
2. Anderson, L, Nutrition in health and disease, 17th edn, Philadelphia, J B Lippincott, 1982.
3. Burton, B T, Human nutrition, 3rd edn, New Delhi, Tata McGraw-Hill Publishing Co., 1978.
4. Calloway, D H, Nutrition and health, Philadelphia, Saunders College Publication, 1981.
5. Eckstein, N W, Ed, Food, people and nutrition, Westport, AVI, 1980.
6. Martin, E A and A A Coolidge, Nutrition in action, 4yh edn, New York, Holt, Rinehaet and Wilson, 1978.
7. McLaren, D S,*Nutrition and its disordes,* 3rd edn, Edinburgeh, Chrchill Livingstone, 1981.
8. Mitchell, H S et al, *Coope's nutrition in health and disease,* 15th edn, London, Pitman Medical Publishing Co. Ltd, 1968.

****

Adolescent Adjustment With Self, Peer Group And School As A Correlate Of Prosocial Behavior Among Adolescents

Dr. Ankita * **Dr. Chandra Kumari** * *

Abstract - Prosocial behavior is defined as behavior primarily aimed at benefiting others which is important for the functioning of society. The present study was designed to examine the adolescent adjustment as a significant correlate of prosocial behavior among adolescents from Garhwa district. The present study was undertaken on 13 to 16 years old boys and girls (n=500) with the objective to compare and find relationship between adolescent adjustment and prosocial behavior. At screening phase, prosocial behavior assessment scale was administered to assess the adolescents' level of prosocial behavior. Adolescents who exhibited moderate prosocial behavior (n=287) were dropped and remaining adolescents with high prosocial behavior (n=99) and adolescents with low prosocial behavior (n=114) were considered for further study. Results of the study found that adolescent adjustment was significantly correlated to prosocial behavior.
Keywords - Prosocial behavior, self adjustment, peer group adjustment, school adjustment.

Introduction - One of the most important aspects of human, distinguishing human from other species, is the degree of helping, cooperation, and altruism among people (Fehr & Fischbacher,2003). Prosocial behavior, that is, behavior intended to benefit others (Eisenberg & Fabes, 1998), is often considered as the basis of human relationships (Staub, 1979). Possible environmental sources of individual differences in prosocial behavior have often been considered (Staub, 1979). Most of the studies focused on parental influences on children's prosocial behavior (Eisenberg & Fabes, 1998). However, there is also some evidence that, under certain conditions peers and schools also affect adolescent's degree of prosocial behavior (Eisenberg & Fabes, 1998). In addition adolescent's adjustment with self, with their peers and adjustment in school also affects prosocial behavior.

Self adjustment - Self adjustment is that the person enjoys a kind of inner harmony. He is at peace with himself just as he is at peace with others. It is the degree to which an individual, having considered his personal characteristics, is able and willing to live with them happily. An adolescent boy or girl who has good self adjustment will be happy and successful. Many of the condition that determined how much a person likes and adjusts to himself are self understanding, realistic expectation, absence of environmental obstacles, favorable social attitudes, absence of severe emotional stress, proponderness of success, identification with well adjusted people, self perspective, good childhood training and a stable self perception. A self adjusted person has feel personal security which motivate him to act for the welfare of society.

Peer group adjustment - Peer group adjustment is goodness oriented syndrome. It is because other people are interested in what he/she can do bring satisfaction to the membranes of the group. Peer group adjustment comes from the response friends make to total personality pattern rather than a specific trait. The establishment of a peer network is an important part of early adolescence (Larson & Richards, 1991). Peers seem to play an important role in the development of adolescent self-esteem (Simmons & Blyth, 1987). The influences that are present in the peer network are an important part of adolescent prosocial development, as peer reinforcement has been shown to be associated with self-esteem (Simmons & Blyth, 1987) and moral development (Furman & Masters, 1980;Schonert-Reichl, 1999) .When prosocial behaviors are displayed toward peers, they are likely to respond in a prosocial manner and might engage in cycles of prosocial exchanges (Bukowski & Sippola, 1996; Eisenberg & Fabes, 1998). This cycle is more likely to occur between peers than between adolescents and adults because of the more equal social status between adolescent peers than between adolescents and adults. These findings suggest that peer interactions are unique from adult-adolescent interactions and are important in adolescent development. Moreover, those friendly peer interactions form the basis for adolescent morality (Bukowski & Sippola, 1996).There are some researches on the relation of prosocial behavior to peer interaction.Well adjusted peers tend to be more prosocial than rejected peers (Coie, Dodge and Kupersmidt,1990.,Wentzel, 2003). In study in the United States, positive peer relationships generally were correlated with 7th to 12th grader's prosocial tendencies (Carlo, Crockett.et al., 2007). Wentzel and McNamara (1999) posited that peer may affect prosocial behavior both directly and through their influence on emotional functioning. Children who are accepted by peers would be expected to have opportunities to learn and practice prosocial skills. Moreover adolescents in a supportive emotional environment may be less likely to experience emotional distress, thus leading to more positive prosocial behavior. In a study of sixth graders, Wentzel and McNamara found that peer acceptance was associated with prosocial behavior and that adolescent's low emotional distress mediated concurrent relations

* Research Scholar * * Associate Prof. (Home Science) Banasthali Vidyapith (Raj.) INDIA

between perceived support from peers and prosocial behavior. These finding support Wentzel and her colleagues hypotheses, although it is also possible the prosocial early adolescence and support and that this fact affected their emotional distress. With respect to friendship quality, research shows that children and adolescents whose friendships have a positive quality display greater prosocial behavior, are more popular, hold higher self-esteem, have fewer emotional problems, have better attitudes toward school, and achieve at a higher level in school, compared with other students (Berndt & Keefe, 1996). Wentzel, Barry, and Caldwell (2004) found that friends' prosocial behaviors predicted changes in peers' prosocial behaviors as a function of changes in goals to behave prosocially. Adolescent's social status among classroom peers has been associated with prosocial development . Rejected children in grade 6 were likely to show less prosocial behavior and express less interest in pursuing prosocial goals in grade 8 than socially average peers (Wentzel, 2003). Following peer-rejected boys forward from grade 6 to grade 11, rejected boys who showed declining aggression also showed increasing prosocial behavior over this period and by grade 11 they were less rejected, more accepted, more likely to be a friend and more helpful (Haselager et al., 2002). Thus, increases in prosocial behavior may have supported closer peer relationships. Close friends may have particularly strong influences on adolescents' prosocial development. Children's prosocial behavior increased from grade 6 to 8 when their friend in grade 6 was more prosocial than themselves but decreased strongly if the grade 6 friend was less prosocial (Wentzel et al., 2004). Similarly, youths who saw their high school peers as positive influences were more likely to engage in community volunteer work during adulthood (Zaff et al., 2003).

School Adjustment - The term school adjustment indicates how well the child has been able to make peace internally and with the school environment. A good adjustment in school means the child is capable to make progress in all activities in which he is placed in school. Students face many adjustments in school. From year to year, there are changes in teachers, classrooms, school and class rules and procedures, performance expectations, difficulty of the work, and peers. Their successes in negotiating these challenges predict school success.School adjustment has been construed historically in terms of children's academic progress or achievement (Birch & Ladd, 1996). This outcome is important, but being very limited it narrows the search for precursors and events in children's environments that may affect adjustment. On a broader level might think of adjustment as involving not only adolescent's progress and achievement but also their attitudes toward school, anxieties, loneliness, social support, and academic motivation (e.g., engagement, avoidance, absences) (Birch & Ladd, 1996).

Positive relationships with peers are critical for the emergence of prosocial skills whereas the effects of healthy adjustment are also important for development of prosocial behavior. Somewhat divergent perspectives on socialization experience are believed to promote the development of prosocial behavior. Therefore, prosocial behavior in the relation to self adjustment , peer group adjustment and school adjustment was examined in the present study.

Methods - Participants were 500 adolescents (248 boys,252 girls; age range 13-16 years) who were studying in class 7th-10th in Garhwa. After collecting the list of schools and strength of adolescent's population in different schools of Garhwa, the total population was estimated and sample size was calculated.Total number of adolescents available in selected schools were 1369. Out of total strength of 1369, 500 adolescents were selected randomly for further study. Initially all these 500 samples were considered for data collection. The prosocial behavior assessment scale was administered on those respondents. Based on the assessment of prosocial behavior assessment scale categorization into high prosocial behavior (N=99), moderate prosocial behavior (N=287) and low prosocial behavior (N=114) respondents were made. Hence, final sample size comprised of 213 adolescents (high prosocial behavior 99 and low prosocial behavior 114) and rest 287 adolescents who scored moderate prosocial behavior were dropped from the study. Further adolescent adjustment scale was administered to those two groups (adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior).

Instruments -

Prosocial behavior assessment scale - Prosocial behavior assessment scale was developed by the investigator on lines of prosocial tendencies measures by Carlo and Randall, 2002 and also questionnaire prepared by Trembly et al., 1992 and items of the scale were also collected from relevant literature and by discussing with experts, psychologists and personal experiences. The scale had 45 items in positive statements, categorized in three dimensions of prosocial behavior (Social morale, Cooperation, Helpfulness) and six types of prosocial behavior (Altruism, Compliant, Public, Emotional, Dire, Anonymous). Participants were asked to rate the extent to which statements described themselves on a 5-point scale ranging from 1(Never) to 5(Almost Always).

Adolescent Adjustment Scale - The adolescent adjustment scale develop by Smt. Ragini Dubey in 1977, were used with the object to locate good and poor adjustment to self, to the peer group and to school of adolescent boys and girls.

Results of the study - The results are presented and interpreted under the following heads:

A: Prosocial behavior among adolescents.
B: Categorization of adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior.
C: Comparison of adjustment among adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior.

A: Prosocial behavior among adolescents

Table 1: Mean and SD scores of prosocial behavior among adolescents

	N	Mean±SD
Dimensions of prosocial behavior		
Behavior of social morale	500	23.20±9.79
Behavior of helpfulness	500	21.53±10.51
Behavior of cooperation	500	21.39±10.43
Types of prosocial behavior		
Altruism	500	12.15± 4.44
Compliant	500	12.45 ±5.33
Public	500	11.34± 4.91
Emotional	500	11.58 ±4.33
Dire	500	10.77 ±5.04
Anonymous	500	11.29± 5.39

Table 1 demonstrates mean scores and SD on three dimensions (behavior of social morale, behavior of helpfulness, behavior of cooperation) of prosocial behavior and also six types (altruism, compliant, public, emotional, dire, anonymous) of prosocial behavior. It can be seen from the table that in the three dimensions of prosocial behavior, the mean value of behavior of social morale is highest and behavior of helpfulness and behavior of cooperation is low but both were almost equal.

The mean scores on types of prosocial behavior depicted that adolescents reported compliant prosocial behavior the most, followed by altruism, emotional, public, anonymous and dire prosocial behavior respectively.

Table 2: (see in last pge)

Table 2 indicates mean, SD scores and 't' value on dimensions and types of prosocial behavior (in terms of p values) of adolescent boys and girls. The mean scores on dimensions of prosocial behavior depicted that girls scored higher than boys on all three dimensions of prosocial behavior i.e. behavior of social morale (25.47±9.49>20.88±9.56), behavior of helpfulness (23.65±10.10>19.37±10.49), behavior of cooperation (23.71±9.72>19.03±10.61). Both boys and girls scored higher on behavior of social morale than other dimensions. Calculated 't' value shows significant differences in all three dimensions of prosocial behavior among adolescent boys and girls (p<.01).

Table 2 lucidly shows that there is a significant difference in the types of prosocial behavior between adolescent boys and adolescent girls. The mean scores depicted that girls scored higher than boys on six types of prosocial behavior. Adolescent girls scored higher than adolescent boys on altruism prosocial behavior (12.83±4.44>11.46±4.53), compliant prosocial behavior (13.40±5.16>11.47±5.23), emotional prosocial behavior (12.24±4.45>10.90±4.10), public prosocial behavior (12.50±4.92> 10.15±4.62), dire prosocial behavior (11.60±5.15>9.92±4.77) and anonymous prosocial behavior (12.36±5.42>10.19±5.15). There were gender differences in all type of prosocial behavior.

B:Categorization of adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior

Table 3: (see in last pge)

Table 3 contains mean scores and SD of prosocial behavior among adolescent boys and girls with high and low prosocial behavior. Comparison of high prosocial behavior among adolescent boys and girls shows that girls exhibit higher level of prosocial behavior. Comparison of low prosocial behavior among adolescent boys and girls shows boys scored higher on low prosocial behavior than girls.

C: Comparison of adjustment among adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior

Table 4: (see in last pge)

Table 4 indicates the level of adjustment among adolescent boys and girls with high prosocial behavior and adolescent boys and girls with low prosocial behavior. In the area of peer group adjustment revealed that adolescent boys and girls having high prosocial behavior had very good peer group adjustment whereas adolescent boys and girls having low prosocial behavior had moderate or poor peer group adjustment.Superior peer group adjustment was observed in girls (approximately 78 per cent) as comparison to boys (approximately 62 per cent).

Table 5: (see in last pge)

Table 5 presents mean scores, SD and 't' values of the adolescents adjustment among adolescent with high prosocial behavior and adolescent with low prosocial behavior. The overall 't' statistics revealed that there is significant difference between adjustment among adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior. Hence, the null hypothesis that there is no significant difference in the adjustment pattern among adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior was rejected.

Table 6: Correlation between adjustment pattern and prosocial behavior

Ho: *There is no significant relationship between adjustment pattern and prosocial behavior among adolescents*

Variables Areas of adolescents' adjustment and prosocial behavior	Pearson's Correlation'r'	'p' value
Peer group adjustment	.77	.00**
Self adjustment	.76	.00**
School adjustment	.61	.00**
Total adjustment	.82	.00**

****p<.01**

Correlation analysis between adjustment pattern and prosocial behavior were performed. Significant relation was found between adjustment pattern and prosocial behavior. Hence, the null hypothesis that there is no significant relationship between adjustment pattern and prosocial behavior among adolescents was rejected.

Discussion of the study - In the three dimensions of prosocial behavior, the mean value of behavior of social morale is highest and behavior of helpfulness and behavior of cooperation is low but both were almost equal. Similar findings were reported by study findings of Li xianghai (2011) which examined the basic condition of cooperation, helpfulness and the tendency of social morality and found the dimension of social morality is higher than the behavior of helpfulness and cooperation. Adolescents scored low on behavior of cooperation. In our real life, it sets much context of win-lose and in this context, people have two results: his own success or other's success. This win-lose context made people establish the concept of "rival" firmly; it directly stimulates people's competitive motive and action, reduces people's cooperative behavior. People develop a strong tendency of comparison in their social contact and expected the outcome of social comparison benefit the affirmation of one's self-worth; the desire of trying to affirm self-worth in social comparison made people tend to be above all others, they involved themselves with others by adopting a way of competition. This "advantage of psychological competition" is the social psychological reason why behaviors of cooperation are at a low level. The mean scores on types of prosocial behavior depicted that adolescents reported compliant prosocial behavior the most, followed by altruism, emotional, public, anonymous and dire prosocial behavior respectively.

Several interesting gender differences emerged from the

study. Adolescent girls scores higher than adolescent boys on all the dimensions and types of prosocial behavior. These results are similar to prior research on gender differences in prosocial behavior in adolescents (Fabes et al., 1999). The finding that adolescent girls reported more of these types of prosocial behavior than adolescent boys was consistent with prior findings **(**Eagly and Crowley, 1986). Furthermore, other researchers have shown that adolescent boys are more concerned with gaining others' approval than adolescent girls (Carlo et al., 1999). Taken together, these findings suggest that adolescent girls might be most likely to engage in prosocial behavior when internalized, empathetic motives are relevant and when there are fewer concerns with gaining others' approval such as altruistic, anonymous and emotional prosocial opportunities.The fact that adolescent girls reported more compliant prosocial behaviors than adolescent boys is consistent with strong gender role stereo types about such behavior and with existing social pressures for girls to comply with asked for assistance (Maccoby and Jacklin, 1974). However, Eagly and Crowley (1986) have not found overall gender differences in compliant prosocial behavior. Therefore, more research is needed to discern the apparent in consistencies between the present and prior findings. In contrast to these gender differences, adolescent boys reported a greater tendency to engage in public forms of prosocial behavior than did adolescent girls. This finding is inconsistent with results of prior studies examining actual performance of prosocial behavior that shows a greater tendency for men to help others when an audience is present. Interestingly, adolescent girls reported more emotional prosocial behavior than adolescent boys, which might lead to more helping in dire circumstances because many of these circumstances would be emotionally evocative.

Adolescent adjustment in the area of self, peer group and school is very essential for healthy personality of adolescents. An adolescent boy or girl who has realistic adjustment in all areas and realistic evaluation of self, he or she has inner harmony and enjoy life and environment. Such a person is happy and makes others happy and become more helpful for others and loves the world and life. In the area of peer group adjustment revealed that adolescent boys and girls having high prosocial behavior had very good peer group adjustment whereas adolescent boys and girls having low prosocial behavior had moderate or poor peer group adjustment. This could be because peers are an important additional source of influence during adolescence. Peer might serve as especially salient models of prosocial behavior. There is the possibility that the quality of peer relationship (perception of acceptance or rejection, adjustment between peers) influences the expression of prosocial behavior. Overall scores revealed that adolescents with high prosocial behavior scored higher mean scores and SD in all areas of adjustment than adolescents with low prosocial behavior. Adolescents are more prosocial when they come from stable and well adjusted family, have close and friendly relationship with their siblings, have kind, caring, helpful and accepting peer relationship and obtain experience taking care of the needs of others through school.

Conclusion - Adolescence has traditionally been viewed as a developmental period in which youth struggle to establish their own identity. The adjustment with self, in peer group and in school may play an important role. The cultivation of prosocial behavior has long been an important objective of compulsory education and youth development programs. Prosocial development is closely linked to various positive development outcomes for adolescence including academic success, positive self worth, positive relationship with others and higher social compitance. The present study revealed that adolescents with low prosocial behavior have been found to have poor adjustment in the area of school ,self and peer group. Parents may foster adolescent's prosocial behavior by modeling concern for the needs of others through such activities as engaging in volunteer work or being caring and helpful toward others experiencing distress. Parents will be arranging many social activities for their child. Prosocial behavior is present in home, school and as well as society also. For healthy adjustment with self parents provide healthy home environment in which equal opportunities for expression, acceptance, recreational and organization should be provided. Parents should be a good role model for adolescents.Let adolescents make a reasonable number of decisions on their own and accept the consequences of their choices. Establish family rules against inappropriate social and emotional displays (No Hitting; No Screaming). These rules should apply for the entire family. Help adolescents understand why limits are necessary.The adolescent has some sort of difficulty related to feelings, show empathy. That means putting oneself in the adolescent's place. Remember how one felt when one was little and so tell the child about a similar feeling. Perhaps the child will then learn to empathize with others. The parent must offer encouragement, give clear directions, offer praise when it is due, be patient, cheerful and friendly and avoid comparing in any way. Teachers, psychologist and counsellors should be able to provide the best learning experience to the adolescents to learn and practice appropriate social, moral behavior. School psychologists should collaborate with teachers and parents to create an environment that is stimulating to the adolescents' prosocial behavior. Explore the theme of helping, sharing, caring, cooperation, generosity, trust and kindness, concentrate on topics related to home and family ties or depict families working together. Parents, teachers and other adults in their life can increase the likelihood of behaving prosocially by helping them understand others' feelings and how their actions affect others, by modeling prosocial actions, by providing supportive rather than punitive socialization and discipline, by providing friends with opportunities to assist others and by attributing adolescent's prosocial actions to the adolescent's personality Moreover, it is the role of parents and teachers to facilitate the development of these behaviors in adolescents. Parents and teachers of adolescents must all work together to provide appropriate environment and also use effective ways in which adolescents feel comfortable with themselves and their surroundings and develop their prosocial skills.

References -

1. Berndt, T. J., & Keefe, K. (1996). Friends' infl uence on adolescents' adjustment to school.
2. Birch, S. H. and Ladd, G. W. (1996). Children's interpersonal behaviors and the teacher–child relationship. *Developmental Psychology* 34,934–946.
3. Bukowski, W. M. and Sippola, L. K. (1996). Friendship and morality. In W. M. Bukowski and A. F. Newcomb (Eds.), *The company they keep: Friendship in childhood and adolescence* (pp. 238-261). Cambridge: Cambridge University Press.

4. Carlo, G., Fabes, A. Richard, Laible, Deborah, Kristina, Kupanoff (1999). Early adolescence and prosocial moral behavior 2: The role of social and contextual influences .*Journal of early adolescence* 19(2),133-147.
5. Carlo, G., Randall, B. A. (2002). The development of a measure of prosocial behaviours for late adolescents. *Journal of youth and adolescents* 31, 31-44.
6. Carlo,G.,Crockett,L.J.,Reindall,B.A.,and research,S.C.(2007). A latent growth curve analysis of prosocial behavior among rural adolescence .JournalofResearchon Adolescence,17,2,301-324.*Child Development, 66*, 1312-1329.
7. Coie,J.D., Dodge,K.A., and Kupersmidth,J.B.(1990).Peer group behavior and social status.In S.R.Asher and J.D.Coie(P.P.17-59).Cambridge,U.K; Cambridge University Press.
8. Eagly, A. H. and Crowley, M. (1986). Gender and helping behavior: A meta analytic review of the social psychological literature. *Psychological bulletin* 100,283-308.
9. Eisenberg, N. and Fabes, R. A. (1998). Contemporaneous and longitudinal prediction of children's sympathy from dispositional regulation and emotionality. *Developmental psychology* 34, 910-924.
10. Eisenberg, N., & Fabes, R. A. (1998). Prosocial development. In N.Eisenberg & W. Damon (Eds.), *Handbook of Child Psychology, Vol. 4:Social, emotional and personality development* (5th ed., pp. 701–778).New York: Wiley.
11. Fabes, R. A., Carlo, G., Kupanoff, K. and Laible, D. (1999). Early adolescents and prosocial/moral behavior1: Role of individual processes. *Journal of early adolescence* 19, 5-16.
12. Fehr, E., & Fischbacher, U. (2003, October 23). The nature of human altruism. *Nature, 425,* 785–791.
13. Furman, W. and Masters, J. C. (1980). Affective consequences of social reinforcement, punishment, and neutral behavior. *Developmental psychology* 16, 100-104.
14. Haselager, G. J. T., Cillessen, A. H. N., Van-Lieshout, C. F. M., Riksen, Walraven, J. M. A. and Hartup, W. W. (2002). Heterogeneity among peer-rejected boys across middle childhood: Developmental pathways of social behavior. *Developmental psychology* 38, 446-456.
15. Larson, R., Richards, M. H. (1991). Daily companionship in late childhood and early adolescence: Changing developmental contexts. *Child Development.* 62, 284–300.
16. Li xianghai (2011).The investigation and thinking on undergraduates prosocial behavior during the period of social transformation. Available from http://www.seiofbluemountain.com/search/detail. php?id=1858. Accessed on 6.3.2012.
17. Maccoby, E. E. and Jacklin, C. N. (1974). *The psychology of sex differences. Stanford university press.* Stanford C A.New York: Academic.
18. Schonert, Richle K. A. (1999). Moral reasoning during early adolescence : Links with peer acceptance friendship and social behaviors. *Journal of early adolescence* 19, 249-279.
19. Simmons, R. G. and Blyth, D. A. (1987*). Moving into adolescence: The impact of pubertal change and school context*. Hawthorne, NJ: Aldine.
20. Staub, E. (1979). *Positive social behavior and morality, Vol. 1: Social and personal influences.*
21. Trembly, R. E., Vitaro, F., Gagon, C., Piche, C. (1992). A Prosocial scale for the pre school behavior questionnaire. Concurrent and predictive correlates. *International Journal of behavioral development* 15,227-245.
22. Wentzal,K.R., and McNamara,K.M,(1999).Interpersonal relationship,emotional distress and prosocial behavior in middle school.Journal of early adolescence 19,114-125.
23. Wentzel, K, B., Barry, C. M. and Caldwell, K. A. (2004). Friendship in middle school: influences on motivation and school adjustment. *Journal of educational psychology* 96,195-203.
24. Wentzel,Kathrym R. (2003). Sociometric status and adjustment in middle school: A longitudinal study. *Journal of early adolescence* 39, 463-481.
25. Zaff, J. F., Moore, K. A., Papilo, A. R. and Williams, S. (2003). Implications of extracurricular activity participation during adolescence positive outcomes. *Journal of adolescents research* 18, 599-630.

Table 2: Gender wise mean, SD scores and 't' values of prosocial behavior among adolescents

	Adolescents		't' value	'p' value
	Boys (N=248) Mean±SD	Girls (N=252) Mean±SD		
Dimensions of Prosocial Behavior				
Behavior of social morale	20.88±9.56	25.47±9.49	-5.38	0.00**
Behavior of helpfulness	19.37±10.49	23.65±10.10	-4.64	0.00**
Behavior of cooperation	19.03±10.61	23.71±9.72	-5.14	0.00**
Types of Prosocial Behavior				
Altruism	11.46±4.53	12.83±4.44	-3.47	0.00**
Compliant	11.47±5.23	13.40±5.16	-4.11	0.00**
Emotional	10.90±4.10	12.24±4.45	-5.49	0.00*
Public	10.15±4.62	12.5±4.92	-3.49	0.00**
Dire	9.92±4.77	11.60±5.15	-3.77	0.00**
Anonymous	10.19±5.15	12.36±5.42	-4.57	0.00**

**p<0.01

Table 3: Mean and SD scores of prosocial behavior among adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior

Boys		Girls		Total	
Adolescents with high prosocial behavior	Adolescents with low prosocial behavior	Adolescents with high prosocial behavior	Adolescents with low prosocial behavior	Adolescents with high prosocial behavior	Adolescents with low prosocial behavior
N=35 Mean±SD	N=72 Mean±SD	N=64 Mean±SD	N=42 Mean±SD	N=99 Mean±SD	N=114 Mean±SD
206.23±8.64	55.71±13.94	208.82±9.01	58.90±12.19	207.15±8.81	57.72±12.89

Table 4: Frequency and percentage distribution of adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior on adolescent adjustment scale

BOYS			GIRLS		
Category & range of scores	High prosocial behavior N=35	Low prosocial behaviorN=72	Category & range of scores	High prosocial behaviorN=64	Low prosocial behaviorN=42
	f(%)	f(%)		f(%)	f(%)
Peer group adjustment					
Very good 24 and above	22(62.86)	0 (0)	Very good22 and above	50(78.13)	2(4.76)
Good 19-23	8(22.86)	9 (12.5)	Good 17-21	12 (18.75)	8(19.04)
Moderate14-18	4(11.43)	18(25)	Moderate 12-16	2(3.12)	17(40.47)
Poor 09-13	1(2.85)	34(47.22)	Poor 07-11	0(0)	15(35.72)
Very poor	0(0)	11(15.28)	Very poor	0(0)	0(0)

BOYS			GIRLS		
Category & range of scores	High prosocial behavior N=35	Low prosocial behaviorN=72	Category & range of scores	High prosocial behaviorN=64	Low prosocial behaviorN=42
	f(%)	f(%)		f(%)	f(%)
8 and less			06 and less		
Self adjustment					
Very good25 and above	17(48.57)	3(4.17)	Very good23 and above	49(76.56)	2(4.77)
Good 20-24	13(37.14)	4(5.56)	Good 18-22	10(15.26)	11(26.19)
Moderate 15-19	3(8.57)	19(26.38)	Moderate 13-17	5(7.82)	13(30.95)
Poor 10-14	2(5.72)	43(59.73)	Poor 08-12	0(0)	15(35.71)
Very poor09 and less	0(0)	3(4.16)	Very poor07 and less	0(0)	1(2.38)

School adjustment					
Very good18 and above	10(28.57)	4(5.56)	Very good17 and above	55(85.94)	6(14.28)
Good13-17	22(62.86)	23(31.94)	Good 12-16	8(12.5)	22(52.38)
Moderate 08-12	3(8.57)	32(44.44)	Moderate 07-11	1(1.56)	12(28.57)
Poor 03-07	0(0)	13(18.06)	Poor 02-06	0(0)	2(4.77)
Very poor02 and less	0(0)	0(0)	Very poor01 and less	0(0)	0(0)
Total adjustment					
Very good66 and above	17(48.57)	0(0)	Very good67 and above	38(59.37)	0(0)
Good 58-65	12(34.28)	2(2.78)	Good 59-66	16(25)	2(4.77)
Moderate 50-57	4(11.43)	3(4.17)	Moderate 51-58	8(12.5)	5(11.90)
Poor 42-49	1(2.86)	16(22.22)	Poor 43-50	2(3.13)	13(30.95)
Very poor41and less	1(2.86)	51(70.83)	Very poor42 and less	0(0)	22(52.38)

*Figures in parenthesis indicate percentages

Table 5: Mean, SD scores and 't' values of adolescents adjustment among adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior

Ho: ***There is no significant difference in the adjustment pattern among adolescents with high prosocial behavior and adolescents with low prosocial behavior***

Areas of adolescent's adjustment	Category of prosocial behavior		't' value	'P' value
	High prosocial behavior (N=99)Mean±SD	Low prosocial behavior (N=114)Mean±SD		
Peer group adjustment	23.86±3.98	13.02±4.44	18.639	.00**
Self adjustment	24.21±3.31	14.61±4.19	18.352	.00**
School adjustment	17.10±2.21	12.09±3.60	12.010	.00**
Total adjustment	64.77±6.98	39.89±8.74	22.704	.00**

**p<.01

Comparative Analyse of Customer's Satisfaction regarding Milk Products in 'Bhilwara- Chittorgarh Dugdh Utpadak Sahakari Sangh Ltd' Saras and 'Gokul Dairy'

Dr. N.S. Rao * Shruti Mathur **

Abstract - The work contains a short characterisation of customer's satisfaction on the market of SARAS and GOKULdairy products.In this study, it had been shown that customer satisfaction should become one of the main objectives of the enterprise. The study of the customer satisfaction shows that whether the customer is fully satisfied with the 'saras' milk products or Gokul milk products not. In this study it had been analysed the overall satisfaction of the customer in today's world. On the other hand, the degree of satisfaction provided by the goods or services of a company as measured by the number of repeat customers. My main objective of the study is to analyse the customer satisfaction regarding the different milk products in Bhilwara Dairy. In today's competitor's world, where cutthroat competition is prevailing in the market, theoretical knowledge is not sufficient. Beside this everybody needs to have practical knowledge, which would help an individual in his/her carrier activities. This study tells how the customer's feels about their product. The attitude of customers can be improved through this study. A study of customer satisfaction gives the management an indication of general level of satisfaction among customers.I worked in Saras and gokul dairy which processes and markets milk products which are pure and consummate. During this study I learnt how to build a good rapport with staff and gained knowledge how to satisfy the customer through provide the good milk products. I also learnt the processes that the milk passes through before reaching the final consumers. On the other hand, I also analysed that how the management keeps its employees satisfied and retain them. Enterprises survive on the market by selling various kinds of products. Therefore, they should pay special attention to their clients.Recognising client's needs makes it possible to provide them with such products that meet their expectations, bring them satisfaction and are to their liking. **Key words -** customer satisfaction, dairy products, cutthroat competition, value for the customer.

Introduction - Bhilwara Zila Dugdh Utpadak Sahakari Sangh Ltd. In India White Revolution or Dairy industry was introduced in a small town name "kheda" of Gujarat, which was monitored by the National Dairy Development Board. The Head office of the N.D.D.B is situated in Anand district. This board has taken initiative of establishing Dairy Sangh's in different parts of the country. In relation to above, there are 21 different districts of Rajasthan in which the board had established Dairy sangh's & the head quarter of these sangh's was situated in the Pink city of Jaipur. The monitoring of the Dairy sangh's was being done by the N.D.D.B.

In today's competitive world the customer is the king. If a producer is not able to fulfil the needs of the customer, the customer has the option of going in for the other brands of products that are available in plenty. In order to capture varying needs of the consumer of today Bhilwara Milk union has maximum four varieties of milk in their product portfolio. This will help them to capture a greater customer base in the market. This union was established in August, 1972 with average milk procurement of 250 litres. Per day. Bhilwara Milk Union was registered under Rajasthan co-operative act 1965 with the motto to pay remunerative price to its milk producers around the year at their door step along with technical input services such as animal health care, supply of balance cattle feed, supplements and breed improvement programmes through Artificial Insemination and Natural Services and to provide quality products to consumer at competitive price. Bhilwara Milk Union is an ISO 9001:2008 & IS 15000 (HACCP) certified organisation. This Milk Union is affiliated to Rajasthan Co-operative Dairy Federation Ltd., Jaipur.

Management of Saras

Chairman	Mr. Ratan Lal Choudhary
Managing Director	Mr. L. K. Jain
Establishment year in Bhilwara	1972
Certifications	ISO 9001-2008IS 15000 (HACCP Food Safety ManagementSystem)
No. Of District Cooperative Societies	948
Production of milk per day	186.73 Lakh Litres Per Day
Address	Bhilwara Zila Dugdh Utpadak Sahkari Sangh Limited5 Km., Ajmer Road, Bhilwara (RAJ) – 311001
Telephone	01482-324731
Turn Over	200-220 crore

* Director, Vidhyapeeth University (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Mewar University (Raj.) INDIA

Competitor of SARAS Dairy Bhilwara - The main competitor of SARAS dairy (BHILWARA) in Rajasthan is GOKUL DAIRY and loose Milk. With the coming year more brands will come in the market in the form of the competitor but now a day still Bhilwara Dairy is holding a strong position among its competitors.

Fresh Milk by-products:

- Chaach
- Butter
- Panner
- Flavoured Milk
- Shrikhand
- Rasgulla
- Milk cake
- Mawa
- Cheese
- Ghee

Gokul Dairy Company Profile: - In March, 1963, The Gokul Dairy started its operations with just 200 liters per day milk procurement. Today, we procure nine lakh liters per day and aim is to collect twelve lakh liters by the year 2015. Gokul's annual turnover has reached Rs.1300 crores mark. Gokul has brought a new light in the life of families of the five-lakh odd milk producer-suppliers and the group of two thousand strong employees, transport contractors, distributors and retailers.

Gokul has achieved this quantitative growth without compromising on the quality of its products. This very passion for the highest quality standards has helped Gokul secure this kind of quantitative growth and to establish itself as a brand in a highly competitive market. Millions of our consumers trust our quality since 50 years.

Products - Milk, Shrikhand, Ghee, Table Butter, Dahi, Skimmed Milk Powder, Desi Butter (Desi Loni) , Lassi, Paneer and Cooking Butter.

Objectives of the study -

- To evaluate the customer satisfaction regarding the milk products
- To gain knowledge about the co-operate societies
- To identify the customer expectations
- To find the customer attitude towards milk by-product in SARAS
- To get practical observation of industry
- Market quality processed milk and milk products to the consumer

Research Methodology -

1) Research Design – Descriptive Research

2) SOURCE OF DATA

- **Primary Data –** Questionnaire
- **Secondary Data –** company Profile, Newspaper and Magazine

3) Sample size – 16

Data Analysis -

1 Employee's reasons to buying Saras and gokul product

Importance - Here in this analysis reasons had been identified to buying the saras product. Generally people buying the product when its quality is good, it is available nearby or rate is reasonable for them. When I visited employees, they have given their opinion about the milk products. The importance of this questionnaire is to identifying the reasons, that how many employees buying saras product and Gokul product, and why?

Table 1.1

Customers Rating

Reasons for buying the milk products	Saras	Gokul
Quality	5	1
Easy available	0	4
Rate	3	1
Taste	0	2
Total	**8**	**8**

Respondent's views - In this table no 1.1, we can see that 5 respondents buying the Saras product and only 1 respondent buy Gokul product. Here we can easily differentiate that Saras milk product's quality is good better than Gokul.

In the second option Saras is not easily available to the respondents whereas, Gokul milk product is available. We can see that o respondent's opinion says that it is not available and 4 respondents are in favour of Gokul products. In another option Saras rate is better that Gokul product. Maximum respondents buy Saras product rather than Gokul. Sara's product is very reasonable for them.

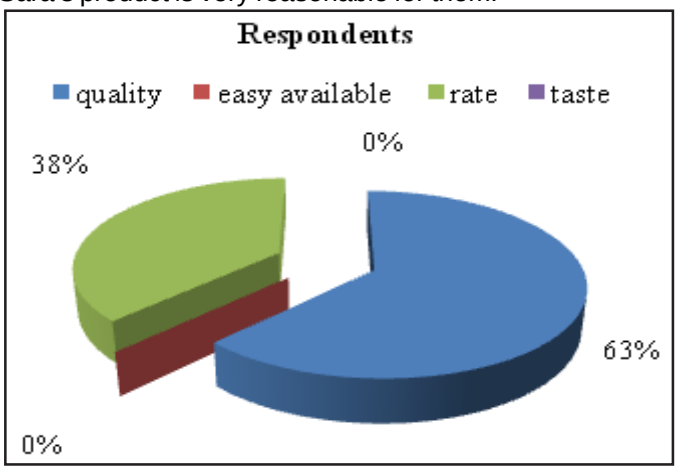

Analysis - In this analysis we can see that total 62% people buy this Saras and Gokul milk product due to its quality. I analysed the total percentage of the milk product whereas, 38% customers buy just because of rate. They differentiate the rates between these two products. If Saras milk product is cheaper than the Gokul product, customer buy the saras product and if Gokul milk product is cheaper than the saras, then in such case customer give more importance to the Gokul product.

2. Factors affecting the customers while buying dairy products

Table 2.1

Customer Rating

Different factors for	Saras	Gokul

the employees while buying the dairy products		
Sweetness	2	4
Schemes	1	2
Packaging	4	1
Softness	1	1
Total	**8**	**8**

Respondent's Views - Different respondents have their different opinion. Here in both the organization total 6 respondents, those who are buying the dairy products due to sweetness factor. In Saras we can see 2 respondents and on gokul there respondents

Schemes are always attract the customer to buying the products. In this analysis, there are only 1 respondent who buy Saras product due to schemes and 2 respondents buy the gokul milk product.

Packaging and softness are also the main factors which attract the respondents or customer to buying the product. Here ratio is equal to buying both the products.

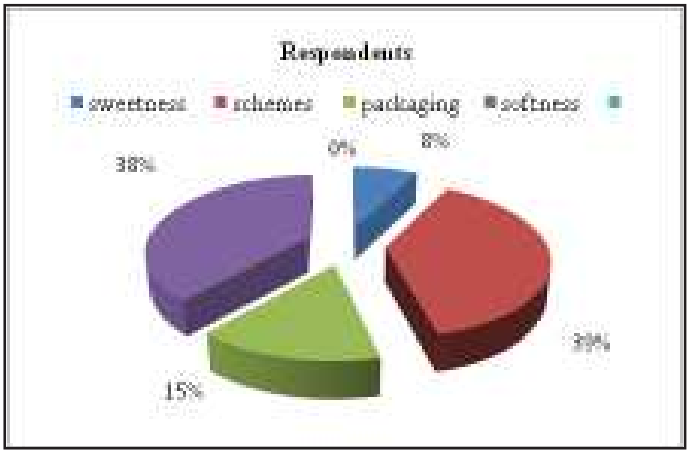

Analysis - In this pic chart it had been analysed that which factor is affecting the most to the customers. According to the competitor world, every organization has to update their schemes and policies to attract their customers. Here the Saras and Gokul dairy customers are most affected by the schemes of the milk product. That is the only factor which affects or attracts them to buying the products. 39% people rated the schemes in the given questionnaire. Whereas, 8% people says that they buying this because of sweetness and 38% customers affect by the softness of the milk product. Only 15% customers consume the saras and Gokul milk product because of packaging of the product.

3.Employee's primary condition during buying the milk products

Table 3.1

Primary considerations factors which attract employees	Saras	Gokul
Brand & Image	1	2
Service	4	1
Support	2	2
Product Quality	1	3
Total	**8**	**8**

Respondent's view: Respondents buying the products when the market value is good. In Sara's milk products one respondent said that he buys the product due to brand and image and on the other hand 2 respondents said the same. If services are good from the organization, respondents also prefer that product. Total 5 respondents says that services are good that's why they buy the Saras and gokul milk product Support and product quality are also matters. People see the quality of the product, if they feel good and satisfied from the product, in such a case they buy it. Total 4 respondents says that they satisfied from the product quality.

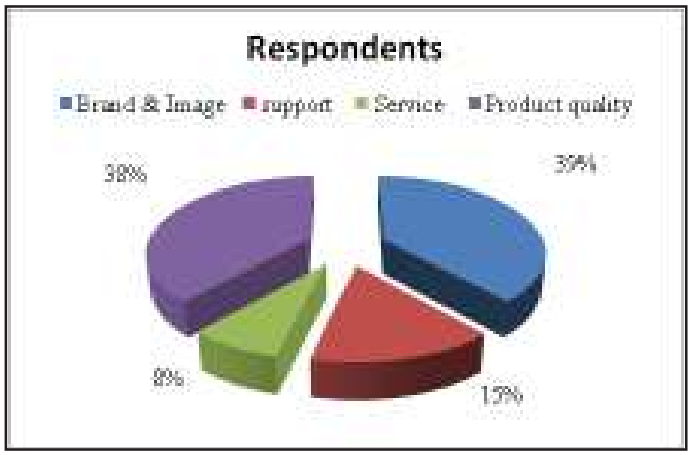

Analysis - Different customer has a different opinion about the product. Here 39% people buy the product due to brand & image. If product is working well in market, customer attracts towards that brand and buys it. Only 38% people buying due to quality of the product, and 15% customers buy due to support from the others. People generally buying the milk products, when they feel satisfied from that product.

Suggestions -

- Customer's expect the quality or availability from the organization.
- Brand & Image is the primary consideration of the consumer's.
- According to the analysed it has been assessed that people have more faith in Saras.
- Attract the consumer through their quality service & supply services or some new attractive schemes etc.
- People have confident in quality in milk products.
- Now a day people more prefer quality of product than price.
- Majority of customer prefer to purchase milk products from dairies.

References -

1. http://www.bhilwaradairy.com/
2. http://www.bhilwaradairy.com/contact.php
3. http://www.bhilwaradairy.com/index.php
4. http://www.bhilwaradairy.com/products.php
5. http://www.bhilwaradairy.com/board.php
6. http://catalog.bhilwaraonline.in/Business/sarasdairy
7. http://catalog.bhilwaraonline.in/CompanyProfile/sarasdairy
8. http://www.bhilwaraonline.in/BhilwaraDairy.aspx

Comparative Analysis Of Job Satisfaction Of The Employees In BSL & Mayur Fabrics Industry

Dr. N.S. Rao * Shruti Mathur **

Abstract - Job satisfaction refers to how well a job provides fulfilment of a need or want, or how well it serves as source or means of enjoyment. It is the degree to which individuals feel positive or negative about their jobs. It is also the collection of feelings and trust people have about their current jobs. On the other hand, we can also say that, job satisfaction is a positive feeling about your job resulting from an evaluation of its characteristics.

My present study investigates the employee's satisfaction towards their job. Today, every organization has to face highlycompetition. Therefore organizations try to do right thing at the right time.In that situation Human Resource Management plays major roll to achieve organizational goals. Job Satisfaction is the one of major concept inHuman Resource Management.Employee/worker satisfaction is a measure of how happy workers are with their workingenvironment and their job.If employees are happy or satisfied with their job applications, they will be more likely to be produce more, take fewer days off, and stayloyal to the company.There are many factors in improving or maintaining high employeesatisfaction, which wise employers would do well to implement.

Job satisfaction is not the same as motivation, although it is clearly linked. Job design aims toenhance job satisfaction and performance; methods include job rotation, job enlargement and jobenrichment. Other influences on satisfaction include the management style and culture, employeeinvolvement, empowerment and autonomous work groups, pay, work responsibilities, variety of tasks, promotional opportunities the work itself and co-workers.

Key Words: Job Satisfaction, Work responsibilities, organization behaviour, positive feelings, high employee satisfaction, human resource management.

Introduction -

BSL Company Profile

Date of Establishment	1970
Revenue	72.223 (USD in Millions)
Corporate Address	26, P B No 17, Industrial Area Gandhi Nagar, Bhilwara-311001, Rajasthan
Management Details	**Chairperson -** Arun Churiwal **MD -** Arun Churiwal **Directors -** A KChuriwal, AN Choudhary, Arun Churiwal, B D Mundhra, M K Doogar, Nivedan Churiwal, Praveen Gupta, Praveen Jain, R P Khaitan, Ravi Jhunjhunwala,
Business Operation	Textile
Background	BSL is the second member of the LNJ Bhilwara Group, BSL Ltd, was born in the desert state of Rajasthan in the year 1971 in the town of Bhilwara.Today, as a multi-million dollar company, it is one of the prominent members of the $363 million LNJ Bhilwara Group.
Financials	The product profile of the company covers materials ranging from **Financials Total Income** - Rs. 2961.382 Million (year ending Mar 2013)**Net Profit** - Rs. 3.461 Million (year ending Mar 2013)
Auditors	AL Chechani & Co.

Mayur Company Profile

Company Name	MAYUR FABRICS (P) LTD.
Year Established	1988
Corporate Address	G-75 & 76, RIICO EXT., PUR ROAD, Bhilwara - 311001, Rajasthan, India
Export Turnover	Rs 10 Lakhs
Annual Turnover	Rs 50 Lakhs
Products Supplier and	Fabrics, suitings, shirting's,
Manufacturer	fabrics cotton, fabrics synthetics, synthetic clothes, workmen dresses, industrial cloth and fancy suiting
Vision	To be leading global vendor to all the major OEMs.
Mission	- Frugal operations.

* Director, Vidhyapeeth University (Raj.) INDIA

** Research Scholar, Mewar University (Raj.) INDIA

	- Focused investments in R&D. - Strategic alliances with global leaders. - Strong Interpersonal relationships with all stake holders.

Factors Influencing Job Satisfaction of Employees in Industries -

1. The result of my study shows that working condition in both the industry is an important factor. Good working atmosphere and pleasant surroundings help increasing the production of industry. Working conditions are more important to women workers than men workers.
2. My study has revealed that the married person finds dissatisfaction in his job than his unmarried counterpart. The reasons stated to be are that wages were insufficient due to increased cost of living, educations to children etc.
3. After the investigation of the BSL & Mayur industry that age has also been found to have a direct relationship to level job of satisfaction of employees. In some groups job satisfaction is higher with increasing age, in other groups job satisfaction is lower and in other there is no difference at all.
4. My present study also show that most of the workers and employees felt satisfied when they are paid more adequately to the work performed by them. The relative important of pay would probably changing factor in job satisfaction or dissatisfaction.
5. Important factor which influence the job satisfaction of the employees in the industry is Education. It that most of workers who had not completed their school education showed higher satisfaction level. However, educated workers felt less satisfied in their job.

Research Methodology - The proposed research work is basically an exploratory in nature .However an effort will be made to quantify the results.

Sample Size – 20

Research Design - Descriptive

Method of Data Collection – Questionnaire

Statistical Technique – Chi- square Test

Number of Industries - two

Hypothesis -

H0 **–** Job satisfaction and working environment factors are always motivate employees towards their job.

H1 – Job satisfaction and working environment factors are less motivate the employees towards their job.

Objectives of the Study -

1. To study the job satisfaction of employees in BSL & Mayur Industry.
2. To measure the satisfaction level of employees on the basis of the given questionnaire.
3. To find out the views and opinions of the employees towards their working enviourment.
4. To find the factors which motivates the employees in given study?

Analysis &Interpretation -

1. Factors motivates the employees to increase their efficiency in an organization

Importance - Here in this analysis the factors has been find out, which motivates the employees in an organization. They are doing their work with their full efficiency. Here I have taken four major factors, those who generally motivate or encourage the respondents. Some factors are also helpful for the employees to increase their productivity level i.e. salary or promotion. In this questionnaire respondents have given their different views, which are as follows.

Respondents' views - Within this study there are total 20 respondents selected and the important factors had been identified which motivates the employees.

- In BSL Company we can see that there are total 3 respondents who say that the salary increment factor is most important factor which motivates them towards their job. From this factor they can stay for the long run in the company. As well as in Mayur industry there are also 3 respondents whose opinion is same.
- In the given analysis there are 2 in BSL and 4 in Mayur Company, say that promotion factor is motivate them.
- In table no. 1.1, leave factor is also motivates the employees to do work for long run in the organization.
- On the other hand, the motivational skill factor is also important for the employees. There are total 5 respondents in the both company considered the

∑ motivational skills as an imp element.

Table 1.1

Factors which motivates the employees	BSL	Mayur	Total
Salary Increase	3	3	6
Promotion	2	4	6
Leave	2	1	3
Motivational skills	3	2	5
	10	10	

Analysis

Total Estimate Value - Here the total estimate vale has been found out through the data and information which has been given in above table.

Table 1.2

Options	Respondents		Total
	BSL	MAYUR	
1	.6	.6	12
2	.6	.6	12
3	.3	.3	6
4	.5	.5	10

Here, we measure the total estimate value of both the companies through applied the "Chi-square Test" Formula.

$$\sum = (O-E)^2 \div E$$

Let us take the hypothesis that there is no significance difference in the respondents answer to question no. 1 apply non-parametric that $X^2 =$ $= (O-E)^2 \div E = 60.2$ total value of F^2at 6 DF 5% of level of significance =12.6 since the

evaluated value of X^2 (60.2) is higher than the table value of X^2 (12.6) our null hypothesis is rejected.

Interpretation - In both the companies the salary increment and promotion factors are the most important factors which motivate the employees in their work. If employee salary increases time to time, he is happy with their work and tries to put more effort to do the same. On the other hand, if employee/workers want promotion, in such case upper or higher level management should give him to increase their production unit. If employee is happy with all four options in the given questionnaire, they might prove themselves as the best asset for the organization.

2. Measuring the overall satisfaction level of the employees

Importance - Generally respondents are working in an organization and they easily get irritates from their duties from some reasons. I collected some opinion from the respondents during visiting the company.Here, I analysed that overall level of satisfaction of the employees.

Respondents Views - Within this study there are total 20 respondents had been selected and the overall satisfaction of the employees towards their job had been tried to identify through the given options.

- Here we can see that in BSL group there are total 5 respondents who say that they are satisfied with their job and 2 are in Mayur said the same
- Total 5 respondents in both the companies are highly satisfied with their job.
- 2 are in BSL and 1 in Mayur are dissatisfied with their work they rated 3 option as in their opinion.
- 5 are highly dissatisfied from their task or work, said that they aren't overall satisfied.

Table 2.1

Satisfaction level of the employees	BSL	Mayur	Total
Satisfied	5	2	7
Highly satisfied	2	3	5
Dissatisfied	2	1	3
Highly dissatisfied	1	4	5
	10	10	

Analysis

Total Estimate Value:

Table No 2.1

Options	Respondents		Total
	BSL	MAYUR	
1	.7	.7	14
2	.5	.5	10
3	.3	.3	6
4	.5	.5	10

Here, we measure the total estimate value of both the companies through applied the "Chi-square Test" Formula.

$$= (O-E)^2 \div E$$

Let us take the hypothesis that there is no significance difference in the respondents answer to question no. 2 apply non-parametric that X^2 = = (O-E) $^2 \div$ E = 82 total value of F^2 at 6 DF 5% of level of significance = 12.6 since the evaluated value of X^2 (82) is higher than the table value of X^2 (12.6) our null hypothesis is rejected.

Interpretation - In this present study in both the companies, people are generally satisfied with their job. They are focusing on their task rather blaming others for their mistakes or faults. In today's era, employees are hardly wanted to do their work but sometimes they satisfy with their job or upper level management.

3. Analyse the employee's feeling towards their working environment

Importance - In every organization different personalities are working together. Every person has their own feelings and views about different perspectives. Here I analysed the personal feelings of the respondents from the given questionnaire people have generally make their opinion or feelings according to their working environment.

Respondents' views - In my present study there are total 20 respondents had been select and feelings had been found out the employees for their working environment.

- In every industry working condition should be according to the employees. Here there are 3 respondents whose feel that working conditions and environment are very excellent. They are satisfied with it. But in Mayur there are only 2 respondents agreed for the excellent working environment.
- Total 4 respondents are said that they feel good about
Σ the working environment.
- 5 are satisfied with the same
- And, in both the companies there are total 6 respondents whose are not even satisfy with companies working environment.

Table 3.1

Find out the feelings of the employees for their working environment	BSL	Mayur	Total
Excellent	3	2	5
Good	2	2	4
Satisfactory	3	2	5
Not satisfactory	2	4	6
	10	10	

Analysis

Total Estimate Value -

Table no 3.2

Options	Respondents		Total
	BSL	MAYUR	
1	.5	.5	10
2	.4	.4	8
3	.5	.5	10
4	.6	.6	12

Here, we measure the total estimate value of both the companies through applied the "Chi-square Test" Formula.

$$= (O-E)^2 \div E$$

Let us take the hypothesis that there is no significance difference in the respondents answer to question no. 3 apply

non-parametric that X^2 = = $(O-E)^2 \div E$ = 69.9 total value of F^2 at 6 DF 5% of level of significance = 12.6 since the evaluated value of X^2 (69.9) is higher than the table value of X^2 (12.6) our null hypothesis is rejected.

Interpretation - In today's era, in every organization, employee wants the perfect working environment for doing work. According to them environment should be very clear and specific. Job description must be very clear and each employee should be knowledgeable towards their task. Here we can see that in both companies overall people say that working environment is good or match with their skills and abilities. Every employee should able to make consistency with their different personality members.

Suggestions -

- In both the industries the important factor is the salary increment factor which motivates the employees/ workers towards their job.
- In employee's opinion, companies sometimes recognize or acknowledge their work or sometimes not.
- It is not necessary that people always overall satisfy with their job. Some are satisfied or some are not. In BSL Company some people are satisfied with their job description and feel that this job is acceptable for them.
- Working environment should be very good satisfactory for all the employees in the industry.
- A higher level of job satisfaction will increase motivation of the employees in the companies in their daily work.

References -

1. "Job Satisfaction: Fact or Fiction" edited by "Don Wicker" in 2011.
2. "Teacher Morale, Job Satisfaction and Motivation" by "Linda Evans" in 1998.
3. "Measures of Job Satisfaction, Organisational Commitment, Mental Health and job-related well- being" edited by "Chris Stride, Toby D. Wall, Nick Catley" in 2008.
4. "Job Satisfaction" edited by "Robert Hoppock" in 1935.
5. http://www.bslltd.com/company-profile.html
6. http://www.religaresecurities.com/Fundamental/company profile.a sp?Co mpanyC ode=16 0 4 0 0 0 6 & CopanyName=BSL+Ltd.&MajorSector=1&Ticker=BSL
7. http://bhilwarayellowpages.com/business-directory/textiles/manufacturers/mayur-fabrics-pvt-ltd
8. http://www.tradeindia.com/Seller-1787730-MAYUR-FABRICS-P-LTD-/

Σ

****

Technological Development In Indian Banking

Dr. Jaya Sharma *

Abstract - Indian banking has been changing according to the demand of time as it is evident from the global scenario that those who will not keep up shall be eradicated from the world .At the time of independence the Indian banking system was working with over 600 commercial banks operating in the country. Then the Government of India created State Bank of India (SBI). From that time till date there have been number of changes in the organization of Indian banking system and the way Indian banks operate. The major changes have been due to the involvement of technology in the banking system. The technological development has converted banking into e-banking. Various e-services are being offered by Indian banks and they have allowed Indian banks to operate globally and provide better and more efficient customer service. The present paper is an attempt to explain the technological development in Indian banking. The present work is a part of the Minor research project on banking sector sponsored by the UGC CRO Bhopal."

Introduction - Banking has been the root industry for the Indian economy and being a developing country it becomes necessary for us to be growth oriented. Bank computerization is a positive step in accelerating the growth with the involvement of computers and communication services. The Information and communication technology (ICT) has helped banks perform their work more efficiently. It has made it possible for the banks to work better with the same manpower and capital. The ICT has brought vital challenges for the banks in terms of performance and customer services. Looking at the benefits like better customer services, cost reduction, global reach etc. banks have invested in ICT and have adopted it as a major initiative.

Before computerization banking industry was performing two types of functions. The primary function was to provide loans and advances with acceptance of deposits from customers and the secondary function was to provide additional facilities like issue of demand draft, foreign exchange, locker facility and pay orders. In those days not only the banks but customers as well faced many problems like long queues, bulk data storage requirement and many more. Also Indian banks remained backward among the foreign banks. Computerization in banking sector/financial sector dates back to 1963, when Life Insurance Corporation introduced computers for maintenance and processing of insurance policies. Later on Reserve bank of India and State Bank of India installed computer systems for processing reconciliation of inter branch transactions, processing statistical data and for research purposes while the rest of the work was left to be handled easily with help of calculators, accounting machines and cash registers.[1] The changing operating environment of banking sector due to globalization and advances in technology has posed great competition among the banks. In the recent years Information and Communication Technology (ICT) has acquired a predominant role in the banking sector in the form of reduction in cost and speedy delivery of services. Likewise the Indian banking sector has also been forced to switch over the working procedure through new technological innovation of ICT. The process of computerization in the Indian banking sector has been very slow especially among the public sector banks. The computerization of public sector banks had to face many hurdles due to opposition from unions due to fear of losing their job also it was very difficult for the banks to connect the rural and semi urban area branches for the modernization of their working. In 1966 the first bipartite settlement was signed between Bankers Association and Employees Unions on computerization. The second bipartite settlement on computerization and mechanization was signed in 1988. The agreement specified the area of computerisation and number of computers to be used in banking. In its initial stage the computerisation was restricted to the certain areas like inter branch cards, transfer of funds through improved systems, personnel inventory etc. As per the said settlement the banks could own their computers or they could hire them from other agencies. If the banks wanted advanced computers other then mini computers they could own only one with a capacity of not exceeding that of the Reserve Bank of India's computers.

Reserve Bank of India has set up various committees for the technological advancement in the banking sector of India. Upto 1980 no major technological implementation was achieved. The land mark in the area of computerisation of banks was the setting up of Rangarajan Committee on computerisation and mechanization of banking services of 1983-84. As a culmination of the implementation of the

* Asst. Professor (Commerce) Govt. Girls College, Sehore (M.P.) INDIA

recommendations of various committees like Saraf committee, Shere Committee and Vasudeven Committee, today the transactions of all large branches of banks in India have been fully computerized; banks have moved in the direction of inter-branch and inter-bank connectivity. Electronic Funds transfer and delivery versus becoming very demanding and it is the extensive use of technology that will enable banks to satisfy adequately the requirement of customers. Thus the four major objectives of computerization in banking are: [2]

- Improvement in customer service,
- Better house-keeping,
- Faster decision making and
- Increase in productivity & profitability.

Computerization of banking business got high importance in 2005-06, Between September 1999 and March 2006, public sector banks incurred an expenditure of Rs. 10676 Cr. on computerization and development of communication networks[3].The banks have adopted internet banking looking at the following distinctive features[4].

1. It removes the traditional geographical barriers as it could reach out to customers of different countries / legal jurisdiction. This has raised the question of jurisdiction of law / supervisory system, to which such transactions should be subjected,
2. It has added a new dimension to different kinds of risks traditionally associated with banking, heightening some of them and throwing new risk control challenges,
3. Security of banking transactions, validity of electronic contract, customers' privacy, etc., which have all along been concerns of both bankers and supervisors have assumed different dimensions given that Internet is a public domain, not subject to control by any single authority or group of users,
4. It poses a strategic risk of loss of business to those banks who do not respond in time, to this new technology, being the efficient and cost effective delivery mechanism of banking services,

The recent and most commonly used from of banking are now available as various channels like Automated Teller Machines (ATMs), Internet Banking, Mobile Banking, Phone Banking, Telebanking, Electronic Funds Transfer (EFTs), Electronic Clearing Services (ECSs), Debit/Credit/Smart Cards, Door step banking, Core Banking solutions(CBS), Point of Sale terminals(POS), NEFT, RTGS, MICR clearing etc. Today Indian customers have shifted from old fashioned passbook to the latest transaction slip form an ATM or internet banking service. ICT allows customers to have internal control over their bank account it also helps the banks to be able to cater to the needs of customers via strengthing their work efficiency. Now there are no queues in the banks to get the passbook printed or get the money as the services are available through cash deposit and withdraw machines which are available 24*7. Customers can check their balance and perform financial activities setting at the convenience of their home itself. Applying for various banking services like loan request, overdraft, transfer of funds between accounts etc. are easily accessible for the customers. Banks too are able to offer more product and services with the help of online services. Even insurance, share trading facilities are also being provided. Tremendous progress took place in the field of technology which has converted the world into a global village and it has brought remarkable changes in the banking industry. Branch banking in the brick and mortar mode has been transformed into click and order channel mode.[4] Indian banks are investing heavily in the technologies such as branch automation and computerization, core banking, tele-banking, mobile banking (M-banking), internet banking, automated teller machine (ATMs), data warehousing etc. ICT innovations in the previous few years have changed the landscape of banks in India (Mittal and Dhingra, 2007)[5]

The core banking has been a major step towards adopting the ICT in banking. It is important to note that presently almost 98 percent of the branches of Public Sector Banks are fully computerized and within almost 90% of the branches is on Core Banking platform (CBS). Computerized branches have increased from 77.5% in 2006 to 97.8% in 2010.The proportion of branches under Core Banking Solutions (CBS) has increased rapidly from 44.5 % at the end March 2007 to 90% in 2010.[6] The Indian banks are investing huge amount on computerisation and as a result the computerisation of the banking sector is almost complete, according to the RBI's latest report on Trend and progress of Banking in India. The report states that PSBs spent Rs. 17,897 crore on computerisation and development of communication network from September 1999 to March 2009. The proportion of PSBs branches that achieved full computerisation has increased from 93.7 percent to 98% in 2010. As on March 2009 out of 27 PSBs, 15 have put their branches on the core banking solutions (CBS) platform. These banks are Andhra Bank, Corporation Bank, Indian Bank, Oriental Bank of Commerce, Punjab National Bank, Syndicate Bank, Union Bank of India, Vijaya Bank, State Bank of India and its six associate banks. Banks that may need to step up the pace of putting their branches on CBS include Punjab and Sind Bank (1.1 per cent of the total branches on CBS), Allahabad Bank (9.7 per cent), Central Bank of India (30.8 per cent), and Canara Bank (38.6 per cent). CBS enables banks to automate their core operations through integration of communication and information technology. This platform allows a bank's customer to operate accounts from any branch of the bank or via Internet and mobile phone. "The total number of branches of public sector banks which have implemented CBS increased from 35,464 as on March-end 2008 to 44,304 as on March-end 2009. The process of computerisation of the banking sector, which is regarded as the precursor to other technology initiatives, is almost on the completion stage. In 2008-09, the number of ATMs as a percentage of branches increased. It was 40.2 per cent (35.4 per cent) for nationalised banks; 56.9 per cent (47.2 per cent) for old private sector banks;

and 296.6 per cent (279.9 per cent) for new private sector banks. Of all the ATMs installed in the country as at March-end 2009, new private sector banks had the largest share in off-site ATMs (7,480), while nationalised banks had the largest share in on-site ATMs (10,233).[7] If we look at the involvement of ICT in the Indian banking sector the following table 1.1 shows the increase in the number of electronic transaction by the Scheduled Commercial banks. Various e-channels like Electronic Clearing services, National Electronic Funds Transfer, Real time Gross Settlements, Debit and credit cards have shown an increase in last year's.

Table1.1 (Table see in below)

Thus it is evident that the Indian banking has become technologically strong and is now able to compete globally. Slowly but steadily the banking sector of India has been successful in providing best product and services to their customers through adoption of technology.

References -

1. Uppal R K,' Banking and Information Technology', Anmol Pub. Pvt. Ltd. New Delhi, page 12.
2. Uppal R K,' Banking and Information Technology', Anmol publications pvt. Ltd. New Delhi 2010.
3. Report on Trend & Progress of Banking in India, 2005-06, p.97
4. Report on internet banking, RBI publications.
5. Roshan Lal & Rajni Saluja, "E-banking: The Indian Scenario", Asia Pacific Journal of Marketing & Management Review , Vol. 1(4), December (2012), pp.16-24.
6. Performace Higlighes of PSBs various issues.
7. Mittal R. K. and Dhingra Sanjay, (2007), Assessing the Impact of Computerization on Productivity and Profitability of Indian Banks, Delhi Business Review X Vol. 8, No. 1 (January - June 2007)
8. Newspaper like , the businessline, the hindu etc.

Table1.1 Volume and value of Electronic Transactions by SCBs
(Volume in million, value in billion)

Type of transaction	Volume		% change	Value		% Change
	2011-12	2012-13	2012-13	2011-12	2012-13	2012-13
ECS Credit	121.5	122.2	0.6	1,838	1,771	-3.6
ECS Debit	165	177	7.2	834	1,083	29.9
Debit Cards	320	397	23.9	966	1.230	27.3
NEFT	226	394	74.3	17,904	29,022	62.1
RTGS	55	69	24.5	5,39,308	6,76,841	25.5

Note: % changes could be slightly different as absolute numbers have been rounded off to million or value in billion.
Source: Reports of Trend and progress in Indian banking various issues

****

Indian Tax Policy : Risk & Challenges

Dr. Pradeep Chaurasia *

Abstract - Tax policy forms an important component of India's fiscal economic policy. Apart from being an instrument of raising revenues, taxation laws play a key role in attaining larger fiscal objectives like, encouraging savings and investment, reducing inequalities of income and wealth, fostering balanced regional development, incentivizing exports and small-scale industries, etc. Tax reforms and economic policies have had a dual advantage of accelerating growth and maximizing tax revenues. The need of the hour is to ensure significant tax reforms aimed at rationalizing the current tax structure are undertaken to enhance revenue by broadening tax payer base and improving transparency of regulatory framework. With Indian economy developing rapidly and foreign players targeting untapped Indian domestic market, it's imperative for the new leadership to focus on bringing in simplification and rationalization in tax system by eliminating unwanted complexities and multiplicity of taxes. Accordingly, if tax measures advocated by the industry bodies are endorsed by the government it will go a long way in augmenting the Government's coffers, encouraging growth in industrial output and increased investment by the foreign players. The secondary data are used to collect the information with the convenient sampling research.
Key Words - Indian Tax Structure, Challenges in Indian Tax Structure, Tax Risk, Future Challenges in Indian Taxation.

Introduction - Indian Government involves formulation of a progressive tax policy, efficient and effective tax administration and improved voluntary compliance. This is slated to be achieved by an enabling policy environment and augmenting the revenue mobilization apparatus for optimum revenue collection under the law, while maintaining taxpayer confidence in the system. Tax laws have been amended hundreds of times over the years, which have resulted in the tax laws becoming one of the most complex legislation in the country. The tax in India on incomes, customs duties, central excise and service tax are levied by the Central Government. The state Government levies agricultural income tax (income from plantations only), Value Added Tax (VAT)/ Sales Tax, Stamp Duty, State Excise, Land Revenue, Luxury Tax and Tax On Professions. The local bodies have the authority to levy tax on properties, octroi/entry tax and tax for utilities like water supply, drainage etc.

Indian Tax Structure -

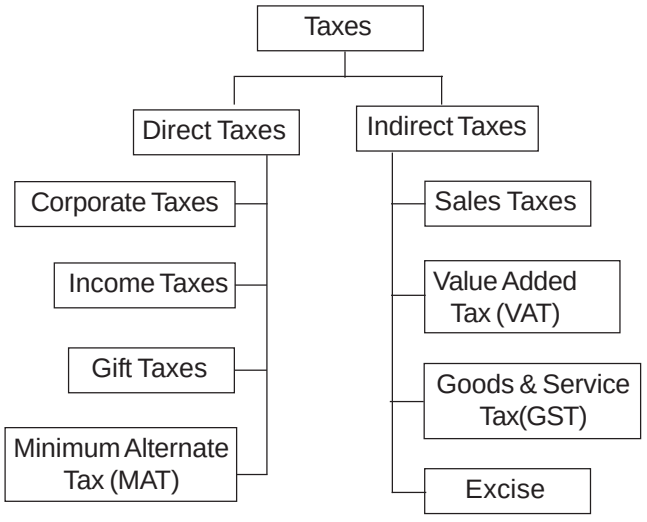

Challenges in Indian Tax Structure -

1. Multiplicity of Taxes - Taxes by Union Government, State Governments and the local governments have resulted in difficulties and harassment to the tax payer. He has to contact several authorities and maintain separate records for each of them.

2. Dominance of Indirect taxes - Central government revenues from indirect and direct taxes were in the ratio of 74:26 respectively in 1994-95. In the same year the ratio for State government was 83:17. It is well known that indirect taxes are more burdensome to the poor than the wealthy.

3. Adhocism - Several taxes are imposed on 'adhoc' basis to meet deficits and they are withdrawn later on. Some taxes are introduced and withdrawn later for political reasons.

4. Bias in incidence of taxes - According to indirect taxation enquiry committee, "The burden of the urban households was distinctly higher than the rural households in the corresponding expenditure class". Urban population is taxed far higher than the rural rich.

5. Complexity and corruption - A provoking feature of the Indian tax system is its complexity. Both direct and indirect tax laws are highly complex. This provides enough scope for avoiding and evading taxes.

6. Imbalance in tax system - Excessive emphasis on indirect taxes has resulted in the glaring imbalances of nearly 100% citizens affected by indirect taxes but hardly 1% of the population coming under the purview of direct taxation.

7. Lack of co-ordination - Our Federal Finance system allows Union and States levy taxes independently at different rates. There is no coordination between the taxes to allow a well organized, planned and co-ordinated tax system to evolve.

8. Lack of built-in elasticity -Income from taxation does not increase automatically in India in proportion to increase in National income.Hence, the government is compelled to increase taxes every year to maintain a constant tax income ratio.

9. Squandering away of resources - Colossal amounts of taxes realized are spent on civil administration and defence "Vote Bank Politics" result in "populist schemes" subsidized by the governments. As a result, resources for the rapid economic development of the country are always lacking.

10. Administrative inefficiency and corruption - A baneful

* **H.O.D (B.B.A Deptt.) Shri Rama Krishna College of Commerce & Science, Satna (M.P.) INDIA**

feature of the Indian tax system is the lack of administrative efficiency. Corruption exists in the administrative machinery from top to bottom. Such a system encourages the spirit of corruption among the tax payers also.

Tax Risk -

Table 1- Risk Table Classifying Six Core Risk Areas

Types of Tax Risk	Typical Events Giving Rise to Tax Risk
Transactional	Acquisitions Disposals Mergers Financial Transactions Tax Driven Cross Border - -Transactions Internal Reorganizations
Operational	New Business Ventures New Operating Models Operating in a New Locations New Operating Structures Impact of Technological- -Developments
Compliance	Lack of Proper Management Weak Accounting Records or - -Controls Data Integrity Issues Insufficient Recourses System Change Legislative Changes Revenue Investigations Specific Local in Country Customs
Financial Accounting	Changes in Legislation Changes in Accounting Systems Changes in Accounting Policies
Management	Changes in Personnel- Both in Tax and in the Business Experienced Tax People Leaving New Inexperienced resources
Reputation	Revenue Authority Raid/ -Investigation Press Comment Court Hearing/ Legal Action Political Development

Sources: (PwC Tax Risk Management Guide)

Future Challenges in Indian Taxation

1. Direct Tax code (DTC) - The Finance Ministry has released a new draft direct tax code, which is a document containing changes in Exemptions, Tax slab. This will be a big change to four-decades old Income Tax Act . As per the proposal, the new tax slab would be

1. 0% : Less than 1.6 lacs
2. 10% : 1.6 – 10 Lacs
3. 20% : 10 – 25 Lacs
4. 30% : 25+ Lacs

This sounds really amazing that almost 90% of Indian (tax payers) will then pay 10% tax because majority of the income earned will be below 10 lacs (that's very obvious). We will a comparison with current slab written below:

Table 2 - Current Income Tax Slabs 2013-2014 in India

Income Tax Slabs (In Rs.)	Tax
0 to 2,00,000	No tax
2,00,001 to 5,00,000	10%
5,00,001 to 10,00,000	20%
Above 10,00,000	30%

2. Goods and Services Tax (GST) -The Goods and Services Tax (GST) is a Value Added Tax (VAT) to be implemented in India, the decision on which is pending. It will replace all indirect taxes levied on goods and services by the Indian Central and State governments. It is aimed at being comprehensive for most goods and services.

India is a federal republic, and the GST will thus be implemented concurrently by the central and state governments as the Central GST and the State GST respectively. Exports will be zero-rated and imports will be levied the same taxes as domestic goods and services adhering to the destination principle.

Methodology - The research work done for the collection of information. The information is collected through the secondary data. The tools used to collect the secondary data are government reports, news on news papers, Journals and websites. The convenient types of sampling used to collect the all information.

Conclusion - It is remarkably found after the study that the taxes implemented by government on India affecting the all grade of people may be a businessman, an industrialist or a general common people. All the challenges that can be face by a person/industry regarding taxes are described well in this study. The tax risk also defined with the elaboration of their types and complexities. Government knows very well about the tax pattern in India is very complex and multi angled and government need to verify whether where is the only improvement required. Too much complexity and multiplicity create problems with many of challenges in understanding the taxation policy. The government of India always working on keep on changing the policies of taxation and that is government need to avoid with making proper system of taxation.

References -

1. "Report of Tax Risk in India", Price water house Coopers Pvt. Ltd.
2. Acharya, Shankar 2005, "Thirty Years Of Tax Reforms In India", Economic And Political Weekly, 40(20), May 14.
3. Bhalla, S, 2005b, "Tax Rates, Tax Compliance and Tax Revenue: India, 1988-2004"
4. Burgess, Robin and Nicholas Stern, 1993, "Taxation and Development," Journal Of Economic Literature, 31(2); 762-8301
5. http://classof1.com/homework_answers/taxation/features_and_problems_of_indian_tax_system/
6. Inda 2005, Report Of The Comptroller And Auditor General (Direct Taxes), (Various Years), Government Of India New Delhi.
7. India 1953, Reports Of The Taxation Enquiry Commossion, Ministry Of Finance, Ogvernment Of Indai, New Delhi
8. India, 1956, Indian Tax Reform, Ministry Of Finance, New Delhi.
9. India, 1971, Direct Tax Inquiry Committss: Final Report, Ministry Of Finance, Government Of India, New Delhi
10. India, 2012, Indian Public Finance Statistics, Ministry Of Finance, Government Of India, New Delhi
11. Joshi, Vijaya Nd I.M.D. Lottle 196, India's Econoimc Reforms,1991-2001.
12. Pwc.com/India
13. Rediff.com, Business, Indian tax system complex: Survey July 02, 2009
14. The Economic Times, 2014, February 16
15. The Hindu, 2014, February 17
16. Times of India, 2014, February 17

Structure Of Capital Market In India During The Globalisation

Dr. Ratneshwar Prasad Dwivedi * **Dr. Abhay Kumar Pandey** * *

Abstract - Indian financial system consists of a variety of institutions, markets and instruments. It provides the principals means by which savings are transformed into investments. Transfer of resources from those with idle resources to others whom have a pressing need for them is perhaps most efficiently achieved through the securities markets. Stated formally securities markets provide channels for allocation of savings to investments and thereby decouple these two activities. These two activities of the individual inevitably enhance savings and investments in the economy.
Keywords - Indian capital market structure, profile of Indian Stock Exchange, organization and expansions, Market Participants between 2006 to 2012.

Introduction - Indian financial system consists of a variety of institutions, markets and instruments. It provides the principals means by which savings are transformed into investments. Transfer of resources from those with idle resources to others whom have a pressing need for them is perhaps most efficiently achieved through the securities markets. Stated formally securities markets provide channels for allocation of savings to investments and thereby decouple these two activities. These two activities of the individual inevitably enhance savings and investments in the economy.

Savings are linked to investments by way of intermediaries through a range of complex financial products called securities , which is defined in the securities contracts regulation Act, 1956 to include shares , bonds scripts debentures, stocks or to her marketable securities of line nature in or of an corporate company or body corporate, government securities derivatives of securities , units of collective investment scheme, interest and rights in securities, or any other instruments so delayed by the central Government .

These are sets of economic units, which demand securities in lieu of funds and other who supply securities from funds. The amount of funds supplied by the supply may not be the amount needed by the user. The characteristics of the securities issued by the issuer may riot match preference of the supplier. In such situations, they incur substantial search costs to find each other. These costs are minimized by the intermediaries who match and bring the suppliers and users of funds together. These intermediaries provide intermediation services in the Indian securities market. Thus, the securities market has essentially three categories of participants, namely, the issuers of securities, investors of securities and the intermediaries and two categories of products, namely , the services of the intermediaries and the securities[12] (Mohamed MS and Kalaiselvi M, 2005).

Historical Profile of Stock Exchanges in India - Securities Market in India has a long history. The Bombay Stock Exchange (BSE) has its roots in brokers coming together in 1860's to trade in shares issued by various companies. Other groups also emerged in different parts of the country. These informal groups gradually grew into stock Exchanges of which the BSE established in 1875 is the oldest. The raising of capital from the securities market was free from controls until the Second World War, when the defense of India rules were introduced which imposed the first restrictions on the issue of capital. After independence, controls on capital issues continued and were formally incorporated in the capital issues control Act, the office of the controller of capital issues CCI administered 1947.

After 1947, the government followed the policy of giving predominance to public sector enterprises in the economy. These public sector enterprises did not access the securities market in any significant way. Private sector Corporation was restricted from investing in response to market forces by a system of industrial licensing. Their access to equity was restricted from investing in response to market forces by a system of industrial licensing. Their access to equity was restricted through the institution of the CCI and debt, requirements were met through loans from nationalized commercial banks. The regions of administrated interest rates did not offer much incentive o access to securities market for debt[13] (Machiraju HR 2000).

Organization and Expansion of Stock Exchanges -The stock exchange in Bombay formed in 1875 is 125 years old. The Calcutta and Madras stock Exchanges in the country were formed in 1908 and Delhi in 1947. There are 23 Stock Exchanges in the country. The organization of Stock Exchanges varies. Some are public limited companies, while others are limited by guarantees, or as voluntary non-profit making organizations. The Government of India or the securities Exchange Board of India (SEBI) ensures broad

* Prof. & H.O.D (Commerce) Govt. S.K.N.College, Mauganj, Rewa (M.P) INDIA
** Block Social audit Coordinator, Block-Shikhar Mirzapur (U.P) INDIA

uniformity in structure while granting recognition . In December 1996, SEBI decided that recognition to new stock exchanges if considered necessary in public interest and that of trade could be allowed only on On-line screen based Trading and establishment of clearing house within six months from the date of recognition.

Market Participants in Indian Stock Market - The stock market has essentially three categories of participants, viz. the issuer of securities, the investors in the securities and the intermediaries. The issuers are the borrowers or deficit savers, who issue securities to raise funds. The investors, who are surplus savers, deploy their savings by subscribing to these securities. The intermediaries are the agents who match the needs of users and suppliers of funds for a commission. These intermediaries perform functions to help both the issuers and investors to achieve their respective goals. There are large variety and number of intermediaries providing various services in the Indian securities market table1. Table also gives us some interesting results about market participants, the number of sub-brokers in the market rose 9957 to 23479 percent increase in venture capital funds, 71 percent in portfolio managers and 40 percent in FIIS. Table also shows that there is 124 percent fall in the number of share transfer agents, 79 percent in merchant bankers and 27 percent in custodians during the same period.

Conclusion - Process of mobilizations of resources is carried out under the supervision and overview of the regulators, the regulators develop fair market practices and regulate the conduct of issuers of securities and the intermediaries. They are also in charge of protecting the interests of the investor. The regulator ensures a high service standard from the intermediaries and supply of quality securities and non-manipulated demand for them in the market.

References -

1. Levin R and S zervos (1996 a) :'Stock market development and Long run growth' WBER , 10 May 2.
2. Nagaraj , R (1996): 'Indian Capital Market Growth: Trends,Explanations and Evidences' ,Economic and Political Weekly,35,September.
3. Gangadhar V,2003 : Security Analysis and Portfolio Management , Anmol Publication Pvt.Ltd, New Delhi.
4. Nagaishi Makoto 1999 : " Stock Market Development and Economic Growth Dubious Relationship, Economic and Political weekly,July 17 ,1999 Pt.2004-12
5. SEBI (2011) Handbook of Indian Securities market (www.sebi.gov.in)
6. Indian Securities Market: A review, Vo IIX, 2010.

Table : Market Participants in Stock Market

Market Participants	Number as on march 31		Absolute Change	% Change
	2012	2006		
Regulator	4		4	00
Depositories	2	2	0	0
Stock Exchanges	Currency Debenture			
With Equity Trading		23	0	0
Brokers	8652	9339	-533	-5.71
Sub brokers	62471	23478	13522	57.59
FIIs	1713	882	355	40.25
Port folio Manager	205	132	93	70.45
Custodians	16	11	-3	-27.27
Share Transfer Agents	71	83	-103	-124.10
Primary Dealers		17	2	11.76
Merchant Bankers	134	130	-103	-79.23
Bankers to an issue	47	60	-9	-15.00
Debenture Trustees	28	32	-5	-15.63
Underwriters	19	57	0	0
Venture Capital Fund	106	80	45	56.25
Foreign Venture Capital Investor	129	39	38	97.44
Mutual Fund	44	38	-1	-2.63
Collective Investment Schemes	0	0	-4	

Source:SEBI Bulletin DCA,DEA,RBI&SEBI

International Accounting Standards

Dr. Vivek Patel * **Dr. Pallavi Mishra** **

Introduction - Meaning of Accounting Standards - Accounting standards are those standards which are responsible for all kinds of behaviours in regulating the police and methods of accounting. All of the accountants follow them happily. Accounting standards are mainly used for producing the financial details so that similarity can be brought in every policies in methods also.

Need for accounting standards - The use of Accounting Standards is considered to the vital so that the one company's financial statement may be compared with the other companies financial statement of the same type. And may be regulated on showing the less or more financial position, profits by the managers .Thus , it is obvious that the need for Accounting Standards was felt to bring the coherence in used methods in accounting performances.

So there is need for consistency of rules in account policies not only at national level but also at international level. At national level The Institute of Charted Accountants of India (ICAI) gets accounting standards formed by accounting matters so far. At international level International Accounting Standards committee (IASC) has decided 41 international accounting Standards till now. ICAI is the important member of IASI. This institute provides full support to fulfil the objectives of IASC.

International Accounting Standards - As the result of stoppage of 16 Accounting bodies of 9 countries, International Accounting standards Committee (IASC) was constituted on june29, 1973 to bring about the consistency in accounting principle and behaviours at international level. Its headquarters is in London. 116 member bodies of 85 countries were included on January, 1996. The main objective of IASC is to adjust and publish the Accounting Standards were formed so far by this committee. Some of them have been eliminated and they have been re-established with improved ones. International Accounting Standards committee (IASC) has formed the following 36 International Accounting Standards (IAS)

1. IAS-1 Disclosure of Accounting Policies.
2. IAS-2 Evaluation and Presentation of Inventories with reference to Historical cost Method.
3. IAS-3 Consolidated Financial statement.
4. 1AS-4 Depreciation Accounting.
5. IAS-5 Information to be disclosed in Financial Statements.
6. IAS-6 Accounting for Change in Price Level.
7. IAS-7 Statement of Change in Financial Position.
8. IAS-8 Net Profit or Loss for the Period, Fundamental errors and change in accounting Process.
9. IAS-9 Accounting for Research and Development activities.
10. IAS-10 Contingencies and events occurring after the balance sheet date.
11. IAS-11 Accounting for construction contracts.
12. IAS-12 Accounting for Taxes on Income.
13. IAS-13 Presentation of Current Assets and Liabilities.
14. IAS-14 Segment Reporting.
15. IAS-15 Information Reflecting the effect of Changing Price.
16. IAS-16 Reporting for Property, Plant and Equipment.
17. IAS-17 Accounting for lease.
18. IAS-18 Income recognition.
19. IAS-19 Accounting for Retirement Benefits.
20. IAS-20 Accounting for Government Grants and Disclosure of Government Assistance.
21. IAS-21The effects of changes in Foreign Exchange Rates.
22. IAS-22 Accounting for business Combinations.
23. IAS-23 Capitalisation of Borrowing Cost.
24. IAS-24 Related Party Disclosure.
25. IAS-25 Accounting for Investments.
26. IAS-26 Accounting and Reporting by Retirement benefit Plans.
27. IAS-27 Consolidated financial statements and accounting for Investment in subsidiaries.
28. IAS-28 Accounting for Investment is Associates.
29. IAS-29Financial Reporting in Hyper Inflationary Economies.
30. IAS-30 Disclosures in financial Statements of bank and Similar Financial Institutions.
31. IAS-31 Financial Reporting of Interest in joint Ventures.
32. IAS-32 Financial Instruments: Disclosure and Presentation.
33. IAS-33 Earning per Share.
34. IAS-34 Interim Financial Reporting.
35. IAS-35 Discontinuing operations.
36. IAS-36 Impairment of Assets.

* Asst. Prof. (Commerce) Govt. College, Kotma, Distt. Anoopur (M.P)
** Guest Faculty (Commerce) Govt. College, Naigarhi, Distt. Rewa (M.P) INDIA

Accounting Standards in India - The need for keeping consistency in unequal accounting policies and customs and by the keeping the view of improvement in this regard at international level .The institute of Chartered Accountants of India (ICAI) constituted Accounting Standard Board (ASB) on21 April 1977. The board was handed over to prepare Accounting Standards, to propagandize for accounting standards, to issue Directive principles and to review the Accounting Standards (AS).The rest of AS are mandatory except AS no. 2&3; And if any company does not follow this. Accountability has been decided to Auditor to mention clearly to these things in his report. If Auditor does not do so, he will Deemed to be accused of professional misconduct anddisciplinary action will be taken against him.

Theoretical Explanation of some main Accounting Standards -

- **AS-1 Disclosure of Accounting Policies -** Issue Date-Nov, 1979 Mandatory Date-1April, 1991This standard is related to disclosure of all those Accounting policies which are used during the preparation of financial statements and in their presentation. The main objective of this standard is to understand the financial statements in a better way through such type of disclosure. By using this standard the comparison between financial statements of different undertakings can be made more effective.
- **AS-2 Valuation of Inventories -** Issue Date-June 1981This standard shows the principles of valuation of inventories. This is used to bring equality in the valuation of different units of inventories of the some enterprise so that comparative study may be easily.
- **AS-3 Cash Flow Statement -** Issue Date-June, 1981 Review-March, 1997 statement in a certain time. According to this, it is essential to attach such type of statements along with profit & loss accounts and balance sheet which could provide the clear information of funds attainment and their use on that time. It may be in the form of fund flow statement or cash flow statement. After the review of March 1997, it is mandatory to clear the status of cash flow for every enterprise.
- **AS-4 Contingencies and Events Occurring after -** Issue Date-Nov, 1982 events that Revised and effective Date-1April, 1995This is concerned to making proper provision for contingencies and events occurring after the balance sheet date. Contingencies stand for such events that results cannot be obtained immediately. e.g.- Any under trial suit in a court or to go bankrupt of any lender. The objective of this standards is to conjecture the would be losses in future through such contingencies and to make necessary provision so that the last accounts may display the right status.
- **AS-5 Net profit or Loss for the period, Prior Period Items and Changes in Accounting Policies -** Issue Date-Feb, 1997Effective date-1April, 1996. This is related to disclosure of period and prior period's extraordinary items and in accounting policies. Extraordinary items stand for Income expenditure items which are produced due to separated events and which does not occur repeatedly prior period items mean such items which are left out by mistake from accountancy. And those are being adjusted this year.
- **AS-6 Depreciation Accounting -** Issue Date-Nov, 1982 Mandatory Date-1April, 1995The standard explains how to choose the depreciable method of fixed assets and that method should be used for many years without break.
- **AS-7 Accounting for Manufacturing Contracts -** Issue Date-Dec, 1983 Mandatory Date-1April, 1991The standard is associated with accounting period occupies an important place in contracts. Since, in general contracts are completed in more than one year. This standard tells how should be the accounting measured.
- **AS-8 Accounting for Research and Development** - Issue Date-Jan, 1985The standard exhibits the accounting for research and development. There is no provision for the following ones:-

1. Research and Development works especially done on the contractual basis.
2. The digging of natural minerals.
3. Research and development works of constructive undertakings.

- **AS-9 Revenue Recognition -** Issue Date-Nov, 1985Mandatory Date-1April, 1991.The standard involves the revenue recognition and its period. It also explains as to when the revenue should be recognised in profit and loss account. It such different performances such as-The sales of goods, rendering of service and use of enterprises resources by other yielding interest, dividend and royalties etc. are included.
- **AS-10 Accounting for Fixed Assets -** Issue Date-Nov1985 Mandatory Date—1April, 1991This standard is concerned to proper accounting for fixed assets and disclosure of financial statement. It is held with intention of being used for the purpose of producing goods and services.
- **AS-11 Accounting for the Effects of Change inForeign Exchange Rate -** Issue Date-1 April 1989 Correction Date-1April 1995This standard refers accounting for transaction in foreign currencies in translating into Indian currencies.
- **AS-12 Accounting for Government grant -** Issue Date-Aug 1991Mandatory Date-1April 1994This accounting standard refers the disclosure of received Govt. grants for accounting and financial statementsof an enterprises.These Govt. grants are assistance by the government in the form of cash or Kind to enterprises in return for past or future compliance with certain conditions. Govt. assistance which cannot be valued reasonably, is excluded from government grants.
- **AS-13 Accounting for Investment -** Issue Date-sep 1993 Thestandard refers the accounting for investment. It is the assets held for earning income by way of dividend, interest and rentals for capital appreciation or for other benefits.
- **AS-14 Accounting for Amalgamations -** Issue Date-Oct 1994 Mandatory Date-1 April 1995The standard deals with accounting to be made in books of transferee company

in cash of amalgamation. This standard is not applicable to cases of acquisition of shares when one company and the acquired the share of another company and the acquired company is not dissolved and its separate entity continues to exist. This standard is applicable when acquired company is dissolved and separate entity ceased exist and purchasing company continues with the business of acquired company.

- **AS-15 Accounting for Retirement Benefit in the Financial statement of Employers -** Mandatory Date-1April 1995This standard deals with the profit which is given on being retired to the employees. It includes the following-

1. Provident
2. Pension
3. Gratuity
4. Leave payment
5. Health and welfare schemes after retiremen
6. Other benefits

- **AS-16 Borrowing Costs -** Mandatory Date- 1 April 2000This accounting standard define the qualifying assets the assets which take time to make them useable or saleable for future use, is called qualifying assets.
- **AS-17 Segment Reporting -** Mandatory Date-1 April 2001 Information about multiple products or services and their operation in different geographical areas are called segment information. Such information is used to assess the risk and return of multiple products/service and their operation in different geographical areas. Disclosure of such information is called segment reporting.
- **AS-18 Related Party Disclosures -** Mandatory Date-1 April 2001 The objective of this standard is to establish the need for disclosure of the following-Relationship with the related party.Transactions between related party and reporting enterprises.
- **AS-19 Leases -** Mandatory Date-1 April 2001This standard deals with the accounting for leases. It involves two parties, a lesser and a lessee and a assets which is to be leased. The objective of this standard is to determine the proper accounting policies and declaration between a lesser and a lessee.
- **AS-20 Earning per Share -** Mandatory Date-1 April 2001This accounting standard gives computation methodology for the determination and presentation of earning per share which will improve the comparison of earning per share. The statement is applicable to the enterprises whose equity share or potential equity shares are listed in stock-exchange.
- **AS-21 Consolidated Financial Statement -** Mandatory Date-1 April 2001This accounting standard is related to consolidated financial statement. The objective of this standard is to present consolidated financial statement; is to prepare consolidated financial statement and is to determine the principles of consolidated financial statements. As per this accounting standard the consolidated balance sheet if prepared should be prepared in the manner presentation by this statement.
- **AS-22 Accounting For Taxes on Income -** Mandatory Date-1 April 2001This standard should be used for the accounting for taxes on income. Accounting to this accounting standard tax on income is determined on the principle of accrual concept. According to this concept tax should be accounted in the period in which corresponding revenue and expenses are accounted. In this standard tax shall be accounted on accrual basis not on liability to pay basis.
- **AS-23 Accounting for Investment in Associates in Consolidated Financial Statements -** Mandatory Date-1 April 2002 This accounting standard was formulated with the objective to set out principles and procedures for recognizing the investment in associates in the consolidated financial statements of the investor so that the effect of investment in associates on the financial position of group is indicated.
- **AS-24 Discounting Operations -** The objective of this accounting standard is to establish principles for reporting information about discontinuing operations the disclosure about discontinued operation is covered by this standard.
- **AS-25 Interim financial reporting -** Mandatory Date-1 April 2002The standard deals with interim financial reporting. The objective of this standard is to determine the minimum list of interim financial reporting and the principles of financial statements measure and recognition is determined by this standard.
- **AS-26 Intangible Assets -** Mandatory Date-1 April 2003 The objective of this standard is to determine the accounting treatment for intangible assets. An intangible assets is an indentifiablenon monetary assets without physical substance hold for use in the production.
- **AS-27 Financial Reporting of Interest in Joint Ventures -** Mandatory Date-1 April 2002The objective of this accounting standard is to determine the principles and procedures for accounting the financial reporting of interests in joint ventures. Joint ventured is defined as a contractual arrangement whereby two or more parties carryon an economic activity under joint control.

AS-28 Impairment of As - Mandatory Date-1 April 2002The objective of this accounting is to determine the method through which an enterprise ensures that carrying amount of assets is not more than its recoverable amount.

Conclusion - From the preparation of accounting standards. The following advantages may be attained:-

1. It has made the comparison more offective and meaningful.
2. It has increased the authenticity and credibility of accounting information.
3. It has increased the liabilities of accounting.
4. It has imposed restriction on flexibility.

References -

1. Dr. Mahesh r. agrawal, Dr.mukeshjain, fundamental of accounting, r p unified 2008.
2. M. C. Gupta, Dr.vk.agrawal, mppsc commerce, upkar publication 2000.

SEZ In India

Dr. S.K. Maheshwari * **Ankita Pipada** **

Abstract - India was one of the first in Asia to recognize the effectiveness of the Export Processing Zone (EPZ) model in promoting exports, with Asia's first EPZ set up in Kandla in 1965. With a view to overcome the shortcomings experienced on account of the multiplicity of controls and clearances; absence of world-class infrastructure, and an unstable fiscal regime and with a view to attract larger foreign investments in India, the Special Economic Zones (SEZs) Policy was announced in April 2000.A legislation has been passed permitting SEZs to offer tax breaks to foreign investors. Over half a decade has passed since its inception, but the SEZ Bill has certain drawbacks due to the omission of key provisions that would have relaxed rigid labour rules. This has lessened India's chance of emulating the success of the Chinese SEZ model, through foreign direct investment (FDI) in export-oriented manufacturing.

Introduction - India was one of the first in Asia to recognize the effectiveness of the Export Processing Zone (EPZ) model in promoting exports, with Asia's first EPZ set up in Kandla in 1965. With a view to overcome the shortcomings experienced on account of the multiplicity of controls and clearances; absence of world-class infrastructure, and an unstable fiscal regime and with a view to attract larger foreign investments in India, the Special Economic Zones (SEZs) Policy was announced in April 2000.A legislation has been passed permitting SEZs to offer tax breaks to foreign investors. Over half a decade has passed since its inception, but the SEZ Bill has certain drawbacks due to the omission of key provisions that would have relaxed rigid labour rules. This has lessened India's chance of emulating the success of the Chinese SEZ model, through foreign direct investment (FDI) in export-oriented manufacturing.

Introduction - The Special Economic Zone (SEZ) policy in India first came into inception on April 1, 2000. The prime objective was to enhance foreign investment and provide an internationally competitive and hassle free environment for exports. The idea was to promote exports from the country and realizing the need that level playing field must be made available to the domestic enterprises and manufacturers to be competitive globally.

This policy intended to make SEZs an engine for economic growth supported by quality infrastructure complemented by an attractive fiscal package, both at the Centre and the State level, with the minimum possible regulations. SEZs in India functioned from 1.11.2000 to 09.02.2006 under the provisions of the Foreign Trade Policy and fiscal incentives were made effective through the provisions of relevant statutes. To instill confidence in investors and signal the Government's commitment to a stable SEZ policy regime and with a view to impart stability to the SEZ regime thereby generating greater economic activity and employment through the establishment of SEZs, a comprehensive draft SEZ Bill prepared after extensive discussions with the stakeholders. A number of meetings were held in various parts of the country both by the Minister for Commerce and Industry as well as senior officials for this purpose. The Special Economic Zones Act, 2005, was passed by Parliament in May, 2005 which received Presidential assent on the 23rd of June, 2005. The draft SEZ Rules were widely discussed and put on the website of the Department of Commerce offering suggestions/ comments. Around 800 suggestions were received on the draft rules. After extensive consultations, the SEZ Act, 2005, supported by SEZ Rules, came into effect on 10th February, 2006, providing for drastic simplification of procedures and for single window clearance on matters relating to central as well as state governments.

The main objectives of the SEZ Act are

a) generation of additional economic activity
b) promotion of exports of goods and services;
c) promotion of investment from domestic and foreign sources;
d) creation of employment opportunities;
e) development of infrastructure facilities;

It is expected that this will trigger a large flow of foreign and domestic investment in SEZs, in infrastructure and productive capacity, leading to generation of additional economic activity and creation of employment opportunities.

The SEZ Act 2005 envisages key role for the State Governments in Export Promotion and creation of related infrastructure. A Single Window SEZ approval mechanism has been provided through a 19 member inter-ministerial

* Professor (Commerce) S.V. Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA
** Research Scholar, S.V. Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA

SEZ Board of Approval (BoA). The applications duly recommended by the respective State Governments/UT Administration are considered by this BoA periodically. All decisions of the Board of approvals are with consensus.

The SEZ Rules provide for different minimum land requirement for different class of SEZs. Every SEZ is divided into a processing area where alone the SEZ units would come up and the non-processing area where the supporting infrastructure is to be created.

The SEZ Rules provide for -

1. " Simplified procedures for development, operation, and maintenance of the Special Economic Zones and for setting up units and conducting business in SEZs;
2. Single window clearance for setting up of an SEZ;
3. Single window clearance for setting up a unit in a Special Economic Zone;
4. Single Window clearance on matters relating to Central as well as State Governments;
5. Simplified compliance procedures and documentation with an emphasis on self-certification.

Where are SEZs located in India?At present there are eight functional SEZs located at Santa Cruz (Maharashtra), Cochin (Kerala), Kandla and Surat (Gujarat), Chennai (Tamil Nadu), Visakhapatnam (Andhra Pradesh), Falta (West Bengal) and Noida (Uttar Pradesh) in India. Further an SEZ in Indore (Madhya Pradesh) is now ready for operation.In addition 18 approvals have been given for setting up of SEZs at Positra (Gujarat), Navi Mumbai and Kopata (Maharashtra), Nanguneri (Tamil Nadu), Kulpi and Salt Lake (West Bengal), Paradeep and Gopalpur (Orissa), Bhadohi, Kanpur, Moradabad and Greater Noida (UP), Vishakhapatnam and Kakinada (Andhra Pradesh), Vallarpadam/Puthuvypeen (Kerala), Hassan (Karnataka), Jaipur and Jodhpur (Rajasthan) on the basis of proposals received from the state governments.

Role Of State Government For Establishment Of SEZs

State governments will have a very important role to play in the establishment of SEZs. Representative of the state government, who is a member of the inter-ministerial committee on private SEZ, is consulted while considering the proposal. Before recommending any proposals to the ministry of commerce and industry (department of commerce), the states must satisfy themselves that they are in a position to supply basic inputs like water, electricity, etc.

State Government/Private SEZs notified/approved prior to SEZ Act 2005

1. Fazalganj Industrial Estate Kanpur, Uttar Pradesh Acids, Chemicals and Petrochemical.
2. Surat Special Economic Zone Surat , Gujarat Multi product.
3. Manikanchan SEZ, West Bengal Kolkata , West Bengal Gems and Jewellery.
4. Jaipur SEZ Jaipur , Rajasthan Gems and Jewellery.
5. Indore SEZ Sector-III, Pithampur , Distt. Dhar (MP) Multi product.
6. Jodhpur SEZ Jodhpur , Rajasthan Handicrafts.
7. Banthar Leather Technology Park Unnao (Kanpur Metropolitan Region), Uttar Pradesh Leather.
8. Salt Lake Electronic City -WIPRO, West Bengal Kolkatta.,West Bengal Software development and ITES
9. Mahindra City SEZ (IT), T. Nadu Tamil Nadu IT/ Hardware and Bioinformatics.
10. Mahindra City SEZ (Auto ancillary), T. Nadu Tamil Nadu Auto
11. Ruma Textile Park Kanpur, Uttar Pradesh Textiles.
12. Mahindra City SEZ (Textiles), Tamil Nadu Tamil Nadu Apparel and fashion accessories.
13. Nokia SEZ Sriperumbudur, Tamil Nadu Telecom equipments/R&D services
14. Moradabad SEZ Moradabad , Uttar Pradesh Handicrafts
15. Surat Apparel Park Surat , Gujarat Textiles

Approval mechanism and Administrative set up of SEZsApproval mechanism The developer submits the proposal for establishment of SEZ to the concerned State Government. The State Government has to forward the proposal with its recommendation within 45 days from the date of receipt of such proposal to the Board of Approval. The applicant also has the option to submit the proposal directly to the Board of Approval. The Board of Approval has been constituted by the Central Government in exercise of the powers conferred under the SEZ Act. All the decisions are taken in the Board of Approval by consensus. The Board of Approval has 19 Members. Its constitution is as follows:

1) Secretary,Department of Commerce	Chairman
2) Member,CBEC	Member
3) Member,IT, CBDT	Member
4) Joint Secretary (Banking Division), Department of Economic Affairs, Ministry of Finance	
5) Joint Secretary (SEZ), Department of Commerce	Member
6) Joint Secretary, DIPP	Member
7) Joint Secretary, Ministry of Science and Technology	Member
8) Joint Secretary, Ministry of Small Scale Industries and Agro and Rural Industries	Member
9) Joint Secretary, Ministry of Home Affairs	Member
10) Joint Secretary, Ministry of Defence	Member
11) Joint Secretary, Ministry of Environment and Forests	Member
12)Joint Secretary, Ministry of Law and Justice	Member
13)Joint Secretary,Ministry of Overseas Indian Affairs	Member
14)Joint Secretary, Ministry of Urban Development	Member
15)A nominee of the State Government concerned	Member
16)Director General of Foreign Trade or his nominee	Member
17)Development Commissioner concerned	Member
18)A professor in the Indian Institute of Management or the Indian Institute of Foreign Trade	Member
19)Director or Deputy Sectary, Ministry of Commerce and Industry, Department of Commerce	Member Secretary

Administrative set up - The functioning of the SEZs is governed by a three tier administrative set up. The Board of Approval is the apex body and is headed by the Secretary, Department of Commerce. The Approval Committee at the Zone level deals with approval of units in the SEZs and other related issues. Each Zone is headed by a Development Commissioner, who is ex-officio chairperson of the Approval Committee. Once an SEZ has been approved by the Board of Approval and Central Government has notified the area of the SEZ, units are allowed to be set up in the SEZ. All the proposals for setting up of units in the SEZ are approved at the Zone level by the Approval Committee consisting of Development Commissioner, Customs Authorities and representatives of State Government. All post approval clearances including grant of importer-exporter code number, change in the name of the company or implementing agency, broad banding diversification, etc. are given at the Zone level by the Development Commissioner. The performance of the SEZ units are periodically monitored by the Approval Committee and units are liable for penal action under the provision of Foreign Trade (Development and Regulation) Act, in case of violation of the conditions of the approval.**Facilities and Incentives - Incentives and facilities offered to the SEZs** The incentives and facilities offered to the units in SEZs for attracting investments into the SEZs, including foreign investment include -

1. Duty free import/domestic procurement of goods for development, operation and maintenance of SEZ units 100% Income Tax exemption on export income for SEZ units under Section 10AA of the Income Tax Act for first 5 years, 50% for next 5 years thereafter and 50% of the ploughed back export profit for next 5 years.
2. Exemption from minimum alternate tax under section 115JB of the Income Tax Act.
3. External commercial borrowing by SEZ unitsupto US $ 500 million in a year without any maturity restriction through recognized banking channels.
4. Exemption from Central Sales Tax.
5. Exemption from Service Tax.
6. Single window clearance for Central and State level approvals.
7. Exemption from State sales tax and other levies as extended by the respective State Governments.

The major incentives and facilities available to SEZ developers include -

1. Exemption from customs/excise duties for development of SEZs for authorized operations approved by the BOA
. 2. Income Tax exemption on income derived from the business of development of the SEZ in a block of 10 years in 15 years under Section 80-IAB of the Income Tax Act.
3. Exemption from minimum alternate tax under Section 115 JB of the Income Tax Act.
4. Exemption from dividend distribution tax under Section 115O of the Income Tax Act.
5. Exemption from Central Sales Tax (CST).
6. Exemption from Service Tax (Section 7, 26 and Second Schedule of the SEZ Act).

Export PerformancesExports from the operational SEZs during the last nine years are as under: (see bottom of the page)

Conclusion - Special Economic Zone means a specified region in a state that has liberal economic laws in comparison to the state's typical economic laws. SEZs help in the economic and industrial growth of a country and this is the reason that the government of India is encouraging the setting up of more and more SEZs in the country. The various beneficial Features and Facilities of Indian SEZ are that the units within the SEZ do not have to have a license for importing goods and they are exempted from paying central excise duty when they procure raw materials, spares and capital goods from the local market. 7.

References -

1. www.sezinindia.com
2. www.howtoexportimport.com
3. www.sezindia.nic.in

Exports from the operational SEZs during the last nine years are as under:

Years	Exports		Growth over previous year
	Value in Rs. Crores	Billion USD	
2005-2006	22,840	5.08	-
2006-2007	34,615	7.69	52%
2007-2008	66,638	14.81	93%
2008-2009	99,689	22.15	50%
2009-2010	2,20,711	49.05	121%
2010-2011	3,15,868	70.19	43.11%
2011-201	3,64,478	81.00	15.39%
2012-2013	4,76,159	88.18	31%
2013-2014	4,94,077	82.35	4%

Impact Of Globlization In India

Dr. S.K. Maheshwari * Ankita Pipada **

Abstract - The impact of globalization on economic growth, quality of life, and external stability of global economies" Globalization, an important characteristic within the contemporary economic environment, has resulted in significant changes to individual nations in terms of economic development strategies undertaken by national governments. The term globalization refers to the integration of local and international economies into a globally unified political economic and cultural order, and is not a singular phenomenon, but a term to describe the forces that transform an economy into one characterized by the embracement of the freer movement of trade, investment, labor and capital. Globalizations, a great number of people regard it as a chiefly economic phenomenon, necessitating the additional integration, or interaction, of nationally based economic entities through the development of international trade, investment and monetary flows. Also included in this view is the rapid advances in sharing social and cultural values as well as new technologies as the world grows together. Globalization can be defined as a procedure in which geographic distance is a diminishing factor in the formation and sustentation of international economic, political and cultural relations.

Introduction - Indian economy had experienced major policy changes in early 1990s. The new economic reform, popularly known as, **Liberalization, Privatization and Globalization** (LPG model) aimed at making the Indian economy as fastest growing economy and globally competitive. The series of reforms undertaken with respect to industrial sector, trade as well as financial sector aimed at making the economy more efficient.

With the onset of reforms to liberalize the Indian economy in July of 1991, a new chapter has dawned for India and her billion plus population. This period of economic transition has had a tremendous impact on the overall economic development of almost all major sectors of the economy, and its effects over the last decade can hardly be overlooked. Besides, it also marks the advent of the real integration of the Indian economy into the global economy.

This era of reforms has also ushered in a remarkable change in the Indian mindset, as it deviates from the traditional values held since Independence in 1947, such as self reliance and socialistic policies of economic development, which mainly due to the inward looking restrictive form of governance, resulted in the isolation, overall backwardness and inefficiency of the economy, amongst a host of other problems. This, despite the fact that India has always had the potential to be on the fast track to prosperity.

Globlization In India-India is in the process of restructuring her economy, with aspirations of elevating herself from her present desolate position in the world, the need to speed up her economic development is even more imperative. And having witnessed the positive role that Foreign Direct Investment (FDI) has played in the rapid economic growth of most of the Southeast Asian countries and most notably China, India has embarked on an ambitious plan to emulate the successes of her neighbors to the east and is trying to sell herself as a safe and profitable destination for FDI.

Globalization has many meanings depending on the context and on the person who is talking about. Though the precise definition of globalization is still unavailable a few definitions are worth viewing, Guy Brainbant: says that the process of globalization not only includes opening up of world trade, development of advanced means of communication, internationalization of financial markets, growing importance of MNCs, population migrations and more generally increased mobility of persons, goods, capital, data and ideas but also infections, diseases and pollution. The term globalization refers to the integration of economies of the world through uninhibited trade and financial flows, as also through mutual exchange of technology and knowledge. Ideally, it also contains free inter-country movement of labor. In context to India, this implies opening up the economy to foreign direct investment by providing facilities to foreign companies to invest in different fields of economic activity in India, removing constraints and obstacles to the entry of MNCs in India, allowing Indian companies to enter into foreign collaborations and also encouraging them to set up joint ventures abroad; carrying out massive import liberalization programs by switching over from quantitative restrictions to tariffs and import duties, therefore globalization has been identified with the policy reforms of 1991 in India.

Impact of Globalization of Indian Economy - At the present, we can also say about the tale of two Indias: We have the best of times; we have the worst of times. There is sparkling prosperity, there is stinking poverty. We have dazzling five star hotels side by side with darkened ill-starred hovels. We have everything by globalization, we have nothing by globalization.

Though some economic reforms were introduced by the Rajiv Gandhi government (1985-89), it was the Narasimha

* Professor (Commerce) S.V. Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA
** Research Scholar, S.V. Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA

Rao Government that gave a definite shape and start to the new economic reforms of globalization in India. Presenting the 1991-92 Budget, Finance Minister Manmohan Singh said: After four decades of planning for industrialization, we have now reached a stage where we should welcome, rather fear, foreign investment. Direct foreign investment would provide access to capital, technology and market.

In the Memorandum of Economic Policies dated August 27, 1991 to the IMF, the Finance Minister submitted in the concluding paragraph: The Government of India believes that the policies set forth in the Memorandum are adequate to achieve the objectives of the program, but will take any additional measures appropriate for this purpose. In addition, the Government will consult with the Fund on the adoption of any measures that may be appropriate in accordance with the policies of the Fund on such consultations.

Positive aspect of Globalization in India - There are numerous implications of globalization on the national economy. The phenomenon has intensified competition and interdependence between economies in the global market. In India, the economic reforms have resulted in the overall economic growth. The growth in the Gross Domestic Product has improved the global position of India. The direction of growth has also been shifted within the sectors. Initially, the primary sector generated a large percentage of the GDP. Due to globalization, the service sector is now the main driver of Indian economy. The overall rate of growth of India's economy is one of the major advantages of globalization in India owing to the fact that during the 1970s, its rate of growth was as low as 3 percent. Countries like Mexico, Brazil, Korea and Indonesia had their GDP doubling that of India. Even though the 1980s saw the India's growth rate doubling, it was still lower than that of Indonesia, China and Korea. As such, India's position in the global arena has been improved from the time that it became part of the globalized world. In 1991, India was ranked fourth with regard to its economy. However, with the increase in the rate of growth that it experienced with the liberalization of its economy, it moved to the fourth place in 2001 (Pieterse 2004). Foreign direct investment has also increased due to globalization in India. There are also other sectors that have experienced growth owing to globalization apart from the above mentioned area. These include India's imports and exports. As such, globalization has resulted in fiscal consolidation, growth in foreign exchange reserve, increased foreign investment and to a considerable extent, control of inflation. All these have helped the speeding up of growth of Indian economy. Globalization has seen an increase in the number of fortune companies in India. The implication is that there are more employment opportunities than before. This also means that the standards of living have been raised with more wealthy people being created due to the numerous opportunities that exist within the country. The liberalization of trade which consequently led to flexibilities in business policies to allow for equal opportunities for multinational companies has therefore resulted in desirable impacts for the overall Indian economy. New technologies and products have been introduced in India and this has created new opportunities. The multinational companies have made big investments and set up research and development centers which have brought about positive impacts in the lives of Indian people

The negative aspect of Globalization - As much as there have been numerous economic gains attached to globalization in India, there are also disadvantages. The rapid growth of industries due to globalization has not brought about benefits for everyone. There are various sectors that this growth has further aggravated the conditions of particular groups within the Indian society. Globalization has brought about rapid growth in the informal sector which has resulted in undesirable impacts on the working population. As much as it has led to the creation of jobs for many individuals, globalization is also contributing to the suffering of people within the informal sector. It is important to note that the informal sector is deliberately not included in the labor legislation. For instance, informal workers are not subject to the 1948 Factories Act which covers the general working conditions, working hours, safety and health, prohibition of child labor, basic amenities among other things (Stone 1996). With globalization finding its way into India, it is clear that its consequences have been undesirable for workers in the informal sector. Globalization has resulted in poor health, deplorable working conditions and bondage. Employers have been able to impose working conditions that are extremely hazardous due to chronic insecurity among worker. For instance, the construction industry which is the second largest employer in Indian has not taken into consideration the working conditions of its employers. The employers are not concerned about the hazards involved.

Conclusion - Globalization has had both desirable and undesirable consequences for India. These consequences have been felt from the general economy to more specific conditions of life for the individual. As mentioned, globalization has resulted in the growth of Indian economy which in turn has improved the lives of many people. It has also created many employment opportunities. However, it has also widened the gap between the rich and the poor part from resulting in more oppression for those at the bottom of the social ladder. However, it may be said that globalization is inevitable in the twenty first century despite these disadvantages considering the advances in information technology which has led to more integration between nations. Various ills such as inequality that it has created are also some of its inevitable consequences which results from the competitive environment and the need to increase production so as to meet the growing global demand. As such, it has created both winners and loser in India with loses being workers in the informal sector.

References -

1. www.wikipediaorg/wiki/globbalisation_)in_india
2. www.business.mapsofindia.com
3. www.ask.com+impact+of+globlisation

India's Capital Market

Dr. Satish Maheshwari * **Trapti Maheshwari** **

Introduction - Capital markets are financial markets for the buying and selling of long-term debt or equity-backed securities. These markets channel the wealth of savers to those who can put it to long-term productive use, such as companies or governments making long-term investments.[1]Financial regulators, such as the UK's Bank of England (BoE) or the U.S. Securities and Exchange Commission (SEC), oversee the capital markets in their jurisdictions to protect investors against fraud, among other duties.

Modern capital markets are almost invariably hosted on computer-based electronic trading systems; most can be accessed only by entities within the financial sector or the treasury departments of governments and corporations, but some can be accessed directly by the public.[2] There are many thousands of such systems, most serving only small parts of the overall capital markets. Entities hosting the systems include stock exchanges, investment banks, and government departments. Physically the systems are hosted all over the world, though they tend to be concentrated in financial centers like London, New York, and Hong Kong. Capital markets are defined as markets in which money is provided for periods longer than a year.[3]

Capital Market Types

There are two types of capital market

1. Primary market - The primary market is that part of the capital markets that deals with the issuance of new securities. Companies, governments or public sector institutions can obtain funding through the sale of a new stock or bond issue. This is typically done through a syndicate of securities dealers. The process of selling new issues to investors is called underwriting. In the case of a new stock issue, this sale is an initial public offering (IPO). Dealers earn a commission that is built into the price of the security offering, though it can be found in the prospectus.

Features of primary markets are - This is the market for new long term equity capital. The primary market is the market where the securities are sold for the first time. Therefore it is also called the new issue market (NIM).

In a primary issue, the securities are issued by the company directly to investors.The company receives the money and issues new security certificates to the investors.

Primary issues are used by companies for the purpose of setting up new business or for expanding or modernizing the existing business.The primary market performs the crucial function of facilitating capital formation in the economy.The new issue market does not include certain other sources of new long term external finance, such as loans from financial institutions. Borrowers in the new issue market may be raising capital for converting private capital into public capital; this is known as "going public."

The financial assets sold can only be redeemed by the original holder.

Methods of issuing securities in the primary market are:

1. Initial public offering;
2. Rights issue (for existing companies);
3. Preferential issues

Initial public offering - An initial public stock offering (IPO) referred to simply as an "offering" or "flotation," is when a company issues common stock or shares to the public for the first time. They are often issued by smaller, younger companies seeking capital to expand, but can also be done by large privately-owned companies looking to become publicly traded.

In an IPO the issuer may obtain the assistance of an underwriting firm, which helps it determine what type of security to issue (common or preferred), best offering price and time to bring it to market.

An IPO can be a risky investment. For the individual investor, it is tough to predict what the stock or shares will do on its initial day of trading and in the near future since there is often little historical data with which to analyze the company. Also, most IPOs are of companies going through a transitory growth period, and they are therefore subject to additional uncertainty regarding their future value.

Rights issue - Under a secondary market offering or seasoned equity offering of shares to raise money, a company can opt for a rights issue to raise capital. The rights issue is a special form of shelf offering or shelf registration. With the issued rights, existing shareholders have the privilege to buy a specified number of new shares from the firm at a specified price within a specified time. A rights issue is in contrast to an initial public offering (primary market offering), where shares are issued to the general public through market exchanges.

2. Secondary market - The secondary market, also known as the aftermarket, is the financial market where previously issued securities and financial instruments such as stock, bonds, options, and futures are bought and sold.[1]. The term "secondary market" is also used to refer to the market

* **Professor (Commerce) Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA**
** **Research Scholar , Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA**

for any used goods or assets, or an alternative use for an existing product or asset where the customer base is the second market (for example, corn has been traditionally used primarily for food production and feedstock, but a second- or third- market has developed for use in ethanol production). Another commonly referred to usage of secondary market term is to refer to loans which are sold by a mortgage bank to investors such as Fannie Mae and Freddie Mac.

With primary issuances of securities or financial instruments, or the primary market, investors purchase these securities directly from issuers such as corporations issuing shares in an IPO or private placement, or directly from the federal government in the case of treasuries. After the initial issuance, investors can purchase from other investors in the secondary market.

The secondary market for a variety of assets can vary from loans to stocks, from fragmented to centralized, and from illiquid to very liquid. The major stock exchanges are the most visible example of liquid secondary markets – in this case, for stocks of publicly traded companies. Exchanges such as the New York Stock Exchange, Nasdaq and the American Stock Exchange provide a centralized, liquid secondary market for the investors who own stocks that trade on those exchanges. Most bonds and structured products trade "over the counter," or by phoning the bond desk of one's broker-dealer. Loans sometimes trade online using a Loan Exchange

Role And Importance Of Capital Market In India - Capital market has a crucial significance to capital formation. For a speedy economic development adequate capital formation is necessary. The significance of capital market in economic development is explained below:-

1. Mobilization Of Savings And Acceleration Of Capital Formation - In developing countries like India the importance of capital market is self-evident. In this market, various types of securities helps to mobilize savings from various sectors of population. The twin features of reasonable return and liquidity in stock exchange are definite incentives to the people to invest in securities. This accelerates the capital formation in the country.

2. Raising Long - Term Capital - The existence of a stock exchange enables companies to raise permanent capital. The investors cannot commit their funds for a permanent period but companies require funds permanently. The stock exchange resolves this dash of interests by offering an opportunity to investors to buy or sell their securities, while permanent capital with the company remains unaffected.

3. Promotion Of Industrial Growth - The stock exchange is a central market through which resources are transferred to the industrial sector of the economy. The existence of such an institution encourages people to invest in productive channels. Thus it stimulates industrial growth and economic development of the country by mobilizing funds for investment in the corporate securities.

4. Ready And Continuous Market - The stock exchange provides a central convenient place where buyers and sellers can easily purchase and sell securities. Easy marketability makes investment in securities more liquid as compared to other assets.

5. Technical Assistance - An important shortage faced by entrepreneurs in developing countries is technical assistance. By offering advisory services relating to preparation of feasibility reports, identifying growth potential and training entrepreneurs in project management, the financial intermediaries in capital market play an important role.

6. Reliable Guide To Performance - The capital market serves as a reliable guide to the performance and financial position of corporates, and thereby promotes efficiency.

7. Proper Channelization Of Funds - The prevailing market price of a security and relative yield are the guiding factors for the people to channelise their funds in a particular company. This ensures effective utilization of funds in the public interest.

8. Provision Of Variety Of Services - The financial institutions functioning in the capital market provide a variety of services such as grant of long term and medium term loans to entrepreneurs, provision of underwriting facilities, assistance in promotion of companies, participation in equity capital, giving expert advice etc.

9. Development Of Backward Areas - Capital Markets provide funds for projects in backward areas. This facilitates economic development of backward areas. Long term funds are also provided for development projects in backward and rural areas.

10. Foreign Capital - Capital markets makes possible to generate foreign capital. Indian firms are able to generate capital funds from overseas markets by way of bonds and other securities. Government has liberalized Foreign Direct Investment (FDI) in the country. This not only brings in foreign capital but also foreign technology which is important for economic development of the country.

11. Easy Liquidity - With the help of secondary market investors can sell off their holdings and convert them into liquid cash. Commercial banks also allow investors to withdraw their deposits, as and when they are in need of funds.

12. Revival Of Sick Units - The Commercial and Financial Institutions provide timely financial assistance to viable sick units to overcome their industrial sickness. To help the weak units to overcome their financial industrial sickness banks.

Classification and Growth of Indian Capital Market!

The Indian capital market is the market for long term loanable funds as distinct from money market which deals in short-term funds.

It refers to the facilities and institutional arrangements for borrowing and lending 'term funds', medium term and long term funds. In principal capital market loans are used by industries mainly for fixed investment. It does not deal in

capital goods, but is concerned with raising money capital or purpose of investment.

Classification - The capital market in India includes the following institutions (i.e., supply of funds tor capital markets comes largely from these);

(i) Commercial Banks;
(ii) Insurance Companies (LIC and GIC);
(iii) Specialised financial institutions like IFCI, IDBI, ICICI, SIDCS, SFCS, UTI etc.;
(iv) Provident Fund Societies;
(v) Merchant Banking Agencies;
(vi) Credit Guarantee Corporations.

Individuals who invest directly on their own in securities are also suppliers of fund to the capital market.

Thus, like all the markets the capital market is also composed of those who demand funds (borrowers) and those who supply funds (lenders). An ideal capital market at tempts to provide adequate capital at reasonable rate of return for any business, or industrial proposition which offers a prospective high yield to make borrowing worthwhile. The Indian capital market is divided into gilt-edged market and the industrial securities market. The gilt-edged market refers to the market for government and semi-government securities, backed by the RBI. The securities traded in this market are stable in value and are much sought after by banks and other institutions.

The industrial securities market refers to the market for shares and debentures of old and new companies. This market is further divided into the new issues market and old capital market meaning the stock exchange.

The new issue market refers to the raising of new capital in the form of shares and debentures, whereas the old capital market deals with securities already issued by companies. The capital market is also divided in primary capital market and secondary capital market. The primary market refers to the new issue market, which relates to the issue of shares, preference shares, and debentures of non-government public limited companies and also to the realizing of fresh capital by government companies, and the issue of public sector bonds. The secondary market on the other hand is the market for old and already issued securities. The secondary capital market is composed of industrial security market or the stock exchange in which industrial securities are bought and sold and the gilt- edged market in which the government and semi-government securities are traded.

References -

1. www.capitalmarket.com
2. https://www.indiacapitalmarkets.in/

****

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के माध्यम से लाभांवित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित रोजगार के नवीन अवसरों का विश्लेषण

डॉ. लक्ष्मण परवाल * डॉ. गेन्दालाल चौहान * *

प्रस्तावना – भारत में पंचवर्षीय योजनाओं से भी देश की गरीबी, बेकारी एवं बेरोजगारी जैसी भीषण समस्याओं का पूर्णत: अंत नहीं हुआ है। इन समस्याओं ने सम्पूर्ण राष्ट्र एवं व्यक्ति के विकास को प्रभावित किया है। स्वरोजगार किसी भी देश में न केवल धन सम्पदा के सृजन एवं राष्ट्र के आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण मार्ग है, वरन् यह आजीविका अर्जन का गरिमापूर्ण ढंग एवं व्यक्तित्व विकास का एक प्रमुख माध्यम भी है। स्वरोजगार के द्वारा कोई बेरोजगार न केवल अपने लिये रोजगार का सृजन करता है, अपितु वह अपनी परियोजना में कई अन्य बेरोजगारों को भी रोजगार प्रदान करता है। स्वरोजगार को बढ़ावा देकर ही प्रत्येक राष्ट्र आर्थिक विकास की प्रक्रिया को गतिशील बना सकता है।

शिक्षित युवा देश की अमूल्य सम्पत्ति होते हैं, किन्तु यदि इनकी क्षमताओं का उत्पादक उपयोग न किया जाये तथा इनके उत्साह, मनोबल और योग्यता का सृजनात्मक उपयोग न हो तो यह स्थिति न केवल सम्पूर्ण राष्ट्र के लिये वरन देश की शिक्षित युवा पीढ़ी के लिए भी अत्यंत घातक है। सरकार के द्वारा ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में शैक्षणिक सुविधाओं के विस्तार के साथ-साथ बेरोजगारी की समस्या और भी गंभीर हो गई है। हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली युवाओं को रोजगार देने में असमर्थ रही है।

अध्ययन का उद्देश्य – स्वरोजगार, बेरोजगारी की विकट समस्या के समाधान का एक व्यावहारिक उपाय है। सरकार अपने विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओं के माध्यम से देश में स्वरोजगार को बढ़ावा दे रही है, ताकि देश के असंख्य भौतिक एवं मानवीय संसाधनों को उत्पादक एवं उच्चतम प्रयोग संभव हो सके। वर्तमान में देश में लाखों युवक कार्यविहीन एवं बेकार हैं। स्वरोजगार के माध्यम से उन्हें उद्योग धन्धों एवं व्यवसाय की ओर प्रवृत्त किया जा रहा है। इसमें व्यक्ति स्वयं रोजगार करने के लिए स्वतंत्र रूप से कोई भी आर्थिक क्रिया प्रारंभ कर सकता है। यह क्रिया लघु व्यापार, उद्योग या मरम्मत या सेवा के रूप में हो सकती है। स्वरोजगार एक उद्यमिता है जिसमें व्यक्ति कार्य के अवसरों अर्थात् किसी उद्योग, व्यवसाय या सेवा का चयन करके लाभकारी आर्थिक क्रिया प्रारंभ कर सकता है। वस्तुत: यह अध्ययन निम्न उद्देश्यों पर आधारित है :

1. प्रधानमंत्री रोजगार योजना के माध्यम से लाभान्वित आदिवासी हितग्राहियों की लाभदायकता का विश्लेषण करना।
2. प्रधानमंत्री रोजगार योजना के माध्यम से लाभान्वित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित किये गये नवीन रोजगार के अवसरों का विश्लेषण करना।
3. प्रधानमंत्री रोजगार योजना के माध्यम से ऋण/वित्तीय सहायता प्राप्त सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित किये गये नवीन रोजगार के अवसरों का प्रतिशत के आधार पर विश्लेषण करना।

अध्ययन का क्षेत्र एवं प्रणाली – यह अध्ययन मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में किया गया है, जिसमें अलीराजपुर जिला भी शामिल है। प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक समंकों पर आधारित है, जो प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत झाबुआ जिले में वर्श 2003-04 से वर्ष 2007-08 तक गत 05 वर्षों में लाभांवित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित रोजगार के नवीन अवसरों का विश्लेषण किया गया है। जिले में इस योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षों में कुल 765 आदिवासी बेरोजगार युवाओं को विभिन्न बैंकिंग शाखाओं द्वारा आर्थिक सहायता/ऋण राशि उपलब्ध कराकर स्वरोजगार इकाईयों की स्थापना कराई गई है। इन 765 लाभांवित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित किये गये नवीन रोजगार के अवसरों का विश्लेषण करने हेतु शोधकर्ता ने कुल समग्र (765) में से दैव निदर्शन पद्धति के अंतर्गत सविचार प्रतिचयन विधि के आधार पर 20 प्रतिशत (अर्थात्153) लाभांवित हितग्राहियों से भरवाई गई अनुसूचियों एवं प्रत्यक्ष साक्षात्कार के माध्यम से प्राप्त जानकारियों के आधार पर किया गया है।

विश्लेषणात्मक विवेचन – प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित रोजगार के नवीन अवसरों का विश्लेषण निम्न तालिका द्वारा किया गया है :

तालिका क्रमांक 01 (अगले पृष्ठ पर देखें)

उपर्युक्त तालिका एवं रेखाचित्र से स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत झाबुआ जिले में गत 05 वर्षों में सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से 50 हितग्राहियों (अर्थात् 32.68 प्रतिशत) द्वारा योजनांतर्गत उनके द्वारा स्थापित इकाईयों को लाभ में चलाया जा रहा है। ये वे हितग्राही हैं, जो अपनी अधिग्रहीत इकाईयों की कुल प्राप्तियों में से इकाईयों के संचालन व्यय, बैंकों की किश्तें (ब्याज सहित) तथा नियोजित व्यक्ति का वेतन आदि घटाने के पश्चात् भी 1,000 रूपये से लेकर 4,000 रूपये प्रतिमाह तक बचत कर रहे हैं। इन हितग्राहियों द्वारा अपनी स्थापित इकाईयों में 42 नवीन रोजगार के अवसरों का सृजन भी किया गया है, जो कुल सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों का 27.45 प्रतिशत है, तथा लाभ की स्थिति में अपनी स्थापित इकाईयों को चलाने वाले आदिवासी हितग्राहियों का 84 प्रतिशत है। इस प्रकार लाभ की स्थिति में अपनी इकाईयों को चलाने वाले 50 आदिवासी हितग्राहियों द्वारा स्वयं रोजगार में रहते हुए अन्य 42 नवीन रोजगार के अवसरों का सृजन भी किया गया है। इस आधार पर कुल मिलाकर प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अतर्गत 92 रोजगार के अवसरों का सृजन हुआ है, जो कि कुल सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों का 60.13 प्रतिशत है।

सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से 06 हितग्राहियों (अर्थात् 03.92 प्रतिशत) के द्वारा अपनी स्थापित इकाईयों को हानि में चलाया जा

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानंद शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरोद, जिला उज्जैन (म.प्र.) भारत

रहा है। हानि से आशय स्थापित इकाईयों की कुल आगम (प्राप्तियों) में से इकाईयों के संचालन व्यय व बैंक की किश्तें भी नहीं चुका पाना है। इन हितग्राहियों द्वारा भी अपनी स्थापित इकाईयों में 01 बेरोजगार को नवीन रोजगार का अवसर प्रदान किया गया है।

इसी प्रकार सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों में से 09 हितग्राहियों (अर्थात् 05.88 प्रतिशत) के द्वारा अपनी स्थापित इकाईयों को न लाभ–न हानि की स्थिति में चलाया जा रहा है। ये वे हितग्राही हैं जो अपनी स्थापित इकाईयों की कुल आगम (प्राप्तियों) में से इकाई के संचालन व्यय एवं बैंक की किश्तें चुकाने के बाद कोई बचत नहीं कर पा रहे हैं। इन हितग्राहियों द्वारा भी अपनी स्थापित इकाईयों में 03 बेरोजगारों को नवीन रोजगार के अवसर प्रदान किये गये हैं।

सर्वेक्षित हितग्राहियों में से 88 हितग्राहियों (अर्थात् 57.52 प्रतिशत) ने अपने द्वारा स्थापित इकाईयां ही बंद कर दी हैं, क्योंकि वे अत्यधिक हानि में थीं। ये वे हितग्राही हैं, जिन्हें अपने द्वारा स्थापित इकाईयों को चलाने का न तो व्यावहारिक व व्यावसायिक ज्ञान था और नहीं उद्यमी कौशल। इनमें से अधिकांश हितग्राही तो बैंकों से पर्याप्त वित्तीय सहायता नहीं मिल पाने की वजह से अपनी इकाईयों को चला नहीं पाये, जबकि कुछ हितग्राहियों की सोच तो शासन द्वारा दी जाने वाली अनुदान राशि को प्राप्त करना मात्र था। इन हितग्राहियों के द्वारा अपनी इकाईयों में किसी अन्य व्यक्ति को रोजगार भी प्रदान नहीं किया गया है।

इस प्रकार झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत सर्वेक्षित 153 हितग्राहियों में से मात्र 92 रोजगार के अवसर सृजित हुए हैं जो कि 60 प्रतिशत के बराबर है। सर्वेक्षित हितग्राहियों में से 50 हितग्राही (अर्थात् 32.68 प्रतिशत) तो स्वयं स्वरोजगार प्राप्त हैं, तथा इनके द्वारा 42 नवीन रोजगार के अवसर (अर्थात् 27.45 प्रतिशत) भी अपने द्वारा स्थापित इकाईयों में उपलब्ध करवाये गये हैं। किन्तु 88 आदिवासी हितग्राही अपनी स्वरोजगार इकाईयां स्थापित करने के पश्चात् पुन: बेरोजगार भी हो गये हैं, साथ ही 15 हितग्राही भी अपनी स्वरोजगार इकाईयों को हानि में/न लाभ – न हानि में चला रहे हैं, वे भी शीघ्र ही बेरोजगार होने की स्थिति में ही हैं।

निष्कर्ष– प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत झाबुआ जिले में सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से 42 नवीन रोजगार के अवसर सृजित किये गये है, वहीं 103 आदिवासी हितग्राही स्वरोजगार पाने के पश्चात् पुन: बेरोजगार भी हो गये हैं। कुल मिलाकर (153 + 42 – 103) = 92 आदिवासी योजनांतर्गत लाभावित हुए हैं। यह कुल सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों के लगभग 60 प्रतिशत के बराबर है।

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत प्रत्येक 100 लाभान्वित हितग्राहियों में से मात्र 33 हितग्राही ही अपना स्वरोजगार स्थापित करने के पश्चात् अपनी इकाईयों का न केवल सफलतापूर्वक संचालन कर रहे है, बल्कि 27 नवीन व्यक्तियों को भी अपनी स्थापित इकाईयों में रोजगार उपलब्ध करा रहे है। जबकि शेष 67 हितग्राही तो इस योजना के माध्यम से वित्तीय सहायता/ऋण प्राप्त करने के पश्चात् पुन: बेरोजगार हो रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची : –

1. सम्पूर्ण शोध सामग्री डॉ. गेन्दालाल चौहान, सहायक प्राध्यापक – वाणिज्य विभाग, शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरोद – जिला उज्जैन द्वारा विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध '**प्रधानमंत्री रोजगार योजना का झाबुआ जिले के आदिवासियों के आर्थिक विकास में योगदान**' से ली गई है। विश्वविद्यालय द्वारा इनके इस मौलिक कार्य पर पीएच. – डी. की उपाधि फरवरी 2014 में प्रदान की गई है।

तालिका क्रमांक 01
प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित रोजगार के नवीन अवसरों का विश्लेषण

क्र.	सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों की लाभदायकता की स्थिति	सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों की संख्या	कुल सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों से प्रतिशत	सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा सृजित किये गये नवीन रोजगार के अवसरों की संख्या	कुल सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों से प्रतिशत	योजनांतर्गत कुल सृजित रोजगार के अवसर (स्वयं हितग्राही तथा उसके द्वारा सृजित नवीन रोजगार सहित)	
						संख्या (3+5)	कुल सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों से प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8
1	योजनांतर्गत स्थापित इकाईयों को लाभ में चलाने वाले आदिवासी हितग्राही	50	32.68	42	27.45	92	60.13
2	योजनांतर्गत स्थापित इकाईयों को हानि में चलाने वाले आदिवासी हितग्राही	06	03.92	01	00.65	–	–
3	योजनांतर्गत स्थापित इकाईयों को न लाभ – न हानि में चलाने वाले आदिवासी हितग्राही	09	05.88	03	01.96	–	–
4	योजनांतर्गत स्थापित इकाईयों को बन्द कर देने वाले आदिवासी हितग्राही	88	57.52	–	–	–	–
	योग	**153**	**100.00**	**46**	**30.06**	**92**	**60.13**

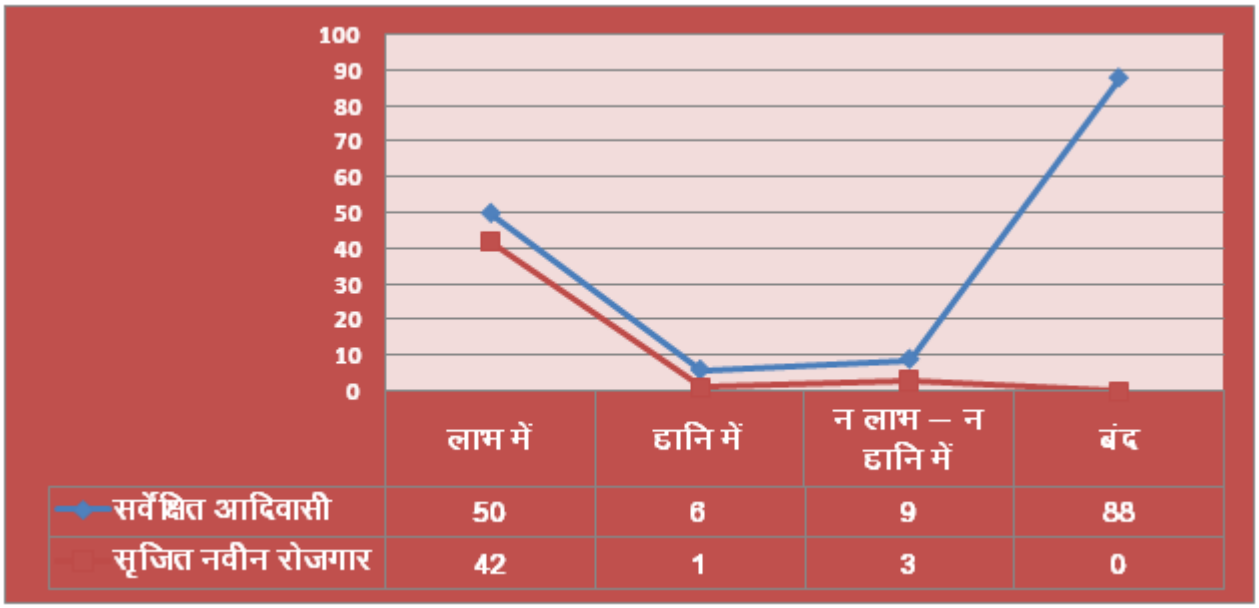

****

प्रधानमंत्री रोजगार योजनांतर्गत स्थापित की गई इकाईयों की लाभदायकता का विश्लेषण (मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. लक्ष्मण परवाल * डॉ. गेंदालाल चौहान * *

प्रस्तावना – गत कुछ वर्षों से देश व प्रदेश में विकास एवं रोजगार मूलक अनेक कार्यक्रमों तथा योजनाओं को लागू करने के बावजूद भी देश व प्रदेश के ग्रामीण व छोटे-छोटे शहरी क्षेत्रों में आज भी गरीबी एवं बेकारी की समस्या विद्यमान है। देश में विकास का जो ढॉचा अपनाया गया है, उससे बड़े-बड़े शहरों में तो प्रगति हुई है, लेकिन उसने ग्रामों व छोटे-छोटे शहरी क्षेत्रों के बीच विकास की गति को रोक दिया है। यही कारण है कि भारतीय बिजनेस स्कूल, आई.आई.टी. संस्थान और आई.आई.एम. के छात्रों को नौकरी देने के लिए दुनियाँ भर की कम्पनियां कतार में खड़ी है, वहीं दूसरी और देश के छ: लाख से अधिक गांव और छोटे-छोटे कस्बे बेरोजगारों की भीड़ का अथाह-सागर बन चुके हैं।

इस स्थिति से उबरने के लिए स्वरोजगार कार्यक्रमों की महत्ता विशेष रूप से बढ़ जाती है, क्योंकि ये कार्यक्रम गरीबी दूर करने में, बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध कराकर उनकी आय में वृद्धि करने में तथा जीवन स्तर में सुधार करने योग्य स्थायी आधार प्रदान करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

इस दृष्टि से प्रधानमंत्री रोजगार योजना इस दिशा में बढ़ने के लिए एक कारगर उपाय सिद्ध हुई है। यह योजना ग्रामीण व शहरी दोनों क्षेत्रों में रहने वाले गरीब बेरोजगार युवाओं के लिए एक अनूठी योजना है। शोधार्थी ने आदिवासियों के आर्थिक विकास में इस योजनान्तर्गत स्थापित की गई इकाईयों की लाभदायकता का विश्लेषण कर यह पाया कि जिस हितग्राही ने दृढ़ इच्छा शक्ति, कठिन मेहनत एवं लगन से इस योजना के माध्यम से वित्तीय सहायता प्राप्त करके स्वरोजगार इकाई की स्थापना की है वह न केवल अपने परिवार को आर्थिक संबल प्रदान कर सका है बल्कि उत्तरोत्तर स्वयं के आर्थिक स्तर को बढ़ाकर समाज में अपने लिए एक उचित स्थान बनाने में भी सहायक हुआ है।

अध्ययन का उद्देश्य – केन्द्र व राज्य शासन की यह मंशा रही है कि इस योजना के माध्यम से देश के बेरोजगार युवाओं की एक बड़ी संख्या स्वरोजगार के द्वारा अपनी स्वयं की इकाई स्थापित करेगी, जो पूँजी के अभाव में अपनी सोच को मूर्त रूप प्रदान करने में असफल रहे हैं। नोड्ल एजेन्सी, लीड़ बैंक एवं जिला प्रशासन की भी यह अपेक्षा रहती है कि जिले के युवा बेरोजगार इस योजना से लाभांवित होकर स्वावलम्बी जीवन जीऍ।

क्या शासन की इस सोच को मूर्त स्वरूप मिल सका है? क्या जिले के आदिवासी युवा बेरोजगार इस योजना से लाभांवित होकर स्वावलम्बी बन पाये हैं? वस्तुत: यह अध्ययन निम्न उद्देश्यों पर आधारित है :

1. ऋण/वित्तीय सहायता प्राप्त आदिवासियों की आर्थिक स्थिति में हुए परिवर्तन का विश्लेषण करना।
2. ऋण प्राप्त आदिवासी हितग्राहियों की बचत प्रवृत्ति का विश्लेषण करना।
3. योजनांतर्गत स्थापित की गई इकाईयों की लाभदायकता का विश्लेषण करना।
4. ऋण प्राप्त आदिवासी हितग्राहियों द्वारा ऋणों के पुनर्भुगतान की स्थिति का विश्लेषण करना।

अध्ययन प्रणाली एवं क्षेत्र – यह अध्ययन म.प्र. के झाबुआ जिले में किया गया है, जिसमें अलीराजपुर जिला भी शामिल है। प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक समंकों पर आधारित है, जो वर्ष 2003-04 से वर्ष 2007-08 तक गत 05 वर्षों में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के माध्यम से ऋण एवं वित्तीय सहायता प्राप्त कुल 765 आदिवासी हितग्राहियों के समग्र में से लगभग 20 प्रतिशत अर्थात् 153 हितग्राहियों, जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, झाबुआ के 05 अधिकारियों व कर्मचारियों तथा झाबुआ जिले के राष्ट्रीयकृत बैंकों की 05 शाखाओं के मैनेजर व अधिकारियों का चयन प्रतिदर्श चुनने की सविचार प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया। इन चयनित हितग्राहियों / अधिकारियों / कर्मचारियों से अनुसूची के माध्यम से प्रत्यक्ष साक्षात्कार के आधार पर सूचनाऐं संकलित की गई है।

विश्लेषण एवं परिणाम – सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति में सुधार का आंकलन – प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत झाबुआ जिले में गत 05 वर्षों में उद्योग/ सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के अंतर्गत स्थापित की गई 153 इकाईयों के सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति को शोधार्थी ने निम्न तालिका के माध्यम से विश्लेषित किया है।

तालिका क्रमांक 01 (देखें अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 50 हितग्राहियों की ही आर्थिक स्थिति में सुधार का अभिमत प्राप्त हुआ है, जबकि 45 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्राप्त करने के पश्चात् पहले से भी और अधिक कमजोर हो गई है तथा 58 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होने का अभिमत प्राप्त हुआ है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य), शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद जिला, उज्जैन (म.प्र.) भारत

प्रतिशत के आधार पर विश्लेषण करने से यह स्पष्ट होता है कि झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्राप्त कर अपना स्वयं का स्वरोजगार स्थापित करने वाले प्रत्येक 100 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 33 हितग्राहियों की ही आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है, शेष 67 हितग्राहियों में से 38 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति वैसी ही है, जैसी इस योजना से जुड़ने के पूर्व थी एवं 29 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति और कमजोर हो गई है। ये वे हितग्राही हैं जो कम पढ़े लिखे होने के साथ-साथ इनमें व्यावसायिक उद्यमिता के गुणों की भी कमी हैं।

इकाईवार विश्लेषण के अनुसार उद्योग क्षेत्र से संबंधित 31 सर्वेक्षित हितग्राहियों में से मात्र 10 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति में सुधार का अभिमत प्राप्त हुआ है, शेष 21 हितग्राहियों में से 13 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति पूर्ववत एवं 08 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति पहले से भी और अधिक कमजोर होने का अभिमत प्राप्त हुआ है। सेवा क्षेत्र में सर्वेक्षित 45 हितग्राहियों में से मात्र 10 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति में सुधार का अभिमत प्राप्त हुआ है, शेष 35 हितग्राहियों में से 22 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति पूर्ववत् एवं 13 हितग्राहियों की आर्थिक पहले से भी और अधिक कमजोर होने का अभिमत प्राप्त हुआ है। इसी प्रकार व्यवसाय क्षेत्र में सर्वेक्षित 77 हितग्राहियों में से मात्र 30 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति में सुधार का अभिमत प्राप्त हुआ है, शेष 47 हितग्राहियों में से 23 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति पूर्ववत् एवं 24 हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति पहले से भी और अधिक कमजोर होने का अभिमत प्राप्त हुआ है।

2. सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों में बचत करने की प्रवृत्ति का आंकलन – प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत झाबुआ जिले में गत् 05 वर्षो में उद्योग/ सेवा/व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों में वित्तीय सहायता प्राप्त कर अपना स्वयं का स्वरोजगार प्रारंभ कर चुके सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में बचत करने की प्रवृत्ति का आंकलन शोधार्थी ने निम्न तालिका के माध्यम से किया है।

तालिका क्रमांक 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 50 हितग्राहियों ने ही प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्राप्त करके अपनी स्वरोजगार इकाईयों को प्रतिमाह 1,000 रू. से लेकर 4,000 रू. तक बचत होने का अभिमत दिया है, शेष 103 हितग्राहियों ने कोई बचत नहीं होने का मत दिया है। ये वे हितग्राही हैं, जिनकी स्वरोजगार इकाईयां या तो बन्द हो चुकी हैं, या हानि में चल रही हैं या न लाभ न हानि में चल रही हैं।

इकाईवार स्थापित की गई सर्वेक्षित इकाईयों में से उद्योग क्षेत्र के क्रियाकलापों के अंतर्गत स्थापित 31 इकाईयों में से मात्र 10 इकाईयों में प्रतिमाह 1,000 रू. से लेकर 4,000 रू. तक बचत होने का अभिमत प्राप्त हुआ है, जबकि 21 हितग्राहियों ने अपने द्वारा स्थापित की गई इकाईयों में कोई बचत नहीं होने का मत दिया है। इसी प्रकार सेवा व व्यवसाय क्षेत्र के क्रियाकलापों के अंतर्गत स्थापित 45 एवं 77 इकाईयों में क्रमशः 10 एवं 30 इकाईयों में प्रतिमाह 1,000 रू. से लेकर 4,000 रू. तक बचत होने का अभिमत प्राप्त हुआ है, जबकि सेवा क्षेत्र के 35 एवं व्यवसाय क्षेत्र के 47 हितग्राहियों ने अपने द्वारा स्थापित की गई इकाईयों में कोई बचत नहीं होने का मत दिया है।

3. स्थापित इकाईयों की लाभदायकता की स्थिति का आंकलन – प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत झाबुआ जिले में वर्ष 2003-04 से लेकर वर्ष 2007-08 तक गत 05 वर्षो में उद्योग/ सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के अंतर्गत विभिन्न क्रियाकलापों के आधार पर स्थापित की गई इकाईयों के सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों से भरवायी गई अनुसूचियों व प्रत्यक्ष साक्षात्कार के अनुसार लाभ/हानि की स्थिति आंकलन निम्नांकित बिन्दुओं को ध्यान में रखकर किया गया है –

- ऐसे हितग्राही जिनकी स्वरोजगार इकाई वर्तमान में अस्तित्व में हैं तथा लाभ में चल रही हैं।
- ऐसे हितग्राही जिनकी स्वरोजगार इकाई वर्तमान में अस्तित्व में हैं तथा हानि में चल रही हैं।
- ऐसे हितग्राही जिनकी स्वरोजगार इकाई वर्तमान में अस्तित्व में हैं न लाभ न हानि में चल रही हैं।
- ऐसे हितग्राही जिनकी स्वरोजगार इकाई वर्तमान में अस्तित्व में नहीं हैं, अर्थात् बंद हो चुकी हैं।

उपर्युक्त बिन्दुओं के आधार पर सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों द्वारा प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत स्थापित की गई स्वरोजगार इकाईयों की लाभदायकता की स्थिति की शोधकर्ता ने निम्न तालिका के माध्यम से विश्लेषित किया है।

तालिका क्रमांक 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट होता है कि झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत गत 05 वर्षो में वित्तीय सहायता प्राप्त करके 32.68 प्रतिशत हितग्राही (सर्वेक्षित 153 हितग्राहियों में से 50 हितग्राही) अपने द्वारा स्थापित स्वरोजगार इकाईयों को लाभ में चला रहे हैं। इसके विपरित 67.32 प्रतिशत हितग्राही (सर्वेक्षित 153 हितग्राहियों में से 103 हितग्राही) अपने द्वारा स्थापित स्वरोजगार इकाईयों को हानि में चला रहे हैं, या न लाभ न हानि में चला रहे हैं या बन्द कर चुके हैं।

इकाईवार विश्लेषण के अनुसार उद्योग क्षेत्र की सर्वेक्षित 31 इकाईयों में से मात्र 10 इकाईयां (अर्थात् 32.26 प्रतिशत) ही लाभ में चल रही हैं, शेष 21 इकाईयां (अर्थात् 67.74 प्रतिशत) हानि में चल रही हैं/ न लाभ न हानि में चल रही हैं/बन्द हो गई है। सेवा क्षेत्र की सर्वेक्षित 45 इकाईयों में से मात्र 10 इकाईयां (अर्थात् 22.22 प्रतिशत) ही लाभ में चल रही हैं, शेष 35 इकाईयां (अर्थात् 77.78 प्रतिशत) हानि में चल रही हैं/ न लाभ न हानि में चल रही हैं/बन्द हो गई है। इसी प्रकार व्यवसाय क्षेत्र की सर्वेक्षित 77 इकाईयों में से मात्र 30 इकाईयां (अर्थात् 38.96 प्रतिशत) ही लाभ में चल रही हैं, शेष 47 इकाईयां (अर्थात् 61.04 प्रतिशत) हानि में चल रही हैं/ न लाभ न हानि में चल रही हैं/बन्द हो गई है।

4. आदिवासी हितग्राहियों द्वारा लिये गये ऋणों के पुनर्भुगतान की स्थिति का आंकलन – प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत झाबुआ जिले में वर्ष 2003-04 से लेकर वर्ष 2007-08 तक गत 05 वर्षो में उद्योग, सेवा एवं व्यवसाय क्षेत्र के विभिन्न क्रियाकलापों में वित्तीय सहायता/ ऋण राशि प्राप्त करके स्थापित की गई इकाईयों के सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों से भरवाई गई अनुसूचियों व प्रत्यक्ष साक्षात्कार के अनुसार हितग्राहियों द्वारा ऋणों के पुनर्भुगतान की स्थिति को शोधार्थी ने निम्न 09 भागों में विभाजित कर प्रत्येक स्थिति में पुनर्भुगतान का विस्तृत आंकलन किया है –

- लाभ होने पर नियमित किश्तें देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही।
- लाभ होने पर नियमित किश्तें नहीं देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही ।

- हानि होने पर नियमित किश्तें देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही।
- हानि होने पर नियमित किश्तें नहीं देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही ।
- न लाभ न हानि होने पर नियमित किश्तें देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही ।
- न लाभ न हानि होने पर नियमित किश्तें नहीं देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही ।
- इकाई बंद होने पर नियमित किश्तें देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही ।
- इकाई बंद होने पर नियमित किश्तें नहीं देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही ।
- सफल आदिवासी हितग्राही जिन्होंने सम्पूर्ण ऋण राषि का भुगतान कर दिया।

तालिका - 4 (देख अगले पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट होता है कि झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अन्तर्गत गत 05 वर्षों में ऋण प्राप्त करके अपना स्वरोजगार प्रारंभ करने वाले सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 31 हितग्राही (अर्थात् 20.26 प्रतिशत) ही अपनी-अपनी इकाईयों को लाभ में चलाने के साथ ही साथ वे बैंकों को नियमित किश्तों का पुनर्भुगतान भी कर रहे हैं। इसमें उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के क्रमश: 05, 06 एवं 20 आदिवासी हितग्राही शामिल हैं।

सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से 10 हितग्राही (अर्थात् 06.54 प्रतिशत) ऐसे हैं, जिनकी इकाईयां लाभ में होने पर भी वे बैंकों को नियमित किश्तों का पुनर्भुगतान नहीं कर रहे हैं। ये वे हितग्राही हैं जो राजनैतिक प्रभाव के कारण बैंकों को ऋणों का पुनर्भुगतान नहीं कर रहे हैं। ऐसे हितग्राहियों के विरूद्ध स्थानीय प्रशासन एवं बैंक अधिकारियों को सख्त कार्यवाही करनी चाहिये, जिससे भविष्य में अन्य हितग्राही इस प्रकार का कदम नहीं उठा सकें। इन 10 हितग्राहियों में से उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के क्रमश: 02, 03 एवं 05 आदिवासी हितग्राही शामिल हैं।

सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 02 हितग्राही (अर्थात् 01.31 प्रतिशत) ऐसे हैं, जिनकी इकाईयां हानि में चलने पर भी वे प्राप्त ऋणों की किश्तों का बैंकों को पुनर्भुगतान कर रहे हैं। ये वे हितग्राही हैं जो प्रशासन के डर एवं कानूनी कार्यवाही से बचने हेतु अपनी इकाई हानि में होने पर भी अपनी अन्य आय से ऋण की किश्तें पुनर्भुगतान कर रहे हैं। इन 02 हितग्राहियों में से 01 हितग्राही सेवा क्षेत्र का तथा 01 हितग्राही व्यवसाय क्षेत्र का है ।

सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 04 हितग्राही (अर्थात् 02.61 प्रतिशत) ऐसे हैं, जिनकी इकाईयां हानि में चलने की वजह से वे बैंकों को ऋणों का पुनर्भुगतान नहीं कर रहे हैं। ये वे हितग्राही हैं जिन्हें व्यवसाय चलाने का पर्याप्त अनुभव नहीं होने से अपनी इकाईयों को हानि में चलाने पर मजबूर हैं। इन 04 हितग्राहियों में से उद्योग/सेवा/ व्यवसाय क्षेत्र के क्रमश: 01, 01 व 02 आदिवासी हितग्राही शामिल हैं।

सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 03 हितग्राही (अर्थात् 01.96 प्रतिशत) ऐसे हैं, जिनकी इकाईयां न लाभ न हानि की स्थिति में होने पर भी वे बैंकों को ऋणों का पुनर्भुगतान कर रहे हैं। इसमें 01सेवा क्षेत्र का तथा 02 हितग्राही व्यवसाय क्षेत्र के हैं। शासन को ऐसे हितग्राहियों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये तथा उन्हें आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध करवाकर यह प्रयास करना चाहिये कि वे लाभ कमाने की स्थिति में आ जाएं, जिससे कि अन्य बेरोजगार युवाओ के लिए वे आदर्श बन सकें।

सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 06 हितग्राही (अर्थात् 03.92 प्रतिशत) ऐसे हैं, जिनकी इकाईयां न लाभ न हानि की स्थिति में होने की वजह से वे बैंकों को नियमित किश्तों का पुनर्भुगतान नहीं कर रहे हैं। इसमें उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के क्रमश: 01, 01 व 04 आदिवासी हितग्राही शामिल हैं।

सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से 88 हितग्राही (अर्थात् 57.52 प्रतिशत) ऐसे हैं, जिनके द्वारा स्थापित इकाईयां बंद हो गई हैं। ये वे हितग्राही हैं जिन्होंने इकाईयों की स्थापना हेतु बैंकों से ऋण तो प्राप्त कर लिया है, किन्तु उन्हें उद्योग/व्यवसाय को चलाने हेतु आवश्यक ज्ञान नहीं होने से या पर्याप्त मात्रा में वित्तीय सहायता/ ऋण राशि प्राप्त नहीं होने के कारण या जानबूझकर अपने उद्योग/व्यवसाय को हानि में दर्शाकर ऋण की राशि नहीं देने की सोच रखने वाले आदिवासी हैं। इन 88 हितग्राहियों में से उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के क्रमश: 19, 31 एवं 38 आदिवासी हितग्राही शामिल हैं। इकाईयां बंद कर चुके 88 आदिवासी हितग्राहियों में से 07 हितग्राही (अर्थात् 04.58 प्रतिशत) तो प्रशासन के डर एवं कानूनी कार्यवाही से बचने हेतु बैंक ऋणों की बकाया किश्तों का पुनर्भुगतान कर रहे हैं, इसमें उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के क्रमश: 02, 04 एवं 01 आदिवासी हितग्राही शामिल हैं। किन्तु 81 हितग्राही तो अपने द्वारा स्थापित इकाईयां बंद हो जाने के पश्चात् बैंकों को बकाया ऋण राशियों का पुनर्भुगतान भी नहीं कर रहे हैं। इसमें उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के क्रमश: 17, 27 एवं 37 आदिवासी हितग्राही शामिल हैं।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना का एक उज्जवल पक्ष यह भी है कि सर्वेक्षित 153 आदिवासी हितग्राहियों में से 09 हितग्राही (अर्थात् 05.88 प्रतिशत) ऐसे भी हैं, जिन्हें हम सफल हितग्राही या आदर्श हितग्राही कह सकते हैं। इसमें उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के क्रमश: 03, 01 एवं 05 आदिवासी हितग्राही शामिल हैं।

ऐसे कर्मठ, जुझारू, मेहनतकश व ईमानदार हितग्राहियों की वजह से ही शासन एवं सरकारें समय-समय पर इन स्वरोजगार योजनाओं में परिवर्तन करके व उनके नाम बदलकर नये कलेवर व नये रूप में देश के बेरोजगार युवाओं के लिए इन योजनाओं को निरंतर चालू रखकर स्वरोजगार को प्रोत्साहित करने में अपना योगदान दे रही है।

निष्कर्ष - प्रस्तुत शोध पत्र के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं -

1. प्रतिशत के आधार पर इकाईवार विश्लेषण करने से उद्योग/सेवा/व्यवसाय क्षेत्र के प्रत्येक 100 आदिवासी हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति को इस प्रकार से विश्लेषित किया जा सकता है :-

विवरण	उद्योग क्षेत्र	सेवा क्षेत्र	व्यवसाय क्षेत्र
आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ	32	22	39
आर्थिक स्थिति पूर्ववत जैसी ही है	42	49	30
आर्थिक स्थिति और अधिक कमजोर हो गई	26	29	31
योग	**100**	**100**	**100**

2. प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षो में वित्तीय सहायता प्राप्त करके स्थापित की गई 100 इकाईयों में से लगभग 33 इकाईयां बचत कर रही हैं, शेष 67 इकाईयां कोई बचत नहीं कर पा रही हैं। उद्योग, सेवा एवं व्यवसाय क्षेत्र के क्रियाकलापों के अंतर्गत स्थापित की गई प्रत्येक 100 इकाईयों में से उद्योग क्षेत्र में लगभग 32 इकाईयां बचत कर रही हैं, शेष 68 इकाईयां कोई बचत नहीं कर पा रही हैं। सेवा क्षेत्र में लगभग 22 इकाईयां ही बचत कर पा रही हैं, शेष 78 इकाईयां कोई बचत नहीं कर पा रही हैं। व्यवसाय क्षेत्र में लगभग 32 इकाईयां ही बचत कर पा रहीं हैं, शेष 68 इकाईयां कोई बचत नहीं कर पा रही हैं।

3 जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना की लाभदायकता का विश्लेषण प्रतिशत के आधार पर इस प्रकार किया जा सकता है कि प्रत्येक 100 आदिवासी हितग्राहियों द्वारा योजनांतर्गत वित्तीय सहायता प्राप्त करके अपने द्वारा स्थापित स्वरोजगार इकाईयों में से लगभग 33 इकाईयों को लाभ में, 04 इकाईयों को हानि में, 06 इकाईयों को न लाभ न हानि में चलाया जा रहा है, तथा 57 इकाईयां बंद हो गई हैं। उद्योग क्षेत्र की प्रत्येक 100 इकाईयों में से आदिवासी हितग्रहियों द्वारा गत 05 वर्षो में लगभग 32 इकाईयों को लाभ में, 03 इकाईयों को हानि में, 04 इकाईयों को न लाभ न हानि में चलाया जा रहा है, तथा 61 इकाईयां बंद हो गई हैं। सेवा क्षेत्र की प्रत्येक 100 इकाईयों में से आदिवासी हितग्राहियों द्वारा गत 05 वर्शो में लगभग 22 इकाईयों को लाभ में, 04 इकाईयों को हानि में, 05 इकाईयों को न लाभ न हानि में चलाया जा रहा है, तथा 69 इकाईयां बंद हो गई हैं। इसी प्रकार व्यवसाय क्षेत्र की प्रत्येक 100 इकाईयों में से आदिवासी हितग्रहियों द्वारा गत 05 वर्षो में लगभग 39 इकाईयों को लाभ में, 04 इकाईयों को हानि में, 08 इकाईयों को न लाभ न हानि में चलाया जा रहा है, तथा 49 इकाईयां बंद हो गई हैं।

4. इस प्रकार झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के माध्यम से आदिवासी बेरोजगारों को दी गई वित्तीय सहायता/ऋणों की राशि के पुनर्भुगतान की स्थिति को प्रतिशत के रूप में इस प्रकार विश्लेशित किया जा सकता है कि प्रत्येक 100 आदिवासी हितग्राहियों में से मात्र 34 हितग्राही अपने द्वारा स्थापित इकाईयों हेतु लिये गये बैंक ऋणों का पुनर्भुगतान लाभ होने / हानि होने / न लाभ न हानि होने / इकाई बंद हो जाने पर भी कर रहे हैं, शेष 66 हितग्राही अपने ऋणों का पुनर्भुगतान नहीं कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सम्पूर्ण शोध सामग्री डॉ.गेन्दालाल चौहान, सहायक प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, शासकीय विक्रम महाविद्यालय खाचरौद द्वारा विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध से ली गई है।

तालिका क्रमांक 01 – सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों की आर्थिक स्थिति का विवरण

क्र.	विवरण	उद्योग क्षेत्र की इकाईयां		सेवा क्षेत्र की इकाईयां		व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयां		कुल इकाईयां	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	आर्थिक स्थिति पूर्ववत ही है	13	41.94	22	48.89	23	29.87	58	37.91
2	आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है	10	32.26	10	22.22	30	38.90	50	32.68
3	आर्थिक स्थिति और कमजोर हो गई है	08	25.80	13	28.89	24	31.17	45	29.41
	योग	**31**	**100**	**45**	**100**	**77**	**100**	**153**	**100**

तालिका क्रमांक 02

क्र.	विवरण	उद्योग क्षेत्र की इकाईयां		सेवा क्षेत्र की इकाईयां		व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयां		कुल इकाईयां	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	कोई बचन नहीं	21	67.74	35	77.78	47	61.04	103	67.32
2	1000 रु. प्रतिमाह तक बचत	03	09.68	02	04.44	20	25.97	25	16.34
3	2000 रु. प्रतिमाह तक बचत	03	09.68	03	06.67	04	05.19	10	06.54
4	3000 रु. प्रतिमाह तक बचत	02	06.45	03	06.67	03	03.90	08	05.23
5	4000 रु. प्रतिमाह तक बचत	02	06.45	02	04.44	03	03.90	07	04.57
	योग	**31**	**100**	**45**	**100**	**77**	**100**	**153**	**100**

तालिका क्रमांक 03

क्र.	लाभदायकता की स्थिति	उद्योग क्षेत्र की इकाईयां		सेवा क्षेत्र की इकाईयां		व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयां		कुल इकाईयां	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	स्थापित इकाईयों को लाभ में चलाने वाले हितग्राही	10	32.36	10	22.22	30	38.96	50	32.68
2	स्थापित इकाईयों को हानि में चलाने वाले हितग्राही	01	03.22	02	04.44	03	03.90	06	03.92
3	स्थापित इकाईयों को लाभ व हानि में चलाने वाले हितग्राही	01	03.22	02	04.45	06	07.79	09	05.88
4	स्थापित इकाईयों को बन्द कर देने वाले हितग्राही	19	61.29	31	68.89	38	49.35	88	57.52
	योग	**31**	**100**	**45**	**100**	**77**	**100**	**153**	**100**

तालिका क्रमांक 04

सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राहियों द्वारा ऋणों के पुनर्भुगतान की स्थिति का विवरण

क्र.	पुन्र्भुगतान की स्थिति	उद्योग क्षेत्र की इकाईयां		सेवा क्षेत्र की इकाईयां		व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयां		कुल इकाईयां	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	लाभ होने पर नियमित किश्ते देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही	05	16.13	06	13.33	20	25.97	31	20.26
2	लाभ होने पर नियमित किश्ते देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही	02	06.45	03	06.67	05	06.49	10	06.54
3	हानि होने पर नियमित किश्ते देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही	00	00.00	01	02.22	01	01.30	02	01.31
4	हानि होने पर नियमित किश्ते देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही	01	03.23	01	02.22	02	02.60	04	02.61
5	न लाभ न हानि होने पर नियमित किश्ते देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही	00	00.00	01	02.22	02	02.60	03	01.96
6	न लाभ न हानि होने पर नियमित किश्ते नही देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही	01	03.22	01	02.22	04	05.20	06	03.92
7	इकाई बंद होने पर नियमित किश्ते देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही	02	06.45	04	08.89	01	01.30	07	04.58
8	इकाई बंद होने पर नियमित किश्ते नहीं देने वाले सर्वेक्षित आदिवासी हितग्राही	17	54.84	27	60.00	37	48.05	81	52.94
9	सफल आदिवासी हितग्राही जिन्होंने सम्पूर्ण ऋण राशि का भुगतान कर दिया	03	09.68	01	02.23	05	06.49	09	05.88
	योग	**31**	**100**	**45**	**100**	**77**	**100**	**153**	**100**

****

मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम का क्रियान्वयन (शाजापुर जिले के विशेष संदर्भ में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ. केशव मणि शर्मा *

शोध सारांश – 'मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम' देश में सुशासन की अपने स्वरूप की प्रथम एवं ऐतिहासिक पहल है। इस अधिनियम को लागू करने वाला देश का प्रथम राज्य मध्यप्रदेश है। इसके लागू होने से आमजन का 'याचना-भाव' अब 'शक्ति' में बदल गया है। जिन अधिकारियों ने सेवायें समय पर नहीं दी हैं या त्रुटी की है उन पर रू. 66,750/- तक का अर्थदण्ड किया गया है, अब नागरिकों को लगने लगा है कि वे लाल फीताशाही से मुक्त हुए हैं एवं सेवायें प्राप्त करना उनका अधिकार है।

आवश्यकता इस बात की भी है कि लोक सेवा केन्द्रों की संख्या बढ़ाई जाए, जागरूकता के लिए प्रचार-प्रसार के साथ ही शिक्षा विभागों में लोक सेवा दिवस मनाया जाए तथा शेष सभी विभागों को इस अधिनियम के दायरे में लाया जाए। आमजन के साथ ही सरकार को अपने अधिकारियों/कर्मचारियों संबंधी विभिन्न सेवा संबंधी आवश्यक सेवाओं को भी अधिसूचित किया जाए खासकर संचालनालय संबंधी सेवाओं के लिए जिससे कोई भी अधिकारी 22 माह तक ईमानदारी पूर्वक सतत कार्य करने के बावजूद भी वेतन से वंचित नहीं रहे।

प्रस्तावना – सभी सरकारी कर्मचारियों का लोक सेवक होने के नाते यह दायित्व बनता है कि वे जनता की सेवा करें। प्रत्येक लोक सेवक लोक सेवा के लिए निष्ठापूर्वक और कर्त्तव्य परायणता से कार्य करें, यह लोकतंत्र की मजबूती के लिए आवश्यक और सुशासन का महत्वपूर्ण सूत्र है। समाज के हर आदमी को बिना किसी परेशानी के उसका मौलिक हक प्राप्त हो यह सुशासन की पहचान है। जवाबदेही, पारदर्शिता, सहभागिता, विधिपालन, सरकारी तंत्र के प्रति आम जनता का विश्वास सुशासन की मुख्य कसौटियां हैं। सिटीजन चार्टर, सूचना का अधिकार, लोक सेवा गारंटी अधिनियम को लागू करना, मध्यप्रदेश में सुशासन लाने का महत्वपूर्ण कदम है। प्रस्तुत शोध पत्र में शाजापुर जिले में लोक सेवा गारंटी अधिनियम के क्रियान्वयन पर प्रकाश डाला गया।

शोध-प्रविधि – शोध-पत्र मूल रूप से द्वितीयक समंकों एवं जानकारी पर आधारित है फिर भी प्राथमिक समंकों का उपयोग किया गया है। समाचार-पत्रों के माध्यम की सहायता ली गई है।

शोध का क्षेत्र – शोध कार्य को जिले **शाजापुर** तक ही सीमित रखा गया है। सुविधा की दृष्टि से मध्यप्रदेश के द्वितीयक समंकों को शामिल किया गया है।

शाजापुर जिले का परिचय – शाजापुर जिला उज्जैन संभाग के अन्तर्गत आता है। जिले की कुल जनसंख्या (2011) (आगर जिले सहित) 15,12,353 है जिसमें से 12,19,002 (लगभग 81 प्रतिशत) जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। यहाँ की औसत साक्षरता दर 70 प्रतिशत है। तीन चौथाई से अधिक आबादी जीविकोपार्जन के लिए कृषि एवं कृषि आधारित गतिविधियों पर निर्भर है। ऐसे में लोक सेवा गारंटी अधिनियम की उपयोगिता और बढ़ जाती है।

लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 का संक्षिप्त परिचय –मध्यप्रदेश लोक सेवाओं की गारण्टी अधिनियम-2010 को दिनांक 17 अगस्त, 2010 को महामहिम राज्यपाल द्वारा स्वीकृत किया गया, जिसे मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) दिनांक 18 अगस्त, 2010 में प्रकाशित किया गया। इस अधिनियम में कुल 11 धाराएँ हैं।

अधिनियम में संशोधन की अनुमति राज्यपाल से 5 मई, 2011 को प्राप्त हुई, जिसे मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) में 12 मई, 2011 को प्रकाशित किया गया। तदनुसार मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारण्टी (संशोधन) अधिनियम-2011 स्थापित किया गया। इसमें धारा-6, 7 एवं 8 में संशोधन किया गया।

अधिनियम में पुन: धारा-5 एवं 6 में संशोधन किया गया, जिसे मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारण्टी (द्वितीय संशोधन) अधिनियम-2011 कहा गया। इसे मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) में दिनांक 17 जनवरी, 2012 को प्रकाशित किया गया।

अधिनियम में विभिन्न 19 विभागों की पूर्व में अधिसूचित की गई सेवाओं के स्थान पर नवीन सेवाओं को मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) में दिनांक 10 अप्रेल 2013 को अधिसूचित किया गया।

मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 नागरिक अधिकारों को मजबूत बनाने की दिशा में उल्लेखनीय कदम है। इस अधिनियम के लागू होने से अधिसूचित सेवाओं की समय सीमा में प्राप्ति सुनिश्चित होगी। अब लोक सेवा की प्राप्ति आमजन का अधिकार है। इस कानून के सुचारू क्रियान्वयन के लिए शासन ने आवेदन-पत्र, अपील पुनरीक्षण, शास्ति की वसूली तथा प्रतिकर का भुगतान आदि से सम्बन्धित नियम 2010 भी बनाए हैं ये नियम दिनांक 25.09.2010 से प्रभावशील है। लोक सेवा प्रदान की गारंटी के लिए कानून बनाने वाले मध्यप्रदेश देश का पहला राज्य है।

अधिनियम का उद्देश्य – अधिनियम का मुख्य उद्देश्य सरकार द्वारा अधिसूचित सेवाएं आम नागरिकों को एक तय समय-सीमा के अंदर उपलब्ध कराना है। पदाभिहित अधिकारी का यह दायित्व है कि वह अधिसूचित सेवाएं समय सीमा में आवेदक को प्रदान करें। इस प्रकार नागरिकों को सूचना के अधिकार की तरह लोक सेवा प्राप्त करने का अधिकार भी मिल गया है।

अधिनियम के अधिकार क्षेत्र में आने वाली सेवाएं – सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए 'लोक सेवा प्रबंधन विभाग' का गठन किया गया है। प्रथम चरण में 9 विभागों की

* प्राध्यापक (वाणिज्य) बी.एस.एन. शासकीय पी.जी. महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

26 सेवाओं को इस अधिनियम के दायरे में रखा गया ,द्वितीय चरण में इस अधिनियम के अंतर्गत 16 विभागों की 52 सेवाएं अधिसूचित की गई एवं 7 अगस्त, 2011 से आवेदनों के ऑनलाईन पंजीयन की व्यवस्था भी की गई है। लोक सेवा प्रदाय प्रणाली को और अधिक बेहतर बनाने के लिए 'पब्लिक प्रायवेट पार्टनरशिप' के अन्तर्गत 336 लोक सेवा केन्द्रों की स्थापना मध्यप्रदेश में की गई जो कि, प्रात: 09:30 बजे से सांय 06:00 बजे तक कार्य करेंगे।

वर्तमान में 21 विभागों की 102 सेवाएं इस अधिनियम के दायरे में आती हैं। सरकार समय-समय पर अधिसूचना द्वारा आम नागरिकों से जुड़ी हुई जो भी सेवाएं इस अधिनियम के अन्तर्गत अधिसूचित करेगी वे सेवाएं इस अधिनियम के अन्तर्गत आयेगी।

सेवा प्राप्त करने की समय सीमा – अधिनियम के अन्तर्गत अधिसूचित विभिन्न सेवाओं को प्राप्त करने की अलग-अलग समय सीमा तय की गई है। यह समय सीमा आवेदक द्वारा आवेदन प्रस्तुत करने के दिनांक से प्रारंभ होगी। जिसमें शासकीय अवकाश सम्मिलित नहीं होंगे।

आवेदन-पत्र प्रस्तुत करने की प्रक्रिया – इस अधिनियम के अन्तर्गत अधिसूचित सेवाओं को प्राप्त करने के लिए पात्र आवेदकों को सादे कागज पर या विभाग द्वारा निर्धारित प्रारूप में पदाभिहित अधिकारी को आवश्यक दस्तावेज संलग्न कर आवेदन पत्र प्रस्तुत करना होगा। यदि आवश्यक दस्तावेज संलग्न नहीं किए जाते है तो सेवा प्रदान करने के लिए निश्चित समय सीमा की आखिरी तारीख पावती में दर्ज नहीं की जाएगी। साथ ही आवेदन निरस्त भी किया जा सकता है। संलग्न किए जाने वाले दस्तावेजों की जानकारी विभाग के सूचना पटल से प्राप्त की जा सकती है।

आवेदन पत्र की पावती – पदाभिहित अधिकारी अथवा उसके द्वारा अधिकृत अधिकारी आवेदक को प्रारूप-1 में आवेदन की पावती देगा। आवेदन पत्र की पावती में ही सेवा प्रदान करने की समय सीमा की जानकारी मिलेगी। साथ ही अपील करने के लिए पावती आवश्यक है।

सेवा प्राप्त नहीं होने पर अपील एवं पुनरीक्षण की प्रक्रिया – यदि पदाभिहित अधिकारी द्वारा निर्धारित समय सीमा में सेवा प्रदाय नहीं की जाती है या आवेदन-पत्र नामंजूर कर दिया जाता है तो 30 दिन के भीतर शासन द्वारा निर्धारित प्रथम अपील अधिकारी को अपील की जा सकती है। यदि आवेदक प्रथम अपीलीय अधिकारी के निर्णय से सन्तुष्ट नहीं हो या आवेदन निरस्त कर दिया जाता है तो 60 दिन के अंदर द्वितीय अपीलीय अधिकारी के यहां अपील की जा सकती है। यदि आवेदक द्वितीय अपील अधिकारी के निर्णय से भी संतुष्ट न हो तो वह पुनरीक्षण के लिए आवेदन दे सकता है। अपील एवं पुनरीक्षण के लिए कोई शुल्क नहीं लगता है।

शास्ति सम्बन्धी प्रावधान – अधिनियम को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से इसमें शास्ति अधिरोपित किए जाने का प्रावधान है। पदाभिहित अधिकारी एवं प्रथम अपील अधिकारी पर शास्ति आरोपित करने का अधिकार

द्वितीय अपील अधिकारी को और द्वितीय अपील अधिकारी के ऊपर शास्ति आरोपित करने का अधिकार पुनरीक्षण अधिकारी को है। शास्ति आरोपित करने के पूर्व सम्बन्धित अधिकारी को अपना पक्ष रखने का अवसर भी प्रदान किया जाता है। शास्ति की राशि सेवा प्रदाय में असफल होने पर न्यूनतम 500 रूपये और अधिकतम 5000 रूपये तक हो सकती है एवं सेवाओं में विलम्ब करने पर न्यूनतम 250 रूपये प्रतिदिन एवं अधिकतम 5000 रूपये तक हो सकती है। साथ ही अुनशासनात्मक कार्यवाही भी की जा सकती है।

आवेदक को प्रतिकर (मुआवजा) का भुगतान – अधिनियम के अन्तर्गत आवेदक को प्रतिकर के भुगतान का भी प्रावधान है। द्वितीय अपील अधिकारी द्वारा पदाभिहित अधिकारी या प्रथम अपीलीय अधिकारी या दोनों पर अधिरोपित शास्ति के बराबर राशि तक प्रतिकर के रूप में आवेदक को भुगतान किए जाने का आदेश दिया जा सकेगा। प्रतिकर का भुगतान जिला कलेक्टर कार्यालय द्वारा आदेश दिनांक से 30 दिन के भीतर किया जाएगा।

लोक सेवा केन्द्रों की स्थापना – अधिनियम के अन्तर्गत लोक सेवाओं के लिए आवेदन पत्र प्राप्त करने एवं आवेदन पर लिए गए निर्णय आदि की जानकारी उपलब्ध कराने की दृष्टि से विकासखण्ड स्तर एवं शहरी क्षेत्र में लोक सेवा केन्द्र स्थापित किए गए हैं। जिससे कि नागरिकों को लोक सेवा प्राप्त करने के लिए शासकीय कार्यालयों में न जाना पड़े। पूरे प्रदेश में 336 लोक सेवा केन्द्र और शाजापुर जिले में (नवगठित आगर जिले सहित) कुल 8 लोक सेवा केन्द्र स्थापित किए गए हैं।

शाजापुर जिले में अधिनियम के अन्तर्गत लोक सेवा प्रदान करने की स्थिति – शाजापुर जिले में सेवाओं हेतु प्राप्त आवेदन पत्रों एवं उपलब्ध कराई गई सेवाओं की जानकारी इस प्रकार है :-

प्राप्त आवेदन-पत्रों एवं उपलब्ध कराई गई सेवाओं की जानकारी

विवरण	जिला शाजापुर	सम्पूर्ण मध्यप्रदेश
प्राप्त आवेदन पत्र	5,40,339	1,50,81,184
लम्बित आवेदन पत्र	25,714 (4.76 प्रतिशत)	11,71,836 (7.77 प्रतिशत)
निराकृत आवेदन पत्र	4,90,845 (90.84 प्रतिशत)	1,38,53,516 (91.86 प्रतिशत)
अपूर्ण आवेदन पत्र	1,197 (0.22 प्रतिशत)	55,832 (0.37 प्रतिशत)

स्त्रोत- लोक सेवा प्रबंधन कार्यालय जिला- शाजापुर (18 सितम्बर,2014तक)

तालिका से स्पष्ट है कि शाजापुर जिले में लोक सेवाओं हेतु लम्बित आवेदन पत्रों का . प्रतिशत 4.76 है जो प्रदेश स्तर के प्रतिशत (7.77) से कम है। लम्बित आवेदन पत्रों में भी ऐसे आवेदन पत्र हैं जिनकी समय सीमा अभी समाप्त नहीं हुई है। अत: इस आधार पर कहा जा सकता है कि जिले में इस अधिनियम के अन्तर्गत आवेदन पत्रों के निराकरण एवं सेवाएं उपलब्ध कराने का कार्य बेहतर ढंग से सम्पन्न किया गया है यह प्रशासन की जवाबदेही को भी दर्शाता है। **(तालिका अगले पृष्ठ पर देखें)**

तालिका का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि, प्रथम अपील में निराकरण का प्रतिशत 95.45 प्रतिशत है जबकि द्वितीय अपील में यह कम होकर 63.01 प्रतिशत ही रह गया है, जिसमें सुधार की आवश्यकता है। इसी प्रकार लम्बित प्रकरण जहाँ प्रथम अपील में 4.55 प्रतिशत हैं वहीं द्वितीय अपील में यह बढ़कर 36.99 प्रतिशत हो गया है जो कि, निराकरण की स्थिति को अच्छी नहीं दर्शाता है। द्वितीय अपील में शीघ्र निराकरण की आवश्यकता को प्रतिपादित करता है।

प्रमुख समस्याएँ एवं सुझाव -

अधिनियम के बारे में सही एवं पूर्ण जानकारी न होना – इस कारण से अपूर्ण आवेदन पत्र प्रस्तुत किए जाते हैं साथ ही आवश्यक दस्तावेज संलग्न नहीं किए जाते हैं। इस कारण से उन्हें सेवा केन्द्रों से वापस लौटा दिया जाता है। अर्थात् नियमों के बारे में पर्याप्त प्रचार-प्रसार किया जाना आवश्यक है।

लोक सेवा केन्द्रों की संख्या कम होना – जिले में लोक सेवा केन्द्र विकासखण्ड स्तर पर स्थापित किए गए हैं। जिससे इन केन्द्रों पर आवेदकों

की भीड़ अधिक एकत्रित हो जाती है, इसलिए सुगमता की दृष्टि से पंचायत स्तर पर आवेदन लेने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

स्टॉफ की कमी होना – स्टॉफ की कमी से विभागीय अधिकारियों/कर्मचारियों पर काम का दबाव रहता है, इस कारण से सेवाओं को उपलब्ध कराने में कठिनाई आती है, अर्थात् आम नागरिकों से सीधे जुड़े हुए विभागों में स्टॉफ की कमी को यथासम्भव पूरा किया जाना आवश्यक है।

सुझाव – आवश्कता इस बात की है कि लोक सेवा केन्द्रों की संख्या बढ़ाई जाए, जागरूकता के लिए प्रचार-प्रसार के साथ ही शिक्षा विभागों में लोक सेवा दिवस मनाया जाए तथा शेष सभी विभागों को इस अधिनियम के दायरे में लाया जाए। आमजन के साथ ही सरकार को अपने अधिकारियों/कर्मचारियों संबंधी विभिन्न सेवा संबंधी आवश्यक सेवाओं को भी अधिसूचित किया जाए खासकर संचालनालय संबंधी सेवाओं के लिए जिससे कोई भी अधिकारी 22 माह तक ईमानदारी पूर्वक सतत कार्य करने के बावजूद भी वेतन से वंचित नहीं रहे। इस अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन से जहाँ लोक सेवकों की जवाबदेही सुनिश्चित होगी वहीं भ्रष्टाचार पर भी अंकुश लग सकेगा और सुशासन की कल्पना को साकार किया जा सकेगा।

निष्कर्ष – यद्यपि लोक सेवा गारंटी अधिनियम के अन्तर्गत पिछले 4 वर्षो में 2 करोड़ 72 लाख नागरिको को सेवाऐं प्राप्त हो चुकी है, फिर भी समय पर कार्य नहीं करने, सही काम नहीं करने के कारण लोक सेवा केन्द्र-दमोह के संचालक पर रू. 66,750/- का अर्थदण्ड, सरदारपुर के संचालक पर रू. 19,250/- का जुर्माना, नरसिंहपुर के संचालक श्री सुभाष जैन पर रू. 15,840/- का अर्थदण्ड एवं शास्ति, ऊर्जा विभाग के सिरमोर के अधिकारी श्री एस.एस. मनकोटिया पर रू. 10,000/- की शास्ति , मुख्य कार्यपालन अधिकारी जनपद पंचायत टीकमगढ़ पर रू. 9,000/- का जुर्माना, सिरमोर (रीवा) के संचालक पर रू. 7,000/- की शास्ति, तहसीलदार पुष्पराजगढ़ (अनूपपुर) पर रू. 6,500/- का जुर्माना अधिरोपित किया गया जिससे सबक लेकर अन्य अधिकारीगण भी आम जनता को समय पर सेवाएँ देने हेतु प्रेरित हुए हैं।

सुशासन की दिशा में सरकार के इस प्रयास से मध्यप्रदेश को संयुक्त राष्ट्र का 'इम्प्रूविंग द डिलीवरी ऑफ पब्लिक सर्विसेस' श्रेणी का पुरस्कार प्राप्त हुआ है। भ्रष्टाचार से मुक्ति के इस साधन का अनुसरण देश के अनेक राज्यों ने मध्यप्रदेश से प्रेरणा लेकर किया है, जिनमें बिहार, राजस्थान, पंजाब, उत्तराखण्ड, दिल्ली, जम्मू कश्मीर, उत्तर प्रदेश, झारखण्ड इत्यादि प्रमुख हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 428, भोपाल, दिनांक 18 अगस्त, 2010, पृ.क्र. 856
2. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 259, भोपाल, दिनांक 12 मई, 2011, पृ.क्र. 518
3. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 26, भोपाल, दिनांक 17 जनवरी, 2012, पृ.क्र. 52
4. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 162, भोपाल, दिनांक 10 अप्रेल, 2013, पृ.क्र. 324
5. मध्यप्रदेश जनसम्पर्क विभाग, भोपाल द्वारा प्रकाशित 'सुशासन की नई पहल-2011'
6. मध्यप्रदेश जनसम्पर्क विभाग, भोपाल द्वारा प्रकाशित 'सेवा अधिकार के दो वर्ष' 2012
7. सुशासन एवं नीति विश्लेषण स्कूल, नर्मदा भवन, 59, अरेरा हिल्स, भोपाल द्वारा वर्ष 2012 में प्रकाशित 'सेवा का अधिकार' लोक सेवाओं के प्रदान की गारण्टी अधिनियम-2010
8. www.mp.edistrict.gov.in दिनांक 18 सितम्बर, 2014
9. लोक सेवा प्रबंधन कार्यालय जिला- शाजापुर
10. नई दुनियां 25 सितम्बर 2014 इन्दौर संस्करण पृष्ठ 17

म.प्र. में अपील संबंधी जानकारी

क्र.	विवरण	कुल प्राप्त आवेदन	कुल निराकृत	प्रतिशत	कुल लम्बित	प्रतिशत
1	प्रथम अपील	39,125	37,342	95.45	1,783	4.55
2	द्वितीय अपील	319	201	63.01	118	36.99

****

आदिवासी बहुल जिले अलीराजपुर में पर्यटन विकास की संभावनाएं

डॉ. केशव मणि शर्मा *

शोध सारांश – शहीदे आजम चन्द्रशेखर आजाद एवं सुरों का आसमान छू रही प्रियाणी वाणी की जन्मभूमि तथा काजू के बगीचे एवं फलों के राजा नूरजहाँ आम का उद्‌गम स्थल 17 मई, 2008 को नवगठित जिला अलीराजपुर में कल-कल करते झरनों की सुरीली आवाज़, महुए की मादकता, ताड़ी की महक, सुरम्य वादियाँ, साल, सागौन, शीशम के घने वन, हरी-भरी घुमावदार पहाड़ियाँ, नदियाँ, पलाश के सुर्ख रंगों की लालिमा, आदिवासियों की अल्हड़ जीवनशैली तथा मध्यप्रदेश के चेरापूँजी एवं मिनी कश्मीर के नाम से विख्यात कक्षीवाड़ा, मथवाड़, भाबरा, वालपुर, लक्ष्मणी, अलीराजपुर, जोबट तथा फाटा स्थानों में पर्यटन विकास की संभावनाएं अत्यधिक हैं।

प्रस्तावना – झाबुआ जिले से अलीराजपुर, जोबट तथा भाबरा तहसील को अलग करके 17 मई, 2008 को मध्यप्रदेश का 50 वाँ जिला अलीराजपुर बनाया गया। जिला मुख्यालय अलीराजपुर है। यह इन्दौर संभाग के रतलाम लोकसभा क्षेत्र के अन्तर्गत 2,165 वर्ग कि.मी. भूभाग पर स्थित है, जिसमें दो विधानसभा सीटें अलीराजपुर एवं जोबट आती हैं। जिले की जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 7,28,677 है जो कि भूटान देश की जनसंख्या 7,08,427 से भी अधिक है। जनसंख्या का घनत्व 229 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है।

यद्यपि अलीराजपुर जिले का लिंगानुपात वर्तमान परिवेश में सुखद होकर 1,009 महिलायें प्रति हजार पुरूष हैं। फिर भी यह जिला भारत देश में सबसे कम साक्षरता 37. 22 % वाला जिला है। यहाँ 92.17 % ग्रामीण तथा 7.83 % शहरी आबादी है। प्राकृतिक रूप से सम्पन्न जिले की सामाजिक, सांस्कृतिक तथा कृषि एवं उद्यानिकी सम्बन्धी विशेषताओं की जानकारी के अभाव में जिले में पर्यटन सम्बन्धी अनेक सम्भावनाएँ मौजूद होते हुए भी इनका विकास अभी तक नहीं हो पाया है। इन्हीं तथ्यों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए इसे शोध-पत्र के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

शोध-प्रविधि – शोध-पत्र मूल रूप से प्राथमिक समंकों एवं जानकारी पर आधारित है फिर भी जिले के परिचय हेतु द्वितीयक समंकों का उपयोग किया गया है। प्रसिद्ध सांस्कृतिक प्रणय पर्व भगौरिया के दृश्यों में भी दैनिक समाचार-पत्रों के माध्यम की सहायता ली गई है।

शोध का क्षेत्र – शोध कार्य को देश के सबसे कम साक्षरता वाले आदिवासी बहुल जिले अलीराजपुर तक ही सीमित रखा गया है। जिले की सीमा से 20 कि.मी. दूर विश्व प्रसिद्ध ऐतिहासिक धरोहर धार जिले की बाग गुफाओं तथा बाग प्रिण्ट को भी पर्यटकों की सुविधा की दृष्टि से इसमें शामिल किया गया है।

अलीराजपुर जिले का परिचय – भारत का सबसे कम साक्षरता वाला अलीराजपुर जिला मध्यप्रदेश का सर्वाधिक अनुसूचित जनजाति वाला जिला है। गुजरात एवं महाराष्ट्र की अन्तर्राज्यीय सीमाओं से जुड़े हुए जिले में 2 राजस्व अनुभाग, 3 तहसील, 6 विकासखण्ड तथा 551 ग्राम हैं जिनकी कुल जनसंख्या 7,28,677 है। महूए की मादकता एवं ताड़ी की मधुर महक से आच्छादित इस वनांचल में 2 पुलिस अनुभाग, 11 पुलिस थाने, 10 पुलिस चौकी सहित 2 जेल भी विद्यमान हैं। 3 महाविद्यालय, 22 हायर सेकण्डरी, 25 हाईस्कूल, 184 माध्यमिक, 679 प्राथमिक शालाओं के साथ ही एक जिला खेल परिसर एवं एक जवाहर नवोदय विद्यालय में युवाओं का शैक्षिक एवं शारीरिक विकास सम्पन्न किया जा रहा है। औद्योगिक स्थिति के मामले में केवल 30 डोलोमाइट ग्राइण्डिंग कारखाने अल्प विकास का संकेत देते हैं।

अलीराजपुर जिले का इतिहास – वर्तमान अलीराजपुर का पूर्व नाम 'राजपुर' था तथा यहाँ से 10 कि.मी. दूर स्थित 'आली' स्थान से यहाँ के पूर्व राजा द्वारा राजधानी के रूप में अपने प्रशासन का संचालन किया जाता रहा। 1800 ई. में इस राजधानी 'आली' जिसे 'आनन्दवाली' नाम से जाना जाता था का स्थानान्तरण 'राजपुर' नगर में कर दिया गया तभी से इसे अलीराजपुर नाम से जाना जाने लगा।

अलीराजपुर जिले में पर्यटन विकास की संभावनाएं– नवगठित जिले अलीराजपुर में पर्यटन विकास की अनेक संभावनाएं **मौजूद** हैं जिनमें प्रमुख रूप से कक्षीवाड़ा, मथवाड़, भाबरा, वालपुर, लक्ष्मणी, अलीराजपुर, जोबट तथा फाटा स्थानों को पर्यटन हेतु प्रशासनिक दृष्टि से विकसित किया जा सकता है।

म.प्र. का चेरापूंजी कक्षीवाड़ा– अलीराजपुर जिले के कक्षीवाड़ा को सर्वाधिक वर्षा होने के कारण म.प्र. का चेरापूंजी तथा सर्वाधिक वन क्षेत्र होने के कारण 'झाबुआ का कश्मीर' नाम से पहचाना जाता रहा है। अब यह अलीराजपुर जिले का भू-भाग है। कक्षीवाड़ा वन क्षेत्र में औसतन वार्षिक वर्षा लगभग 1100 से.मी. तथा वार्षिक औसतन न्यूनतम तापमान 10 एवं अधिकतम तापमान 42 डिग्री सेंटीग्रेड है। प्रकृति की गोद में आराम करने के इच्छुक पर्यटकों के लिये कक्षीवाड़ा अत्यन्त उपयुक्त स्थल साबित हो सकता है यदि वहां पर अच्छे आवास एवं उत्तम भोजन की व्यवस्था हो जिनका वर्तमान में अभाव है।

कक्षीवाड़ा वन परिक्षेत्र बनेगा अभयारण्य–करीब 92 वर्ग कि.मी. में फैला वनक्षेत्र अभयारण्य का रूप ले सकेगा। यह दक्षिण उष्ण कटीय बंधीय सागौन वन है, इसमें सागौन के साथ ही अंजन, बबूल, आँवला, खैर, धावड़ा, तेन्दू, लेंडिया, पलाश, काजू, काला शीशम, साजा, बांस, चारौली, महुआ इत्यादि प्रजाति के पेड़ पाये जाते हैं। इस वन परिक्षेत्र में वर्तमान में तेंदुआ, भालु, पाम सीवेट, बन्दर, नीलगाय, सांभर इत्यादि वन्य प्राणी पाये जाते हैं।

कक्षीवाड़ा झरना– कक्षीवाड़ा में अत्यधिक वर्षा होने के कारण नगर से दो कि.मी. की दूरी पर पहाड़ी से एक झरना (वाटर फाल) चलता रहता है। यह झरना प्रदेश के तीन शीर्ष झरनों में शामिल है। यहाँ का मार्ग दुर्गम है, फिर भी यह सैलानियों के आकर्षण का जुलाई से नवम्बर तक मुख्य केन्द्र बना रहता है।

विश्व प्रसिद्ध 'नूरजहाँ' मेंगो फार्म – झरने से पहले 'नूरजहाँ' मेंगो फार्म स्थित है जहां पर विश्व प्रसिद्ध 'नूरजहाँ किस्म का आम' मई-जून माह में देखने को मिलता है। फार्म के मालिक स्व. ठाकुर पवनेन्द्र सिंह जी ने राष्ट्रीय

* प्राध्यापक (वाणिज्य) बी.एस.एन. शासकीय पी.जी. महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

सेवा योजना शिविरार्थियों को मेरे समक्ष एक मुलाकात में बताया था कि, 1978 में मुम्बई में आयोजित राष्ट्रीय मेंगो प्रदर्शनी में **4 किलो 800 ग्राम के 1 नूरजहाँ आम** ने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया था, उसकी एक खासियत यह भी रही कि इसकी गुठली मात्र 50 ग्राम की थी। सम्पूर्ण जिले में नूरजहाँ आम के केवल चार पेड़ हैं तथा अलीराजपुर की कृषि उपज मण्डी आम के लिये प्रदेश में सबसे बड़ी मण्डी है। इस फार्म के वर्तमान मालिक श्री शिवराज सिंह के अनुसार मेंगो फार्म पर 34 किस्मों के आम मौजूद हैं जिन्हें देखने एवं खरीदने के लिये दूर-दूर से लोग आते हैं।

काजू फार्म – नगर से 2 कि.मी. दूरी पर वन विभाग का आजादी के समय से पोषित काजू फार्म भी है जिसका सौन्दर्य एवं काजू फलों से लदे वृक्ष वसन्त ऋतु में देखे जा सकते हैं।काजू फार्म कट्ठीवाड़ा के आरक्षित वन खण्ड के कक्ष क्रमांक 510, 512, 513 एवं 514 क्षेत्र में काजू वृक्षारोपण स्टेट के समय सन् 1953-54 में किया गया था जो आज भी विद्यमान है। एक प्रायवेट काजू फार्म भी झरने वाली पहाड़ी के पास स्थित है। इनमें अप्रेल माह में काजू के फल लगे हुए देखे जा सकते हैं।

राजेन्द्र आश्रम ट्रस्ट- नगर के हवेली खेड़ा स्थान के पास ही आदिवासी शैक्षणिक विकास का जीता जागता उदाहरण राजेन्द्र आश्रम ट्रस्ट भी है जो पर्यटकों के मन को खूब भाता है। यहाँ पर विद्यार्थियों को नि:शुल्क शिक्षा एवं आवास के साथ-साथ प्रायोगिक जीवन से सरोकार कराते हुए श्रम के साथ रोजगार सम्बन्धी प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

डूँगरीमाता का मन्दिर- आश्रम से 2 कि.मी. दूरी पर 'डूँगरीमाता' का मन्दिर है जहां से गुजरात के जंगलों का नजारा तो दिखाई देता ही है, सैंकड़ों क्विंटल वजनी चट्टानें भी अपने आप में अद्भुत हैं। चट्टानों के मध्य ही माताजी के मन्दिर है जहाँ पर मनोकामना पूर्ण होने पर अनेक श्रद्धालुओं का आवागमन जारी रहता है।

चाटल्या पानी नर्सरी- पलाश के मोहक फूलों के मार्ग में कट्ठीवाड़ा से 7 कि.मी. दूर वन विभाग की 'चाटल्या पानी नर्सरी' है यहां पर झरने के अलावा भी स्वत: जल स्त्रोत भगवान शिव का अभिषेक प्राकृतिक रूप से करते हैं।

व्यापारिक वस्तु - व्यापारिक दृष्टि से काजू, चारोली, आम, महुआ, शहद, ताड़ निर्मित पदार्थ तथा महूए की एवं आदिवासी गृह निर्मित वस्तुओं के विक्रय केन्द्र की स्थापना पर्यटकों को आकर्षित करने का प्रभावी कार्य कर सकती है।

भाबरा-शहीद चन्द्रशेखर आजाद का जन्म स्थल – क्रांतिगगन के धूमकेतु चन्द्रशेखर आजाद की जन्मस्थली आजाद कुटिया के अतिरिक्त आजाद स्मृति मन्दिर के दर्शन भी राष्ट्र प्रेमियों के दिल में आजाद के प्रति सहज ही श्रद्धा पैदा करते हैं। 27 फरवरी को आजाद के आत्म बलिदान दिवस पर भव्य मेले का आयोजन भी भाबरा में होता है। पास ही 1 किलोमीटर की दूरी पर आजादगढ़ी भी स्थित है। यहाँ पर आजाद अंग्रेजों से आजादी की योजनाएँ बनाते थे। वर्तमान में इस गढ़ी में माताजी का मन्दिर भी है। भाबरा में ही दृष्टिहीन पुनर्वसन केन्द्र है जहाँ पर दृष्टिहीनों के लिये नि:शुल्क आवास, शिक्षा, संगीत तथा खेल के साथ ही रोजगार परक प्रशिक्षण की व्यवस्था भी है।

वन्या - आदिवासी रेडियो स्टेशन – भाबरा में ही विश्व का प्रथम आदिवासी रेडियो स्टेशन शहीद चन्द्रशेखर आजाद के जन्मदिवस 23 जुलाई, 2011 को स्थापित किया गया है जो कि भीली और हिन्दी भाषा में प्रतिदिन 2 घण्टे प्रसारण करता है। यह प्रसारण भाबरा से 20 कि.मी. की परिधि में वर्तमान में प्रसारित किया जा रहा है, जो कि 90-4 एफ.एम. पर सुना जा सकता है।

मथवाड़ – अलीराजपुर जिले के सुदुर दक्षिण में विन्ध्य पर्वत श्रेणियों से घिरा मथवार क्षेत्र काफी ऊँचाई पर स्थित होकर पहाड़ी खेती व प्रकृति की गोद में स्थित वनवासियों के वर्तमान टेक्नोलॉजी से दूर संघर्षमय जीवन-यापन के दर्शन करवाता है। यहाँ पहुँचने के लिये उमराली-बखतगढ़ होते हुए 12 कि.मी. खड़ी घुमावदार पहाड़ी के घाट को पार करना पड़ता है। यहाँ पर खाना तो दूर एक कप चाय तक मिलना मुश्किल रहता है किन्तु यहाँ के जंगलों की प्राकृतिक छटा, उनमें पाये जाने वाले भालू, जंगली भैंसे, हिरण, खरगोश, तेंदुआ, शेर, चीता आदि पर्यटन हेतु आकर्षण निर्मित करते हैं। यहाँ पर काजलराणी का प्रसिद्ध मन्दिर भी है। यहाँ से सकरजा ककराना जाकर नर्मदा नदी में मोटरबोट भ्रमण का लुत्फ भी उठाया जा सकता है।

आदिवासी संस्कृति संग्रहालय- जिला मुख्यालय अलीराजपुर में जीर्ण-शीर्ण आदिवासी संस्कृति संग्रहालय भी स्थित है, जिसमें आदिवासियों की संस्कृति से सम्बन्धित विभिन्न वस्तुओं का संग्रह किया जाकर धरोहर के रूप में स्थापित किया गया है। परन्तु पर्याप्त देख-रेख नहीं है।

मालवाई माताजी का मन्दिर – अलीराजपुर से लगभग 4 कि.मी. की दूरी पर उमराली मार्ग पर सड़क के दाई ओर मालवाई माताजी का मन्दिर भी दर्शनीय है।

विश्व प्रसिद्ध वालपुर क्षेत्र का भगोरिया- सांस्कृतिक विरासत के रूप में जहां अलीराजपुर के वालपुर क्षेत्र का भगोरिया जिसे प्रणय-पर्व के रूप में जाना जाता है, सम्पूर्ण देश में ही नहीं विदेशों में भी अपनी खूबियों के कारण सर्वाधिक प्रसिद्ध है। यहां भगोरिया पर्व वैसे तो जिले में होली के पूर्व वाले सम्पूर्ण सप्ताह तक मेले के रूप में आयोजित किया जाता है, किन्तु वालपुर में होली के ठीक पूर्व वाले शुक्रवार को आयोजित होता है, यदि पर्यटकों को इस दिन छोटे से गांव वालपुर में आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध नहीं है।

जैन तीर्थ लक्ष्मणी- अलीराजपुर जिला मुख्यालय से 7 कि.मी. दूर श्वेताम्बर जैन तीर्थ लक्ष्मणी स्थित है। जिसमें बने हुए 2000 वर्ष पुराने मन्दिर में सफेद संगमरमर की भगवान श्री पद्मप्रभु स्वामीजी की मूर्ति पद्मासन में विराजित है। यहाँ पर आवास एवं भोजन की उत्तम व्यवस्था भी उपलब्ध है।

दालपानिया - अलीराजपुर का मुख्य भोजन- अलीराजपुर जिले का मशहूर भोजन दालपानिया है। पानिया मक्का के मोटे आटे को बाटी जैसा बनाकर पलाश के गीले पत्ते दोनों ओर लगा दिये जाते हैं एवं उन्हें कण्डे की आग पर सिकाई के लिये रख दिया जाता है। जैसे-जैसे आग से सिकाई होती है पलाश के पत्ते जलकर अलग होते जाते हैं। दोनों तरफ से अच्छी सिकाई के पश्चात खट्टी-मीठी अथवा साधारण दाल के साथ भारतीय परम्परा के अनुसार बैठकर शुद्ध घी के साथ इनका आनन्द लिया जा सकता है। लहसुन की चटनी भी अच्छी लगती है। इस हेतु जैन तीर्थ लक्ष्मणी के मुख्य द्वार के पास ही श्री झापूसिंह बघेल का ढाबा है। यहाँ पर यह पारम्परिक ताजा भोजन मात्र 60 रूपये प्रति थाली में भर पेट खाने की सुविधा उपलब्ध है। इस हेतु एक घण्टे पूर्व ऑर्डर देना होता है। अलीराजपुर भ्रमण इस दावत के बिना पूर्ण नहीं माना जा सकता है।

शहीद चन्द्रशेखर आजाद बांध फाटा – लक्ष्मणी से नानपुर होते हुए फाटा स्थान पर शहीद चन्द्रशेखर आजाद बांध स्थित है। यह देखने में भव्य लगता है परन्तु यहाँ पर न तो छाया की सुविधा है और न ही मोटर बोट से जल भ्रमण सुविधा उपलब्ध है।

बाग गुफाएँ – शहीद चन्द्रशेखर आजाद बांध फाटा से पर्यटक कुक्षी मार्ग से होते हुए लगभग 40 कि.मी. दूर स्थित 'बाघ गुफाओं' तक पहुंच सकते हैं। धार जिले की बाग गुफाएं मूर्तिकला और मनोहारी चित्रकला के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं लेकिन यहाँ आने-जाने के साधन तथा आवास एवं भोजन की व्यवस्था नहीं होने के बावजूद भी अनेक देशी - विदेशी पर्यटक आते-जाते हैं। गुफा क्र. 2, 3 एवं 4 की दीवार, छत एवं स्तम्भों पर 39 भित्तीचित्र हैं तथा गुफा नम्बर 2 में बौद्ध कालीन मूर्तियां हैं। नदी तट पर स्थित ये गुफाएं प्राकृतिक वातावरण में और भी मनोरम लगती हैं। यहाँ पुरातत्व विभाग का संग्रहालय भी है।

बागप्रिण्ट-हस्तशिल्प – 'साउथ एशियन कन्ट्रीज फेयर-2007' के नाम से दिसम्बर 2007 में बीजिंग में बाग प्रिण्ट की बेडशीट एवं महेश्वरी दुपट्टा तथा हांगकांग, जर्मनी, क्वालालंपुर, शारजहां में भी उपरोक्त के अलावा साड़ियों ने भी बाग का नाम रौशन करते हुए अपनी एक खास पहचान बनाई।

बाग प्रिण्ट के शिल्पी मोहम्मद यूसूफ खत्री को हस्तशिल्प में क्वालिटी प्रोडक्ट के लिये यूनेस्को, साउथ एशिया द्वारा वर्ष 2007 का 'सील ऑफ एक्सीलेंस' सर्टिफिकेट से सम्मानित किया गया।

प्राकृतिक पेय ताड़ी – 25 से 30 वर्ष तक इन्तजार करने के बाद पिता के लगाने पर बेटे को मिलती है पीने को ताड़ी। सुबह निकलने वाली ताड़ी को नीरा कहते हैं जो मीठे शरबत जैसी होती है तथा दवा के रूप में उपयोग की जाती है। यह पेट विकार सम्बन्धी रोगों को दूर करने में सहायक होती है जबकि शाम की ताड़ी दिनभर की धूप की वजह से कड़क हो जाती है और उससे नशा भी जल्दी आता है। इसे ताड़ के पेड़ पर लगभग 40 से 50 फीट की ऊँचाई पर चढ़कर दोनों समय उतारा जाता है। यह प्राकृतिक पेय स्थानीय नागरिकों को ही नहीं बल्कि जिले में आने वाले अतिथियों को भी खूब लुभाता है। होली से जून माह तक जोबट, अलीराजपुर, सौण्डवा, भाभरा तथा कट्ठीवाड़ा में आसानी से उपलब्ध होती है। इस प्राकृतिक पेय की कीमत लगभग 20/– प्रति लीटर होती है।

पहुँच मार्ग बस द्वारा – देवी अहिल्या बाई एयरपोर्ट इन्दौर से बस मार्ग गंगवाल बस स्टेण्ड एवं वहाँ से बस द्वारा धार होते हुए बाग पहुँच कर बाग प्रिण्ट देखने के पश्चात 3 कि.मी. दूर स्थित बाग गुफा पहुँचा जा सकता है। बाग से जोबट होते हुए भाभरा चन्द्रशेखर आजाद नगर 60 कि.मी. तथा कट्ठीवाड़ा 30 कि.मी. पहुँचा जा सकता है। कट्ठीवाड़ा में नूरजहाँ मेंगो फार्म, झरना, डूंगरी माता मन्दिर, चाटल्या पानी नर्सरी, काजू फार्म, राजेन्द्र आश्रम देखने के पश्चात चाँदपुर होते हुए 35 कि.मी. चलकर अलीराजपुर पहुँचा जा सकता है।

अलीराजपुर से उमराली, सौण्डवा होते हुए 35 कि.मी. चलकर बालपुर पहुँचा जा सकता है एवं वापस अलीराजपुर आना रहता है। अलीराजपुर से 7 कि.मी. दूर जैन तीर्थ लक्ष्मणी है तथा नानपुर होते हुए 'फाटाडेम' पहुँचा जा सकता है। फाटा से नर्मदा नदी पार करते हुए बड़वानी के बाद बावनगजा जैन तीर्थ भी पहुँचा जा सकता है।अलीराजपुर जिला मुख्यालय खण्डवा–बड़ौदा स्टेट हाईवे क्र. 26 पर बड़ौदा से 150 कि.मी., इन्दौर से 250 कि.मी., धार से 48 कि.मी. तथा झाबुआ से 85 कि.मी. होकर सीधा बस सेवा से जुड़ा है।

पहुँच मार्ग ट्रेन द्वारा – दिल्ली, रतलाम, मुम्बई की ब्राडगेज लाईन पर गुजरात में दाहोद स्टेशन पर उतरकर दाहोद से 35 कि.मी. दूरी पर स्थित भाभरा शहीद चन्द्रशेखर आजाद नगर बस द्वारा पहुँचा जा सकता है। 8 फरवरी, 2008 से बड़ौदा–धार ब्रॉडगेज रेलवे लाईन का कार्य भी प्रारम्भ हो चुका है।

पर्यटन का समय – कट्ठीवाड़ा के प्राकृतिक सौन्दर्य हेतु जुलाई से नवम्बर तक तथा भगौरिया देखने हेतु मार्च में होली के ठीक पूर्व वाले 7 दिन तथा नूरजहाँ आम हेतु जून माह का प्रथम एवं द्वितीय सप्ताह पर्यटन हेतु उचित समय है।

ठहरने हेतु स्थान – अलीराजपुर, जोबट एवं भाबरा में ठहरने हेतु स्थानों का अभाव पर्यटकों की एक मुख्य समस्या है। अलीराजपुर जिला मुख्यालय पर तो पी.डब्ल्यू.डी. का विश्रामगृह तथा कुछ निजी होटलें भी उपलब्ध हैं। इसी तरह जोबट एवं भाबरा में भी विश्रामगृह के अलावा कुछ निजी होटले भी हैं। लेकिन कट्ठीवाड़ा, वालपुर, मथवाड़ इत्यादि में आवास एवं भोजन की व्यवस्था नहीं है।

समस्याएं – कट्ठीवाड़ा एवं वालपुर में आवास एवं भोजन की व्यवस्था का अभाव, वाटर फाल एवं चाटल्यापानी नर्सरी पर जाने के रास्ते तथा नहाने के स्थान पर घाट का अभाव, काजू, चारौली, शहद एवं गृह निर्मित वस्तुओं को बेचने की समस्या तथा लक्ष्मणी के पास नदी पर स्टापडेम एवं घाट नहीं होना। साथ ही फाटा डेम पर वाटरबोट का नहीं चलना भी पर्यटकों की सुविधाओं में कमी दर्शाता है।

सुझाव –

1. कट्ठीवाड़ा वाटर फाल (झरना) का यदि मार्ग सुधार एवं झरना स्थल पर घाट इत्यादि का निर्माण हो जाये तो सैलानियों की संख्या में तो वृद्धि होगी ही, नाम मात्र का शुल्क भी यदि रखा जाये तो राजस्व के साथ–साथ रोजगार के अवसर उपलब्ध भी हो पायेंगे।
2. चाटल्या पानी नर्सरी को वन विभाग द्वारा पिकनिक स्पॉट के रूप में विकसित किया जा सकता है। यहाँ पर यदि भोजन एवं विश्राम की व्यवस्था हो जाती है तो पर्यटकों को आकर्षित करने के लिये यह एक विशेष पहल होगी।
3. दृष्टिहीन पुनर्वसन केन्द्र को आधुनिकता प्रदान करना पर्यटकों की संख्या में वृद्धि कर सकता है।
4. जैन तीर्थ लक्ष्मणी के पास स्थित नदी पर स्टापडेम तथा लघु घाट बना दिया जाता है तो पर्यटकों को नदी में स्नान की व्यवस्था होने से प्रसन्नता का अनुभव होगा।
5 आदिवासी संस्कृति संग्रहालय का यदि समुचित विकास कर अत्याधुनिक रूप प्रदान किया जा सके, चण्डीगढ़ से प्रेरणा लेकर रॉक गार्डन को पर्यटन हेतु व्यवस्थित किया जाये तो स्थानीय नागरिकों सहित पर्यटकों के लिये भी यह आकर्षण का केन्द्र बन सकेगा।
6. फाटा डेम पर मोटर बोट से जल भ्रमण सुविधा उपलब्ध करवाने के साथ ही पर्यटकों के लिये छायादार विश्राम स्थल उपलब्ध करवाना निश्चित ही पर्यटन विकास में सहयोगी होगा।
7. पर्यटन विकास निगम अथवा वन विभाग द्वारा कट्ठीवाड़ा में मोटल बनाया जाना आवश्यक है क्योंकि यहाँ पर रात्री कालीन आवास एवं भोजन की व्यवस्था नहीं होने से पर्यटक आने में संकोच करते हैं
8. कट्ठीवाड़ा में रोमांच – पहाड़ी ट्रेकिंग को बढ़ावा देने हेतु भी प्रशासन द्वारा प्रयास किया जाना पर्यटकों को आकर्षित करने हेतु आवश्यक है।

निष्कर्ष – वर्तमान में तनाव के वातावरण में प्रकृति के नि:शुल्क उपहार मिनी कश्मीर कट्ठीवाड़ा में आवास एवं भोजन की व्यवस्था, चाटल्यापानी एवं वाटर फाल (झरने) पर रास्ता एवं घाट निर्माण, फाटा डेम में मोटर बोट का संचालन इत्यादि व्यवस्थाएँ हो जाती हैं तो पर्यटक शिमला कुल्लु–मनाली के स्थान पर यहाँ पर आकर अपने आप को तनावमुक्त महसूस करेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर, इन्दौर प्रथम संस्करण 10 दिसम्बर 2007
2. नई दुनिया, इन्दौर प्रथम संस्करण 2 जनवरी 2008
3. नई दुनिया, इन्दौर प्रथम संस्करण 3 जनवरी 2008
4. नई दुनिया, इन्दौर प्रथम संस्करण 6 जनवरी 2008
5. नई दुनिया, इन्दौर प्रथम संस्करण 14 जनवरी 2008
6. कार्यालय वनमण्डलाधिकारी, वन मण्डल सामान्य अलीराजपुर व्यक्तिगत साक्षात्कार।
7. Dhar Arti - "Significant boost in Literacy – 2011 Census. The Hindu (New Delhi 01.04.11)
8. District Assembly List Chief Election Officer M.P. Web. 16.4.10
9. District Census 2011. Co.in – 30.09.11
10. Census of India 2011
11. US Directorate of Intelligence "Country Comparision Population 01.10.11.
12. अलीराजपुर जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2012
13. Indian District Wikipedia 21.08.14
14. Profile of Alirajpur District 07.09.2014

मानवाधिकार एवं भारत में खाद्य सुरक्षा कानून 2013

डॉ. आर. के. वर्मा *

प्रस्तावना – अधिकारों के क्रम में जब हम मानवाधिकारों की बात करते हैं तब हम पाते है कि, मानवाधिकारों की यह अवधारणा अधिकारों की अपेक्षा अधिक व्यापक है। मानवाधिकारों से तात्पर्य उन सब परिस्थितियों एवं पर्यावरण से होता है जो मानव को मानव के रूप में, अपने अस्तित्व को कायम रखने व व्यक्तित्व के विकास तथा निर्माण के लिए अनिवार्य होती है। इस दृष्टि से मानवाधिकारों की परिधि में केवल प्राकृतिक उपहार जैसे वायु, जल इत्यादि ही नहीं आते हैं अपितु इनके साथ-साथ ससम्मान जीने, पोषण व रक्षण प्राप्त करने सहित वे सब उपागम जो व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक है जैसे-रोटी, कपड़ा, मकान,चिकित्सा, शिक्षा, संस्कृति आदि सभी आवश्यकताओं को सम्मिलित किया जाता है। मानव के विकास के लिए अपरिहार्य इन सब सुविधाओं को अनेक लोकतांत्रिक देशों में अपने नागरिकों के विकास के लिए अनिवार्य समझते हुए अपनी-अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक व्यवस्थाओं एवं मूलभूत कानून में स्थान दिया है, जिन्हें मूलभूत अधिकारों के नाम से जाना जाता है। इस प्रकार मानवाधिकार वे अधिकार है जो व्यक्ति के जीवित रहने तथा अपना अस्तित्व कायम रखने के लिए आवश्यक है।

भारत सरकार द्वारा भी इस उत्तरदायित्व का निर्वहन करने हेतु 12 अक्टूबर 1993 को देश में 'राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग' का गठन किया है और राज्यों में भी राज्य मानवाधिकार आयोगों का गठन कर इस व्यवस्था को अधिक सुदृढ़ एवं संगठित बनाने का प्रयास किया जा रहा है। हमारे देश में विशेष रूप से सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों से वंचित रहे लोगों, महिलाओं, वृद्धों, विकलांगों, बच्चों तथा पिछडे वर्गों एवं दलितों को समानता के सिद्धांत के आधार पर उनके सभी अधिकारों की सुरक्षा हेतु सरकार द्वारा समय-समय पर संविधान सम्मत विभिन्न कानून बनाये गये और उनका अनुपालन सुनिश्चित करने केलिए प्रशासनिक प्रयत्न भी किए जाते रहे है। जिनमें राष्ट्रीय अनुसूचित जाति, जनजाति संरक्षण कानून 1989, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग 1992, राष्ट्रीय महिला आयोग 1992, पिछड़ा वर्ग आयोग 1993, पंचायत राज संस्थाओं की स्थापना 1993, मानव अंग प्रत्यारोपण अधिनियम 1994, सूचना के अधिकार अधिनियम 2005, नरेगा 2005, स्वास्थ्य विधेयक 2009, प्रस्तावित न्यायिक बिल 2011 व प्रस्तावित लोकपाल विधेयक 2011 प्रमुख है।

वर्तमान में देश की करोडों जनता को खाद्य सुरक्षा का अधिकार देने वाला खाद्यान्न सुरक्षा विधेयक 2011 को पूर्व एन.डी.ए. सरकार द्वारा 5 जुलाई 2013 को राष्ट्रपति के अध्यादेश के जरिए लागू करना महत्वपूर्ण घटना रही है।

भारत में कुपोषण की स्थिति – विश्व के विभिन्न देशों द्वारा खाद्य सुरक्षा की दिशा में उठाए गए तमाम कदमों के बावजूद दुनिया में गरीबी,भूखमरी,कुपोषण की समस्या का स्थाई समाधान संभव नहीं हो सका है।उभरती आर्थिक शक्ति होने के बावजूद भारत विश्व के उन देशों में शामिल है जहां कुपोषण अधिक है। हमारी सरकार भी यह मानती है कि देश में जहां 5 वर्ष से कम उम्र के कुल बच्चों में से लगभग 50 प्रतिशत गंभीर रूप से कुपोषित है। अन्तर्राष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान जर्मनी द्वारा 12 अक्टूबर 2012 को जारी 7वें वार्षिक वैश्विक भूख सूंचकांक के अनुसार 79 देशों में भारत 65वीं पायदान पर है। अक्टूबर 2012 को जारी यू.एन.हंगर रिपोर्ट 'स्टेट ऑफ फूड इन सिक्योरिटी इन वर्ल्ड 2012' के अनुसार 2010-12 में विश्व में दीर्घकालिक अल्प पोषितों की संख्या 870 मिलियन है। जिनमें से 852 मिलियन विकासशील देशों में एवं 16 मिलियन विकसित देशों में है। इनमें से 217 मिलियन अर्थात् 17.5 प्रतिशत अल्पपोषित भारत में है जो कि संख्या की दृष्टि से विश्व में सर्वाधिक है। इसके अतिरिक्त एशियन ह्यूमन राइट कमीशन द्वारा हाल ही में जारी रिपोर्ट के अनुसार भारत में 10 लाख बच्चे हर साल कुपोषण से मर जाते है। जिनमें अधिकतर लड़कियाँ है तथा यूनिसेफ द्वारा जारी 2011 की रिपोर्ट के अनुसार 50 प्रतिशत लड़कियों में खून की कमी (एनीमिया) और 47 प्रतिशत में कम वजन देखने को मिला। इससे यह स्पष्ट है कि देश की अधिकतम आबादी कुपोषण से ग्रस्त है और उसे पर्याप्त व पौष्टिक भोजन नहीं मिल रहा है।

भारत सरकार द्वारा कुपोषण समाप्त करने के लिए किया गया प्रयास–

जहाँ विश्व में कुपोषण, भुखमरी व गरीबी से निपटने के लिए विभिन्न प्रकार के संगठनों द्वारा सम्मेलनों एवं संगोष्ठियों का विश्व स्तर पर आयोजन किया जा रहा है वहीं भारत सरकार भी प्रयत्नशील है और इस समस्या से निपटने के लिए भारत सरकार ने 'राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा विधेयक 2013' जिसे 26 अगस्त 2013 को लोकसभा एवं 2 सितम्बर 2013 को राज्य सभा में ध्वनिमत से पारित कराकर एक ऐतिहासिक पहल की है जिसके माध्यम से देश की गरीब जनता को खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित की जा रही है।

क्या है खाद्य सुरक्षा ?

खाद्य सुरक्षा का आशय सभी लोगों को सदैव भोजन की उपलब्धता, पहुँच और उसे प्राप्त करने की क्षमता से है। अर्थात सभी लोगों को पर्याप्त भोजन उपलब्ध हो,सभी लोग खाद्य पदार्थ खरीदने की क्षमता रखते हो तथा खाद्य की उपलब्धता में कोई बाधा न हो ।

भारतीय संदर्भ में देखा जाय तो खाद्य सुरक्षा की दिशा में गम्भीर प्रयास किए गए हैं। भोजन का अधिकार प्रत्येक नागरिक का अघोषित मौलिक अधिकार है। इसे सुनिश्चित करना लोकतांत्रिक सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारी भी है। इस दिशा में केन्द्र सरकार ने बहुप्रतीक्षित खाद्य सुरक्षा के अधिकार कानून को लागू किया है। आजादी के बाद से ही देश में गरीबों को भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करने एवं देश में खाद्य सुरक्षा की दिशा में अनेक कार्यक्रम और योजनाएँ विभिन्न विभागो, स्वयंसेवी संगठनों, राज्य

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय कन्या महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

सरकारों एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से चलाई गई है जो एक बच्चे को जन्म से लेकर उसकी मृत्यु तक खाद्य सुरक्षा प्रदान करती है।

प्रमुख योजनाएँ एवं कार्यक्रम इस प्रकार है। (अगले पृष्ठ पर देखें)

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून 2013 – देश में खाद्य सुरक्षा की दिशा में बनाये गये इस कानून को भूख से लड़ने के लिए दुनिया के सबसे बड़े कार्यक्रम के रूप में देखा जा रहा है। इसका उद्देश्य देश की दो तिहाई आबादी को भारी सब्सिडी वाला खाद्यान्न अधिकार प्रदान करना है। 1 लाख 25 हजार करोड़ रूपये के बजट के साथ सरकारी सहायता वाला यह दुनिया का सबसे बड़ा कार्यक्रम है जिसके जरिये गरीब जनता को खाद्य और पोषण सुरक्षा निश्चित की जा रही है। इस कानून का जोर गरीब से गरीब व्यक्ति, महिलाओं तथा वृद्धों और बच्चों की खाद्य एवं पोषण की जरूरतो को पूरा करने पर होगा। फिर भी अगर लोगों को अनाज नहीं मिल पाया तो उन्हें खाद्य भत्ता सुनिश्चित किया जायेगा।

प्रत्येक राज्य सरकार राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के कार्यान्वयन,अधीक्षण एवं पुनर्विलोकन के प्रयोजन से एक राज्य खाद्य आयोग का गठन करेगी। राज्य आयोग में एक अध्यक्ष तथा 5 सदस्य एवं एक सचिव होगा जिनकी इस कानून के क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका होगी।

इस विधेयक के प्रमुख प्रावधान इस प्रकार है–

1. यह वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर होना है और पी.डी.एस का सामाजिक आडिट किया जाना है।
2. इसमें लाभार्थियों की दो श्रेणियाँ बनाई गई है। पहला प्राथमिकता समूह–जो गरीबी रेखा से नीचे है जिनमें 46 प्रतिशत लाभार्थी है। दूसरा सामान्य समूह होगा जिसमें 28 प्रतिशत लाभार्थी है।
3. प्राथमिकता समूह के प्रत्येक व्यक्ति को पहले 3 साल के लिए 5 कि.ग्रा. अनाज दिया जायेगा जिसमें चावल, गेहूँ तथा मोटा अनाज क्रमश: 3,2, तथा 1 रूपये प्रति कि.ग्रा. की दर से दिया जायेगा।
4. विधेयक के तहत् प्रति परिवार 35 कि.ग्रा. अनाज प्रतिमाह दिए जाने का प्रावधान है।
5. इसमें 6 माह से 14 वर्ष तक के बच्चों को पौषक आहार दिया जायेगा।
6. यह 3 साल तक के लिए निर्धारित है और बाद में इसकी समीक्षा की जायेगी।
7. गरीब परिवारों की पहचान के कार्य में राज्य सरकारों को भी शामिल किया जायेगा।
8. खाद्य सुरक्षा के दायरें में गर्भवती महिलाओं को भी शामिल किया गया है।
9. आंगनवाडी, मिड डे मिल के साथ ही अभावग्रस्त व्यक्ति को प्रतिदिन एक बार भोजन, आवास रहित को सामुदायिक रसोई में भोजन तथा भूखे व्यक्ति को प्रतिदिन 6 माह तक दो समय भोजन भी इस कानून में शामिल है।

इस प्रकार खाद्य सुरक्षा कानून लागू तो हो गया है लेकिन अब सरकार के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती इतनी बड़ी मात्रा में अनाज की उपलब्धता सुनिश्चित करने की है, दूसरा इसका उचित भण्डारण एवं रखरखाव तथा तीसरी सबसे बड़ी चुनौती इस योजना के क्रियान्वयन में भ्रष्टाचार को नियंत्रित करने की है जिसके कारण अधिकतर कानून व अच्छी योजनाएँ भी अपने वास्तविक उद्देश्य को पाने में सफल नहीं हो पाती।

अन्तर्राष्ट्रीय खाद्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार भारत में 1 वर्ष में जितना अनाज बर्बाद होता है उससे 70 लाख लोगों को दो वक्त का भोजन दिया जा सकता है। इस प्रकार किसानों के खून पसीने से उत्पन्न अनाज अकुशल प्रबन्धन के कारण काफी मात्रा में बर्बाद हो जाता है। सरकारी खरीद से एकत्र अनाज भी भण्डारण सुविधा की कमी एवं अव्यवस्था के कारण लगभग 30 प्रतिशत तक बर्बाद हो जाता है। बड़े पैमाने पर अनाज की बर्बादी को रोकने के लिए किसान आयोग की सिफारिशों तथा सरकारी प्रयासों से अनाज भण्डार गृहों का निर्माण किया गया हैं। भण्डार गृहों और शीत गृहों के निर्माण एवं प्रबन्धन मे निजी क्षेत्र भी रूचि ले रहे है जो कि इस दिशा में सकारात्मक पहल कही जा सकती है।

इसके अतिरिक्त सरकार ने देश भर में सभी ब्लाक तथा पंचायत स्तर पर अनाज गोदाम बनाने की घोषणा की है। यह गोदाम मनरेगा के तहत बनेगें। कृषि क्षेत्र को उन्नत बनाकर ही वास्तव में हम खाद्यान्न सुरक्षा की नींव तैयार कर कृषि क्षेत्र का समग्र विकास और इस पर समुचित ध्यान देकर हम अपनी उत्पादकता बढ़ा सकते है। इसके लिए पंचायत स्तर पर भण्डार गृह का निर्माण कर उस पंचायत को ही उसकी सम्पूर्ण उपज के भण्डारण एवं रखरखाव की जिम्मेदारी सौंपकर समस्या का निदान किया जा सकता है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि खाद्य सुरक्षा के लिए हमारे पास तमाम संसाधन और योजनाएँ मौजूद है। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने संसाधनों का उपयोग उचित और बेहतर प्रबन्धन के साथ करें क्योंकि खाद्य सुरक्षा कानून लागू होने के बाद हमारे समक्ष यह चुनौती और भी बढ़ गई है जिससे निपटने के लिए हमें तैयार रहना होगा।

नोबल पुरस्कार विजेता प्रख्यात अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन तथा ज्यांद्रेज ने 'भोजन के अधिकार' को जरूरी अधिकार बताते हुए कहा था कि इसमें और देरी नहीं की जानी चाहिए। इसमें और देरी गरीबों के साथ धोखाधडी होगी।

अंत में यह कहना गलत नहीं होगा कि भारत सरकार द्वारा लागू खाद्य सुरक्षा कानून विश्व का एक ऐसा कानून है जिससे गरीबी, भुखमरी, कुपोषण तथा भूखजनित बीमारियों से मुक्ति पाने में मदद मिलेगी। जनसाधारण को गरिमामय जीवन व्यतीत करने के लिए मानवाधिकार के रूप में भारत सरकार द्वारा उठाया गया यह ऐतिहासिक कदम सशक्त,स्वस्थ एवं सम्पन्न भारत के निर्माण में सहायक होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मानव अधिकार सबके लिए–म.प्र.मानवाधिकार आयोग, भोपाल
2. डॉ.पूरणमल– मानवाधिकार,सामाजिक न्याय और भारत का संविधान (पाइन्टर पब्लिशर्स जयपुर राजस्थान 2003)
3. कुरूक्षेत्र
4. योजना
5. दैनिक नई दुनिया
6. प्रतियोगिता दर्पण

प्रमुख योजनाएँ एवं कार्यक्रम इस प्रकार है।

क्र.	योजना का नाम	संचालक संस्था	उद्देश्य
1.	गेहूँ आधारित पोषाहार कार्यक्रम	महिला एवं बाल विकास मंत्रालय	6 वर्ष से नीचे आयु वर्ग के बच्चों और उपेक्षित वर्गों से संबंधित गर्भवती व दुग्धपान कराने वाली माताओ को पौष्टिक भोजन प्रदान करना।
2.	मिड डे मिल कार्यक्रम (1985)	मानव संसाधन विकास मंत्रालय (1997-98 से सभी राज्यों में लागू)	स्कूलों में प्रवेश संख्या बढ़ाना,शाला छोड़ने की प्रवृत्ति को हतोत्साहित करना, एवं उपस्थिति बढ़ाने हेतु।
3.	अनुसूचित जाति एवं जनजाति और पिछड़ा वर्ग छात्रावासों के लिए अनाज आपूर्ति कार्यक्रम (1994)	खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण विभाग द्वारा नोडल एजेंसी के रूप में	कुल छात्रों में से इन वर्गों के दो तिहाई संख्या वाले छात्रावासोंको प्रति छात्र 15 कि.ग्रा. अनाज प्रतिमाह उपलब्ध कराना।
4.	आपात आहार कार्यक्रम (1995-96)	ओडिशा में सर्वप्रथम लागू	गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले अक्षम व बेसहारा लोगों को विपत्ति के समय भोजन उपलब्ध कराना।
5.	लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (1997)	केन्द्र सरकार द्वारा संचालित	गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले बीपीएल और अन्त्योदय योजना के परिवारों को प्रतिमाह न्यूनतम मात्रा में अनाज उपलब्ध कराना।
6.	अन्त्योदय अन्न योजना (2000)	केन्द्र सरकार द्वारा संचालित	बीपीएल परिवारों में से सबसे निर्धन परिवारों की पहचान कर अधिकतम सब्सिडी देकर गेहूँ व चावल का आवंटन।
7.	अन्नपूर्णा योजना(2000-01)	ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार (राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम में शामिल)	65 वर्ष या उससे अधिक आयु वर्ग के ऐसे वृद्ध जिन्हें पेंशन की पात्रता के बावजूद पेंशन नहीं मिल पाती है प्रति व्यक्ति 10 किलो अनाज मुफ्त देना।
8.	कल्याणकारी संस्थाओं के लिए अनाज आपूर्ति कार्यक्रम (सन् 2002-03)	राज्यों एवं संघ शासित प्रदेशों के माध्यम से बीपीएल दरों पर केन्द्र सरकार द्वारा	कल्याणकारी संस्थाओं जैसे-भिक्षुक गृहों,नारी निकेतनों आदि जिन्हें सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत शामिल नहीं किया गया हो को बीपीएल दरों पर आवंटन।
9.	ग्रामीण अनाज बैंक योजना (2004)	खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण विभाग द्वारा	प्राकृतिक आपदा की अवधि में लोगों को भूखमरी से सुरक्षा प्रदान करना।

****

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, का कृषि वित्त में योगदान (धार जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. हेमसिंह मण्डलोई *

शोध सारांश – मालवा एवं निमाड़ के पठार पर अवस्थित आदिवासी बहुल वाला जिला धार जहॉ पर मध्यप्रदेश की जीवन रेखा कही जाने वाली नर्मदा नदी का बहाव क्षेत्र आता है जो इस क्षेत्र को उपजाऊ एवं समृद्ध बनाता है। जहॉ एक और मालवा का पठार सोयाबीन,गेहूँ एवं चना आदि के उत्पादन के कारण अपनी अलग ही पहचान रखता है। वही निमाड़ क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र में कपास, मिर्ची आदि फसलों हेतु जाना जाता है।

प्रस्तावना – कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। आर्थिक विकास की गति को बढ़ाने में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जनाधिक्य की समस्या से जुझ रहे भारत में बहुत सारे लोग जीवन बसर के लिए कृषि पर निर्भर है। आज भी देश की लगभग 70 करोड़ जनसंख्या गॉवों में निवास करती है और ग्रामीणों का मुख्य व्यवसाय कृषि ही है, लेकिन इन सब आकड़ों से परे भारतीय कृषि का जो महत्व भारतीय जीवन में है वह हमारी संस्कृति हमारे विचारों से जुड़ा है। आज भी मौसम बिगड़ने पर प्रत्येक भारतवासी भय महसूस करता है। और अच्छा मौसम होने पर प्रसन्नता का अनुभव करता है। चाहे वह कृषक हो अथवा न हो। इस प्रकार कृषि भारतीयों के सुख-दुख का प्रतीक है। किसी भी आर्थिक व्यावसायिक क्रिया के संचालन के लिए वित्त की आवश्यकता प्रथम एवं मूलभूत शर्त है। भारत में एक पिछड़ी हुई अर्थ व्यवस्था है, अत: यहॉ कृषि साख या वित्त का अत्यधिक महत्व हैं। प्रत्येक व्यक्ति को, परिवार को संस्था को और समाज को अपने कार्यो को सम्पन्न करने के लिए वित्त एक अनिवार्य आवश्यकता है। अत: यह कहना अनुचित न होगा कि कृषि जो धार जिले की अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है, के लिए वित्त का वही स्थान है जो हवा का फेफड़ों के लिए होता है एवं रक्त का सम्पूर्ण शरीर के लिए।

यह इसी प्रकार **सर एम डार्लिंग** ने अपने विचार व्यक्त किये है कि 'ऋण के बिना कार्य चलाना अटलांटिक महासागर की झंझावतों के विरूद्ध एवं छोटी सी नाव के द्वारा टक्कर झेलने की तरह सर्वथा असंभव है। भारत में खेत बहुत छोटे छोटे तथा बिखरे हुए है एवं प्रकृति का व्यवहार समुद्र की तरह उतना ही विनाशकारी हो सकता है, वित्त ही उसका कवच है।'

जिले का परिचय – मध्यप्रदेश के इंदौर संभाग के अंतर्गत मालवा एवं निमाड़ के पठार पर अवस्थित आदिवासी बहुल वाला जिला धार जो 20^0 से $23^0 10'$ उत्तरी अक्षांश तथा $75^0 28'$ से $75^0 12'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है धार जिले का क्षेत्रफल 8153 वर्ग किमी.है जो इस आदिवासी बाहुल वाले जिले को दो उपखण्डों निमाड़ एवं मालवा पठार में विभक्त करता है निमाड़ पठार के अंतर्गत धरमपुरी,कुक्षी,मनावर गंधवानी एवं डही पॉच एवं मालवा पठार के अंतर्गत धार,सरदारपुर एवं बदनावर तीन तहसीलें आती है इस प्रकार जिले को प्रशासनिक सुविधाओं की दृष्टि से आठ तहसीलों में बॉटा गया है जिले का प्रशासनिक मुख्यालय धार है। जिले की सीमा पूर्व में इंदौर पश्चिम में झाबुआ,अलिराजपुर, उत्तर में रतलाम एवं उज्जैन तथा दक्षिण में बड़वानी एवं खरगोन जिले की सीमा लगी हुई है। जिले के दक्षिण छोर पर निमाड़ का मैदान है जिस के अंतर्गत विध्य पर्वत श्रेणियो की अनेक छोटी बड़ी पर्वत श्रंखलाएं दूर सुदूर तक फैली हुई है निमाड़ क्षेत्र पहाड़ी ढाल से शुरू होकर समतल मैदान पर समाप्त होता है जहॉ पर मध्यप्रदेश की जीवन रेखा कही जाने वाली नर्मदा नदी का बहाव क्षेत्र आता है जो इस क्षेत्र को उपजाऊ एवं समृद्ध बनाता है। वही मालवा का पठार सोयाबीन,गेहूँ एवं चना आदि के उत्पादन के कारण एक अपनी अलग ही पहचान रखता है।

जिले की कुल जनसंख्या जनगणना 2011 के अनुसार 21,84,672 लाख है जिसमें प्रति हजार पुरूष पर महिलाओं की संख्या 961 है जिले की कुल साक्षरता 60.80है। मप्रके अन्य जिलों के समान ही धार भी मुख्यत: कृषि प्रधान जिला है जिले की आर्थिकी में कृषि एवं कृषक अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है जिले की कुल जनसंख्या का 81.1 प्रतिशत जनसंख्या कृषि एवं इससे सम्बधित उद्योगों से अपना जीवनयापन करते है जिले की मुख्य फसलें खरीफ में सोयाबीन,कपास,मक्का आदि प्रमुख है जबकि रबी में गेहुँ,चना,मटर,आलु,प्याज एवं लहसुन आदि प्रमुख है मालवा क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र में सोयाबीन,गेहूँ,चना,आलु,मटर एवं लहसुन आदि प्रमुख है वही निमाड़ क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र में कपास,मिर्ची आदि फसलों हेतु जाना जाता है।

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक – मध्यकालीन एवं अल्पकालीन कृषि ऋण प्राप्त करने का प्रमुख स्त्रोंत जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक है इस बैंक की स्थापना का प्रावधान सन् 1912 के सहकारी समितियों के अधिनियम में रखा गया था, ये बैंक जिला स्तर पर होते है तथा बैंक प्राथमिक समितियों को सहायता देने व उनके कार्यो में समन्वय करने के साथ ही ये जमा भी स्वीकार करते है एवं व्यापारिक बैंकों के समान सभी कार्य करते है।

श्री जी.एम.लाड़ के अनुसार ' जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों की स्थापना के पीछे आधारभूत विचार यह है कि प्राथमिक साख समिति (जो ग्रामीण आवश्यकता के संदर्भ में कृषकों द्वारा संलाचित की जाती है,और जिसका मुद्रा बाजार से कोई संपर्क नहीं है।) तथा प्रांतीय सहकारी बैंक (जो कि मुख्यत: नगर के व्यक्तियों द्वारा, जिनकी शहरी पृष्ठभूमि होती है, संचालित किये जाते है) के बीच मध्यस्थ संस्था होना आवश्यक है।'

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक का प्रमुख उद्देश्य सदस्य सहकारी समितियों की वित्तीय आवश्कता की पूर्ति करना है। बैंक कृषि समितियों को उत्पादन

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

कार्य करने के लिये, विपणन समितियों को विपणन तथा पूर्ति कार्यो के लिये तथा औद्योगिक एवं अन्य समितियों को उनके कार्यशील व्ययों की पूर्ति के लिये वित्त प्रदान करते है।

धार जिले में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक की स्थापना 16 मार्च 1926 को हुई थी जो म.प्र. सहकारी अधिनियम 1960 के अंतर्गत पंजीकृत है बैंक को भारतीय रिजर्व बैंक से 29/01/2012 को लायसेंस प्राप्त हो गया है।

शोध का उद्देश्य– विगत 35–40 वर्षो में कृषि कार्य हेतु राष्ट्रीयकृत व्यापारिक बैंकों का योगदान बढ़ा है परिणाम स्वरूप कृषि व्यावसाय के नये परिवर्तन दृष्टिगत हुए इन परिवर्तनों को देखते हुए यह विचार आया कि धार जिले में सहकारी केन्द्रीय बैंक द्वारा जिले के कृषकों को विभिन्न सहकारी संस्थाओं के माध्यम से वितरित किये गये ऋणों का अध्ययन करना , ऋण वसूली एवं बकाया की स्थिति ज्ञात करना ही प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य है।

शोध की परिकल्पना – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक के द्वारा विभिन्न प्रकार की संस्थाओं के माध्यम से वितरित किये गये ऋणों की पर्याप्त वसूली हो रही है और ऋण वितरण की तुलना में वसूली का प्रतिशत क्या है

शोध शैली – शोध कार्य द्वारा उन प्रयत्नों का उत्तर खोजने का प्रयास किया जाता है जिनका उत्तर साहित्य में उपलब्धता न हो। उन समस्याओं का समाधान खोजने का प्रयास किया जाता है जिनका समाधान वर्तमान में उपलब्ध नहीं है।

शोधकार्य की सफलता संमकों के वास्तविक संकलन विश्लेषण व निष्कर्ष पर निर्भर है, संमकों का संकलन एक आधारभूत कार्य है। प्रस्तुत शोध पत्र में तथ्यों का संकलन द्वितीयक संमकों के माध्यम से किया गया है।

बैंक की सदस्यता प्राप्त समितियां – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक धार के अंतर्गत जिले में विभिन्न ऋण योजनाओं के वितरण हेतु 31/03/2013 की स्थिति में 269 सहकारी समितियां कार्यरत है। समितियों का वर्गीकरण निम्नानुसार है –

क्रं.	समितियों के प्रकार	31.03.11	31.03.12	31.03.13
1.	प्राथमिक कृषि साख समितियां–			
अ	वृहताकार सहकारी समिति	04	04	04
ब	आ.जा.सेवा सह.समिति	81	79	79
स	कृषक सेवा सह. समिति	–	–	–
द	सेवा सहकारी समिति	10	12	12
2.	विपणन सह. एवं प्रक्रिया सह. समिति	08	08	8
3.	बुनकर सहकारी समिति	10	10	10
4.	तिलहन सहकारी समिति	03	02	02
5	अन्य सहकारी समिति	57	57	56
6	दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां	78	71	71
7	औद्योगिक सहकारी समिति	28	27	27
	योग	279	270	269

स्त्रोत– जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित,धार (म.प्र.)

ऋण वितरण लक्ष्य एवं पूर्ति– जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित,धार द्वारा उन कृषकों को जो आर्थिक रूप से कमजोर ,अनुसूचित जाति,अनुसूचित जनजाति एवं कृषि से जुड़े कार्यो से अपना रोजगार प्राप्त करते है ऐसे किसानों के लिए बैंक द्वारा राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक ,मध्यप्रदेश राज्य सहकारी बैंक मर्या. भोपाल द्वारा निर्धारित साख के आधार पर कृषि ऋणों का वितरण किया गया है। कृषि ऋणों का वितरण अग्र तालिका अनुसार हैं–

तालिका क्रमांक–1.1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका का विश्लेषण एवं अध्ययन करने से पता चलता है कि खरीफ एवं रबी की फसलों हेतु ऋणों के लक्ष्यो एवं पूर्ति में प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है जबकि खरीफ फसल के लक्ष्य की तुलना में पूर्ति का प्रतिशत वर्ष 2010–11 में 115.25 था जो वर्ष 2011–12 में बढ़कर 118.16 हो गया परन्तु वर्ष 2012–13 में निर्धारित लक्ष्य की तुलना में वितरण का प्रतिशत घटकर 93.80 ही रह गया। रबी फसलों के अंतर्गत बैंक द्वारा निर्धारित लक्ष्य की तुलना में ऋणों के वितरण का प्रतिशत कम है सहकारी बैंक के द्वारा अपने ऋण लक्ष्य में प्रतिवर्ष वृद्धि की जा रही है। बैंक के द्वारा रबी फसल में पूर्ति का प्रतिषत कम होने का मुख्य कारण किसानों के पास रबी सीजन में सिंचाई के साधनों की अनुपलब्धता हैं।

ऋण वसूली – जिला सहकारी बैंक के द्वारा अपने ग्राहकों को कृषि ऋण के अतिरिक्त अन्य वाणिज्य बैंकों के समान उपभोक्ता ऋण, लॉकर सुविधा,उपभोग ऋण जैसे टी.वी.,फ्रिज,मोपेड,फर्निचर आदि ऋण सुविधा दी जाती है बैंक के द्वारा वर्ष 2012–2013 में ऋण की मांग रू.55975.41 लाख थी इसके विपरित बैंक की वसूली रू. 42635.06 ही हुई जो कुल मांग का 76.17 प्रतिशत ही है।विगत तीन वर्षो में मांग के विपरित की गई ऋण वसूली अग्र तालिका के द्वारा स्पष्ट की गई है –

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक,धार द्वारा ऋण वसूली

तालिका क्रमांक–1.2 (राशि लाख में)

क्र.	विवरण	31.03.11	31.03.12	31.03.13
1.	वर्ष की मांग	34162.37	43482.72	55975.41
2.	वसूली	25571.67	33685.22	42635.06
3.	कालातीत	8590.70	9797.50	13340.35
4.	मांग से वसूली का प्रतिशत	74.85	77.47	76.17

स्त्रोत– वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2012–13 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित,धार (म.प्र.)

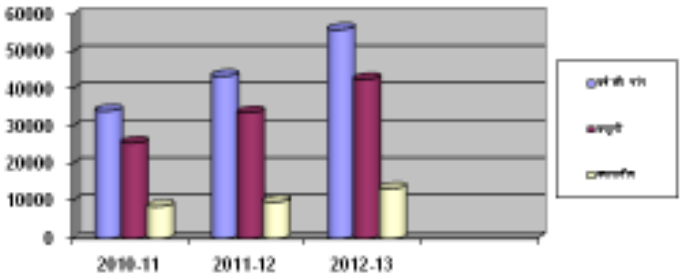

उपर्युक्त तालिका का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक द्वारा जो ऋण मांग के अनुसार वितरित किये जाते है उनकी तुलना में वसूली का अनुपात 25 प्रतिशत कम है जो दर्शाता है कि जिले के कुछ क्षेत्र के कृषकों का कृषि उत्पादन तो अच्छा होता है जिससे वे

ऋणों का समय पर भुगतान करते है परन्तु कुछ क्षेत्र में उत्पादन कम होता है जिससे वे सम्पुर्ण ऋण का भुगतान समय पर नहीं करते इस कारण बैंक का ऋण कालातीत हो जाता है।

निष्कर्ष – शोध प्रबंध के अध्ययन से यह पता चलता है कि मेरे द्वारा जो उद्देश्य एवं शोध परिकल्पना मानी गई थी कि क्या जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक के द्वारा विभिन्न समितियों एवं संस्थाओं के माध्यम से कृषकों को पर्याप्त ऋण सुविधाएँ दी जाती है। बैंक के माध्यम से अलग अलग क्षेत्रों के कृषकों हेतु जमीन के सिचिंत व असिचिंत क्षेत्र के आधार पर कम या अधिक का लक्ष्य निर्धारित कर ऋणों का वितरण किया जाता है परन्तु ऋणों की तुलना में वसूली का प्रतिशत अलग अलग क्षेत्रों में कम या अधिक होता है

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ग्रामीण एवं भारतीय अर्थव्यवस्था,लेखक-श्री सुबहसिंह यादव
2. नई सदी में भारतीय अर्थव्यवस्था की आर्थिक चुनौतियां-डॉ.गणेश कावडियां
3. मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास,लेखक-राव एवं कोजवार
4. कृषि प्रदीपिका, लेखक-नारायण दुलीचंद व्यास

पत्र पत्रिकाऐं –

1. सामान्य अध्ययन
2. प्रतियोगिता दर्पण
3. प्रतियोगिता निर्देशिका
4. दैनिक भास्कर की कृषि भास्कर

अन्य-

1. www.mpinfo.ac.in,
2. वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2012-13 जिला सहकारी । केन्द्रीय बैंक मर्यादित,धार (म.प्र.)।
3. जिला सांख्यिकी पुस्तिका धार।
4. दैनिक भास्कर,नई दुनियॉ,इकोनोमिक्स टाईम्स,आर्थिक जगत आदि।

तालिका क्रमांक-1.1
जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक,धार द्वारा कृषि ऋण वितरण
(राशि लाख में)

वर्ष	खरीफ			रबी		
	लक्ष्य	पूर्ति	प्रतिशत	लक्ष्य	पूर्ति	प्रतिशत
2010-11	26000	29973.12	115.28	1200	1120.58	93.38
2011-12	33800	39937.17	118.16	1500	1349.25	89.95
2012-13	47700	44743.06	93.80	1800	1650.26	91.68

स्त्रोत-वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण 2012-13 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित,धार (म.प्र.)

****

घड़ी व्यवसाय का वर्तमान स्वरुप एवं संभावनाएँ (इन्दौर नगर के विशेष संदर्भ में)

डॉ. राकेश माथुर * गौरव राठौर * *

प्रस्तावना – 'घड़ी ' शब्द सुनते ही हर व्यक्ति के मस्तिष्क में एक आकृति उभर आती है, जो कि उसे निरंतर गतिशीलता एवं उत्तरोत्तर प्रगति करने हेतु सतत् प्रेरित करती है। इस पंक्ति के पार्श्व में जो चिंतन निहित है वह एक सफल व्यक्ति एवं एक असफल व्यक्ति के मध्य अंतर निरूपित करता है, वह है समय पर किया गया कार्य। प्रत्येक सूक्ष्मोत्तर कार्य सफलता की आधारशिला को परिपक्व करता है। आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समय की महत्ता को, हर व्यक्ति पूर्णरूपेण न केवल समझ चुका है, अपितु इसे अपने आचार-विचार में लाने हेतु प्रयासरत भी रहता है।

आज हम देखते हैं प्रत्येक पत्र-पत्रिकाएँ उत्तम विचार इत्यादि सभी में समय का कुशलतम उपयोग एवं प्रबंधन हेतु विचारों को महत्व के साथ प्रकाशित किया जाता है। क्योंकि यह सर्वविदित सत्य है एक बार बीता हुआ समय किसी भी स्थिति में वापस नहीं लाया जा सकता है।

आज के प्रतियोगी जीवन में तो समय एक ऐसा विषय बन चुका है जो कि दिखता तो स्थूल रूप से 24 घंटे में विभाजित है परंतु अपने हर इकाई में अत्यंत सूक्ष्म रूप से विभाजित होकर न केवल आमजन बल्कि वैशिष्ट्य वर्गजन हेतु भी एक चुनौती बन चुका है। समय प्रबंधन न केवल शैक्षणिक ,सामाजिक ,धार्मिक ,राजनैतिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर सदैव प्रासंगिक रहा है। उपरोक्त पंद्याश से अब यह तो स्पष्ट है कि समय की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। अब में आपका ध्यान हम सबको समय का बोध कराने वाली एक मशीन जिसे हम घड़ी के रूप में जानते हैं की ओर आकर्षित कराना चाहूँगा। आज हर छोटा-बड़ा व्यक्ति अपनी सामाजिक स्थिति के अनुसार घड़ी को पहनता है एवं अपने घरों में साज सज्जा के रूप में स्थान देता है। यहाँ तक कि अंग्रेजी वर्णमाला जिस प्रकार ए फॉर एप्पल होता है वैसे ही डबल्यू फॉर वॉच भी होता है। यहाँ पर यह उदाहरण इसलिए दिया गया है क्योंकि यह उदाहरण प्रत्येक आयु वर्ग, विशेष कर बालकों हेतु बोधगम्य है। देखा जाय तो आजकल कई व्यक्ति के हाथों में घड़ी दिखाई नहीं देती है ,पूछा जाय तो कारण सामने आता है कि हर जगह तो आजकल घड़ी है तो फिर हम क्यों घड़ी पहनें ?

जबकि विश्लेषात्मक रुप से देखें तो , समय इतना मूल्यवान है हर इलेक्ट्रॉनिक गैजेटस में कुछ होना ना हो समय दर्शाने वाली घड़ी अवश्य होगी। जैसे मोबाईल में,न्यूज चैनलों में, कम्प्यूटर में, लैंडलाईन , कॉलर आई डी फोन में सभी उपकरणों में कहीं न कहीं समय हेतु स्थान निर्धारित है। आज वर्तमान में घड़ी न केवल एक मात्र समय हेतु बल्कि अन्य कई उपयोगिता को समाहित किए हुए है- जैसे अर्लाम, रेसिंग हेतु स्टॉप वॉच, हृदयगति को मापने हेतु इत्यादि भी उपयोग में लायी जाती है जो कि इसकी उपयोगिता को बढ़ाती है।

घड़ी आज फैशन का पर्याय बन चुकी है। स्त्री, पुरुष चाहे वह स्कूल , कॉलेज में हो या कार्यस्थलों पर या फिर किसी उत्सव, फंक्शन में स्थिति के अनुरुप घड़ी पहनी जाने लगी है। आजकल सभी के पास एक से अधिक घड़ियों का संकलन होता है जो कि उत्सव एवं अवसर के अनुरुप पहनी जाती है। इस कारण ही मोबाईल के आ जाने से घड़ियों का विक्रय कम नहीं अपितु पहले से भी अधिक बढ़ गया है। जैसे कि टाईटन कंपनी की रागा सीरिज की घड़ियों की मांग शादी उत्सव पर महिलाओं की विशिष्ट पसंद होती है। स्कूल, कॉलेजों एवं युवा, ऑफिस क्लास में टाईटन की ही 'फास्ट्रेक' घड़ियों की मांग सर्वाधिक है। मध्यम वर्गीय जनों में सोनाटा घड़ियों की मांग अधिक है वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ किसान वर्ग अधिक है वहाँ मैक्सिमा वाटरप्रूफ घड़ियों का चलन अधिक है, क्योंकि उनका खेतों में कार्य होता है।

आज तकनीक का प्रभाव घड़ियों के निर्माण पर भी पड़ा है। जहाँ पहले के समय में यांत्रिकी (चाबी वाली) एवं ऑटोमेटिक (कलाई में बांधने पर ही चलने वाली) घड़ियों का प्रचलन या तकनीक परिवर्तन से वह अब क्वार्टिज (सेल से चलने वाली) में परिवर्तित हो गयी है।

इसका कारण यह है कि उन प्राचीन चाबी वाली घड़ियों की मरम्मत हेतु न तो कारीगर मिलते हैं न ही उनके स्पेयर्स पार्टस। इस कारण ही यह क्वार्टिज् प्रचलन में आ सकी।

इन्दौर नगर में घड़ी व्यवसाय – इन्दौर नगर में घड़ी व्यवसाय बहुत ही प्राचीन है। इन्दौर नगर से घड़ियों का थोक एवं सामान्य व्यापार हेतु अनेकों दुकानें हैं जो इस व्यापार में अद्यतन संलग्न हैं। जेलरोड़, खातीपुरा एवं

एम.जी. रोड़ घड़ियों के थोक व्यापार हेतु प्रख्यात है जहाँ से संपूर्ण मालवा निर्माण एवं यथा संपूर्ण मध्यप्रदेश के क्रेतागण आकर अपने क्षेत्रों में घड़ियाँ विक्रय हेतु खरीद करते हैं चाहे फिर वह हाथ घड़ी हो या दिवाल घड़ी।

ब्रांड	विक्रय संख्या
टाईटन	20
सोनाटा	30
फास्ट्रेक	25
मैक्सिमा	15
अन्य	10
	100

रिटेल आउटलेट्स से प्राप्त सर्वेक्षण के आधार पर इन्दौर नगर में चायनीज माल का भी अत्यंत बड़ा मार्केट नॉवेल्टी मार्केट है जहाँ पर सस्ती एवं आर्कषक चायनीज घड़ियाँ उपलब्ध है परंतु वह गुणवत्ता की दृष्टि से अत्यंत निम्न है अत: इनका प्रयोग एक बहुत ही बड़ा सामान्य निम्न वर्ग

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

करता है। जो कि गुणवत्ता के प्रति जागरुक नहीं हैं या फिर जो अपनी क्रय शक्ति के अनुरुप घड़ी के क्रय हेतु व्यय करते हैं।

घड़ी निर्मात्ता कंपनियों का परिचय –

टाईटन – टाटा ग्रुप द्वारा सन् 1984 में टाईटन घड़ी की आधारशिला रखी गयी। टाईटन वॉच भारत की तीसरी घड़ी निर्मात्ता कंपनी थी जो कि एच.एम.टी. एवं आलविन के बाद स्थापित हुई थी। 1998 में टाईटन वॉच ब्रांड, टाईमेक्स के संयुक्त साहस के रुप में उद्धत हुई थी।

आज भारत की यह वॉच कंपनी विश्व के पांचवे नंबर की घड़ी निर्मात्ता कंपनी है। और जिसकी भारतीय घड़ी बाजार में 65 प्रतिशत हिस्सेदारी है। टाईटन ग्रुप का प्रभाव-प्रसार विश्व क 32 देशों में है जैसे-लंदन, दुबई, सिंगापुर आदि।

टाईटन ने जीवन को आरामदेह वस्तुओं की श्रृंखला में सदैव अपने आपको उन्नत किया है। यथा अपनी विभिन्न श्रृंखला रिगालिया, रागा, नेब्युला, सोनाटा, फास्ट्रेक, जूप, ओरियन, परपल, ओबाकू, ऑटोमेटिक, टायकून, बंधन, ऑक्टेन और एच.टी.एस.ई इत्यादि।

टाईटन की अन्य उपलब्धि है उसके द्वारा निर्मित की जाने वाली विश्व की सबसे पतली घड़ी **'टाईटन एज'** है जो कि 3.5 मि.मी. की सूक्ष्म मोटाई लिए हुए है। टाईटन का कुल राजस्व 2013 में 102.24 बिलियन रुपए था। वहीं शुध्द आय 7.25 बिलियन रुपए थी।

टाईटन की सोनाटा श्रृंखला भारत की सर्वाधिक बिकने वाली घड़ी के रुप में प्रख्यात है।

टाईमेक्स – अमेरिकल ब्रांड टाइमेक्स सन् 1998 में टाटा ग्रुप के साथ मार्केट में अवतरित हुआ। आज टाईमेक्स ब्रांड तकनीकी कोनोग्राफ एवं स्पोंटस वॉच के रूप में विश्व विख्यात है। भारतीय सेना केन्टीनों में टाईमेक्स ब्रांड सहजता से उपलब्ध है जो कि इसे विश्वसनीयता प्रदान करती है।

मैक्सिमा – इन्दौर वॉच मार्केट में मैक्सिमा ब्रांड का अपना विशिष्ट स्थान है क्योंकि यह वॉच ब्रांड अपनी वैशिष्ट्य गुण **वाटरप्रूफ** के कारण पहचाना जाता है,जहाँ पानी का काम ज्यादा होता है। एकदम रखरखाव रहित घड़ी के रुप में मैक्सिमा अत्यंत प्रचलित है। यह भारत की पहली वाटरप्रूफ गारंटी देने वाली घड़ी है।

अजंता – दिवाल घड़ियों में वर्षो से जाना पहचाना नाम अजंता है जो आज भी सबसे ज्यादा बिकने वाली दिवाल घड़ी है।

अजंता का व्यवसाय भी आज अन्य देशों में फैल चुका है। अजंता ने अपनी पहचान वटिफाईट टाईल्स, सी.एफ.एल.,केल्कुलेटर, टेलीफोन, मोबाईल, पंखे, गीजर, प्रेस अन्य गृह उपयागी उपकरणों में भी बनाई है। अजंता का निर्माण स्थल मोरबी (गुजरात) है।

अन्य ब्रांड – रॉयल एक्स, रिवॉन, आल्विन, डिवाईन, क्यू एडं क्यू इत्यादि। अन्य ब्रांड भी किसी ब्रांड के न होते हुए भी रिटेल मार्केट में अपनी उच्चतम गुणवत्ता एवं न्यूनतम दाम होने से प्रचलन में हैं।

इन्दौर नगर में घड़ी व्यवसाएँ का विकास एवं संभावनाएँ – आज इन्दौर नगर के प्रत्येक मॉल में एक अनिवार्यतम काउंटर घड़ी दृष्टिलब्ध है। चाहे वह ट्रेजर आइलैण्ड हो या सेन्ट्रल मॉल हो, मल्हार मेगा या फिर शॉपर स्टाप्स।

आज टाईटन ने इन्दौर नगर के व्यस्ततम स्थानों पर अपनी श्रृंखला **वर्ल्ड ऑफ टाईटन** शोरुम स्थापित किए हैं। टाईमेक्स के द्वारा **टाईम फैक्ट्री** के नाम से श्रृंखला शोरुम स्थापित किए हैं।

आज हर रिटेल काउंटर का विक्रय पूर्व के वर्ष से बढ़ता ही जा रहा है। इसका कारण है सिनेमा एवं टीवी सीरियल्स में कलाकारों द्वारा पहने जाने वाली घड़ियाँ हैं। इस कारण से इन्दौर नगर में घड़ी व्यवसाय न केवल फलफूल रहा है। बल्कि अन्य कई वर्गो को रोजगार के अवसर भी उपलब्ध करवा रहा है।

निष्कर्ष – यह तथ्य सर्वविदित है कि जिस प्रकार समय का महत्व कभी कम नहीं होगा, उसी प्रकार घड़ी व्यवसाय भी कभी कम नहीं होगा। क्योंकि यह उसे फैशनेवल बनाकर सदैव लोगों की कलाईयों पर बंधकर लोगों के हृदय में टिक-टिक करती रहेगी।

- वर्षगाठ पर, शादियों में घड़ी उपहार स्वरुप देना काफी प्रचलन में है। आजकल घड़ियों को शादियों में बारातियों को उपहार स्वरुप दिए जाते हैं।
- दुल्हा-दुल्हन के नाम डायल पर छपवाकर नए भवन के उद्घाटन पर दिवाल घड़ी को उपहार स्वरुप दी जाती है।
- दिवाली के अवसर पर कर्मचारियों को संस्था द्वारा संस्थागत उपहार स्वरुप घड़ियाँ वितरित की जाती है।
- कंपनियों द्वारा ड्रॉ, स्कीम के अंतर्गत खरीदी करने पर घड़ी उपहार स्वरुप दी जाती है।
- अतएव कहा जा सकता है कि घड़ी का उपयोग इतना स्वाभाविक व उपयोगी है कि आम तौर पर इस उपहार स्वरुप दिया जाता है। जो कि नि:संदेह इसके व्यापार, व्यवसाय, मरम्मत एवं इससे जुड़े प्रत्येक वर्ग हेतु प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रुप से सहायक है जो कि घड़ी एवं घड़ी व्यवसाय को सदैव प्रांसगिक बनाए रखेगी।

आयु वर्ग	ब्रांड उपलब्ध	कीमत
10 से 14 वर्ष	सोनाटा, जूप	400 से 800
15 से 25 वर्ष	सोनाटा, मैक्सिमा फास्ट्रेक,टाईमेक्स	500 से 4000
26 से अधिक	सोनाटा, मैक्सिमा फास्ट्रेक, टाईटन टाईमेक्स	500 से 10,000
प्रीमियम रेंज	टाईटन, टाईमेक्स	1000 से1,00,000

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

- पत्र-पत्रिकाएँ।
- वेब साईट, टाईटन इण्डस्ट्री।
- व्यक्तिगत सर्वे।

****

भारतीय कृषि : नीतियाँ, योजनाऐं , चुनौतियाँ एवं संभावनाऐं

डॉ. मनोहरलाल गुप्ता *

प्रस्तावना – भारत में हजार वर्ष ईशा पूर्व से कृषि की जा रही है। भारत में सिंधु घाटी के पुरावशेषों के उत्खनन से इस बात के प्रमाण मिले हैं कि आज से पांच हजार वर्ष पूर्व कृषि अत्यधिक उन्नत अवस्था में थी और लोग राजस्व अनाज के रुप में चुकाते थे। सिंधु सभ्यता के समय गेहूं और जौ बोएं जाने का प्रमाण मिलता है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में कृषि संबंधी ऋचाएं हैं जिससे वैदिक आर्यो के कृषि विषयक ज्ञान का बोध होता है। कावेरी नदी पर बना महान् एनीकट बांध दूसरी शताब्दी में बनाया गया जिसे विश्व की सबसे पुरानी जल नियंत्रक प्रणाली में से एक माना जाता है।

ऋग्वैदिक काल से ही कृषि एक पारिवारिक उद्योग रहा है। तब से आज तक भारत में कृषि जीविका का आधार बनी हुई है। प्राचीन भारत में कृषि का ज्ञान लोकोत्तियों एवं कहावतों (घाघ भड्डारी) तथा कृषि पराशर, कृषि संग्रह, पराशर तंत्र, कृषि गीता, विश्व बल्लभ तथा उपवन विनोद आदि प्रमुख ग्रंथों के माध्यम से प्रकट होता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है। बावजूद इसके भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि अंतिम रूचि का विषय बन गया है। जबकि वर्तमान में कृषि क्षेत्र 52 प्रतिशत लोगों को रोजगार उपलब्ध करा रहा है। सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान 2012–13 में 13.7 प्रतिशत रहा है। व्यापार एवं निर्यात का प्रमुख स्त्रोत कृषि क्षेत्र रहा है। कृषि राज्य का विषय होने के कारण कृषि सुधार कार्यक्रम जैसे, भू–स्वामित्व, कृषि भूमि का वितरण, चकबंदी, उन्नत कृषि बीज, खाद, भंडारण एवं बाजार आदि क्षेत्रों में राष्ट्रीय स्तर पर एकरुपता की कमी पायी गयी है। जिसके कारण कृषि विकास में भारी प्रादेशिक असमानता मौजूद है।

शोध का उद्देश्य – स्वतंत्रता पश्चात् भारतीय कृषि के विकास हेतु शासन द्वारा बनाई नीतियां एवं उनके क्रियान्वयन के साथ–साथ भारतीय कृषि में क्या चुनौतियाँ है तथा भारतीय कृषि में क्या संभावनाऐं है । यह ज्ञात करना शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है ।

शोध प्रविधि एवं सीमाऐं – प्रस्तुत शोध पत्र में आर्थिक समीक्षा में प्रकाशित द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है तथा 2004–05 से 2011–12 तक कुल 8 वर्षो को समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है ।

वर्तमान स्थिति – कृषि हमारी अर्थवयवस्था का मूलाधार है। यह समस्त आर्थिक गतिविधियों का केन्द्र बिंदु है। कृषि सम्बद्ध गतिविधियों सहित वर्ष 2012–13 में सकल घरेलू उत्पाद में 13.7 प्रतिशत का योगदान रहा है। जो के वर्ष 2010–11 में 14.5 प्रतिशत की तुलना में कम है। सकल घरेलू उत्पाद में कृषि की घटती भागीदारी के बावजूद यह आय वितरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका देश की 2001 की जनगणना के अनुसार लगभग 58 प्रतिशत योगदान है। इसीलिए कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों में विकास समावेशी विकास की आवश्यक शर्त बनी रहेगी।

सरकार द्वारा किये गये समय–समय पर सुधारात्मक उपायों की वजह से कृषि उत्पादन को बढ़ावा मिला है। जिसके कारण कृषि विकास दर वर्ष 2010–11 में यह 7 प्रतिशत तक पहुंच गई जो पिछले 6 वर्षो के दौरान प्राप्त सर्वाधिक विकास दर थी। गत वर्षो में देश की गिरती अर्थव्यवस्था को उबारने के लिए एकमात्र कृषि विकास में 5 प्रतिशत (2013–14) की दर से वृद्धि की आशा अर्थव्यवस्था को विकास की पटरी पर लाने का मुख्य आधार है।

कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों में सकल पूंजी निर्माण दर में भी वृद्धि दर्ज की गई है। 2004–05 की कीमतों पर 2004–05 में 13.5 प्रतिशत से बढ़कर 2010–11 में 20.1 प्रतिशत हो गया। यह एक सकारात्मक प्रवृत्ति है। कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों में सकल पूंजी निर्माण (GCF), सकल घरेलू उत्पाद (GDP) की स्थिति सारिणी क्रमांक 1 से स्पष्ट है – सारिणी क्रमांक–1(पीछे देखें)

कृषि उत्पादन – देश में कृषि उत्पादन विशेषकर गेहूं, चावल के उत्पादन में निरंतर वृद्धि की प्रवृत्ति रही है। वर्ष 2010–11 के सामान्य मानसून से खाद्यान्न उत्पादन 224.78 मिलियन टन व 2011–12 में 250 मिलियन टन हो गया। यह उपलब्धि मुख्यत: चावल और गेहूं के उत्पादन में वृद्धि के कारण है। हालांकि दलहन, कपास, मोटा अनाज एवं तिलहन और दालों के उत्पादन में 2010–11 की तुलना में ऋणात्मक वृद्धि दर्ज की गई है। जो चिंता का विषय है।

देश में खाद्यान्न उत्पादन की स्थिति को निम्न सारिणी क्रमांक 2 से स्पष्ट किया गया है –

सारिणी क्रमांक – 2

खाद्यान्न उत्पादन (मिलियन टन में)

उत्पाद	उत्पादन (2011–12)	प्रतिशत वृद्धि
चावल	102.75	7.1
गेहूं	94.88	8.2
मोटा अनाज	42.08	–3.7
दालें	17.28	–5.3
तिलहन	30.53	–6.0
गन्ना	347.87	1.6
कपास (प्रति 170 कि.ग्रा. गांठे)	34.09	3.3
जूट तथा मोटा अनाज	11.61	9.3

स्त्रोत – आर्थिक समीक्षा 2011–12।

नीतियां एवं योजनाएं – भारतीय कृषि देश की 60 प्रतिशत मानव शक्ति को रोजगार प्रदान करती है। खाद्यान्न उत्पादन वर्ष 1951 की तुलना में लगभग 5 गुना बढ़ा है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि 'यदि कृषि फेल होती है तो भारतीय अर्थव्यवस्था फेल मानी जाती है।'

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ – ब्यावरा, जिला राजगढ़ (म.प्र.) भारत

ऐसी स्थिति में अर्थव्यवस्था को मजबूत एवं विकसित बनाने के लिए सरकार का सबसे अधिक जोर कृषि क्षेत्र में रहता है।

कृषि उत्पादन में कमी को रोकने, कृषि सम्बद्ध क्षेत्रों को विकसित करने तथा कृषि को लाभ का व्यवसाय बनाने के उद्देश्य से महत्वपूर्ण नीतियां क्रियान्वित की गई। जो हमारी कृषि नीति के महत्व को दर्शाती हैं।

राष्ट्रीय कृषि नीति, 2007 – भारत सरकार ने राष्ट्रीय कृषक आयोग की सिफारिश को ध्यान में रखते हुए किसानों के लिए राष्ट्रीय नीति, 2007 का अनुमोदन किया। किसानों के लिए राष्ट्रीय नीति में कृषि क्षेत्र के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण की व्यवस्था की गई। राष्ट्रीय कृषि नीति के मुख्य लक्ष्य निम्नलिखित हैं, जैसे –

1. किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करना।
2. कृषक परिवार के पास उत्पादक परिसम्पत्ति में सुधार करना।
3. जल का कुशलतापूर्वक उपयोग करना।
4. नई जैव प्रौद्योगिकीय का उपयोग करना।
5. समर्थन सेवाएं विकसित करना जैसे, बीजों, सिंचाई, शक्ति, मशीनरी, उपकरण एवं उर्वरकों के लिए ऋण की व्यवस्था करना।
6. महिलाओं के लिए सहायता सेवाएं उपलब्ध कराना।
7. कृषि शिक्षा को लिंग संवेदी बनाना।
8. किसानों के लिए एक सामाजिक सुरक्षा प्रणाली विकसित करना।
9. शुष्क भूमि कृषि क्षेत्र को विकसित एवं सम्पन्न बनाना।
10. बीज एवं मृदा स्थिति में सुधार करना।
11. विस्तार सेवाओं जैसे, आईसीटी तथा कृषक ज्ञान में वृद्धि के लिए फार्म स्कूल स्थापित करना।

राष्ट्रीय कृषक नीति के सफल क्रियान्वयन के लिए एक अंतर मंत्रालय समिति का भी गठन किया गया।

चुनौतियां एवं संभावनाएं – राष्ट्रीय कृषक नीति एवं राष्ट्रीय कृषि नीति के प्रावधानों को पूर्ण रुप से मूर्त स्वरुप देने की कठिन चुनौती है। बावजूद इसके भारतीय कृषि ने काफी प्रगति की है। बढ़ती हुई आबादी एवं बढ़ती हुई आय खाद्यानों एवं खाद्येत्तर फसलों के लिए अधिक मांग पैदा करेगी। अत: भारतीय कृषि को चार प्रतिशत प्रतिवर्ष की उच्च वृद्धि दर स्थाई आधार पर प्राप्त करनी होगी। कृषि क्षेत्र की सबसे बड़ी चुनौती यह भी है कि बुवाई वाले निवल क्षेत्र में वृद्धि की संभावना समाप्त हो गई। इसलिए कृषि उत्पादन में वृद्धि उत्पादकता में वृद्धि से ही संभंव है।

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में विकास, रोजगार तथा आर्थिक समृद्धि लाने के लिए कृषि क्षेत्र को विकसित बाजारों की जरुरत है। कृषि उत्पादन के भंडारण एवं मूल संरचना के विकास के लिए भारी निवेश की जरुरत है। कृषि क्षेत्र को समृद्ध बनाने के लिए उच्च मूल्य फसलों का विस्तार आवश्यक है। साथ ही आधुनिक प्रौद्योगिकी एवं जैव प्रौद्योगिकी के सुसंगत प्रयोग में विस्तार की आवश्यकता है। कृषि में सार्वजनिक निवेश अपेक्षानुरुप नहीं हो पाया है इसलिए कृषि शेत्र को लाभ का व्यवसाय बनाने के लिए निजी निवेश की व्यापक संभावना है।

कृषि क्षेत्र का विकास कृषि सम्बद्ध क्षेत्रों जैसे, डेयरी, बागान, मत्स्य, पशुपालन आदि के विकास पर भी निर्भर है। अत: आवश्यक है कि इन क्षेत्रों का विकास सार्वजनिक और निजी सहभागिता के आधार पर किया जाना चाहिए।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम को लागू करना भी देश के समक्ष एक बड़ी चुनौती है। इस चुनौती का सामना हम तभी कर सकते है जब कृषि क्षेत्र में न्यायोचित एवं दीर्घकालिक विकास नीति के अंतर्गत कार्य हो एवं उपलब्ध संभावनाओं का समुचित विदोहन हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था, मिश्र एवं पुरी, हिमालया पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली, 2009
2. भारतीय आर्थिक नीति, डॉ. माहेश्वरी एवं डॉ. गुप्ता, कैलाश पुस्तक सदन, 2006
3. कृषि का अर्थतंत्र, आर.एन. अग्रवाल, हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर, 2012
4. कृषि का अर्थशास्त्र, एस.बी. गुप्ता, साहित्य भवन एस.बी.पी.डी. आगरा, 2011
5. कृषि अर्थशास्त्र, जे.पी. मिश्रा, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, 2013
6. प्रतियोगिता दर्पण 'भारतीय अर्थव्यवस्था' विशेषांक 2013।
7. आर्थिक समीक्षा 2011-12
8. आर्थिक समीक्षा 2010-11

सारिणी क्रमांक – 1

भारतीय कृषि तथा सम्बद्ध क्षेत्रों में सकल पूंजी निर्माण, सकल घरेलू उत्पाद

वर्ष	सकल पूंजी निर्माण GCF (करोड़ रू. में)	सकल घरेलू उत्पाद GDP (करोड़ रू. में)	GCF तथा GDP का प्रतिशत
2004-05	76096	565426	13.5
2005-06	86604	594487	14.6
2006-07	92057	619190	14.9
2007-08	105741	655080	16.1
2008-09	127127	655689	19.4
2009-10	131139	662509	19.8
2010-11	142254	709103	20.1

स्त्रोत- आर्थिक समीक्षा 2011-12

****

आर्थिक वैश्वीकरण का भारत पर प्रभाव

डॉ. आर.के. गुप्ता *

शोध सारांश – वैश्वीकरण आज कोई नया शब्द नहीं है। आज प्रत्येक व्यक्ति इस शब्द से भलीभांती परिचित है व प्राय: इन शब्दों को सुनता ही है। वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा अनेक देश के बाजारों को जोड़ा जाता है तथा इनके मध्य आपस में पारस्परिक निर्भरता बनती है तथा एक देश का व्यापार केवल उस देश की सीमाओं के अन्तर्गत न होकर कई देशों तक इसकी पहुंच बन जाती है। तथा व्यापार में निहित तुलनात्मक लागत लाभ दशाओं का लाभ उठाने में सक्षम हो जाता है। **शब्द कुंजी** – भूमण्लीकरण, वैश्वीकरण, उदारीकरण।

प्रस्तावना – भूमण्डलीकरण से आशयन किसी एक देश की अर्थव्यवस्था को शेष विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ 'एकीकृत' करने से लगाया जाता है। यह एकीकरण अनेक स्तरों पर होता है। एकीकरण का स्तर आर्थिक नीतियों का एकीकरण, सूचना संचार, प्रौद्योगिकी का स्तर तथा इसके साथ ही उत्पादन तकनीकों का प्रयोग एवं उनका हस्तांतरण के स्तर पर होता है। आज संचार क्रांति के फलस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को पूरे विश्व से जुड़ा हुआ महसूस कर रहा है। भूमण्डलीकरण का उच्च स्वरूप हमें वैश्विक गाँव की अवधारणा को साकार करने में निहित है। किसी भी देश की अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था से जोड़ने की क्रिया ही 'विश्वव्यापीकरण या भूमण्डलीकरण' है। अत: भूमण्डलीकरण के फलस्वरूप विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाओं ने एक बाजार का रूप ग्रहण कर लिया है।

सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार के रूप में देखना, जिसमें कि सभी राष्ट्र, प्रेम व सहयोग के साथ रह रहे हैं। भूमण्डलीकरण किसी प्रकार की भावना को व्यक्ति नहीं करता है। भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया सारे विश्व को मात्र एक बाजार के रूप में देखती है।

भूमण्डलीकरण के इतिहास पर ध्यान देने पर हम पाते हैं कि क्रमिक तेल संकट, बाजार व्यवस्था का बढ़ता असंतुलन, औद्योगिक देशों की विकास दर में ह्रास, पश्चिमी देशों की संसाधनों की जरूरत, इन देशों के आर्थिक संकट तथा उनमें आए प्रगतिरोध के परिणाम स्वरूप नब्बे के दशक में भूमण्डलीकरण की शुरूआत हुई तथा अमरीकी वर्चस्व में इसका विकास हुआ।

विश्व के विकसित राष्ट्रों ने एकमत होकर तीसरी दुनिया के अल्पविकसित एवं विकासशील राष्ट्रों को बाजार में आने के लिए इन राष्ट्रों को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा में आने हेतु प्रोत्साहित किया जिसके परिणामस्वरूप भारत ने भी भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया को अपनाया। भूमण्डलीकरण हमेशा विकसित देशों को अपना हित साधने में सहायक रहा है।

शोध का उद्देश्य एवं प्रविधि – 1991 में भारत में अपनाई गई उदारीकरण, वैश्वीकरण, भूमण्डलीकरण की नीति का देश पर क्या प्रभाव पड़ रहा है यह ज्ञात करना शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य है एवं शोध पत्र में प्रकाशित द्वितीय समंको का प्रयोग किया गया है।

आर्थिक वैश्वीकरण एवं भारत – भारत में वर्ष 1991–92 में प्रारम्भ किए गए आर्थिक सुधारों तथा उदारीकरण की नीतियों का एक प्रमुख घटक 'भूमण्डलीकरण' रहा है। सन् 1991 में भारत का आर्थिक संकट जग जाहिर है। इस अवधि के मध्य भारत को अपनी आर्थिक स्थिति को बनाये रखने के लिए अपना सोना गिरवी रखना पड़ा था। अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं तथा विदेशी बैंकों ने भारत को ऋण देने से साफ इन्कार कर दिया था। तब तत्कालीन नाजुक परिस्थितियों में भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था को वैश्वीकरण से जोड़कर और उदारीकरण की नीति अपनाकर एक अत्यन्त ही साहसपूर्ण कदम उठाया था। पिछले एक दो दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था का तीव्रगति से विकास भूमण्डलीकरण से जुड़ने की प्रक्रिया का ही परिणाम है। भारत में तीव्र आर्थिक विकास का एक प्रमुख कारण वैश्वीकरण भी है। वैश्वीकरण को प्रोत्साहित करने के लिए विदेशी निवेशकों को देश में आकर्षित करने के लिए उन्हें अनेक प्रकार की रियायतें तथा सुविधाएं देना, घरेलू एवं विदेशी निवेशकों के साथ समान व्यवहार करना, पूँजी तथा श्रम सेवाओं एवं वस्तुओं के आयात–निर्यात पर किसी भी प्रकार का प्रतिबंध न लगाना, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का विस्तार, वायु परिवहन का विस्तार, शिक्षा, चिकित्सा तथा पर्यटन के लिए सभी प्रकार की बाधाओं को समाप्त करना तथा करारोपण की नीतियों को उदार बनाना आदि। इन्हीं सब सुविधाओं के परिणामस्वरूप आज भारत शेष विश्व के साथ काफी बड़ी सीमा तक जुड़ सका है।

भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया से जुड़ने के फलस्वरूप अगस्त 1991 से लेकर 8 अगस्त 2014 तक की अवधि में भारत को कुल 319.35 बिलियन अमरीकी डॉलर विदेशी प्रत्यक्ष निवेश प्राप्त हुआ है। आयात निर्यात में सतत् रूप से उच्च वृद्धि से बढ़े हैं। सूचना एवं संचार क्षेत्र, प्रौद्योगिकी क्षेत्र, ऑटोमोबाइल क्षेत्र आदि में असधारण रूप से उन्नति हुई है एवं इनका विस्तार हुआ है।

भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया से जुड़ने के फलस्वरूप भारत के लाखों लोग विश्व के विभिन्न देशों में कार्यरत हैं। इससे भारतीय संस्कृति एवं विचारों का देश–विदेश में प्रसार हुआ है।

आर्थिक वैश्वीकरण का राष्ट्रीय एकता पर प्रभाव – आर्थिक भूमण्डलीकरण के परिणामस्वरूप आर्थिक नीतियों के निर्धारण में राष्ट्रीय सम्प्रभुता खत्म हो जाती है और आर्थिक दृष्टि से राष्ट्रों की सम्प्रभुता पर अन्तर्राष्ट्रीय नियन्त्रण अथवा वैश्विक नियन्त्रण स्थापित हो जाता है। दूसरे शब्दों में भूमण्डलीकरण अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत बाजार व उत्पादन दोनों ही वैश्विक हो जाते हैं। अत: घरेलू नीतियों का निर्माण करते समय चाहे वे निजी प्रतिष्ठानों से सम्बन्धित हो या सम्प्रभु राज्यों से बहुलांश में राष्ट्रीयोत्तर निर्धारकों का ध्यान रखना पड़ता है। साथ ही भूमण्डलीकृत अर्थव्यवस्था में वित्त का निवेश केवल बाजार की शक्तियों से निर्धारित होता है। राष्ट्रीय मौद्रिक नीतियों का ध्याना रखना कोई आवश्यक नहीं होता है।

अत: आर्थिक भूमण्डलीकरण के राष्ट्रीय सम्प्रभुता पर प्रभावों का उल्लेख निम्नलिखित रूपों में किया जा सकता है।

1. आर्थिक भूमण्डलीकरण ने आर्थिक अवसरों का सृजन तो किया लेकिन जो विकासशील देश यथाशीघ्र विकसित होने की लालसा में भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में शामिल हुए उन्हें बेरोजगारी व पिछड़ेपन जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ब्यावरा, जिला राजगढ़ (म.प्र.) भारत

2. भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया पर आधारित अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विकासशील और पिछड़े देशों की सरकारों पर विकसित और शक्तिशाली देशों द्वारा लगातार दबाव डाला जाता रहा है कि वे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर से सभी प्रकार के प्रतिबन्ध हटा लें तथा अपने घरेलू उत्पादकों को दिए जा रहे सभी प्रकार के संरक्षण को समाप्त कर दें। ऐसा किए जाने से अति उत्पादन की समस्या से ग्रसित विकसित बाजारों के निर्मित उत्पादों का बाजार प्राप्त हो जाएगें तथा विश्व के विकासशील देशों में उपलब्ध सस्ते श्रम से वे अपनी लागतें कम करके उत्पादन पर अपना लाभ बढ़ा सकेगें।
3. आर्थिक भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर से सभी प्रकार के गैर-प्रतिबन्धों को समाप्त करना और सीमा शुल्कों की दरों में कमी करके उसे भी वैश्विक स्तर पर शामिल करना है। इस स्थिति के होने से विकासशील व निर्धन देशों की सरकार के राजस्व में कमी होती है जिसके परिणामस्वरूप सरकार के पास संसाधनों की कमी होती जाती है और आयात में वृद्धि के परिणामस्वरूप देश की बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का भण्डार देश के बाहर जाने लगता है तथा अन्ततः इस स्थिति का लाभ विकसित देशों को ही होता है।
4. आज विकासशील व गरीब देश जिन कृषि उत्पादों का निर्यात करते हैं जिसके कारण इन देशों का व्यापार संतुलन असंतुलित रहता है। और ये आर्थिक दृष्टि से और कमजोर हो जाते हैं। तथा फिर इन्हें विकसित राष्ट्रों से सहायता लेनी पड़ती है तथा इस प्रकार वैश्वीकरण विकसित व विकासशील राष्ट्रों हेतु एक मजदूरी या विकसित देशों की स्वार्थ पूर्ति का साधन बन जाते हैं।

आर्थिक वैश्वीकरण के दुष्परिणाम अथवा कमियां –

1. पूंजी का अभाव – विकासशील व गरीब देशों के व्यापारियों के पास पूंजी की पर्याप्ता नहीं होती है तथा पूंजी प्राप्ति हेतु उन्हें कई प्रकार के ऋण व आर्थिक सहायता प्राप्त करनी पड़ती है।

2. श्रमिकों द्वारा विरोध – विकासशील देशों व गरीब देशों में श्रमिकों को आधुनिकीकरण से डर लगता है तथा उनका मानना है कि मशीनों के आभाव के कारण वे बेरोजगार हो जाएगें तथा वे आधुनिकीकरण का विरोध करते हैं।

वैश्वीकरण के लाभ –

1. यह विकासशील व गरीब देशों में विकसित देशों द्वारा निवेश करने के मार्ग खोलता है।
2. कहीं पर भी निवेश करने की सुविधा का लाभ मिलना।
3. पूरे विश्व में कहीं पर भी व्यापार करने की सुविधा प्राप्त होना।

वर्ष 1990-91 में भारत का निर्यात 18.1 बिलियन अमरीकी डॉलर था जो कि वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप बढ़कर करीब 53 बिलियन डॉलर हो गया है। इसके साथ ही वर्ष 2002-03 में 4137 मिलियन अमरीकी डॉलर का अतिरेक भारत के खाते में था।

वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप भारत की भुगतान शेष की स्थिति भी मजबूत हुई है। जहां वर्ष 1990-91 में विदेशी विनिमस रिजर्व में 1.28 बिलियन डॉलर की कमी दर्ज की गई थी वहीं वर्ष 2001-02 में 11.76 बिलियन डॉलर की बढ़ोतरी दर्ज की गई।

31 जनवरी 2003 को भारत का विदेशी विनिमय भण्डार 73.58 बिलियन डॉलर था तथा जनवरी 16, 2004 को भारत का विदेशी विनिमय भण्डार 103.1 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुंच गया था। 11 जुलाई 2014 को भारत का विदेशी विनिमय भण्डार 317.03 बिलियन डॉलर हो गया था। रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया

वैश्वीकरण – चुनौतियां एवं अवसर – 2002 के अन्तर्राष्ट्रीय विवेचन में भूमण्डलीकरण के बुरे प्रभाव ही छाए रहे। 1980 से भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया को लागू करने के बाद निर्धनता तथा असमानता क संकेतों की जांच करने पर निम्न 5 प्रवृत्तियां सामने आती हैं –

1. निर्धन देशों के आर्थिक विकास की गति में तीव्रता।
2. विश्व में निर्धनों की संख्या में कमी।
3. विश्व असमानता में मामूली कमी।
4. देशों के मध्य अधिक असमानता की कोई सामान्य प्रवृत्ति नहीं।
5. विश्व में अधिक असमान मजदूरी की दर।

इन निष्कर्षों पर लोगों ने ऐसा कहकर प्रश्न चिन्ह लगाया है कि चालू आंकड़े इतने दोषपूर्ण हैं कि इनके आधार पर निर्धनता की प्रवृत्ति के संबंध में कोई ठोस अनुमान नहीं लगाए जा सकते हैं।

भूमण्डलीकरण का उद्देश्य वस्तुओं तथा सेवाओं के साथ-साथ श्रमिकों का उन्मुख प्रवाह भी है। यह भी स्वीकार किया जाने लगा है कि भूमण्डलीकरण से पूरा लाभ प्राप्त करने के लिए षोषण क्षमता में वृद्धि की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यावसायिक पर्यावरण – डॉ. एस.के. सिंह, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
2. प्रतियोगिता दर्पण – सितम्बर 2010
3. व्यावसायिक वातावरण – जी. उपाध्याय, आर.एल. शर्मा, पी. दयाल, रमेश बुक डिपो जयपुर
4. अन्तर्राष्ट्रीय विपणन – कोठारी, जैन, रमेश बुक डिपो,जयपुर
5. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एवं वित्त – बी.एल. ओझा, रमेश बुक डिपो, जयपुर
6. Weekly statistical supplement – Reserve Bank of India India's Central Bank www.sbi.org.in

Foreign Exchange Reserve in India (As on August 8, 2014)

Item	As on Aug. 8, 2014		Variation over					
	Bn.	US $ Mn.	Week		End March 2014		Year	
	I	2	Bn.	US $ Mn.	Bn.	US $ Mn.	Bn.	US $ Mn.
Total Reserve	19656.2	319,347.2	147.3	643.3	1372.4	15124.0	2629.5	40745.5
1. Foreign Currency Assets	18003.4	292046.5	142.7	646.7	1394.3	15687.2	2642.2	40697.1
2. Gold	1275.6	21173.8	-	-	-20.6	-393.0	7.7	426.8
3. SDRs	272.4	4424.6	3.3	2.5	4.1	-39.0	3.6	26.4
4. Reserve Position in the IMF	104.8	1702.3	1.3	0.9	-5.4	-131.2	-24.0	-404.8

समूह -वर्तमान प्रबन्धन की महती आवश्यकता

डॉ. दिनेश कुमार चौधरी *

शोध सारांश – समूह असंगठित भीड़ नहीं होते है इसकी अपनी संरचना होती है। इसके आधार पर समूह सदस्यों के व्यवहार बनते बदलते रहते है। शोध पत्रानुसार जिस व्यक्ति में समूह के कार्य करने की योग्यता अधिक होती है वह समूह की प्रबन्धकीय गतिविधियों में अधिक सक्रिय रूप से हिस्सा लेता है। सामान्य तथा प्रबन्ध में उसका योगदान अधिक होता है और वह समूह का नेतृत्व करता है। समूह आज के प्रबन्धन की महती आवश्यकता बनती जा रही है। आप्रबन्धन समूह नेतृत्व, भूमिका, भूमिका पहचान, भूमिका प्रत्यक्षीकरण, भूमिका समस्याएं समूह के मानदण्ड से प्रभावित होकर निरंतर कार्य कर रहा है।
शब्द कुंजी– मानवीय हित समूह, समूह संरचना, समूह प्रक्रिया, गुट।

प्रस्तावना – मनुष्य ने जब से परिवार में रहना शुरू किया तभी से छोटे समूह अस्तित्व में रहे हैं। तथापि संगठनात्मक व्यवहार के अध्ययन में छोटे समूह विषय का समावेश हाल ही में हुआ है। छोटे समूह में महत्वपूर्ण इकाइयां हैं जिनसे संगठनों और समाजों का रूप गठन होता है। वे सामाजिकीकरण के अनिवार्य तंत्र तथा सामाजिक व्यवस्था के प्राथमिक स्त्रोत होते हैं। वास्तव में आधुनिक संगठनों में मानवीय समूह एक प्रबल शक्ति तथा व्यापक सच्चाई है। जब प्रबंधक मानवीय समूहों तथा समूह व्यवहार की क्षमताओं को समझ लेंगे तो वे समूह सदस्यों तथा संगठन के पारस्परिक हितों के लिये कर सकने में समर्थ हो जाएंगे।

शोध उद्देश्य –

- समूह क्या है, यह कैसे काम करता है, इसका निर्माण कैसा होता है।
- प्रबन्धन में समूह की महत्वता क्या है ?
- समूह का अर्थ बता सके तथा विभिन्न समूहों का वर्गीकरण कर सके।
- समूह – व्यवहार को जान सके।
- भीड़ और समूह में अंतर स्पष्ट करना।
- औपचारिक समूह एवं अनौपचारिक समूह क्या है।
- सामूहिक निर्णय की प्रक्रिया का विहंगावलोकन कर सके।
- समूह प्रभावशीलता को समझ सके।
- समूह और टीम में अंतर कर सके।

परिकल्पना –

- किसी निर्णय में समूह सकारात्मक एवं नकारात्मक निर्णय उत्पन्न कर सकता है।
- समूह क्रियाशील एवं प्रगतिशील होता है
  समूह प्रबन्धन को प्रबंधन में मदद करते है
- समूह के प्रत्येक सदस्य का व्यवहार अलग–अलग होता है।
- समूह उद्योगों की कार्यक्षमता बढ़ाने में सहायक होते है।

शोध विधि – इस शोध पत्र में प्राथमिक समंक के लिये स्वसहायता समूह से प्रश्नावली भरवाकर आंकड़ों का संग्रहण किया गया है। शोध प्रविधि में व्यक्तिगत अनुसंधान विधि एवं मौखिक अनुसंधान विधि प्रत्यक्ष साक्षात्कार विधि को भी शामिल किया गया है। शेष आंकड़े मैगजीन एवं पत्र पत्रिकाओं से लिये गये है।

समूह क्या है ? –मौटे तोर पर समूह ऐसे व्यक्तियों का सामूहिक रूप है जिनमें पारस्परिक आश्रितता का संबंध होता है। समूह की एक मोटी सी परिभाषा इस प्रकार हो सकती है – 'आपस में व्यवहार करने वाले दो से अधिक व्यक्तियों का समूह जहां उनमें संबंधों का एक स्थिर स्वरूप होता है, एक समान लक्ष्य में उनकी भागीदारी होती है तथा वे अपने आपको एक समूह में बंधे हुए मान रहे होते हैं।'

बेल्स के शब्दों में – 'बैठक में यूं ही आमने सामने बैठकर एक दूसरे के साथ विचारों का आदान प्रदान करने वाले कुछेक व्यक्तियों की किसी संख्या को हम एक छोटे समूह के रूप में परिभाषिक कर सकते हैं, जिनमें प्रत्येक सदस्य दूसरे प्रत्येक सदस्य के दृष्टिकोण या उनकी अवधारणा को इतने स्पष्ट प्रकार से ग्रहण कर सकता है ताकि एक व्यक्ति के रूप में वह उसी समय या तदनन्तर प्रश्नों के समय प्रत्येक के प्रति कुछ प्रतिक्रिया व्यक्त कर सके

समूह के प्रकार –

1. **औपचारिक तथा** 2. **अनौपचारिक समूह**

संगठनात्मक व्यवहार की दृष्टि से मूलत: दो प्रकार के समूह होते है – औपचारिक समूह तथा अनौपचारिक समूह।

औपचारिक समूह – कोई समूह तब औपचारिक हो जाता है तब किसी संगठन में यह किसी विशिष्ट मकसद या कार्य को लेकर गठित होता है। खुद संगठन ही इनके गठन के लिये जिम्मेदार होते है। औपचारिक समूह ऐसे कर्मचारियों के समूह है जिनसे संगठन कार्य के भली भांति, सुचारू रूप से तथा पूर्ण क्षमता के अनुरूप संचालन हेतु एक स्थान पर एक साथ मिलकर कार्य करता है। उदाहरणार्थ, यदि किसी अनुभाग में ग्राहक शिकायतों को सुनने के लिये एक साथ पांच व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता है, तो उनका एक औपचारिक समूह गठित हो जाता है। किसी विभाग में एक साथ रह रहे समूहबद्ध सदस्यों को भी जिन्हें कोई कार्य दायित्व सौंपा गया है, एक औपचारिक समूह कहा जा सकता है।

अनौपचारिक समूह – आमतौर पर औपचारिक समूह के सदस्यों से अनौपचारिक समूह गठित हो जाता है। विभिन्न औपचारिक समूहों के साझा हित रखने वाले सदस्य स्वयं को अनौपचारिक समूह के सदस्यों में परिवर्तित कर लेते हैं। ये समूह स्वत: स्फूर्त होते हैं तथा ये बिल्कुल अनौपचारिक प्रकृति के होते हैं। ये आधिकारिक तौर पर मान्यता प्राप्त समूह नहीं होते हैं। फिर भी

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

ये औपचारिक समूह के समतुल्य ही अपितु कभी-कभी तो उससे भी अधिक महत्वपूर्ण होते हैं।

अनौपचारिक समूह तीन प्रकार के होते हैं : समतुल्य गुट, ऊर्ध्वाधर गुट और यदृच्छ (बेतरतीब) गुट। समतुल्य गुट में एक ही कार्यक्षेत्र के समान पद पर आसीन लोग शामिल होते हैं। ऊर्ध्वाधर गुट एक ही विभाग के भीतर कार्मिक तंत्र के विभिन्न स्तर के लोगों का होता है। यदृच्छ गुट में विभिन्न विभागों, स्थानों तथा कार्मिक तंत्र के विभिन्न पदानुक्रम के लोग सम्मिलित होते हैं

समूह व्यवहार – व्यक्ति पारस्परिक क्रियाएं समूह सदस्यों के बीच आमने-सामने हो रहे व्यवहार होते हैं चाहे ये अपने कार्य समूह में हो या अपने संगठन में अन्य समूहों के सदस्यों के साथ हों पारस्परिक क्रियाओं के अंतर्गत सदस्योंबीच सूचनाओं में साझेदारी व सूचनाओं का आदान-प्रदान होता है तथा इसमें सदस्यों के बीच मौखिक और अ-मौखिक दोनों ही प्रकार के विचार-विनिमय शामिल होते हैं। वांछित पारस्परिक क्रियाओं में केवल कार्यनिष्पादन से संबंधित विचार विनिमय की अपेक्षा रखी जाती है जबकि आपातिक गतिविधियों में इससे भी आगे बढ़कर कर्मचारियों के सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन से संबंधित सूचनाओं के आदान-प्रदान भी शामिल हैं।

मनोभावों में समूह सदस्यों की अपनी अनुभूतियां, प्रवृत्तियां तथा उनके द्वारा मान्यता प्राप्त मूल्य शामिल हैं। संगठनात्मक प्रणाली के अ-वैयक्तिक पक्ष में कार्य के सम्पन्न किये जाने संबंधी चिन्ता के अतिरिक्त किसी अन्य मनोभावों की आवश्यकता नहीं पड़ती है, किन्तु समूह सदस्यों की आकर्षण व विकर्षण की अनुभूतियां, पंसदगी व नापसंदगी की प्रवृत्तियां, सन्तुष्टि व असन्तोष एवं क्या सही या क्या गलत है इसके लिए उनके विश्वास व मूल्य उनके आकस्मिक मनोभावों में झलकते हैं।

निष्कर्ष – समूह असंगठित भीड़ नहीं होते है इसकी अपनी संरचना होती है। इसके आधार पर समूह सदस्यों के व्यवहार बनते बदलते रहते है। शोध पत्रानुसार जिस व्यक्ति में समूह के कार्य करने की योग्यता अधिक होती है वह समूह की प्रबन्धकीय गतिविधियों में अधिक सक्रिय रूप से हिस्सा लेता है। सामान्य तथा प्रबन्ध में उसका योगदान अधिक होता है और वह समूह का नेतृत्व करता है। समूह आज के प्रबन्धन की महती आवश्यकता बनती जा रही है। आप्रबन्धन समूह नेतृत्व, भूमिका, भूमिका पहचान, भूमिका प्रत्यक्षीकरण, भूमिका समस्याएं समूह के मानदण्ड से प्रभावित होकर निरंतर कार्य कर रहा है।

अत: यह कहा जा सकता है कि, समूह में रहकर ही प्रबन्ध कार्य कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रभात जीबी दि 3-डी कम्पीटेटिव स्पेस – मैनेजिंग इन दि न्यू इकोनॉमी टाटा मैक्ग्रा हिल, 1997
2. अग्रवाल एमएन.मुथैया- ए कैस स्टडीज एचआरएम 2002
3. पारीक यू और राव टी वी ऑक्सफोर्ड 1981
4. अल्रिच डेव, ए न्यू मैनेट फार हयूमन रिसोर्सेस 1998
5. योजना मासिक पत्रिका, 2002

****

जल संग्रह करने के प्रयास में पानी रोको अभियान का योगदान (थांदला ब्लॉक के संदर्भ में)

डॉ. सतीश माहेश्वरी * मोहनसिंह वारकेले **

प्रस्तावना– मानव जीवन को बनाये रखने के लिये मानव को प्राकृतिक रूप से जो तीन प्राथमिक तीन उपहार प्राप्त है वे हवा पानी ओर मिट्टी है। यहीं तीन चीजें है, जिस पर सम्पूर्ण सृष्टि की संरचना हुई है, या आधारित है ये तीनों एक दूसरे की पूरक है। इनमें से एक का भी अभाव दूसरे या तीसरे की उपयोगिता को सिद्ध नहीं सकता। महत्वपूर्ण बात यह है कि जीवन के लिये आधार की प्रारम्भिक एवं अन्तिम इकाई होने के साथ साथ कृत्रिम रूप से इसे बनाया नहीं जा सकता है। अत: यह आवश्यक हो जाता है कि इन तीनों को इनके मूलरूपों में बनाया रखा जा सके। हवा के रूप में वायु जहां प्राणवायु के रूप में उपयोग की जाती है वहीं पानी और मिट्टी के संयोग से वायु की उपस्थिति में शरीर को बनाये रखने के लिये अन्य संगठित अवयव प्राप्त होते है। मानव ने उपयोग की दृष्टि को ध्यान में न रखते हुए उपभोग के स्तर को इनका अत्यधिक दोहन या दुरूपयोग शुरू कर दिया जिसके कारण असामान्य वितरण या यह कहिए अपना मूल स्वभाव खोते चले गए। परिणाम स्वरूप वायुप्रदूषण मिट्टी की कम उर्वरक क्षमता भूमि पानी की अनिश्चितता, जलस्तर की कमी सामने आई।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। जिसके 75 फीसदी से अधिक जनसंख्या कृषि पर आधारित है। झाबुआ जिला विकास की ओर जा रहा है। विकसीत देशों की तुलना में भारत पिछड़े देशों में गिना जाता है। यहॉ पर 90 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासी है। यहां की भूमि पथरीली, ढ़लाऊ और उबड़ खाबड़ है। इसके बावजूद भी झाबुआ जिले की 80 से 90 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है।

ऐसे में कृषि पर जनसंख्या का काफी भार दिखाई देता है। अधिकतर वर्षा आधारित कृषि ही संभव हो पाती है। चूॅकि वर्षा भी विगत कई सालों से अपर्याप्त हो रही है, जिससे इस जिले को सूखे का सामना करना पड़ रहा है। इस स्थिति में पानी रोको अभियान कार्यक्रम की दृष्टि से सफल संचालन होना सैद्धान्तिक रूप से यह दर्शाता है, कि वर्षा पर निर्भरता कम हुई है, सरकारी ऑकड़े भी यही दर्शाते है। परन्तु यह जानना आवश्यक है कि इस अभियान से ग्रामीणों को कितना लाभ हुआ है

उद्देश्य–पानी रोको अभियान से पूर्व में किए गए प्रयास का अध्ययन करना है।

क्षेत्र एवं चुनाव – झाबुआ जिले की थॉदला ब्लॉक का किया जायेगा।

परिकल्पना – पानी रोको अभियान कार्यक्रम विभिन्न विभागों द्वारा संचालित हो रहा है।

राष्ट्रीय जलग्रहण के माध्यम से– राष्ट्रीय जलग्रहण शासकीय तौर पर पानी को रोकने एवं पानी की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये कार्यक्रम का संचालन करता है। यह कार्यक्रम पूर्णत: शासकीय होकर विभागीय कर्मचारियों द्वारा किया जाता है जिसमें मेढ़बंधन, पत्थरबंधक,रिसन तालाब, चारागाह विकास आदि के कार्य करवाये जाते है। इस कार्यक्रम का समय निर्धारित होता है चूॅकि यह कार्यक्रम पूर्णत: शासकीय और निर्धारित शासकीय मापदण्डों के आधार पर संचालित किया जाता है, इसलिये इस कार्यक्रम में जनसहभागिता प्राप्त करने की संभावना कम होती है और यह भी तय नहीं होता कि इस कार्यक्रम की पूर्णता के बाद कार्यक्रम का संचालन कौन करेगा। इसी बात को ध्यान में रखते हुए एक पांचवर्षीय कार्ययोजना के माध्यम से मिशन के रूप में जलग्रहण मिशन का रूप सामने आया।

राजीव गॉधी जलग्रहण मिशन के माध्यम से – जलग्रहण प्रबंध मिशन यूॅ तो राष्ट्रीय जलग्रहण के माध्यम से बहुत पहले से संचालित था परन्तु प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और संवर्द्धन अर्थात जल, जंगल और जमीन की सुरक्षा एवं सदुपयोग तय करने के लिये तथा इनका संरक्षण व संवर्द्धन करने के लिये राष्ट्रीय जलग्रहण, मिशन के रूप में, ग्रामीणों की जनसहभागिता के आधार पर झाबुआ जिले में 1995–1996 में आरम्भ किया गया, जिसे स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री राजीव गॉधी के नाम पर राजीव गॉधी जलग्रहण प्रबंध मिशन नाम रखा गया। राजीव गॉधी जलग्रहण प्रबंध मिशन को सुनिश्चित रोजगार योजना एवं सूखा उन्मुलन कार्यक्रम के माध्यम से वितपोषित कर चलाया गया। जिसमें पानी के एक निश्चित संग्रहालय क्षेत्र को ध्यान में रखकर इस प्रकार के कार्य किये जाते है, कि भूमि में नमी पैदा हो व पानी की गति को धीमाकर जमीन में उतारा जाए इस हेतु स्थानीय कमेटी तैयार कर जनसहभागिता प्राप्त करने के प्रयास किये जाते है।

कृषि विभाग के माध्यम से – कृषि विभाग बहुत लम्बे समय से कम खर्च एवं श्रम के लिये कृषि की तकनीकों में परिवर्तन करता रहा है। एवं समय–समय पर परीक्षणों के द्वारा मिट्टी की उर्वरक क्षमता पानी का अधिकतम सदुपयोग और कम पानी से पैदा किये जाने किये जाने वाली फसलों की पैदाइशियों को विच्छित करता रहता है, खासतौर पर पानी के मसलों पर जहां एक ओर नाडेफ के माध्यम से कम्पोस्ट खाद तैयार कर मिट्टी की उर्वरण क्षमता को बनाये रखने का प्रयास किया है, वही किसानों के द्वारा ली जाने वाली फसलों में परम्परागत बीज की जगह शंकर बीजों का विकास कर अधिक उत्पादन तथा बुॅद–बुॅद सिंचाई एवं स्प्रिन्कलर सिंचाई पद्धति को लागू किया। थांदला ब्लॉक में अब तक 500 के लगभग नाडेफ तैयारकर रासायनिक खाद के उपयोग किया ओर भूमि की उर्वरण क्षमता को बनाये रखा। गौबरगैस के माध्यम से वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोत को विकसित किया गया, वहीं स्प्रिन्कलर पद्धति के करीब 150 सेट लगवाये गये। ये सभी कार्यक्रम 50 से 90 तक के थे। परन्तु प्रथम दृष्टि से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि कृषि के क्षेत्रफल को ध्यान में रखते हुए ये प्रयास न्यूनतम है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

आवश्यकता है, इन कार्यक्रमों के प्रचार की जिसमें जनता को भागीदार बनाया जा सके।

वन विभाग के माध्यम से – वन विभाग जहां एक ओर मुख्यत: वन संरक्षण के कार्य में संलग्न दिखायी देती है, वहीं वनों के विकास के लिये पौधों को नमी और संरक्षण पहुँचाने का कार्य करती है। इस रूप में विभागीय तौर पर वनों में कंटूर ट्रंच के माध्यम से पानी को जमीन में उतारकर नमी बढ़ाने का काम किया गया है, वहीं ढालू भूमि ओर मिट्टी के कटाव से बनी छोटी-छोटी नालियों में पत्थर बांध निर्मितकर पानी की गति को धीमा किया गया, और मिट्टी को रोका गया। यह कार्य पॉच वर्ष पूर्व शासकीय तौर पर किया जाता था, इसलिये इसकी जिम्मेदारी अधिकतर वन विभाग वाले देते ही थे परन्तु उपयोगिता के आधार पर कार्यक्रम से लोगों को जोडने के लिये और जनभागीदारी प्राप्त करने के लिये वन समितियों को कार्यभार सौपा गया। चूँकि गॉव के प्रत्येक सदस्य की सहभागिता प्राप्त की जा सके। इस हेतु गॉव के प्रत्येक परिवार को इसका सदस्य बनाया गया। अब संरचनाओं की देखभाल एवं वनों के सुरक्षा के लिये किये जाने वाले कार्य समिति के माध्यम से कराये जाने लगे जिसके सुखद परिणाम आए।

वन विभाग द्वारा वाटरशेड के अंतर्गत छोटे-छोटे नाले बंधान कार्य एवं छोटे-छोटे स्टॉपडेम का निर्माण किया गया। तथा ग्रामीणों की पानी की दुविधा को ध्यान में रखते हुए क्षेत्र के अंतर्गत पुराने कुओं की सफाई कार्य करवाया गया, एवं इन्हीं क्षेत्र के नये कुओं का निर्माण कार्य करवाया गया जिसमें ग्रामीणों को व मवेशियों को पानी उपलब्ध हो सके। साथ ही वन विभाग द्वारा वाटर योजना के अंतर्गत वृक्षारोपण का कार्य भी किया गया तथा मिट्टी के कटाव तथा व्यापारिक दृष्टि को ध्यान में रखते हुए रतनजोत के बीज का छिड़काव किया गया। जिसमें भू एवं जल संरक्षण की उपयोगिता का महत्व मिलता है। अब तक थांदला ब्लॉक में करीब 6000 से अधिक हेक्टेयर में भूमि एवं जलस्तर को बढ़ावा, वनों की संरक्षण एवं नमी को बढाना, वनों की संरक्षण एवं नमी का कार्य किया गया। जो वनसमितियों के द्वारा कराये जाने के कारण उपयोगी एवं लाभकारी सिद्ध हुआ है।

सिंचाई विभाग के माध्यम से – चूँकि भारत एक कृषि प्रधान देश है, इसमें सिंचाई विभाग का अपना एक विशेष योगदान रहता है। सिंचाई विभाग जहां एक ओर देश के विकास के लिए जलसंवर्द्धन से संबंधित जलविद्युत उत्पादन की योजनाओं के निर्माण का कार्य करता है, वहीं दूसरी ओर यह विभाग पानी रोकने के लिए भी कार्य करता है। चूँकि थांदला ब्लॉक पूर्णत: वर्षा ऋतु पर आश्रित है, ओर थांदला ब्लॉक में तीन साल से सूखे की चपेट में है, ओर यहां वर्षा के अभाव में नदी, नालों, तालाबों, स्टापडेमों और कुँओं का पानी सतत नीचे उतरता जा रहा है, इस हेतु सिंचाई विभाग द्वारा बनाये गये व बनाये जाने वाले वृहद् मध्यम व लघु सिंचाई परियोजनाओं व पानी रोको अभियान के द्वारा ही काफी कुछ हद तक जमीनी जल स्तर को ऊपर उठाया जा सकता है। सिंचाई विभाग कृषि क्षेत्र की फसल पैदावार में सिंचाई का रकबा बढ़ाकर विकास में अधिकांश मद्द देता है। ब्लॉक थांदला में सिंचाई विभाग की गतिविधियों में 38 योजनाये निर्मित है, जिनका रूपांकित क्षेत्रफल 3823 हेक्टयर है,एवं सिंचाई प्रतिशत 38.85 है पानी रोको अभियान के तहत स्टापडेम, निस्तार तालाब एवं नहर निर्माण का कार्य सिंचाई विभाग द्वारा करवाया गया।

निष्कर्ष – गॉव के सर्वाधिक लोग ग्रामसेवक से जुडे हुए है। इससे यह प्रतीत होता है कि ग्रामीण जन शासकीय योजना से लाभ लेने हेतु अग्रसर है। परन्तु क्षेत्र में सिंचित रकबा बहुत कम है, इससे यह निश्चित हो जाता है कि पानी रोको अभियान की महत्ता बहुत कम है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अनिल अग्रवाल व सुनिता नारायण, बूँदों की संस्कृति।
2. बूँद-बूँद पानी, जिला झाबुआ।
3. रेखा गिरी, लघुशोध प्रबंध वाटररोड़।

****

धार कृषि उपज मण्डी की वित्त व्यवस्था का अध्ययन

डॉ. सतीश माहेश्वरी * मोहनसिंह वारकेले * *

प्रस्तावना– हमारा देश एक कृषि आधारित देश हैं। कृषि देश की अर्थव्यवस्था व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। देश के आर्थिक विकास में कृषि की निर्णायक भूमिका रही है। वास्तव में कृषि हमारे देश में केवल जीविकोपार्जन का साधन या उद्योग धंधा ही नहीं, बल्कि अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। देश की विभिन्न योजनाओं की सफलता एवं राजनीतिक स्थायित्व भी कृषि पर ही निर्भर है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भी हम कृषि पर अपनी निर्भरता को कम करने में असफल रहे। आज देश की जनसंख्या कृषि से अपनी रोजी–रोटी कमाती हैं यह कितने दुर्भाग्य की बात हैं की कृषि प्रधान राष्ट्र भारत में कृषि और कृषक दोनों की हालत दयनीय हैं वास्तव में भारतीय कृषि में एक ऐसा कुचक्र चल रहा हैं जिसके परिणाम स्वरूप कृषि और कृषक दोनों की स्थिति में सुधार नहीं हो पा रहा हैं चूँकि कृषक की आर्थिक स्थिति दयनीय हैं इसलिय वह कृषि में आधुनिक पद्धतियों और उपकरणों का उपयोग करने में असमर्थ हैं। मध्यप्रदेश सरकार ने इस संबंध में सन् 1972 में मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डल अधिनियम पारित किया और उसमें यह प्रावधान पारित किया की एक निश्चित क्षेत्र में कृषि उपजों की खरीदी बिक्री की देखरेख करने के लिये एक मण्डी की स्थापना की जाए। जिसका संचालन लोकतांत्रिक तरीके से कृषकों एवं व्यापारियों के प्रतिनिधियों द्वारा किया जायेगा। इस अधिनियम में मण्डी के कार्य संचालन में स्पष्ट रूप से कृषक प्रतिनिधियों को विशेष महत्व दिया गया हैं। इन मण्डी क्षेत्रों में अधिनियम में दिये प्रावधानों के अनुसार ही कृषि उपजों का क्रय–विक्रय होता हैं प्रत्येक कृषक को इन मण्डियों के माध्यम से उनकी फसल का उचित मूल्य मिलता हैं और वह मध्यस्थों के शोषण से बच जाता हैं। पिछले वर्षो में कृषकों को अपनी उपज को मण्डी के माध्यम से बेचने की प्रवृत्ति का विकास हुआ हैं। और वर्तमान में लगभग प्रत्येक कृषक इसके महत्व को समझता हैं तथा इस बात का प्रयास करता हैं की जहाँ तक हो सके वह अपनी उपज को कृषि उपज मण्डी समिति के माध्यम से ही बेचे।

अध्ययन का उद्देश्य –मालवा क्षेत्र के बहुत किसान निर्धन हैं, किन्तु विगत कई वर्षों से किसानों का एक वर्ग सफलता की और तेजी से बढ़ रहा हैं इस परिवर्तन के मूल कारणों का पता लगाया जावे। राज्य शासन ने जिस उद्देश्य के लिए कृषि उपज मण्डियों की स्थापना की हैं, उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये वह कहाँ तक सफल रही हैं। कृषि उपज मण्डी समिति की आय एवं व्यय का अध्ययन कर यह सिद्ध करना की आय एवं व में क्या औचित्य।

परिकल्पना –कृषि उपज मण्डी की विपणन प्रक्रिया से वित्त की प्राप्ति हो रही है।

शोध पत्र प्रविधि –प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक समंकों को एकत्रित करने के लिए धार जिले की कृषि उपज मण्डी समिति की लेखा पुस्तकों से समंक लिये जायेगे व प्रकाशित पत्रिका, जर्नल, समाचार पत्र, दैनिक समाचार से समंकों का एकत्रीकरण किया गया है। और प्रयोग किया गया है।

कृषि उपज मण्डी की वित्त व्यवस्था–प्राचीनकाल में जब कृषि जीवन निर्वाह के आधार पर की जाती थी तब यह कहाँ जाता था कि एक अच्छे कृषक की एक आँख हल पर तथा दूसरी आँख बाजार पर रहती हैं लेकिन उन्नीसवीं शताब्दीं के मध्य भाग से जबकि यातायात एवं सन्देशवाहक के साधनों की चमत्कारिक उन्नति हो गई और इसके फलस्वरूप कृषि का व्यापारीकरण हो गया तब उक्त कथन ने निम्न रूप ग्रहण कर लिया कि एक अच्छे कृषक के दोनों हाथ हल पर और दोनों आँखे बाजार पर लगी रहती हैं। विपणन के अन्तर्गत उन सभी क्रियाओं को सम्मिलित किया जा सकता हैं, जिनके द्वारा उत्पादक या व्यापारी वस्तुओं व सेवाओं को उपभोक्ताओं एवं प्रयोक्ताओं तक पहुंचाने में प्रयोग करते हैं। वर्तमान में विपणन यही तक सीमित नहीं हैं।

कृषि उपज मण्डी समितियों को भी अन्य उद्योगों की भांति कार्य करने के लिए वित्त की आवश्यकता होती है। यहां यह स्पष्ट कर दिया जा रहा हैं कि मण्डियाँ कृषि उपज मण्डी अधिनियम के अनुसार कृषि उपज के क्रय–विक्रय के लिए प्रत्यक्ष रूप से भूमिका नहीं निभाती है, किन्तु फिर भी कृषकों एवं क्रेताओं की सुविधाओं का ध्यान रखते हुए उन्हें अधिकतम सुविधा प्रदान करने के लिए वित्त की आवश्यकता निरंतर रूप से होती है।

मण्डियों को वित्ति य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जिस वित्त की आवश्यकता होती है। इसकी प्राप्ति के स्त्रोतों को आंतरिक एवं बाह्य स्त्रोतों में विभक्त किया गया है। कृषि उपज मण्डी समिति अधिनियम के अनुसार मण्डी समिति को निम्नलिखित आंतरिक स्त्रोतों से आय प्राप्त हो सकती है। लाइसेंस या अनुज्ञप्ति शुल्क, मण्डी शुल्क, जमा पर ब्याज, किराया, मण्डी प्रांगण से प्राप्त आय, मण्डी समितियों की आय के कुछ और भी साधन होते हैं जैसे प्रतिभूति की राशि जब्त करना, दण्ड की राशि, आदि। मण्डी समिति में उपयोग न आने वाली स्थायी संपत्तियों को उच्च अधिकारियों की अनुमति से भी विक्रय किया जा सकता है। ऐसी अनुपयोगी स्थायी संम्पत्ति के विक्रय से भी मण्डी को आय होती है। मण्डी की आंतरिक वित्ता प्राप्ति के साधनों के अतिरिक्त कुछ बाह्य स्त्रोत भी होते है।

मण्डी समितियां भवन गोदाम आदि के निर्माण के लिए राज्य शासन या राज्य कृषि विपणन बोर्ड से आर्थिक सहायता प्राप्त कर सकती है। भवनों में वृद्धि करने, सुधार करने, प्रांगण में विकास कार्य करने एवं प्रबंध संबंधी व्ययों की पूर्ति हेतू तथा मण्डी के श्रेणीयन या अन्य इकाइयों को स्थापित करने हेतू वित्त की आवश्यकता होने पर समिति राज्य कृषि विपणन बोर्ड, अन्य मण्डी समिति या अन्य अभिकरणों से ऋण प्राप्त कर सकती है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
* * शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

कृषि उपज मण्डी समिति धार की आर्थिक स्थिति

क्र.	वर्ष	कुल आय रू. में	कुल व्यय रू.में	बचत रू. में
1	2006-2007	103824390	47822300	56002190
2	2007-2008	82629026	64757480	17871746
3	2008-2009	74051328	27241760	46809568
4	2009-2010	84464480	72597661	11866819
5	2010-2011	92136016	79327946	12808070

स्त्रोत-कृषि उपज मण्डी समिति धार के लेखों से।

इस मण्डी समिति को पिछले 5 वर्ष में प्राप्त आय उसके व्ययों से अधिक रही हैं। अर्थात सभी 5 वर्षो में बचत की ही स्थिति रही हैं। वर्ष 2006-2007 में सर्वाधिक बचत प्राप्त हुई हैं, इस वर्ष में इसकी कुल बचत 56002190 रूपये थी। वर्ष 2009-2010 में ही हुई हैं। इस वर्ष इसे मात्र 11866819 रूपये की बचत हुई हैं। समिति के आय-व्यय के आंकडों पर दृष्टिपाल करने से यह स्पष्ट होता हैं की समिति की आर्थिक स्थिति सुदृढ हैं, क्योंकि उसने विभिन्न स्त्रोतों से पर्याप्त मात्रा में आय अर्जित करके सुविधाओं के विस्तार में आवश्यक वृद्धि की हैं।

धार मण्डी में वर्ष 2006 से 2011 तक पांच वर्षो में विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त आय का कुल औसत प्रतिशत इस प्रकार है। मण्डी शुल्क 85.72 प्रतिशत, अन्य साधनों से प्राप्त आय का 14.19 प्रतिशत, लाइसेंस फीस का 0.09 प्रतिशत रहा है, इस मण्डी को सबसे अधिक आय मण्डी शुल्क से होती हैं एवं सबसे कम लायसेंस से होती है जो की नाम मात्र हैं।

मण्डी समिति को विभिन्न स्त्रोतों से जो आय होती हैं उन्हें कार्यालय भवन, मण्डी प्रांगण के विकास, कर्मचारियों के वेतन एवं भत्ते क्रेता विक्रेताओं को सुविधाएं प्रदान करने आदि मदों पर व्यय करती है। मण्डी समिति बोर्ड शुल्क के अलावा जो खर्च करती है। उसे इस मद के अंर्तगत रखा जाता हैं इसमें स्थापना व्यय, निर्माण कार्य पर व्यय, बैठकों में उपस्थित होने पर देय भत्ते, अतिथियों पर खर्च, लेखन सामाग्री कार्यालय के वाहनों पर पैट्रोल व्यय, सामाजिक दृष्टिकोण से प्याउ आदि का निर्माण एवं अन्य व्यय इस व्यय में शामिल होते है।

धार मण्डी में वर्ष 2006 से 2011 तक पांच वर्षो में विभिन्न व्यय का कुल औसत प्रतिशत इस प्रकार है। स्थापना व्यय 60.09 प्रतिशत, अन्य व्यय 31.08 प्रतिशत निर्माण व्यय 8.83 प्रतिशत रहा है।

मण्डी समितियों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलवाना होता हैं। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये मण्डी को अनेक आधारभूत सुविधाओं की व्यवस्था करनी होती हैं, जिनके लिये धन खर्च करना होता हैं। सुविधाओं को पूरा करने के लिये मण्डी समितियों द्वारा जो धन खर्च किया जाता हैं, उसकी पूर्ति के लिये समितियों को विभिन्न स्त्रोतों से आय प्राप्ति के अधिकार भी दिये गये हैं। मण्डी का व्यवहार विवेकपूर्ण तभी माना जायेगा, जबकि आय की तुलना में उसके व्यय कम हो अर्थात समितियों को बचतों की ही प्राप्ति होना चाहिये। बचतों की मात्रा ही उनकी आर्थिक समितियों को बचतों की प्राप्ति होना चाहिये। बचतों की मात्रा ही उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढता या कमजोरी को प्रदर्शित करती हैं। मण्डी समिति की श्रेणी निर्धारित करने के लिये यह देखा जाता हैं कि पिछले तीन वर्षो में उसकी कुल आय का औसत क्या रहा हैं। यदि कुल आय का औसत 7 लाख रूपये से अधिक हैं, तो उस मण्डी को 'अ' श्रेणी प्रदान की जाती हैं। यदि कुल आय का औसत 7 लाख रूपये से कम रही हैं, तो उस मण्डी को 'ब' श्रेणी प्रदान की जाती हैं। यदि कुल आय का औसत 3 लाख रूपये से कम रही हैं, तो उस मण्डी को 'सी' श्रेणी प्रदान की जाती हैं। तालिका से स्पष्ट हैं कि धार मण्डी समिति को पिछले 3 वर्षो में प्राप्त आय का औसत 7.00 लाख रूपये से अधिक हैं, इसलिये इन्हें 'अ' श्रेणी प्रदान की गयी हैं।

परिकल्पना की कसौटी -प्रस्तुत शोध पत्र की परिकल्पना 'कृषि उपज मण्डी की विपणन प्रक्रिया से वित्त की प्राप्ति हो रही है।' मण्डियों को वित्तिय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतू जिस वित्त की आवश्यकता होती है। इसकी प्राप्ति के स्त्रोतों को आंतरिक एवं बाह्य स्त्रोतों में विभक्त किया गया है। जिससे की मण्डी समिति को वित्त की प्राप्ती हो रही इसी लिये मण्डी को व्यय की तुलना में आय अधिक हो रही है।

निष्कर्ष -मण्डी समितियों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलवाना होता हैं। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये मण्डी को अनेक आधारभूत सुविधाओं की व्यवस्था करनी होती हैं, जिनके लिये धन खर्च करना होता हैं। सुविधाओं को पूरा करने के लिये मण्डी समितियों द्वारा जो धन खर्च किया जाता हैं, उसकी पूर्ति के लिये समितियों को विभिन्न स्त्रोतों से आय प्राप्ति के अधिकार भी दिये गये हैं। मण्डी का व्यवहार विवेकपूर्ण तभी माना जायेगा, जबकि आय की तुलना में उसके व्यय कम हो अर्थात समितियों को बचतों की ही प्राप्ति होना चाहिये। बचतों की मात्रा ही उनकी आर्थिक समितियों को बचतों की प्राप्ति होना चाहिये। बचतों की मात्रा ही उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढता या कमजोरी को प्रदर्शित करती हैं। जहाँ तक मैंने जानकारी एकत्रित की हैं मैं इस बात से पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हूँ कि मण्डी समिति अपने इस लक्ष्य को प्राप्त करने में काफी हद तक सफल रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्र, जयप्रकाश, (2004),'कृषि अर्थशास्त्र' साहित्य भवन पब्लिकेशंस, आगरा।
2. केडियाँ, ओंकार, (2003), कृषि विकास की कुँजी; योजना, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पटियाला हाउस,नई दिल्ली।
3. यादव, सत्यभान, (2001), 'कृषि विपणन प्रभावी व्यवस्था की आवश्यक्ता', कुरूक्षेत्र, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पटियाला हाउस,नई दिल्ली।
4. जैन, हेमचन्द्र, (1976), 'कृषि वित्त सिद्धांत एवं व्यवहार',मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

****

कृषि उपज मण्डी समिति बदनावर का आय-व्यय (एक विश्लेषणात्मक अध्ययन)

डॉ. सतीश माहेश्वरी * प्रो. मोहन सिंह वास्केले **

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है, देश की अधिंकाश जनसंख्या गाँवों में निवास करती है। एवं कृषि कार्य ही उनका मुख्य व्यवसाय है। हमारे देश के कई उद्योग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप सें कृषि पर निर्भर है। भारतीय कृषक एक कठोर परिश्रमी के रूप में जाने जाते है। जो कड़ी मेहनत और खून पसीना बहाकर देश के लिए खाद्यान्नों एवं अन्य कृषि उपजों का उत्पादन करते है। आज हमारे देश के कृषि उत्पादों की मांग अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कि जाने लगी है। और इन सब बातों का श्रेय जाता है हमारे देश के मेहनतकश किसानों को इसलिए सभी सरकारो चाहे वह केन्द्र सरकार हो या राज्य सरकार उनका दायित्व हो जाता है कि कृषकों को उनके द्वारा उपजाऐ गये कृषि उत्पादों का सही समय पर बगैर किसी समस्या के उचित दाम प्राप्त हो सके। ताकि कृषकों को भी कृषि कार्य करने में गर्व हो। राज्य सरकारों द्वारा कृषि उत्पादों के क्रय-विक्रय हेतु कृषि उपज मण्डियों का गठन किया गया है। जो हमारे प्रदेश में भी अपना कार्य कर रही हैं इसी जिज्ञासा के समाधान हेतु बदनावर कृषि उपज मण्डी की आय-व्यय विपणन प्रक्रिया का अध्ययन करना है।

उद्देश्य एवं औचित्य–मण्डी के आय-व्यय के विश्लेषण के आधार पर विपणन प्रक्रिया का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ–कृषि उपज मण्डी बदनावर की विपणन प्रक्रिया जटील है।

शोध विधि–आय-व्यय, निमार्ण व्यय, गत वर्षो की आवक आदि से संबंधित समंक जो कि मण्डी द्वारा तैयार किये गये है। ये द्वितीय समंक माने गये हैं।

शोध क्षेत्र एवं सीमाएँ–शोध का अध्ययन क्षेत्र बदनावर तहसील की कृषि मण्डी तक ही सीमित रखा गया है।

वित्त प्राप्ति के स्त्रोत मण्डियों को वित्तिय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जिस वित्त की आवश्यकता होती है। इसकी प्राप्ति के स्त्रोतों को आंतरिक एवं बाह्य स्त्रोतों में विभक्त किया गया है। इनका बिन्दुवार वर्णन निम्न प्रकार किया गया है।

आन्तरिक स्त्रोत कृषि उपज मण्डी समिति अधिनियम के अनुसार मण्डी समिति को निम्नलिखित आंतरिक स्त्रोतों से आय प्राप्त हो सकती है।

लाइसेंस या अनुज्ञप्ति शुल्क मण्डी समिति को मण्डी में क्रय-विक्रय करने वाले प्रत्येक व्यक्ति से लाइसेंस शुल्क के रूप में आय होती है। मण्डी समिति निर्धारित प्रक्रिया में किसी भी व्यक्ति द्वारा आवेदन करने पर लाइसेंस तभी जारी करती है जब उस व्यक्ति ने निर्धारित लायसेंस शुल्क जमा करवा दिया हो। व्यापारियों के अतिरिक्त तुलावटियों और हम्मालों को भी लाइसेंस लेना अनिवार्य है। अत: मण्डी समिति के लिए लाइसेंस शुल्क प्रमुख आंतरिक आय का स्त्रोत होती है।

मण्डी शुल्क मण्डी समिति अपने कार्यक्षेत्र में किये जाने वाले अधिसूचित कृषि उपजों पर व्यापारिक व्यवहारों पर मण्डी शुल्क वसूल करती है। बदनावर में यह शुल्क क्रेता से क्रय की गयी राशि पर 2 प्रतिशत की दर से लगता है। यह भी आय का प्रमुख आंतरिक स्त्रोत है।

जमा पर ब्याज प्राप्ति – मण्डी समिति द्वारा विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त आय को आवश्यक मदो पर खर्च कर देने के बाद यदि कोई राशि शेष रह जाती है तो मण्डी उसे किसी स्थानीय राष्ट्रीयकृत बैंको में जमा कर देती है। इस राशि पर प्रचलित दरों से निर्धारित ब्याज प्राप्त होता है।

किराया प्राप्ति – मण्डियाँ अपने व्यवसायिक क्षेत्र के अनुसार भवन निर्माण करती है। किन्तु कभी-कभी वे समितियां जिनके पास पर्याप्त कोष होता है। अतिरिक्त भवनों का निर्माण कर लेती है और इन्हें दुकान आदि के रूप में किराये पर देकर आय प्राप्त करती है।

मण्डी प्रांगण से प्राप्त आय–प्रत्येक मण्डी का अपना एक प्रांगण होता है, अतिरिक्त हिस्से में उगी हुई घास बेचने से आय होती है। परन्तु वर्तमान में संपूर्ण प्रांगण में कांक्रीट कार्य होने से उपरोक्त आय न के बराबर हो रही है।

अन्य साधन – मण्डी समितियों की आय के कुछ और भी साधन होते है जैसे प्रतिभूति की राशि जब्त करना, दण्ड की राशि आदि। मण्डी समिति में उपयोग न आने वाली स्थायी संपत्तियां को उच्च अधिकारियों की अनुमति से भी विक्रय किया जा सकता है। ऐसी अनुपयोगी स्थायी सम्पत्ति के विक्रय से भी मण्डी को आय होती है।

वित्त प्राप्ति के ब्राह्य स्त्रोत – मण्डी की आंतरिक वित्त प्राप्ति के साधनों के अतिरिक्त कुछ बाह्य स्त्रोत भी होते है। जिनका वर्णन इस प्रकार है –

आर्थिक सहायता – मण्डी समितियां भवन गोदाम आदि के निर्माण के लिए राज्य शासन या राज्य कृषि विपणन बोर्ड से आर्थिक सहायता प्राप्त कर सकती है। इसके अलावा मण्डी समिति को श्रेणीकरण के लिए आवश्यक उपकरणों के क्रय हेतू 1500/- रू. की आर्थिक सहायता और श्रेणीकरण करने वाले कर्मचारी को 1800/- रू. प्रति वर्ष के हिसाब से 3 वर्षो तक प्रदान कर सकती है।

ऋण – मण्डी समितियों को मण्डी के भवनों में वृद्धि करने, सुधार करने, प्रांगण में विकास कार्य करने एवं प्रबंध संबंधी व्ययो की पूर्ति हेतु तथा मण्डी के श्रेणीयन या अन्य इकाइयों को स्थापित करने हेतु वित्त की आवश्यकता होने पर समिति राज्य कृषि विपणन बोर्ड, अन्य मण्डी समिति, या अन्य अभिकरणों से ऋण प्राप्त कर सकती है। इसके लिए मण्डी समिति सामान्य सभा में एक प्रस्ताव पारित कर निर्धारित प्रारूप में संचालक के माध्यम से आवेदन प्रस्तुत कर सकती है। जिस ऋणदाता के सामने ऋण का प्रस्ताव

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, शासकीय महाविद्यालय, थाँदला (म.प्र.) भारत

रखा जाता है उसके संतुष्ट होने पर वह ऋण स्वीकृत कर देता है।

कृषि उपज मण्डी समिति बदनावर की कुल आय एक दृष्टि में (रू. में) (तालिका देखें अगले पृष्ठ पर)

मण्डी समिति बदनावर को प्राप्त विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त आय का लगभग 97.90 प्रतिशत भाग मण्डी शुल्क से प्राप्त होता है। वर्तमान में मण्डी शुल्क की दर 2 प्रतिशत जो राज्य सरकार द्वारा कम करने की घोषणा की जा चुकी है। अत: कुल आय में मण्डी शुल्क का अति महत्वपूर्ण स्थान है।

व्यय की विभिन्न मदें – मण्डी समिति को विभिन्न स्त्रोतों से जो आय होती है उन्हें कार्यालय भवन, मण्डी प्रांगण के विकास, कर्मचारियों के वेतन एवं भत्ते क्रेता विक्रेताओं को सुविधाए प्रदान करने आदि मदों पर व्यय करती है।

वेतन एवं भत्ते – नित्य कार्यों को सम्पादित करने के लिए एवं उसकी प्रशासनिक व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए मण्डी समिति में अनेक अधिकारी जैसे सचिव, सहसचिव एवं अन्य कर्मचारी जैसे मण्डी निरीक्षक, लेखापाल, लिपिक, भृत्य एवं चौकीदार की नियुक्ति करना पड़ती है। इस सभी को राज्य सरकार द्वारा निर्धारित वेतनमान के अनुसार वेतन व भत्तों का भूगतान किया जाता है।

बोर्ड शुल्क –राज्य कृषि विपणन बोर्ड को समिति द्वारा एक निश्चित दर से प्रतिवर्ष बोर्ड शुल्क का भुगतान करना पड़ता है। यह शुल्क इसलिए देना होता है कि बोर्ड समितियों को कई प्रकार की सेवाएं एवं सुविधाए प्रदान करता है।

विविध व्यय – मण्डी समिति बोर्ड शुल्क के अलावा जो खर्च करती है। उसे इस मद के अंतर्गत रखा जाता है इसमें स्थापना व्यय, निर्माण कार्य पर व्यय, बैठकों में उपस्थित होने पर देय भत्ते, अतिथियों पर खर्च, लेखन सामग्री कार्यालय के वाहनों पर पेट्रोल व्यय, सामाजिक दृष्टिकोण से प्याऊ आदि का निर्माण एवं अन्य व्यय इस व्यय में शामिल होते है।

कृषि उपज मण्डी समिति बदनावर की आर्थिक स्थिति – मण्डी समितियों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य दिलवाना होता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मण्डी समिति को अनेक आधारभूत सुविधाओं की व्यवस्था करनी होती है, जिनके लिए धन खर्च करना होता है। इस धन को विभिन्न स्त्रोतों से जुटाने के लिए मण्डी को अधिकार भी प्रदान किये गये है। परन्तु मण्डी का व्यवहार तभी विवेकपूर्ण माना जाएगा, जबकी इसके द्वारा आय की तुलना में व्यय कम किये गये है अर्थात मण्डियों को बचतों की प्राप्ति होना चाहिए। बचतों की मात्रा ही उनकी आर्थिक स्थिति की सुदृढ़ता या कमजोरी को प्रकट करती है। पिछले पांच वर्षों कि आर्थिक स्थिति को निम्नलिखित तालिका से दर्शाया गया है।

कृषि उपज मण्डी मण्डी समिति बदनावर की आर्थिक स्थिति (तालिका देखें अगले पृष्ठ पर)

तालिका से निम्नलिखित बातें स्पष्ट हैं

1. इस मण्डी समिति को पिछले 5 वर्ष में प्राप्त आय उसके व्ययों से अधिक रही हैं। अर्थात सभी 5 वर्षों में बचत की ही स्थिति रही हैं।
2. इस मण्डी को वर्ष 2013–2014 में सर्वाधिक बचत प्राप्त हुई हैं, इस वर्ष में इसकी कुल बचत 12832094 रूपये थी।
3. समिति को सबसे कम बचत वर्ष 2010–2011 में ही हुई हैं। इस वर्ष इसे मात्र 1157 रूपये की बचत हुई हैं।
4. समिति के आय–व्यय के आंकडों पर दृष्टिपाल करने से यह स्पष्ट होता हैं की समिति की आर्थिक स्थिति सुदृढ हैं, क्योंकि उसने विभिन्न स्त्रोतों से पर्याप्त मात्रा में आय अर्जित करके सुविधाओं के विस्तार में आवश्यक वृद्धि की हैं।
5. मण्डी समिति की श्रेणी निर्धारित करने के लिये यह देखा जाता हैं कि पिछले तीन वर्षों में उसकी कुल आय का औसत क्या रहा हैं। यदि कुल आय का औसत 7 लाख रूपये से अधिक हैं, तो उस मण्डी को अ श्रेणी प्रदान की जाती हैं। तालिका से स्पष्ट हैं कि मण्डी समिति को पिछले 3 वर्षों में प्राप्त आय का औसत 7.00 लाख रूपये से अधिक हैं, इसलिये इसे अ श्रेणी प्रदान की गयी हैं।

परिकल्पना की सैध्दान्तिक जांच – प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध की परिकल्पना 'कृषि उपज मण्डी समिति की विपणन प्रक्रिया जटील है'। विपणन के संदर्भ में इस मण्डी में अधिनियम के जो प्रावधान है उसके अनुसार कोई भी व्यक्ति किसी अधिसूचित कृषि उपज के संबंध में मण्डी क्षेत्र में व्यापारी, तुलावटी, हम्माल, संरक्षक, भण्डागारिक तथा अधिनियम के अधीन बनाये गये नियमों तथा उप विधियों के उपबन्धों के अनुसार ही करेगा अन्यथा नहीं। तात्पर्य यह है कि मण्डी क्षेत्र के अन्तर्गत केवल प्राधिकृत व्यक्ति ही क्रय विक्रय का कार्य कर सकते है और उन पर वे सभी नियम और उपनियम बंधनकारी होते है जो की उस क्षेत्र की मण्डी समितियों के द्वारा समय–समय पर निर्धारित किये जाते है। नियम एवं उपनियमों में बंधे होने के कारण मण्डी की विपणन प्रक्रिया जटील हो गई है इस प्रकार यह परिकल्पना पूर्ण रूप से सत्य है।

निष्कर्ष – जहां तक मैने जानकारी एकत्रित की है मैं इस बात से पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हूं कि मण्डी समिति अपने इस लक्ष्य को प्राप्त करने में काफी हद तक सफल रही है। यद्यपि विपणन की प्रक्रिया में अभी भी कुछ दोष क्रेता–विक्रेताओं द्वारा गिनाये जाते है, परन्तु जहां तक मेरा विचार है यह समिति उपलब्ध साधनों और वर्तमान के सामाजिक एवं राजनीतिक वातावरण में जो कुछ अपने सदस्यों के लिये कर सकती है, वह अवश्य कर रही है। फिर भी कुछ मामलों में मण्डी समिति के विरूद्ध ऐसी शिकायते कहने–सुनने को मिलती है जिन्हें वह अधिनियम के प्रावधानों के अन्तर्गत आसानी से हल कर सकती है। ऐसी शिकायत मुख्य रूप से समय पर भुगतान नहीं होने की है, जिसे जानबुझकर अनदेखा किया जा रहा है, इस संबंध में जब मैने प्रत्यक्ष रूप से सचिव से जानना चाहा तो उन्होनें इस संबंध में यह बताया की अभी तक किसी भी कृषक ने भुगतान के संबंध में कोई लिखित शिकायत आज तक नहीं की है।अत: स्पष्ट है कि कृषकों की यह शिकायत मौखिक रूप में तो सुनने को मिलती है, परन्तु लिखित रूप में न होने के कारण क्रेता व्यापारियों के विरूद्ध कार्यवाही नहीं की जा सकती है। समग्रत: इसके बावजूद भी मण्डी समिति की यह सबसे बड़ी उपलब्धि रही है की वह विक्रेताओं को इस बात के लिए प्रोत्साहित करने में सफल रही है कि वह अपनी कृषि उपजों का विक्रय मण्डी के माध्यम से करे। अत: मण्डी अधिनियम के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल सिद्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. म.प्र.कृषि उपज अधिनियम1972 के.एल.सेठी
2. विपणन प्रबंध,अग्रवाल एवं श्रीवास्तव
3. सहकारिता, बी.एस.माथुर
4. कृषि का अर्थशास्त्र, आर.एल.कोहेन
5. भारत में कृषि विपणन, प्रो.कुलकर्णि
6. म.प्र का आर्थिक विकास डॉ.व्ही.एल.राव.एवं एन.एस कोंडावार

शासकीय एवं अशासकीय प्रकाशन–

1. म.प्र.सरकारी संदेश ,धार
2. मण्डी समिति बदनावर के वार्षिक प्रतिवेदन
3. धार जिला सांख्यिकीय पुस्तिकाऐं।

कृषि उपज मण्डी समिति बदनावर की कुल आय एक दृष्टि में (रू. में)

क्रं.	वर्ष	मंडी शुल्क	लायसेंस फीस	अन्य आय	कुल आय
1.	2009-2010	63119147	21450	1340295	64480892
2.	2010-2011	74707695	96610	1955827	76760132
3.	2011-2012	80008575	13520	1731411	81753506
4.	2012-2013	101790825	17260	2111400	103919485
5.	2013-2014	145439517	79920	2594536	148113973
	कुल	465065759	228760	9733469	475027988
	औसत	97.90	0.05	2.05	

स्त्रोत-कृषि उपज मण्डी समिति बदनावर की लेखा पुस्तकों से

कृषि उपज मण्डी मण्डी समिति बदनावर की आर्थिक स्थिति

क्र.	वर्ष	कुल आय रू. में	कुल व्यय रू.में	बचत रू. में
1	2009-2010	64480892	61818152	2662740
2	2010-2011	76760132	76758975	1157
3	2011-2012	81753506	81645874	107632
4	2012-2013	103919485	101634637	2284848
5	2013-2014	148113973	135281879	12832094

स्त्रोत- कृषि उपज मण्डी समिति बदनावर के लेखों से।

****

भील जनजाति में सोने चांदी के आभूषणों का उपयोग एवं महत्व (म.प्र. की जनजाति के संदर्भ में)

डॉ. सतीश माहेश्वरी * तृप्ति माहेश्वरी * *

प्रस्तावना – आदिवासियों की मध्य परिधि के अन्तर्गत बैगा और मुरिया कबीलों के जीवन के चित्र प्रस्तुत किये गये। अब लीजीये इसी की पश्चिमी सीमाओं के निकट एक बड़े क्षेत्र में बसी हुई भील जाति के विषय में कुछ रोचक बातों की जानकारी । इस विचार से भारत के जातीय दलों गोन्डो और संथालों के बाद इन्हीं का क्रम आता है भीलों की आबादी इतने बड़े क्षेत्र में फैली हुई है कि कुछ मानव विज्ञानियों ने उसको एक अलग जातीय परिधि ही मान लिया हैं। जिसे वे पश्चिमी जातीय परिधि कहते है लेकिन परिधियों के विभिन्न विभक्तिकरण से जातीय-जीवन के मूलभूत तथ्यों में कुछ विशेष अन्तर नहीं पड़ता इसलिए भीलों के क्षेत्र को हम मध्य जातीय परिधि के अन्दर गिनेंगे ।

भील आन्तरिक रूप से बहुत से दलों में विभक्त हैं। इनमें से प्रत्येक दल एक अलग कबीले के समान है। शक्ल-सूरत, बोल-चाल रहन-सहन की दृष्टि से भी भीलों का प्रत्येक दल दूसरे दलों से भिन्न हैं। लेकिन इन अन्तरों के बावजूद प्रत्येक दल भील ही कहलाता है और अपने को भील ही कहने पर जोर देता है यह सार्वलौकिक नाम ही वस्तुत: बुनियादी एकता के लिए महत्वपूर्ण विशेषता रखता है।

भीलों का देश विन्ध्याचल, सतपुड़ा और सौहाद्री की पहाड़ियों में हैं। आज इस इलाकें में जितने लोग आबाद है उनमें सबसे पुराना भील ही है। राजपूतों के आने के बहुत पहले से यही इन्हीं की प्रभुता थी। भीलों का उल्लेख प्राय: कोली जातियों के साथ आता है। यदि कोली, कोल और मुण्डा कबीलों की पश्चिमी शाखा है जो छोटा नागपुर से मध्य भारत के मण्डला और जबलपुर के इलाकों में फैला कर पश्चिमी भारत में राजपुताना और गुजरात तक जा पहुँचे है तो इनका सम्बंध मुण्डा और कोल से भी जोड़ा जा सकता है। इन्हीं प्राचीन भाषा के चिन्ह अब बाकी नहीं रहे है, इसलिए यह कहना अब कठिन है कि ये द्रविड़ी बोलते थे या कोलारी। क्योंकि अब ये तो अपने इलाके की ही बिगड़ी हुई बोली बोलते है। लेकिन गियर्सन जैसे प्रसिद्ध भाषा शास्त्री का विचार है कि प्राचीन काल में इनके कोलारी दल से संबंध रखने के विरोध में कोई प्रमाण नहीं मिलता हैं ।

प्राचीनकाल में इस इलाके के आगन्तुक राजपूतों और पहले से बसे हुऐं भीलों के बीच जो मुठभेड़ हुई थी उसकी याद अभी तक बाकी है। राजपूत सर्वदा भीलों को इस इलाकों को वास्तविक व प्राचीन निवासी मानते रहे है। प्रारम्भ में राजपूत राजा भील के खून का टीका लगा कर राजगद्दी पर बैठता था। प्रारम्भिक काल ने भीलों व राजपूतों के सम्बंध घनिष्ठ एवं मधुर हो गये थे, यहाँ तक कि भीलों व राजपूतो के बीच शादी-विवह भी होने लगे थे और भील स्त्री से उत्पन्न पुरूष का पुत्र राजपूत कहलाता था। किन्तु बाद में जब राजपूताना के इलाके में हिन्दू समाज में और भी जातिगत कट्टरता आ गई तो भीलों और राजपूतो के बीच ऐसे वैवाहिक सम्बंध होने बन्द हो गये। आज भी राजपूत कुछ भीलों के हाथ छुआ खा लेते है। उन्होंने अपने काव्य-काल में भीलों के साथ अच्छा व्यवहार किया। मुसलमानों के राज्य काल में भीलों व मुसलमानों के बीच समबंध अच्छे ही थे। दोनों के बीच संबंधो के उदाहरण भी मिलते हैं गुजरात के शासक अहमद शाह को प्रिय रानी भील सुन्दरी थी। बाहर अहमदाबाद में स्थित एक सुन्दर एक कल्पपूर्ण मकबरा आज भी उसकी यादगार है।

मध्यभारत में जब मराठो को भक्ति बढ़ी तो उन्होंने भीलों के साथ कठोर एवं निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया और कुछ को मृत्यु घाट उतार दिया। शायद इन्हीं कठोरताओं एवं अस्वाभाविक परिस्थितियों के कारण भीलों ने अट्ठारहवी शताब्दी के अन्तिम दिनों में डाके और लूट का पेशा अपना लिया । उन दिनों जब कि सिंधिया और होल्कर का राज्य था, भीलों ने बड़ी संख्याओं में हत्या और विनाश के कार्य किये और नगरों एवं कस्बों पर हमले किये और लूटपाट की। गुजरात में भी भील लूट-मार के कार्यो के लिए प्रसिद्ध हो गये। अंग्रेजो के राज्यकाल तक यह क्रम जारी रहा। अन्त: सर जेम्टस आट्स ने चेष्टाओं से भीलों में सुधार तथा उन्हें शान्तिप्रिय बनाने का प्रयास किया तथा सफल भी हुआ । अंग्रेजो की नीति के फलस्वरूप भीलों ने 1857 के स्वतंत्रता युद्ध में अंग्रेजो का साथ दिया और फौज में भर्ती होकर तथा कथित विद्रोहियों के विरोध में लड़ाई की, किन्तु उनकी सैनिक तथा पुलिस सेवाएँ अस्थायी थी। अंग्रेजो का साथ देने पर भी उनकी आर्थिक अव्यवस्था न सुधरी और भारत की स्वाधीनता के समय तक वे जातीय जीवन से अलग-अलग अभाव व दरिद्रता का जीवन व्यतीत करते रहे।

भील जनजाति में आभूषणों का प्रयोग – भीलों में महिला और पुरूषों को आभूषणों के प्रति बड़ा चाव होता है। इन आभूषणों में अधिक विविधता पाई जाती है। सम्पन्न भील समुदाय के लोग चांदी के आभूषण पहनते है। मध्यम वर्ग के लोग जर्मन, सिल्वर के गहने पहनते है। पुरूष लोग मुढ़डा होठ का कड़ा, कंदोरा मुंदी आदि पहनते है तथा महिलाएं घुंघरी, झुमका, करणफुल, कंता, नथ, हसली, तोड़ा, गुजरी, कंदोरा, पिंजना, बिछिया आदि पहनती है भिलाला महिलाएं जो अधिक सम्पन्न होती है प्राय: चांदी के गहने भी पहनते है

बोर – नामक गहना लाख का बना होता है जिस पर चांदी की परत चढ़ाई जाती है।

घुघरी – एक टोपरीनुमा चांदी की छोटी सी चीज होती है। इसे सीर पर पहना जाता है।

झुमका– चांदी का बना होता है जो कानों में पहना जाता है।

घुघरी – एक टोपरीनुमा चांदी की छोटी सी चीज होती है। इसे सीर पर पहना जाता है।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
* * शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

करणफूल – यह भी चांदी का बना होता है कानों में पहना जाता है।

नथ– यह सोने का छोटा टुकड़ा होता है जो नाक में पहना जाता है जिसके ऊपर हीरा या चमकीला पत्थर होता है।

हसली – चांदी का गले में पहनने वाला चांदी का ठोस गहना होता है जो गोल होता है।

कंदोरा– चांदी का तीन–चार लड़ियों में गहना होता है जिसे कमर में पहना जाता है।

बिछिया– चांदी की अंगुठी जिसे पैर की उंगलियो में पहना जाता है। विवाहित स्त्रियाँ ही इस गहने को पहनती है।

भिलाला महिलाओं के आभूषण –

बोर– यह चांदी का होता है सिर के बालों के ऊपर पहना जाताह है।

रखड़ी– यह चांदी का होता है। इसे धागे की सहायता से मांग में लटकाया जाता है।

टुकरी होल्ला– यह झुमकी भांति चांदी का होता है जो कानों में पहना जाता है। अन्य गहने जनजातीय महिलाओं के समान रूप से होते है।

जनजाति की आर्थिक स्थिति तथा गहनों का योगदान – जनजाति में प्राय: तीन प्रकार के लोग पाये जाते है।

1. भू–स्वामी 2. सीमांत कृषक 3. भूमिहीन अकुशल कृषि मजदूर

इनमें से प्रथम दो प्रकार के किसानों को अक्सर बोनी के समय खाद, बीज और कीटनाशक दवाईयाँ खरीदने हेतु पैसों की सख्त जरूरत पड़ती है चुंकि इस समुदाय के लोग अशिक्षित होते है अत: वे बैंकिग प्रक्रिया से अपरिचित रहते है। इस कारण वे बैंको से ऋण लेने के बजाय परम्परागत आसपास के कस्बो में स्थिर साहूकारों के पास ऋण प्राप्त करने के लिए जाते है। जहां पर स्थानीय साहूकार उनके चांदी के गहनों को गिरवी रखकर उसके बदले में भारी ब्याज दर ऋण प्रदान करता है ब्याज दर अधिक होने के बावजुद भी जनजाति के लोग साहूकार की शरण में जाते है क्योंकि उनको धन राशि तत्काल उपलब्ध होती है बैंक के अधिकारी समय पर ऋण उपलब्ध नहीं कराते। इसके अलावा चोरी छिपे बैंक अधिकारी और बिचौलिये रिश्वत की मांग भी करते है इस कारण जनजाति के लोग बैंको की शरण में जाने की बजाय साहूकारों की शरण में जाना अधिक पंसद करते है।

साहूकारों से आसानी से ऋण प्राप्त करने में उनके पास जो चांदी के गहने होते है उनका बड़ा भारी सहयोग उनको प्राप्त होता है। अपरिचित साहूकार भी चांदी के गहने गिरवी रखकर उन्हें ऋण प्रदान करने में हिचकिचाता नहीं है। इसलिए जनजाति के लोग चांदी के गहने को अधिक उपयुक्त समझते है। फसल आने पर ब्याज समेत ऋण चुकाकर गिरवी रखे हुए चांदी के गहने छुड़ा जाते है क्योंकि भविष्य में इसी प्रकार की ऋण सुविधा प्राप्त करने के लिए इन गहनो का उपयोग किया जाता है। कभी–कभी फसल अच्छी होने पर और अतिरिक्त धनराशि की बचत होने पर वे ऋण चुकाने के पश्चात् चांदी के गहने खरीदते है इस प्रकार चांदी के गहने विनिमय का एक बहुत बड़ा माध्यम सिद्ध होती है। कभी–कभी घर में खाद्यान्न की कमी होने की दशा में अथवा परिवार में विवाह आदि सामूहिक कार्य अथवा मृत्यु भोज की स्थिति पैदा होने पर अधिक खर्च की जरूरत पैदा होने पर अधिक खर्च की जरूरत होती है ऐसे अवसरों पर भी जनजाति के लोग चांदी के गहने गिरवी रखकर पैसा प्राप्त करते है इस प्रकार उनके चांदी के गहने आभूषण के रूप में उनकी सौंदर्य अभिवृद्धि तो करती ही है, किन्तु साथ में उनकी समयसोचित जरूरतों को भी पूरा करने में भी सहायक होते है इसलिए जनजाति में चांदी के गहनों के प्रति विशेष देखा गया।

जनजाति में अधिक सम्पन्न किसान की सोने के गहने पहनते है लेकिन इसका प्रचलन बहुत कम है क्योंकि सोने का भाव उनकी क्रयशक्ति से अधिक है इसके अलावा ग्रामीण क्षेत्र में उनके आवास अपने खेतों में होते है जहां किसी प्रकार की कोई शासकीय सुरक्षा की कोई सुविधा नहीं होती। अत: सोने के गहने चोरी होने की आशंका सदैव बनी रहती है। कभी–कभी बहुमूल्य वस्तु की चोरी में चोर घर के सदस्यों की हत्या तक कर डालते है ऐसे कुछ प्रकरण पुलिस रिकार्ड में दर्ज है जहां महिला के पास में चांदी के भारी कड़े प्राप्त करने के लिए चोर ने महिला के पाव ही काट दिये और चांदी के भारी कड़े चुराकर ले गये। जनजातियों में जरायम पैशा वर्ग है जो इस प्रकार की वारदातों में संलग्न होता है अत: जनजाति के लोग सोने के बहुमूल्य गहने बनाने के पक्ष में नहीं रहते है। इसके अलावा सोने की ठीक–ठीक पहचान नहीं होने से ठगे जाने के खतरे बहुत होते हैं इस कारण उनका सोने के प्रति विशेष मोह नहीं दिखाई देता।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ग्रियर्सन : लिग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, आक्सफोर्ड पब्लिकेशन, 1933
2. गर्ग रामअवतार : जनजातियां विकास नीतियां और योजनाए राघव पब्लिकेशन नई दिल्ली, 1999
3. जैन डॉ. राजेन्द्र : झाबुआ को भील संस्कृति, मनाशी पब्लिकेशन नई दिल्ली, 1908
4. जैन श्रीचंद : आदिवासियों के बीच, किताबघर नई दिल्ली, 1980वनवासी भील और उनकी संस्कृति, रोशनलाल एण्ड सन्स, जयपुर, 1974
5. जोशी उर्मिला : मध्यप्रदेश के आदिमजातियों के प्रति शासन की नीतियो को विश्लेषणात्मक अध्ययन, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, 1976
6. पाण्डेय बी.के : जनजातिया, रसायन पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली, 1985
7. पाठक शोभनाथ : भीलों के बीच बीस वर्ष, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली, 1995
8. Ali S.A. : Tribal Demography in M.P., Jay Bharat Pub House Bhopal, 1973
9. Atal Yogesh : Adivasi Bhara, Rajkamal Prak, Delhi 1965
10. Bose N.K.: Tribal life in India, National Book Trust, Delhi, 71
11. Jay Adward : A tribal village of middle india, Anthropological survey of India Calcutta, 69
12. Naik T.B. : The Bhil : A Studay, Bhartiya Adim Jati Sevak Sanjh, Delhi, 1956
13 Nath Y.B.S.: Bhils of Ratanmal, M.S. University of Baroda, 60

****

पलायन आजीविका : समस्याएं और सुझाव (भारत के संदर्भ में)

डॉ. सतीश माहेश्वरी * तृप्ति माहेश्वरी * *

प्रस्तावना – पलायन एक भौगोलिक तथ्य है, जो हर समय मानवीय आवश्यकता रहा है। क्योंकि मानव की यह प्रवृति रही है कि जिस स्थान पर जीवनयापन कठोर होता है, उस स्थान को छोड़कर वह ऐसे स्थान पर पलायन करता है, जहॉ जीवन अपेक्षाकृत आसान होता है।

पलायन के दो भेद है, यथा प्रवास, जिसमें किसी एक स्थान, क्षेत्र, राज्य देश अथवा महाद्वीपों के मनुष्यों का दुसरे स्थानों में जाकर बस जाना प्रवास कहलाता है। जबकि अप्रवास या आवृजन में बाहरी स्थानों के किसी प्रदेश या स्थान के अंदर जीविका–निर्वाह की सुविधाएं प्रचुर मात्रा में होने के कारण आते है।

पलायन मात्र स्थान परिवर्तन ही नहीं, बल्कि किसी क्षेत्र के क्षेत्रीय तत्व तथा क्षेत्रीय संबंधों को समझने का प्रमुख आधार है। यह सांस्कृतिक वितरण और सामाजिक एकता का मंत्र है। जो प्राकृतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कारकों का परिणाम है। सामान्यत: पलायन क्षेत्र में सकारात्मक तत्वों की अधिकता होती है। जबकि उत्प्रवास क्षेत्र में नकारात्मक तत्व अधिक मिलते है। प्रवासन का स्वरूप सामाजिक–आर्थिक विकास के अनुरूप परिवर्तन होता है। औद्योगीकरण के पूर्व ग्रामीण–ग्रामीण नगरीय पलायन देखने को मिलता है। औद्योगीकरण के समय नगरीय प्रवास की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है। ज्ञातव्य है कि अति नगरीकरण के पश्चात बेहतर पर्यावरण व शांति की तलाश में नगरीकरण प्रवृजनशीलता भी देखने को मिलता है।

जनगणना 2001 के अनुसार

	व्यक्ति	पुरूष	महिला
गांव से गांव की और प्रवृजन	26.6	20.7	32.7
गांव से नगर की ओर प्रवृजन	37.9	44.7	30.9
नगर से गांव की ओर प्रवृजन	6.3	6.1	6.4
नगर से नगर की ओर प्रवृजन	26.7	25.9	27.5
अवर्गीकृत	2.6	2.6	2.5

भारत में पलायन दर प्रति 1000 व्यक्तियों पर

राज्य	पुरूष	महिला	ग्रामीण पुरूष+महिला
1	2	3	4
आन्ध्रप्रदेश	88	473	282
अरूणाचल प्रदेश	11	5	8
असम	26	227	120
बिहार	12	379	189
छत्तीसगढ़	70	531	295
दिल्ली	285	407	339
गोवा	120	296	212
गुजरात	53	572	299
हरियाणा	41	593	298
हिमाचल प्रदेश	153	592	379
जम्मु और कश्मीर	24	329	174
झारखण्ड	10	308	156
कर्नाटक	80	474	273
केरल	195	459	333
मध्यप्रदेश	30	533	269
महाराष्ट्र	98	572	329
मणिपुर	6	5	6
मेघालय	38	29	33
मिजोरम	107	114	110
नागालैण्ड	62	92	76
ओडिसा	43	511	280
पंजाब	74	571	312
राजस्थान	46	541	288
सिक्किम	195	415	300
तमिलनाडू	79	354	220
त्रिपुरा	57	163	110
उत्तराखण्ड	151	539	344
उत्तर प्रदेश	26	501	256
पश्चिम बंगाल	45	512	272
चड़ीगढ	710	628	672
दादर और नागर हवेली	237	566	372
दमन और द्वीप	484	586	503
लक्षद्वीप	320	239	281
पाण्डुचेरी	139	356	242
सम्पूर्ण भारत	54	477	261

पलायन की बाधाएं – मनुष्य स्वभावत: विवेकशील प्राणी है। वह किसी कार्य को करने से पहले सोचता विचारता है और उसके लाभो और हानियों की पूरी विवेचना करता है। यही बात प्रवास के संबंध में भी लागू होती है। वह किसी स्थान को तब तक नहीं छोड़ना पसंद करता है जब तक कि गन्तव्य स्थान उसके वर्तमान स्थान से अधिक लाभप्रद अथवा हितकारी नहीं लगता। कभी–कभी उसको अपनी इच्छा के विरूद्ध सामाजिक, आर्थिक एवं

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
* * शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) (म.प्र.) भारत

प्रशासनिक बाध्यता के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान को प्रवासित होना पड़ता है। परन्तु कभी-कभी वह प्रवास की इच्छा रखते हुए भी स्थानांतरण नहीं कर पाता है। क्योंकि उसे स्वराष्ट्र त्याग की अनुमति या प्रवेश पतन नहीं दिया जाता है। सामान्यत: पलायन के मार्ग में निम्न तत्व बाधा उत्पन्न करते है -

1. **दूरी** - दूरी पलायन को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है। निवास स्थान से गन्तव्य स्थान की दूरी जितनी अधिक होती है प्रवास की संभावना उतनी ही कम रहती है। अधिक दूरी वाले स्थानों पर जाने में जोखिम तथा व्यय दोनों में वृद्धि हो जाती है। कम दिनों के अवकाश अथवा किसी आकस्मिकता के पड़ जाने पर घर वापस आना कठिन होता है।

2. **भाषा/संस्कृति/रीति-रिवाज -** स्थान परिवर्तन से भाषा, संस्कृति और सामाजिक रीति-रिवाज बदल जाते है। मानव का यह स्वभाव है कि वह अपनी बोली, भाषा, खान-पान, संस्कृति तथा सह-धर्मियों में ही उठना बैठना पसंद करता है। अत: इन सबसे वंचित हो जाने तथा अपने आपको अलग या अकेला पाने का भय उसे प्रवृजित होने से रोकता है।

3. **वर्तमान व्यवसाय व स्थान से लगाव -** व्यक्तियों का अपने वर्तमान व्यवसाय, स्थान, परिवार, समाज तथा पास-पड़ोस के लोगों से इतना भावात्मक लगाव होता है कि वे दूसरे स्थान, राज्य या देश में अधिक प्रोन्नति एवं अधिक आय प्राप्त करने की संभावना के बावजूद भी प्रवास को पंसद नहीं करते है। भारतीय श्रमिकों में यह प्रवृत्ति विशेष रूप में देखने को मिलती है। वे शहरों में मजदूरी करने जाते है, परन्तु वहां वे अपना काम चलाऊ आवास ही बनाते है जब भी अवसर मिलता है या गांव में घर पर कोई प्रयोजन पडता है या त्यौहारों के अवसर वे अपने अपने गांवो में चले जाते है।

4. **मार्ग व्यय-** एक स्थान से दुसरे स्थान तक जाने में मार्ग व्यय वहन करना पडता है। जैसे जैसे दूरी बढती जाती है। मार्ग व्यय बढता जाता है। मार्ग व्यय जितना अधिक होगा प्रवास उतना ही कम होगा। यदि मार्ग व्यय अधिक नही है तो व्यक्ति यात्रा से वंचित नही होना चाहेगा।

5. **प्रवास क्षमता -** एक स्थान छोडकर दूसरे स्थान पर जाकर बसने के लिए विशेष प्रकार की क्षमता, निडरता तथा प्रगतिशीलता की आवश्यकता होती है। ग्रामीण व्यक्तियों में इन गुणो की प्राय: कमी देखने को मिलती है। उन्हे शहर के वातावरण से सामाजिक स्थापित करने में कठिनाई तथा शहरो में जाने से हिचकिचाते है। भारत में पंजाब तथा बिहार के व्यक्तियों की प्रवास क्षमता अपेक्षाकृत अधिक है।

पलायन के प्रभाव - जब बहुत अल्प मात्रा में पलायन होता तो अधिक प्रभावकारी नहीं होता परंतु जब कभी जनसंख्या का बडे पैमाने पर पलायन होता है तो यह अनेक सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनो का कारण बनता है। **एडवर्डरास** का मत है कि निरन्तर आवास तथा प्रवास ही किसी राष्ट्र के शरीर तथा आत्मा को सबल बनाते है, जो व्यक्ति अपने निवास स्थान से जितनी आधिक दूर प्रवास करते है वह उतने ही अधिक उन्नतिशील होते है। अरब तथा मूअर लोगों में स्पेन ने जाकर वहां सरासेन सभ्यता का विकास किया। यूरोपवासीयो ने अमेरिका में प्रवास कर वहां की मूल सभ्यता को परिवर्तीत कर दिया। औपनिवेश विकास के फलस्वरूप यूरोप का आर्थिक विकास तो हुआ साथ ही संसार के कोने कोने में यूरोपीय संस्कृति का भी विस्तार हुआ।

यद्यपि पलायन के प्रभावो का ठीक ठाक अध्ययन करना सहज नहीं है फिर भी निम्न बातों को दृष्टिगोचर रखकर इसके प्रभावो का कुछ हद तक अध्ययन किया जा सकता है।

1. प्रवास का उस देश के लोगों पर क्या क्या प्रभाव पडता है जहां लोग जाकर बसते है अतिरिक्त इसके व्यक्तियों के आगमन से सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन का होना स्वाभाविक है।
2. उस देश के लोगों पर क्या प्रभाव पडता है जहां से प्रवास होता है। यथा कुछ लोगों के चले जाने से वहां जनसंख्या का दबाव कम हो सकता है और लोगों को अधिक आर्थिक अवसर सुलभ हो सकते है आदि।
3. प्रवासित व्यक्तियों पर क्या क्या प्रभाव पड़ते है? प्रवास से उनकी क्या अपेक्षाए थी ? क्या वे पूरी हो सकी ? उनको प्रवास से क्या-क्या हानियां हुई आदि

सुझाव -

अध्ययन की सभी बातों को ध्यान में रखतें हुए प्रवृजन के लिए निम्नलिखित सुझाव है, जो इस प्रकार है -

1. भारतीय संविधान में सभी नागरिकों को भ्रमण एवं जीविकोपार्जन की स्वतंत्रता है। इस आधार पर व्यक्ति भारत के किसी भी स्थान पर अपने निश्चित उद्देश्यों जैसे जीविकापार्जन आदि की पूर्ति के लिए प्रवृजन करते है। अतएव सरकार द्वारा इन प्रवृजित व्यक्तियों के लिए जीविकोपार्जन के संसाधन की उपलब्धता को बढ़ाना चाहिए।
2. भारत में प्रवृजन की प्रवृत्ति मुख्यत: ग्रामीण से शहरी होती है, जो कि कम खेती योग्य भूमि एवं रोजगार अवसरों के अभाव के कारण शहरी क्षेत्रों में होती है, तब ग्रामीण क्षेत्रों में खेती योग्य भूमि का उचित प्रबंधन एवं रोजगार अवसरों की उपलब्धता बढ़ानी चाहिए।
3. ग्रामीण कृषकों को कृषि की नई तकनीकी का प्रशिक्षण एवं जानकारी प्रदान की जाए, ताकि उत्पादन में वृद्धि हो और उन्हें प्रवृजन के लिए मजबूर न होना पड़े।
4. विकास की योजनाओं को सरलतम ढंग से प्रस्तुत किया जाना चाहिए, ताकि अशिक्षित लोग भी इन्हें समझ सके और योजनाओं का लाभ ले सके।
5. कृषकों को कृषि कार्य के लिए सस्ते से सस्ता ऋण उपलब्ध करवाना चाहिए, जिससे उनके उत्पादन में सुधार हो।
6. प्रवृजन के दौरान स्थानीय शासन द्वारा कुछ एसे नियम या कानून लागू करने चाहिए, जिससे स्थानीय जमीदार, पूंजीपति एवं साहूकारों द्वारा प्रवृजन करने वाले लोगों का सामाजिक, आर्थिक और शारीरिक शोषण न हो।
7. प्रवृजन करने वाले लोगों द्वारा विभिन्न बिमारियों का भी उनके साथ उस स्थान विशेष पर आगमन होता है। अतएव प्रवृजन नीतियों में स्वास्थ्य परीक्षण जैसे कोई उपबंध होने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Internet www.migrationindia.com
2. कुरुक्षेत्र, दिसम्बर 2010, ग्रामीण नगरीय प्रवृजन
3. भूगोल और आप (मार्च 2010), मानद भूगोल
4. भारत में प्रवृजन, जनगणना 2001
5. यंग पी.वी. (1998), आन्तरिक प्रवास और सामाजिक परिवर्तन
6. व्यास बी.एस. प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद् के सदस्य और अर्थशास्त्री, दैनिक भास्कर 2011

****

भारत में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की स्थिति का अध्ययन

डॉ. सतीश माहेश्वरी * किशोर मोरे * *

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ की 70% आबादी की जीवनलीला कृषि पर ही निर्भर करती है और जिन्हें कृषि के लिए मौसम पर निर्भर रहना पड़ता है। मौसम एवं वातावरण में कई तरीके से उतार-चढ़ाव से किसानों को अक्सर जोखिम उठाना पड़ती है। देश में कई ऐसे छोटे एवं मध्यम वर्ग के किसान है, जो अपनी फसल बोने या कृषि करने के लिए ऋण लेता है, जिसकी उसको मौसम की मार से अंशत: या पूर्णत: नुकसान उठाना पड़ता है, जिसकी वजह से वह अपने लिए गये ऋण की भरपाई करने में असमर्थ रहता है तो कभी-कभी कई किसानों की आत्महत्या करने तक की नौबत आ जाती है। इसलिए देश में किसानों को सूखे, बाढ़, ओलावृष्टि चक्रवात, नाशीजीव और रोगों जैसी कई प्राकृतिक आपदाओं के कारण फसलों के नुकसान से सुरक्षा प्रदान करने के लिए 1999-2000 रबी फसल से राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एनएआईएस) शुरु की गई है, ताकि किसानों की कृषि का बीमा कंपनी के माध्यम से क्षतिपूर्ति प्राप्त हो सके।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना एवं कार्यान्वयन – किसानों को प्राकृतिक आपदा कीट या बीमारी के कारण किसी अधिसूचित फसल के बर्बाद होने की स्थिति में बीमा का लाभ एवं वित्तीय समर्थन देने, खेती के प्रगतिशील तरीके, उच्च मूल्य लागत और कृषि में उच्चतर तकनीक अपनाने के लिए प्रोत्साहित करने तथा खेती से होने वाली आय को विशेष रुप से आपदा के वर्षों में स्थायित्व देने में मदद करने के उद्देश्य से सभी राज्यों और संघ शासित प्रदेशों में विकल्प के रुप में इस योजना को रबी 1999-2000 से लागू कर दी गई है। यह योजना कृषि एवं सहकारिता विभाग के माध्यम से कृषि बीमा कंपनी इंडिया लिमिटेड के द्वारा कार्यान्वित की जा रही है। वर्तमान में यह योजना पूरे देश में 25 राज्यों एवं 2 केन्द्र शासित राज्यों में संचालित की जा रही है, जिसमें देश के लगभग 25 प्रतिशत किसानों, फसलित क्षेत्र को कवर कर लिया गया है

अन्य कृषि बीमा योजनाएँ – देश में प्राकृतिक आपदाओं, नाशीजीवों व रोगों और प्रतिकूल मौसम परिस्थितियों के कारण फसल क्षतियों के लिए किसानों को वित्तीय संरक्षण एवं सहायता प्रदान करने के लिए कृषि एवं सहकारिता विभाग द्वारा अन्य योजनाएँ 1) पायलट संवर्धित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना, 2) पायलट मौसम आधारित फसल बीमा योजना, 3) पायलट नारियल पाम बीमा योजना नाम की मुख्यत: संचालित की जा रही है।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की सीमाएँ – अधिसूचित क्षेत्रों में अधिसूचित फसल उगाने वाले सभी किसान यानी बटाईदार, काश्तकार शामिल हो सकते है। कर्जदार किसान जो वित्तीय संस्थाओं से मौसमी कृषि कार्य के लिए कर्ज लेकर अधिसूचित फसलों की खेती करते है, वो अनिवार्य रुप से शामिल रहेंगे, किन्तु ऐसे गैर-कर्जदार किसान जो अधिसूचित फसलों की खेती करते है, ऐच्छिक रुप से शामिल हो सकते है। योजना में प्राकृतिक आग और वज्रपात, आंधी, तूफान, अंधड़, समुद्री तूफान, भूकंप चक्रवात, ज्वारभाटा, बाढ़, डूबना, भूस्खलन, सूखा, अनावृष्टि, नाशीजीव व रोग आदि शामिल है, किन्तु युद्ध और परमाणु युद्ध गलत नियत और अन्य नियंत्रण योग्य खतरों को इस योजना में शामिल नहीं किया गया है। इस योजना में धान, मक्का, ज्वार, बाजरा, गेहूँ तथा अन्य अनाज की फसलें, तिल, मूंगफली, सोयाबीन, लाही, सरसो, अन्य प्रकार के तिलहन की फसलें, उड़द, मूंग, अरहर एवं अन्य दलहन की फसलें तथा आलू, प्याज, गन्ना एवं अन्य वार्षिक नकदी एवं वाणिज्यिक फसलों को बीमित किया जाता है। भारत सरकार द्वारा स्थापित कृषि बीमा कंपनी इंडिया लिमिटेड द्वारा 24 राज्यों एवं 2 संघ शासित प्रदेशों में यह योजना कार्यान्वित हो रही है। इस योजना में बीमित इकाई के रुप में जिला, तहसील, ब्लॉक, न्याय पंचायत, ग्राम पंचायत या ग्राम हो सकता है।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना प्रीमियम की दरें एवं अनुदान – राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना प्रीमियम की दरें निम्न तालिका में प्रदर्शित दरों से वसूली जाती है –

तालिका क्र. 1

क्र. सं.	सत्र	फसल	प्रीमियम की दरें
1	खरीफ	बाजरा व तिलहन	बीमित राशि का 3.5 % या वास्तविक, जो कम हो
		अन्य खरीफ फसलें	बीमित राशि का 2.5 % या वास्तविक, जो कम हो
2	रबी	गेहूँ	बीमित राशि का 1.5 % या वास्तविक, जो कम हो
		अन्य रबी फसलें	बीमित राशि का 2.0 % या वास्तविक, जो कम हो
3	खरीफ व रबी	वार्षिक वाणिज्यिक या वार्षिक बागवानी फसलें	वास्तविक

योजना के अंतर्गत लघु किसानों (पांच एकड़/दो हेक्टयेर) या कम जमीन रखने वाला कृषक व सीमांत किसानों (ढ़ाई एकड़/एक हेक्टेयर) या इससे कम जमीन रखने वाला कृषक को मूल रुप से उनसे लिए जाने वाले प्रीमियम की 50% राशि तक राज्यानुदान दिया जाता है, जिसे केन्द्र व राज्य/संघ शासित प्रदेश की सरकार बराबर-बराबर वहन करती है, जिसे पाँच साल तक की अवधि के बाद वित्तीय परिणाम तथा योजना लागू किये जाने के पहले साल से किसानों की प्रतिक्रिया की समीक्षा के बाद सूर्यास्त के आधार पर वापस ली जाती है। वर्तमान में राज्यानुदान की राशि 10% कर दी गई है।

* प्राध्यापक, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
* * शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की स्थिति – राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना की स्थिति को निम्न तालिका में वर्षवार बीमित किसानों की संख्या, क्षेत्र, बीमित राशि, प्रीमियम अदा किये गये या भुगतान करने योग्य दावे तथा लाभान्वित किसानों की संख्या वार दर्शाया गया है।

(तालिका क्र.2 नीचे देखें)

तालिका से दृष्टिगत होता है कि वर्ष 2007–08 में जहाँ बीमित किसानों की संख्या 1,91,28,731 थी वह प्रतिवर्ष बढ़ते हुए 2010–11 में 2,76,69,862 हो गई, 2011–12 अनंतिम तक ही 2,95,39,380 हो गई है। वहीं बीमित क्षेत्र जो कि हेक्टेयर में दी गई है, में भी वर्ष 2008–09 में मामूली कमी के साथ प्रतिवर्ष वृद्धि हुई है। इसी प्रकार प्रीमियम एवं अदा किये गये दावे में भी प्रतिवर्ष, वृद्धि दर्ज की गई है, तथा लाभांवित किसानों की संख्या में प्रतिवर्ष क्रमोत्तर वृद्धि हुई है, किन्तु वर्ष 2010–11 में कमी आयी है, जबकि 2011–12 में रिकॉर्ड वृद्धि दर्ज हुई है।

यदि पिछले 27 फसल मौसमों के दौरान अर्थात् रबी 1999–2000 से रबी 2012–13 तक राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के उपलब्ध आँकड़ों पर नजर डाले तो पता चलता है कि 31.01.2013 तक की स्थिति में कुल बीमित किसानों की संख्या 19,30,92,541 हो गई, जबकि क्षेत्र 29,19,41,717.16 हेक्टेयर बीमित हो चुका है। इसी प्रकार बीमित राशि 2,56,52,012.21 लाख रुपये हो गये, जबकि प्रीमियम की राशि 7,57,951.12 लाख रुपये है, और अदा किये गये दावे 24,26,735.70 लाख रुपये है, जिससे 5,18,51,355 किसान लाभान्वित हुए है।

निष्कर्ष – यह कहा जायेगा कि जहाँ कर्ज तले दबे किसानों को प्राकृतिक आपदाओं की वजह से निरंतर जोखिम उठानी पड़ती थी, वहीं उनके लिए राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना जीवन संजीवनी के समान है, जिसे सरकार ने अब तक कुछ ही वर्षों में 25% कृषि क्षेत्र एवं किसानों को अनिवार्यत: एवं स्वैच्छिक रुप से कवर कर लिया और निरंतर कवरेज बढ़ता जा रहा है। इस दृष्टि से बहुत जल्द पूरे देश के किसान एवं कृषि क्षेत्र राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के दायरे में आ सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था – गौरव दत्त, अश्विनी महाजन ।
2. सामाजिक शोध व सांख्यिकी – डॉ. परमेश्वर शर्मा, पैसिफिक पब्लिकेशन, दिल्ली,
3. www.agricoop.nic.in
4. www.indg.in
5. www.aicofindia.com
6. www.wikipedia

तालिका क्र.2 **रुपये – लाख में**

क्र. सं.	वर्ष	बीमित किसानों की संख्या	बीमित क्षेत्र हेक्टेयर में	बीमित राशि	प्रीमियम	अदा किये गये या भुगतान करने योग्य दावे	लाभान्वित किसानों की संख्या
1	2007–08	19128731	29210232.09	2626652.13	83138.41	183100.62	3397897
2	2008–09	19599952	26974769.88	2770143.02	88933.08	392853.76	6423542
3	2009–10	26214803	37077862.19	4359426.8	159549.9	515886.52	10383842
4	2010–11	27669862	38195818.13	5151991.96	232720.2	194728.81	6011456
5	2011–12 अनंतिम	29539380	19940905.00	58072863	13145	2577890	56649043

****

Socio Economic Conditions, Diet And Nutrient Intake Of Lactating Mothers Residing In Rural Area Of Chhindwara District

Archna Mathewe *

Abstract - The socioeconomic conditions, diet and nutrient intake of 457 lactating mothers residing in Rural Area of Chhindwara was assessed. The average age of the lactating mothers was 24.68+3.54 years and majority (81.61) of them got married between 15 to 20 years. 59.77 percent mothers had nuclear family and the average family size was 06+2. About 56 percent mothers and 43.11 percent husbands were illiterate. The average monthly family income was Rs. 2361+1268.58 only 73 mothers were working outside home as domestic servants in nearby locality . These mothers were contributing 35 percent to their family income. For majority of mothers the period of lactalional ammenorrohoea was six months. Most of the families where non vegetarian and had two meal pattern. Result of diet survey showed that the percent adequacy of only cereals and other vegetables was 76.26 percent and 57.4 percent respectively . For rest of the food stuffs the precent adequacy was found to be below 43 to 45 percent. Except thiamine the diet was found to be deficient in all the nutrient, calories and protean intake was found to be 57.6 and 63.5 percent respectively. According to Body Mass Intex 44.31 persent mother were found to be normal where as 54.06 persent mothers undernourished . A negative correlation (r= - 002) was observed the duration of lacational ammenorrhoea and body mass index of mothers.

Introduction - Lacatation in the crucial period during with the mother continues to protect the young, infant with almost the same efficieny in feeding as in the placenta. She supplies the essential nutrients to help the infant to tide through the initial difficult period of life during which growth and development proceed at an accelerated pace (pevdas et al. 1983) Through recently various scientists (Kawatra and Sehgal (1998), Sinha and Pandey (1998) Meghraj & Choudhary (2002) have reported the nutritional status of lactating mothers but the data on lactating mothers of Central India is very scanty. Hence it was postulated to study the nutritional status of lactating mothers residing in rural area of Chhindwara district .

Material And Methods -

Selection of area - For the present study 40 villages of Chhindwara district were selected by stratified random sampling .

Selection of Sample - 457 lactating mothers were purposively selected from 450 families of these village.

Collection of data - An interview schedule was designed to elicit the general information about the lactating mothers such as socioeconomic conditions, lactational stage, duration lactational ammenorrhoea, food beliefs etc.

Diet Survey - The information on diet intake was collected by 24 hours recall method. The nutrient intake was calculated with the help of ICMR Bulletin (2002). The diet and nutrient intake was compared with suggested dietary allowances (1983) and Recommended Dietary Allowances (ICMR 2002) respectively .

Anthropometric Measurements - Weight and heights of lactating mothers were recorded as per Jellife (1966). Body Mass Index was calculated and compared with the values reported in Annual Report NIN (1983).

Result And Dicussion -

Age and lactational stage of lactating mothers - The age of mothers ranged between 18 to 35 years. About 57 percent mothers were below 25 years of age and 30 percent were between 25-30 years of age. 23 percent mothers were breast feeding 0-6 months old children whereas 32.3 percent were feeding 6-12 months old children. About 44.5 percent mothers had 1-2 years old children.

Socioeconomic Conditions Of Lactating Mothers - The socioeconomic conditions of lactating mothers is presented in Table 1. It is clear from Table 1 that 78 percent mothers had nuclear family. The average family size was 06 + 2. The educational level of mothers showed that 56.2 percent mothers were illeterate . 3.2 percent has their education up to primary and 34.1 percent up to SSC. The data on father's education showed that 43.1 percent were illiterate and 4.15 percent has their education up to primary. 17.2 and 6.3 percent fathers and mothers were found to be educated upto gradutation. It was further observed that 59.3 percent father were working as laboures at construction sites, 13.55 percent were engaged in services as teachers, clerks, drivers, accountants and peons . About 8.88 percent fathers were doing their own business like tailoring, selling vegetables and fruits etc. The analysis has also brought out that majority of the families (60.66%) were earning less than Rs. 2000 per month. The average monthly farmily income was found to be Rs. 2361 + 1268.58

Working conditions of working lactating mothers - Out of 457 mothers, 73 were found to be working outside home as domestic servents in nereby locality, 02.73% mothers were found to be working for 4 hours whereas 97.26% for 4 to 8 hours . The time taken to reach the work place was approximately 05 to 10 minutes as all the mothers used to go by walk. In absence of these mothers, their children were looked after either by in-laws or by on elder child. About 86.3% mothers where earning Rs. 500 to 1000 per month whereas 06.84% upto Rs. 500 on an average mothers were contributing 35% to their family income.

Details regarding delivery - The place and type of delivery

* **Prof., Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) INDIA**

with the rest periods is presented in Table 2. The data shows that the 28.22 percent deliveries were in the hospital. The majority (93.6%) of deliveries were normal while 0.65% were forcep assisted. Neonates delivered by caesarian section were 5.68% . Further it was observed that 08.5% mother took rest for 3 months after delivery whereas 36.9 and 32.3% mothers took rest for one month and 15 days respectively. However 22.1% mothers did not take rest due to non availability of members in the family.

Lactational ammenorrhoea - For majority of women (49.01%), the period of lactational ammenorrhoea was six months whereas for 14% mothers it was 6-12 months. Devdas et. al. (1983) and Prema et al. (1981) reported that the duration of lactational ammenorrhoea is related to brest feeding and body weight . Hence in the present study an attempt was made to find out the correlation between BMI and ammenorrhoea . An insignificant but negative (0.02) correlation was observed between the duration of lactational ammenorrhoea and Body Mass Index. It indicates that as BMI increases the duration of lactational ammenorrhoea decreases.

Food habits - In the present study 54.4% families were found to be non vegetarian and 3.7 percent eggetarian. Only 41.7% family were found to be strictly vegetarian . About 84% families were following two meal pattern were as rest were following three meal pattern breakfast, lunch and dinner special foods given and foods avoided during lactation has been presented in table 3 and 4 respectively.

Table 1. Socioeconomic conditions of lactating mothers (N-457)

S.No.	Socioeconomic conditions	Percent cases
1.	Average age (years)	24.68+3.54
2.	Average age of marriage (years)	18108+2.004
3.	Type of family (N=450)	
	Nuclear	78.43 (353)
	Joint	21.55 (97)
4.	Family size	06 + 2
5.	Educational status	
	iliterate	56.25 (257)
	Up to primary	3.28 (15)
	Up to SSC	34.14 (156)
	Up to HSSC and above	06.33 (29)
6.	Educational status of husbands	
	Iliterate	43.11 (197)
	Up to primary	04.15 (019)
	Up to SSC	35.45 (162)
	Up to HSSC and above	17.28 (79)
7.	Occupation of husbands (N=450)	
	Labourer	59.33 (267)
	Agriculture	18.22 (082)
	Business	08.88 (040)
	Service	13.55 (061)
8.	Monthly family income (N=450)	
	Upto Rs. 2000	60.66 (273)
	2001-4000	27.11 (122)
	4001-6000	10.88 (049)
	Above 6001	01.33 (006)
	Average monthly income	2361+ 1268.58

(Number in paranthesis indicates number of cases)

Table 2. Place and nature of delivery and rest periods (N=457)

S.No.	Socioeconomic conditions	Percent cases
1.	Place of delivery	
	Hospital	28.22 (129)
	Home	71.77 (328)
2.	Nature of delivery	
	Normal	93.65 (428)
	Forceps	00.65 (003)
	Caesarian	05.68 (026)
3.	Rest periods after delivery	
	No rest	22.10 (101)
	7 to 15 days	32.37 (148)
	15 to 30 days	36.98 (169)
	30 to 90 days	08.53 (039)

Table 3. Special foods given after delivery (N - 330)

Foods given	Percent cases	Reason
Dried ginger laddu	56.06 (185)	Hot food
Broken wheat porridge	31.51 (104)	Growth of bady and milk secretion
Red gram dhal	30.90 (102)	Hot food
Betal leaves	22.42 (74)	Hot food
Ghee	17.57 (58)	Good health
Harira	16.36 (54)	Hot food
Bottle guard	13.03 (53)	milk secretion
Papaya	14.84 (49)	milk secretion
Ajwain	10.60 (35)	Good for digestion
Kutki rice	04.84 (16)	Hot food
Badi ki subji	14.54 (48)	Hot food

(Number in paranthesis indicates number of cases).

Table 4. Food avoided during lactation (N = 457)

Foods given	Percent cases	Reason
Rice	29.54 (135)	Cold food
Lentils	30.63 (140)	Gas producing
Black gram dhal	29.75 (136)	Gas producing and heavy for digestion
Curds	22.97 (105)	Cold food
Banana	22.75 (104)	Cold food
Dried mango powder	22.53 (103)	Cold food
Brinjal	1.96 (09)	Skin Irritation
Potato	1.41 (07)	Gas producing

(Number in paranthesis indicates number of cases).

Special foods consumed after delivery - Some foods were considered as galactogogues and were found, to given to the majority of mothers . About 31.5% mothers were given daliya (broken wheat porridge) and 56.06 percent were found laddus of dried ginger powder. Harria is a mixture of dry fruits and was found to be consumed by 16.3% mothers. Ajwain, red gram dhal and betal leaves were also found to be consumed by 10 to 31% mothers. Other foods considered

as galactogogues were raw and ripened papaya, bottle gourd, badi ki sabji (curry of dried of green gram dumplings) ghee and kutki rice. However, due to poor economic conditions 27.7% mothers did not consume any special foods during lactation. Various studies conducted in different parts of country chawla et al (1997) satyapriya and vijayalakshmi (1998), Belevady (1999) and Kawatra and Sehgal (1998) had also reported intake of different types of traditional supplementary foods such as ajwain, dry ginger, gum acadia, jaggery dry fruits, fenugreek seeds with the belief that these would increase milk production and provide strength to the mother.

(Table 5,6,7,8 see in next page)

Foods avoided during lactation - Lentils and black gram dhal (Table 4) was avoided by 30.63% and 29.75% mothers considering it as gas producing foods. Rice, curds and banana were found to be avoided by 29.54, 22.97 and 22.75 percent mothers respectively believing it as cold foods so that the child is protected from 'colds' other foods avoided by 1.96% mothers included brinjal, onion, potato, fish and egg as they believed that these foods would cause discomfort to the baby. Sinha and Pandey (1998) reported that food tabboos in lactation were practiced out of fear that the child would be adversely affected through the breast milk if the mother consumed certain foods.

Diet intake of lactating mothers - Diet intake of lactating mothers has been discussed in two groups viz, for 0-6 months and for 6 -12 months. The dietary and nutrient intake of these mothers have been compared with the RDA of moderate worker. The dietary intake of lactating mothers (0-6 months lactation) in comparision with suggested dietary allowances of NIN (ICMR) (1983) is presented in Table 5 . It is clear from the Table that the percent adequacy of cereals, other vegetables and meat and fish was 76%, 57% and 35.7% respectively. The intake of rest of the foods was between 6.9 to 42.7 percent. Redgram dhal was found to be predominantly consumed however its intake was found to be only 20.8% of suggested dietary intake. The intake of milk and green leafy vegetables was also found to be very poor.

The dietary intake of lactating mothers of 6-12 months of lactation wad found to be slightly different (Table-6) . The percent adequacy of cerals and other vegetables was found to be 73.27 percent and 90.90 percent whereas for sugar it was 49.26 percent . The intake of rest of the foods viz, pulses, green leafy vegetables, fruits, oil and fats, fish and meat was found to be 5.45 to 45.43% of suggested dietary allowances. Milk was found to be most limiting food stuff since its percent adequacy was only 7.27%. Meghraj and Choudhary (2002) found that intake of cereals, pulses, roots and tubers increased with stage of lactation, whereas intake of flesh foods, other vegetables, milk, fats and oils decreased while other groups leveled as lactation advanced.

Nutrient intake of lactating mothers - Nutrient intake of lactating mothers of 0-6 and 6-12 months old children is shown in Table 7 and 8 respectively . Data presented in table shows that except thiamin the diet of lactating mother (0-6 months lactation) was below recommended allowances. The intake of calories and protein was found to be 57.6 and 63.57 percent of RDA whereas that of fat was 68.6% Amongst minerals the percent adequacy for calcium intake was found to be 22.9% and for iron, it was 51.8% . Intake of carotene, vitamin C and riboflavin was found to be 14.34%, 23.23 and 39.37 respectively.

Similary the dietary intake of lactating mothers of 6-12 months lactation was also found to be deficient in all the nutrients except thaimin. The percent adequacy for calories and protein was found to be 62.86 and 65.91 percent whereas for fat it was 67.13. Amongst minerals, the calcium intake was found to be 21.59 percent whereas iron intake was 48.83 of recommended allowances. The percent adequacy for vitamin A and C was 18-33% whereas for thiamin and riboflavin it was 115.38 and 36.66 respectively. Meghraj and Choudhary (2002) found that overall intake of energy, protein, fat and carbohydrate was 2003 kcal. 58.89 and 247.g/day respectively . The average intake of energy and protein was 37 and 34 percent below RDA, while fat exceeded by 22 percent.

Anthropometric measurements - In the present study weights and heights of lactating mothers were recorded. The weights of lactating mothers ranged between 35 to 58 kg and the average, weight was found to be 44.50 + 6.11kg. similarly , the height of mothers ranged between 148 to 158 cm and the average height was found to be 152.50 + 2.89 cm. The body mass index (BMI) was calculated and compared with values reported by NIN (1983). Data shows 44.31% mothers were normal where as 54.06 percent mothers were under nourished, only 01.60% mothers were over weight. Dhaliwal (1983) found that rural mother had their weights according to their height but the problem of overweight was very common amongst urban mothers.

References -

1. Annual Report (1983) Ist Jan. to 31st Dec. 1982. Nutritional Anthroprometry of Indian Adults, National Institute of Nutrition, ICMR, Hyderabad, pp. 184-188.
2. Belevady, B. (1999). Indian J. Nutr. Dietet., 36 : 168-170.
3. Chawla S. et.al. (1997). Indian J. Nutr. Dietet., 34 : 40-48.
4. Devdas R.P. et.al. (1979). Indian J. Nutr. Dietet, 16:8.
5. Devdas R.P. et.al. (1983). Indian J. Nutr. Dietet, 20:71.
6. Dhaliwal Y.E. et.al. (1983). Philippine J. Nutrition, 36 (1) : 49-54.
7. Gopalan, C. et.al. (2002), Nutritive Value of Indian Foods, National Institute of Nutrition, ICMR.
8. ICMR (2002), Nutritive Value of Indian Foods. (Gopalan , C. et.al. eds.) NIN, Hyderabad
9. Jellife, D.B. (1966). The Assessment of Nutritional Status of The Community, WHO Monograph Series No. 53 Geneva.
10. Kawatra. A and Sehgal, S. (1998), Indian, J. Nutr. Dietet, 35 : 294-300.
11. Meghraj, M and Choudhary. M (2002). Indian, Nutr. Dietet, 39 : 277.
12. NIN (ICMR) (1983) , Nutritive Value of Indian Foods. (Gopalan, C. ed.) NIN, Hyderabad.
13. Prema,K. et.al. (1981), British J. of Nutrition . 45 (3) : 461-467.
14. Satyapriya, P and Vijayalakshmi, P. (1998), Indian J. Nutr. Dietet. 35 : 198-203.
15. Sinha A. and Pandey, H. (1998), Indian J. Nutr. Dietet., 35:325.

Table 5 . Dietary intake of lactating mothers during 0-6 months of lactation (N=115)

Foods stuff (gms)	Food intake M+SE	Dietary Intake suggeste (1980)	Percent adequacy
Cereals	343.21 + 11.80	450	76.26
Pulses	16.64 + 3.58	80	20.8
Green leafy vegetables	10.35 + 7.60	150	6.9
Other vegetables	85.71 + 6.52	150	57.14
Fruits	5.35 + 3.86	30	17.83
Milks	30.35 + 6.43	325	9.33
Oil and fats	16.28 + 1.19	50	32.56
Fish, meat, eggs	10.71 + 7.73	30	35.7
Sugar	21.35+ 0.83	50	42.7

Table 6 . Dietary intake of lactating mothers during s6- 12 months of lactation (N=342)

Foods stuff (gms)	Food intake M+SE	Dietary Intake suggested (1980)	Percent adequacy
Cereals	329.72 + 6.65	450	73.27
Pulses	8.45 + 4.38	80	10.56
Green leafy vegetables	8.18 + 5.54	150	5.45
Other vegetables	136.36 + 19.40	150	90.90
Fruits	11.36 + 6.42	30	37.86
Milks	23.63 + 8.88	325	7.27
Oil and fats	21.63 + 2.62	50	43.26
Fish, meat, eggs	13.63 + 7.05	30	45.43
Sugar	24.63+ 3.03	50	49.26

Table 7 . Nutrient intake to lactating mothers during 0-6 months of lactation (N-115)

Foods stuff (gms)	Food intake M+SE	Dietary Intake suggested (1980)	Percent adequacy
Calories (kcal)	1598.5 + 52.76	2775	57.60
Protein (gm)	47.68 + 2.37	75	63.57
Fats (gm)	24.01 + 1.25	35	68.6
Calcium (mg)	229.97+15.00	1000	22.99
Iron (mg)	15.54 + 0.50	30	51.8
Thiamin (mg)	1.55 + 0.05	1.14	110.71
Riboflavin (mg)	0.63 + 0.04	1.6	39.37
Niacin (mg)	14.78 + 0.48	18	82.11
Vitamin C (mg)	18.59+ 1.74	80	23.23
Carotene (ug)	545.18 +396.34	3800	14.34

Table 8 . Nutrient intake of lactating mothers during 6- 12 months of lactation (N=342)

Foods stuff (gms)	Food intake M+SE	Dietary Intake suggested (1980)	Percent adequacy
Calories (kcal)	1650.08 + 52.36	2625	62.86
Protein (gm)	44.82 + 1.69	68	65.91
Fats (gm)	30.21 + 2.97	45	67.13
Calcium (mg)	215.99 + 22.36	1000	21.59
Iron (mg)	16.64 + 0.38	30	48.83
Thiamin (mg)	1.50 + 0.03	1.3	115.38
Riboflavin (mg)	0.55 + 0.02	1.5	36.66
Niacin (mg)	14.53 + 0.21	17	85.47
Vitamin C (mg)	26.74 + 3.48	80	33.42
Carotene (ug)	701.46 +316.86	3800	18.45

Changing World By Women In Cooperatives

Dr. Preeti Joshi *

Introduction - Cooperatives are powerful tools of development. Gandhiji was cooperators by instinct and preached moral values, honesty and sincerity which are the pillars of success of the cooperative movement. Gandhiji emphasized the participation of the youth and women in the cooperative movement in their leadership build their capacity to enable them to benefit for employment opportunities.

It is unfortunate that the cooperative movement has moved away from the poor and women. There is expansion of the cooperative movement without the economic development of the communities.The cooperative system which promotes and generates employment for those who do not have bargaining power in the labor market and are at the lowest level of economic hierarchy.The cooperative model of business is best suited to the economically weak masses specially women who constitute 94 y. of the female labor force in the informal sector.

SEWA (Self Employment women Association) was established to facilitate the empowerment of the economically weak self employed with in the cooperative framework.

TABLE

Year	No. of coop--eratives	Women'sCoop--eratives	Share in %
1987	3,00,000	4,161	1.3
1991	3,53,000	5,136	1.4
1995	4,11,123	7,195	1.7
1998	5,03,962	8,714	1.8
2007	5,80,439	12,469	2.1

Data shows the increasing number of cooperative which conclude the women empowering by cooperatives.

Many of the cooperatives are innovative and different from each other in terms of issues and occupations.They are unique innovative and member-owned, member driven and member controlled businesses.Experience has shown that organising is the key to reach the poor specially women who participate and one involved in the cooperative movement.

The women need special social and economic network to support their income generating activities which will enable them to be more involved in the cooperative movement. Therefore, the strategy is to devise market driven business strategies to enable the participation of women in cooperatives – by building their capacities, introduction to technology and access to markets to compete in global market. Rapid changes are taking place due to globalization and the emergence of new economic, structures which have both opportunities and challenges. The members are ready to change.The strategy is to enable the participation of women in the cooperative movement through "low cost – high quality" advisory business services.Empowerment of women through cooperatives is more easier and desirable. It is because the cooperative institutions have for reaching impact on women's socio-economic of political activities.In fact, they have a wider coverage on women activities than any other institutions. Therefore, the focus should be that the empowerment of women should be achieved through the cooperative societies.

Karnataka is one of the leading state of India where the cooperative movement is quite successful. The policy of the Govt. to have one woman director compulsory on the Board of Cooperative. Apex society has helped women to involve in decision making. The formation of self help Groups (SHGS) and Shree Shakti scheme have been doing very well in the state. These schemes, it particular have helped the rural women not only to an empower themselves, but also to improve their economic status. The SHGs and Shree Shakti Groups (SSG) are new coming forward to convert their groups to cooperative societies.

There are a lot of training and adult literacy programme which have improved the rate of literacy among women.

When women will generate employment through their cooperative form capital and build their own assets individually and collectively, build their capacity to stand on their own in the market have social security strengthen their knowledge, values and principles to effectively mange and govern enterprise on their own will they be self reliant.Therefore the cooperative will have to tackle the problems and help in promoting the women empowerment in the country.

References-

1. Asian Journal of Research in Social Science &Humanities Vol.2 issue 4,April2012
2. Bhattacharya,Lalima M ,2005,Empowerment Of Women ,ASurvey Of Issues and Definition .
3. Bhagyalaxmi, J.,2004, Women's Empowerment :Mile to go.Yojna,48:38 -41
4. Narayan D,(2002) Empowerment and Poverty Reduction ,A Source Book Washington ,World Bank
5. NCUI Report ,2001
6. Pattanaik , B.K. 2000 Women Welfare And Social Development Yojna November 44:24
7. Sengupta, N.,1998Empowerment:ASocio-Psychological Approach To SHG Formation , Prajnan , XXVI (4)

Web Reference –

World Development Report ,World Bank 2000-01.

* **Asst. Prof. (Economics) Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) INDIA**

Effect Of Devaluation Of Indian National Rupee On Saving And Consumption Pattern Of Common Man : A Meticulous View

Visarg Mishra *

Abstract - This paper concentrates on the effect of Devaluation of Indian National Rupee (INR) on common people's saving and consumption pattern. The main focus of the research was on change in pattern of spending and savings of people who are getting affected by rupee depreciation. Devaluation is usually undertaken as a means of correcting a deficit in the balance of payments. Currency depreciation is severely affecting the economy of our country and eventually its residents are getting affected due to drastic change in their monthly budget. The study showed that after currency depreciation people are grappling with inflated prices of the commodities which they use in their day to day life and the change in their spending and savings trends, a falling rupee will pinch students who are planning to go abroad or are presently studying outside India. This paper studies the real implications of the depreciation of the rupee on the Indian Nationals and the steps taken by government to stem its fall.

Introduction - A decrease in the value of a currency with respect to other currencies. This means that the depreciated currency is worth fewer units of some other currency. While depreciation means a reduction in value, it can be advantageous as it makes exports in the depreciated currency less expensive. To put it differently, if one US dollar can buy 62 INRs today, and can buy 80 INRs tomorrow; The opposite logic holds true for a currency appreciation. But what exactly determines the value of a currency? It is the demand and supply. If more people demand say, US dollar, the value of it goes up relative to the INR, and vice - versa.

Objective Of Study -

- To know about the trend of Indian Rupee and it exchange rate against us $ historically.
- To understand the concept of devaluation.
- To understand the causes and the steps taken by government on the major devaluations that took place in India.
- To study the real implications of the depreciation of the rupee on the Indian economy.

Review of Literature - Various theoretical models are available to analyze exchange rate determination and behavior in the international finance literature. (Mishra & Yadav, 2012) tried to find some stylized facts about the rupee-dollar exchange rates (ER) based on Hooper-Morton model by relating it with five very important macroeconomic variables namely; Money Supply (MS), Real Inflation Rate (RIR), Real Output (Y), Inflation Rate (IR) and Trade Balance (TB) for both domestic and foreign economy.

Sumanjeet Singh in his research in April 2009 showed Depreciation of the Indian Currency: Implications for the Indian Economy, This paper studies the real implications of the depreciation of the rupee on the Indian economy and shows that in the long run, the Indian economy has more to lose and less to gain with weaker rupee.

Susannakurian 1, August 2013 Dollar after being stable for a long time now is climbing back up against the rupee. Recession is less in India, then why dollar is moving up when rupee must be strong.

Research Methedology - This research paper focuses on the effect of devaluation saving and investment pattern on common man. In case of effects of devaluation of INR on common man, the study is exploratory as well as descriptive in context of currency depreciation. The primary data for the study was collected from different background of people like students, working employees, housewives. These people were approached with a well structured questionnaire and they requested to participate in the study. The secondary data was collected from reliable database of Reserve bank of India, SEBI and besides this data was also extracted from websites of different leading newspapers and magazines. As the population covered was large, sample size of 106 individuals belonging to different fields, classes, age groups were taken.

Catastrophic Devaluations Of INR (Devaluation During 1966) - Since 1951, despite government attempts to obtain a positive trade balance, India experienced a severe balance of payments deficits. Inflation caused Indian prices to go sky high. When the exchange rate is fixed and a country experiences high inflation relative to other countries, that country's goods become more expensive and foreign goods become cheaper. Therefore, inflation tends to increase imports and decrease exports. Another reason, which played important role in the 1966 devaluation, was war with Pakistan. The US and other countries withdrew their aid, which further necessitated devaluation. To improve fiscal position, Government of India devalued Rupee by huge 57% against Dollar (Johri & Miller).

Devaluation During 1991 - In 1991, India still had a fixed exchange rate system, where the rupee was hooked to basket of currencies of major trading partner countries. At the end of 1990, the Government of India found itself in serious economic trouble. The government was close to financial default and its foreign exchange reserves had dried up to the point that India could barely finance three weeks of imports. In July of 1991 the Indian government devalued the rupee by 19.5%. The government also changed its trade policy from its highly restrictive form to a system which allowed exporters to

* M.A (Economics) Final Year, Pt. Shambhu Nath Shukla, Post Graduation Government Autonomous College, Rewa, (M.P) INDIA

import 30% of the value of their exports (Saket, 2013).

Devaluation During 2013 - The Indian rupee touched a lifetime low of 68.85 against the US dollar on August 28, 2013. The rupee plunged by 3.7 percent on the day in its biggest single-day percentage fall in more than two decades. Since January 2013, the rupee has lost more than 20 percent of its value, the biggest loser among the Asian currencies (Singh, 2013).

Historical Indian Rupee Rate (INR USD)

Year	INR/USD	Year	INR/USD	Year	INR/USD	Year	INR/USD
1973	7.66	1984	11.36	1995	32.43	2006	45.17
1974	8.03	1985	12.34	1996	35.52	2007	41.20
1975	8.41	1986	12.60	1997	36.36	2008	43.41
1976	8.97	1987	12.95	1998	41.33	2009	48.32
1977	8.77	1988	13.91	1999	43.12	2010	45.65
1978	8.20	1989	16.21	2000	45.00	2011	46.61
1979	8.16	1990	17.50	2001	47.23	2012	53.34
1980	7.89	1991	22.72	2002	48.62		
1981	8.68	1992	28.14	2003	46.60		
1982	9.48	1993	31.26	2004	45.28		
1983	10.11	1994	31.39	2005	44.01		

Average annual currency exchange rate for the Indian Rupee (Rupees per U.S. Dollar) is shown in this table: 1973 to present.

Causes Of Rupee Fall - Main reasons responsible for the Indian rupee which has depreciated as much as 16% this year to touch new lows each passing day.

- **Widening Current Account Deficit -** This is resulting in creating more actual as well as speculative demand for the dollar and other convertible currencies.
- **Policy In Action -** Perception of lack of clarity on the policy front is also fanning speculative demand wherein the Reserve Bank of India on one day said it will tighten liquidity and on yet another said it will inject $1 billion in the market.
- **Low Forex Reserves -** India's foreign exchange reserves are enough to cover imports of only seven months. The forex reserves have declined in the recent months. Due to low reserves, the Reserve Bank of India can not intervene aggressively in the currency markets.
- **Growth Slowdown -** India's gross domestic product, growth fell to a decade low of 5% in 2013. The situation is unlikely to improve much this year. Foreign investors are pulling money out of the Indian markets due to slow growth.
- **Dependence On Foreign Money -** India's current account deficit was financed by foreign money for the last many years. Withdrawal of money by overseas investors is leading to the weakness in the rupee.

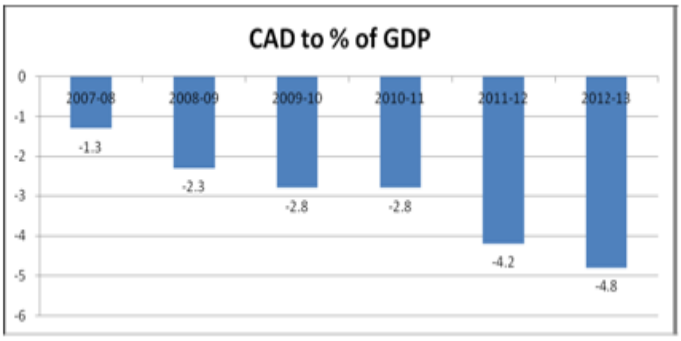

- **Stimulus Withdrawal -** Indications that the U.S may withdraw or ease the fiscal stimulus package could potentially put the brakes on funds for developing economies.

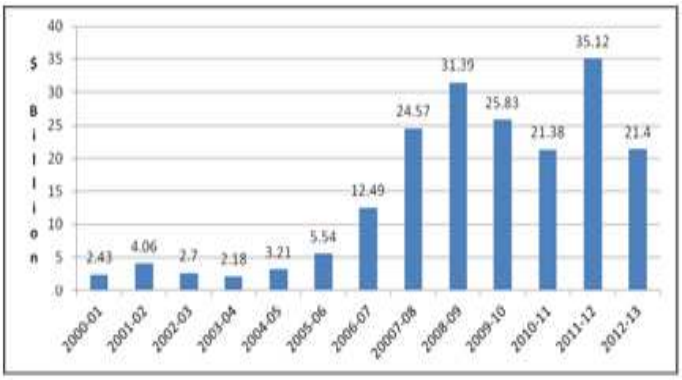

Role Of Reserve Bank Of India During Devaluation

India's regulators toughen rules for derivatives trading in currency markets.RBI directs OMCs to buy dollars from single PSB - With the rupee depreciating sharply against the US dollar, the RBI on 9th July 2013 ordered state-owned oil companies (OMCs) to purchase their dollar requirements from single public sector bank to curb volatility in the currency. State oil-refiners, who are biggest dollar guzzlers, agreed to implement the RBI order with immediate effect.

RBI eases overseas borrowing norms for firms - The Reserve Bank of India on Monday, 8 July 2013, eased norms for non-bank asset finance companies to raise debt from beyond the borders by allowing the lenders to raise such funds through the automatic route as against the approval route earlier, in a step aimed at improving dollar supply amid a weakening rupee. NBFCs can borrow from outside India up to $200 million in a financial year to finance import of infrastructure equipment, the RBI said.

Data Finding And Analysis -

Saving And Consumption Pattern Of People -

PROFESSIONAL

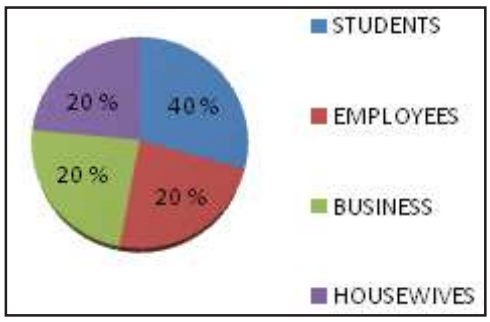

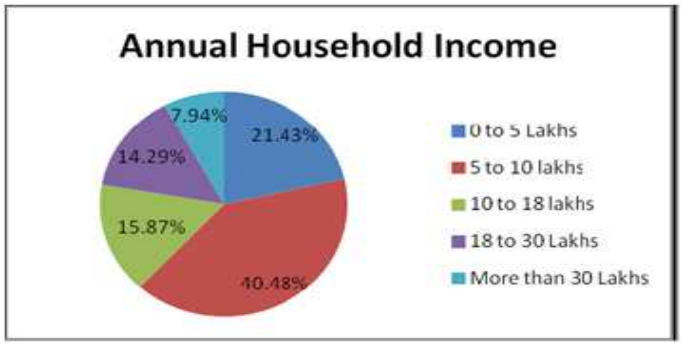

Analysis And Findings -

- Out of total number of people surveyed 40.48% of people have annual income between 5-10 lakhs, 21.43% have annual income between 0-5 lakhs, 15.87% of people have 10-18 lakhs of annual income and rest has more than 18 lakhs per annum of income.
- While 99% of people surveyed are aware of rupee depreciation.
- Those who use to shop once in week almost 52% amongst them now go to market for shopping only once in month, Also those who used to shop once in a month 30% amongst them now goes only once in a quarter to shop in market, this shows that because of increased prices of goods due to currency depreciation in the market.
- Out of people who go once in week for shopping, 33.41% used to spend 6000 - 9000 Rs. And out of these 90% have reduced their shopping expense to 0 – 5000 Rs. 29.33% used to spend 3000 - 6000 Rs. And 14.6% of people used to spend between 0 – 2000 Rs.
- Out of total people surveyed 66.40% people have said that they still prefer to buy foreign branded goods and 33.60% have said that they do not want to buy foreign branded goods after currency depreciation which led to the increase in price of these goods. Out of total people who said that they still want to buy foreign branded goods 59% of them go for shopping only once in month and 41% of people lies in the bracket of 3000 - 6000 Rs of expenditure on their every shopping visit.
- 70.63% of respondents have said that they have started to save more as compared to spending, Out of which 31.4% are service class people, 5.61% are businessman, 37.07% are students and 24.71% are housewives. Also out of total respondents who have started to save more 45% has 5-10 lakhs on annual household income, 20.22% has 0-5 lakhs of income annually, while only 9% of respondents has annual house hold income of more than 30 lakhs rupees.
- Around 30% of respondents have agreed that they have to pay more amount for their foreign education while around 63% of people are strongly affected by higher foreign education cost, this is simply because of depreciation of rupee now they have to pay more to foreign universities.
- Because of currency depreciation there would be an upturn in unemployment rate; this fact has been agreed by 22% while 43% have strongly supported this statement, since earnings of companies have been reduced so the employment rate has also been decreased.

Conclusion - Depreciation and appreciation in rupee is not a permanent phenomenon but it is due to various reasons. An attempt has been made in this study to list out those factors which influence the fluctuation in Indian rupee against dollar. The rupee is also feeling the pinch of the recession in the Euro zone. The euro, which was seen holding the key level of 1.30, has dropped lower to 1.28 levels on the back of deterioration in the local economic data.

References -

1. EconomicTimes;http://articles.economictimes. india-times.com/2013-08-14/news/41409812_1_gold-imports-customs-duty-current-account-deficit ; July 2013.
2. Economic Times; http://economictimes.indiatimes.com/markets/forex/brazil-steps-up-efforts-to-arrest-real-decline/articleshow/22016545.cms.
3. Reserve Bank of India. 2013. Available at: http://dbie.rbi.org.in/DBIE/dbie.rbi?site=home.
4. Money Control Available at: http://www.moneycontrol.com/news-topic/rupee-depreciation/ ; August 2013.
5. Fitch Ratings Agency research report at: http://indiaratings.co.in/upload/research/specialReports/2012/7/3/fitch03Rupee.pdf ; accessed September 2013.
6. Government of India (2013), Central Statistics Office (CSO) website (http://mospi.nic.in/Mospi_New/site/home.aspx).
7. Reuters, Available at: http://in.reuters.com/article/2013/08/08/india-economy-rupee-rbi-forex-idINDEE97709I20130808 ; August 2013.
8. 'Effect of rupee depreciation on common man' prepared by Prof. Navleen kaur and Robin Sirohi.

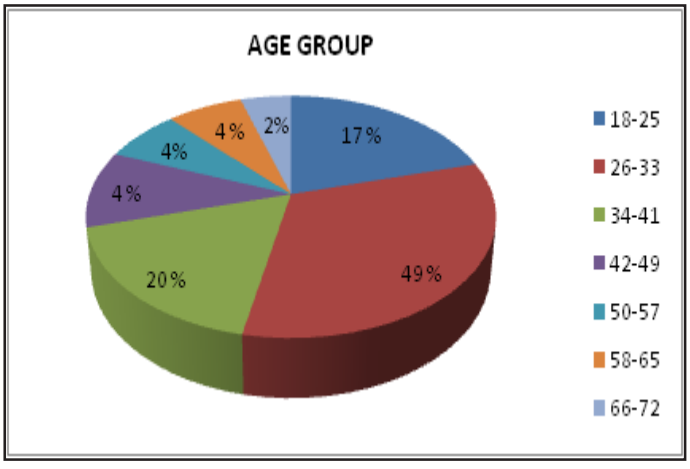

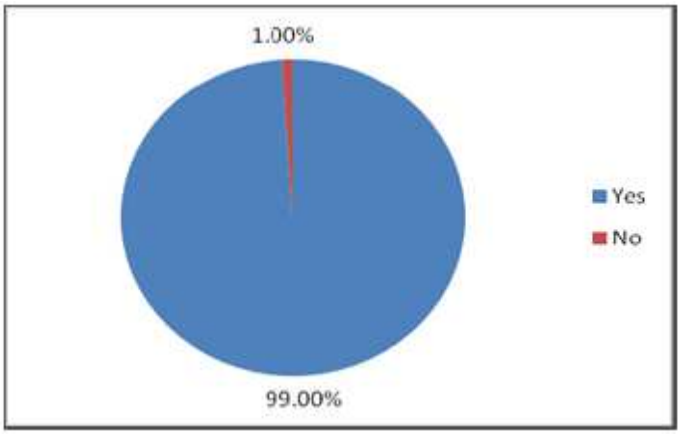

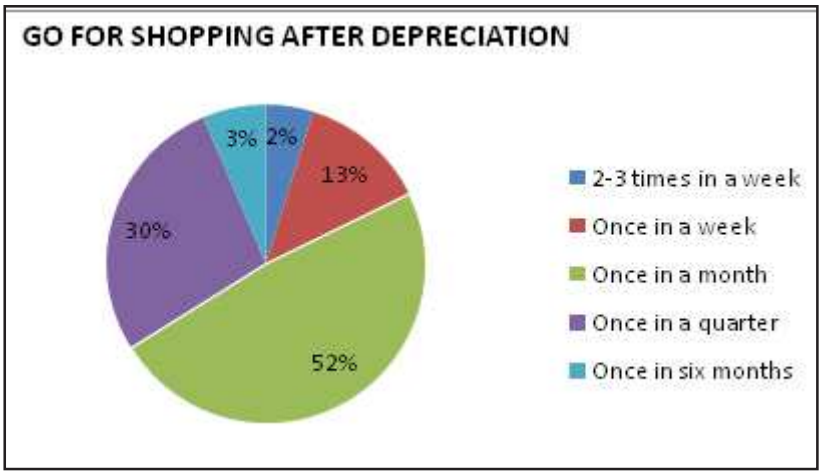
GO FOR SHOPPING AFTER DEPRECIATION
3%
2%
13%
30%
52%
2-3 times in a week
Once in a week
Once in a month
Once in a quarter
Once in six months

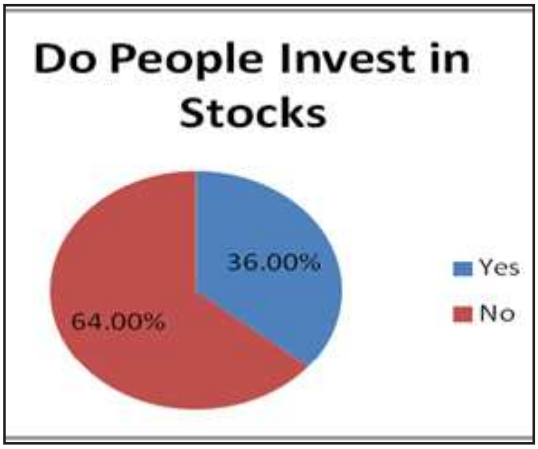
Do People Invest in Stocks
36.00%
64.00%
Yes
No

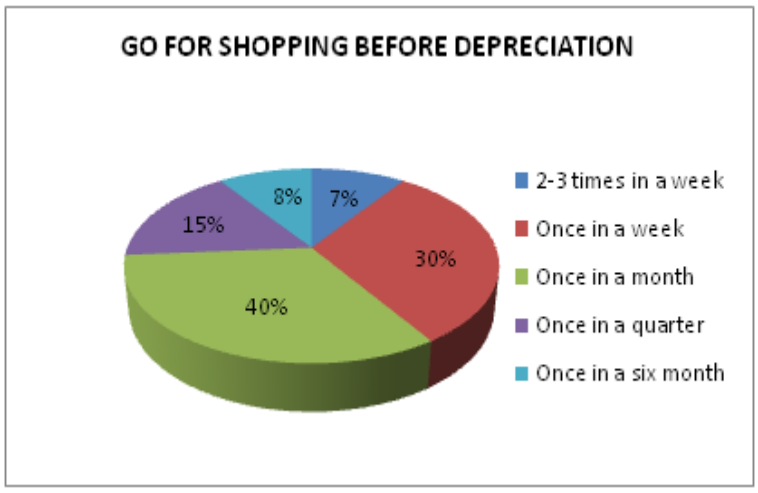
GO FOR SHOPPING BEFORE DEPRECIATION
8%
7%
15%
30%
40%
2-3 times in a week
Once in a week
Once in a month
Once in a quarter
Once in a six month

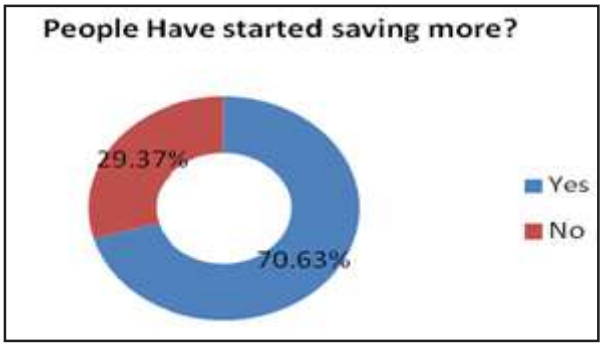
People Have started saving more?
29.37%
70.63%
Yes
No

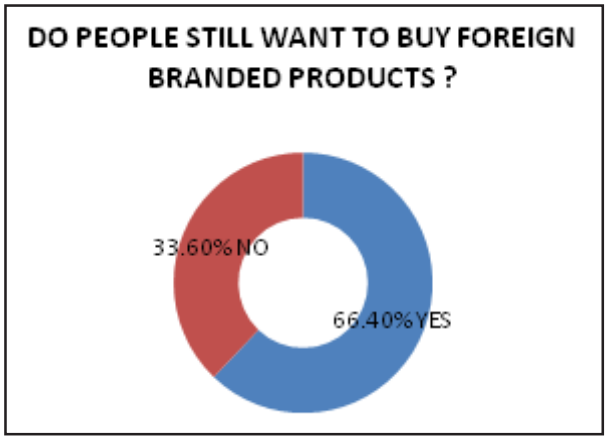
DO PEOPLE STILL WANT TO BUY FOREIGN BRANDED PRODUCTS ?
33.60% NO
66.40% YES

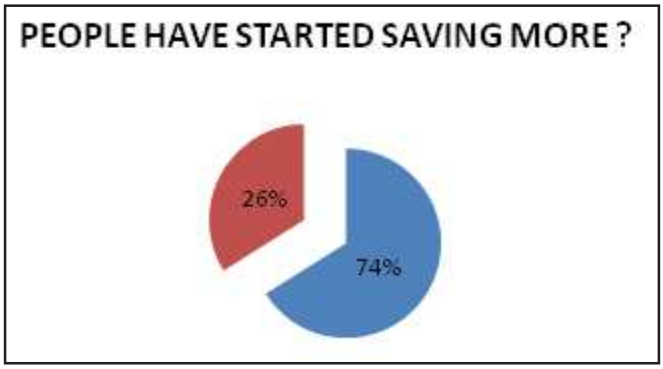
PEOPLE HAVE STARTED SAVING MORE ?
26%
74%

अर्थव्यवस्था और पर्यटन

डॉ. अनीता कौशल *

शोध सारांश –वर्तमान में दुनिया का प्रत्येक राष्ट्र अपने आपको विकसित देशों की श्रेणी में लाना चाह रहा है। इस दौड़ में वह अपने राष्ट्र की प्रति व्यक्ति आय, राष्ट्रीय आय, कुल उत्पादन एवं रोजगार में वृद्धि कर संपन्नता की स्थिति प्राप्त करना चाहता है। यह विकास वह त्वरित औद्योगीकरण, वैज्ञानिक कृषि, उन्नत तकनीक, विदेशी पूंजी, निवेश सभी प्रकार से करने का प्रयत्न कर रहा है। इन सभी का उद्देश्य देश में आर्थिक संपन्नता से लोगों के रहन सहन का स्तर ऊँचा उठे एवं मानव-विकास सूचकांक का स्तर उच्च हो जाये। प्रत्येक अर्थव्यवस्था में व्यापार संतुलन से अधिक भुगतान संतुलन ठीक रहना चाहिए। भुगतान संतुलन साम्य की स्थिति को देश के आयात निर्यात के साथ-साथ विदेशी पर्यटकों के देश में आगमन से उनके द्वारा व्यय की जानी वाली राशि देश के लिए अदृश्य निर्यात के समान रहती है। निश्चित् रूप से प्रत्येक विदेशी पर्यटक जब हमारे देश में आता है तो वह हमारे देश के विदेशी मुद्रा भंडार में वृद्धि करके ही जाता है। इस कारण अर्थव्यवस्था में पर्यटन उद्योग महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

भारत में प्रकृति ने उदारता से अद्भुत सौंदर्य दृश्य प्रदान किये साथ ही यहाँ की प्राचीन परंपरा, अनूठी कलाकृतियों, कहानियों के माध्यम से मानव निर्मित पर्यटन स्थल भी विभिन्न कालों में निर्मित किये गये। समूचे भारत की विभिन्न दिशाओं में पर्यटन स्थल भरपूर मात्रा में है। उत्तर में कश्मीर, कुल्लू मनाली, उत्तरांचल में केदारनाथ, बद्रीनाथ, दिल्ली, उत्तरप्रदेश में आगरा, मथुरा, वाराणसी आदि तो दक्षिण में केरल, गोवा, मीनाक्षी मंदिर, रामेश्वरम् आदि हैं। पूर्व में नेशनल पार्क, असम, मेघालय, कोलकाता तो पश्चिम् में राजस्थान, जयपुर, अजमेर, माउंटआबू, गुजरात, द्वारका, उदयपुर हैं। मध्यभारत में देखें तो पचमढ़ी, भीमबेटका, सांची, अमरकंटक, खजुराहो आदि स्थान हैं। इस तरह से कुछ पर्यटन स्थल ऐतिहासिक युग की कलाओं एवं संस्कृति की कहानी जीवंत करते हैं, तो कहीं धार्मिक मान्यताओं के साथ आस्थायें जुड़ती हैं। कहीं पर्यावरणीय एवं प्राकृतिक सौंदर्य की अनुपम छटायें बिखरती रहती हैं। इस तरह से संपूर्ण भारत पर्यटन की दृष्टि से समृद्धशाली हैं। ये पर्यटन स्थल निश्चित रूप से देश एवं विदेश के सैलानियों को अपनी ओर आकर्षित करने का एक महत्वपूर्ण साधन बन गये हैं। भारत में 2009 में 5.17 मीलियन विदेशी पर्यटक आये थे तत्पश्चत् 2010 में 5.78, 2011 में 6.31 एवं 2012 में 6.58 मीलियन विदेशी पर्यटक आये। पिछले वर्षो की तुलना में 2010 में 11.8 प्रतिशत, 2011 में 9.2 प्रतिशत एवं 2012 में 4.3 प्रतिशत बदलाव आया जो हमारे देश वृद्धि दर की कहानी बता रहे हैं।

प्रस्तावना – वर्तमान में दुनियां का प्रत्येक राष्ट्र अपने आपको विकसित देशों की श्रेणी में लाना चाह रहा है। इस दौड़ में वह अपने राष्ट्र की प्रति व्यक्ति आय, राष्ट्रीय आय, कुल उत्पादन एवं रोजगार में वृद्धि कर संपन्नता की स्थिति प्राप्त करना चाहता है। यह विकास वह त्वरित औद्योगीकरण, वैज्ञानिक कृषि, उन्नत तकनीक, विदेशी पूंजी, निवेश सभी प्रकार से करने का प्रयत्न कर रहा है। इन सभी का उद्देश्य देश में आर्थिक संपन्नता से लोगों के रहन सहन का स्तर ऊँचा उठे एवं मानव-विकास सूचकांक का स्तर उच्च हो जाये। प्रत्येक अर्थव्यवस्था में व्यापार संतुलन से अधिक भुगतान संतुलन ठीक रहना चाहिए। भुगतान संतुलन साम्य की स्थिति को देश के आयात निर्यात के साथ-साथ विदेशी पर्यटकों के देश में आगमन से उनके द्वारा व्यय की जानी वाली राशि देश के लिए अदृश्य निर्यात के समान रहती है। निश्चित रूप से प्रत्येक विदेशी पर्यटक जब हमारे देश में आता है तो वह हमारे देश के विदेशी मुद्रा भंडार में वृद्धि करके ही जाता है। इस कारण अर्थव्यवस्था में पर्यटन उद्योग महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

भारत में प्रकृति ने उदारता से अद्भुत सौंदर्य दृश्य प्रदान किये साथ ही यहाँ की प्राचीन परंपरा, अनूठी कलाकृतियों, कहानियों के माध्यम से मानव निर्मित पर्यटन स्थल भी विभिन्न कालों में निर्मित किये गये। समूचे भारत की विभिन्न दिशाओं में पर्यटन स्थल भरपूर मात्रा में है। उत्तर में कश्मीर, कुल्लू मनाली, उत्तरांचल में केदारनाथ, बद्रीनाथ, दिल्ली, उत्तरप्रदेश में आगरा, मथुरा, वाराणसी आदि तो दक्षिण में केरल, गोवा, मीनाक्षी मंदिर, रामेश्वरम् आदि हैं। पूर्व में नेशनल पार्क, असम, मेघालय, कोलकाता तो पश्चिम में राजस्थान, जयपुर, अजमेर, माउंटआबू, गुजरात, द्वारका, उदयपुर हैं। मध्यभारत में देखें तो पचमढ़ी, भीमबेटका, सांची, अमरकंटक, खजुराहो आदि स्थान हैं। इस तरह से कुछ पर्यटन स्थल ऐतिहासिक युग की कलाओं एवं संस्कृति की कहानी जीवंत करते हैं, तो कहीं धार्मिक मान्यताओं के साथ आस्थायें जुड़ती हैं। कहीं पर्यावरणीय एवं प्राकृतिक सौंदर्य की अनुपम छटायें बिखरती रहती हैं। इस तरह से संपूर्ण भारत पर्यटन की दृष्टि से समृद्धशाली हैं। ये पर्यटन स्थल निश्चित रूप से देश एवं विदेश के सैलानियों को अपनी ओर आकर्षित करने का एक महत्वपूर्ण साधन बन गये हैं। भारत में 2009 में 5.17 मीलियन विदेशी पर्यटक आये थे तत्पश्चात् 2010 में 5.78, 2011 में 6.31 एवं 2012 में 6.58 मीलियन विदेशी पर्यटक आये। पिछले वर्षो की तुलना में 2010 में 11.8 प्रतिशत, 2011 में 9.2 प्रतिशत एवं 2012 में 4.3 प्रतिशत बदलाव आया जो हमारे देश वृद्धि दर की कहानी बता रहे हैं।1 भारत में पर्यटन से विभिन्न वर्षो में विदेशी सैलानियों द्वारा जो व्यय किया गया उससे भारतीय अर्थव्यवस्था में जो विदेशी मुद्रा अर्जित की गई उसका विवरण अग्र तालिका में प्रस्तुत है –

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र), राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

तालिका - भारत में पर्यटन से विदेशी मुद्रा आय (एफईई) (मिलियन अमेरीकी डॉलर में) 1997-2013 (जून तक)

वर्ष	भारत में पर्यटन से विदेशी मुद्रा आय (एफईई) (मिलियन अमेरीकी डॉलर में)	पिछले वर्ष की तुलना में प्रतिशत बदलाव
1997	2889	2
1998	2984	2
1999	3009	2.1
2000	3460	15
2001	3198	-7.6
2002	3103	-3
2003	4463	43.8
2004	6170	38.2
2005	7493	21.4
2006	8634	15.2
2007	10729	24.3
2008	11832	10.3
2009	11136	-5.9
2010 #	14193	27.5
2011 #	16564	16.7
2012 #	17737	7.1
2013 # (जन.-जून)	9201	8.8 @

अग्रिम अनुमान @ जनवरी-जून 2012 की तुलना में वृद्धि दर

स्त्रोत - 1.वर्ष 1997-2009 के लिए भारतीय रिजर्व बैंक

2.वर्ष 2010, 2011, 2012 और 2013 के लिए पर्यटन मंत्रालय, भारत सरकार

तलिका से स्पष्ट हो रहा है कि भारत में विदेशी सैलानियों से जो आय प्राप्त हो रही, उसमें लगातार वृद्धि होती चली जा रही है। इस प्रगति को रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित करेंगे।

भारत में भी घरेलू पर्यटकों की यात्राओं की संख्या भी लगातार बढ़ती जा रही है। 2012 में 103635 करोड पर्यटन यात्राओं की संख्या आंकी गई थी। जो निश्चित रूप से बड़ी मात्रा में रोजगार उपलब्ध कराने का साधन बना हुआ है।

इस उद्योग के विकास में कुछ आधारभूत सुविधाओं की कमी बीच में आ रही है। जैसे अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डो की कमी, यातायात के अन्य सुविधा युक्त साधनों की कमी, पर्याप्त मात्रा में प्रचार का अभाव, होटलों के लिए भू-आवंटन में अनावश्यक विलंब, प्रस्तावित पर्यटन नीति के निर्धारण में असमय विलंब के कारण होटलों के कमरों में वृद्धि, सुस्ती पर्यटन क्षेत्र के विकास में बाधक बन रही है। अध्ययन के दौरान ज्ञात हुआ कि देश में होटलों के कमरों की मांग एवं पूर्ति के बीच भारी अंतर है। यह अंतर डेढ़ लाख कमरों का है जिनमें एक लाख कीफायती कमरे हैं। राज्य सरकार भी लक्जरी कमरों पर सेवा कर लगा रही है, इससे भी होटल उद्योग का बोझ बढ़ रहा है।

पर्यटन उद्योग के विकास के लिए वर्णित समस्याओं का समाधार किया जाना आवश्यक है। जैसे पर्यटन स्थलों पर हवाई अड्डा की व्यवस्था, यातायात व्यवस्था का समुचित प्रबंधन, सड़क, विद्युत, जल, स्वास्थ्य आदि बुनियादी सुविधाओं की पर्याप्त उपलब्धता, सुरक्षा व्यवस्था का कड़ा इंतेजाम, होटलों के विकास एवं सुविधाओं में वृद्धि करना आवश्यक है। 'अतुल्य भारत' अभियान के तहत पर्यटन उद्योगों को बढ़ावा देने के प्रयासों के साथ-साथ पर्यटकों के लिए आवागमन पर 'वीजा ऑन अराइवल' योजना लागू की गई है जो सराहनीय है।

बढ़ती हुई विदेशी सैलानियों की संख्या जहां विदेशी मुद्रा भंडार में वृद्धि एवं घरेलू पर्यटन यात्राओं में वृद्धि, से पर्यटन उद्योग के विकास एवं विशाल मात्रा में रोजगार की विशाल संभावना संजोय हुए है। संयुक्त राष्ट्र विश्व संगठन के अनुसार पर्यटन क्षेत्र विश्व के कुल रोजगार का प्रत्यक्ष रूप से 6 से 7 प्रतिशत प्रदान करता है। जबकि अप्रत्यक्ष रूप से लाखों लोगों को इस तरह रोजगार सृजन के साथ-साथ कुल आर्थिक विकास के ख्याल से इस क्षेत्र को प्रोत्साहित करने की बड़ी आवश्यकता है।

वैश्वीकरण के दौर में जहां हम जैट युग में जी रहे हैं प्रत्येक अर्थव्यवस्था में पर्यटन क्षेत्र अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। और इस क्षेत्र में अगर पर्याप्त सुविधाओं की उपलब्धी एवं पर्यटन क्षेत्र का पर्याप्त संरक्षण एवं सौंदर्यीकरण किया जाये तो विकास की अपार संभावनायें विद्यमान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अप्रवासन ब्यूरो, भारत सरकार
2. पर्यटन मंत्रालय, भारत सरकार
3. भारतीय पर्यटन आंकड़े एवं झलक
4. भारतीय रिजर्व बैंक
5. योजना
6. पर्यटन का अर्थशास्त्र

****

निर्वाह योग्य विकास की अवधारणा

सीमा नागर *

प्रस्तावना – मानव के विकास का आधार उसके द्वारा प्रकृति या पर्यावरण का उपयोग है। मानव विकास की प्रारंभिक अवस्था सीमित जनसंख्या व सीमित आवश्यकताओं के कारण प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के पश्चात् भी पर्यावरण संतुलन बना रहा किन्तु जनसंख्या में वृद्धि तथा आर्थिक विकास के साथ-साथ यह संतुलन बिगड़ने लगा । आर्थिक विकास की प्रक्रिया में प्राकृतिक संसाधनों का बड़ी मात्रा में प्रयोग होता है अत: जहां एक ओर पुनर्उत्पादनीय एवं गैर-पुनर्उत्पादनीय दोनों प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों में कमी आती है, वही विकास की प्रक्रिया से उत्पन्न विषैली गैसों एवं अन्य अपशिष्ट पदार्थो से पर्यावरण प्रदूषित होता है। स्पष्टत: वर्तमान में विकास की जो प्रक्रिया अपनाई जा रही है उससे न केवल भावी विकास की दर पर दुष्प्रभाव पड़ेगा वरन् प्रदूषित पर्यावरण से मानव जीवन की गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। पर्यावरणीय समस्याओं के कारण विकास को नहीं रोका जा सकता है साथ ही पर्यावरण प्रदूषण के कारण समस्त जीव जगत पर बढ़ते संकट की उपेक्षा भी नहीं की जा सकती है। अत: पर्यावरण को बचाते हुए स्वपोषी विकास की अवधारणा विकसित हुई।

निर्वाह योग्य विकास की धारणा में संसाधनों के आर्थिक और पर्यावरणीय पहलुओं को साथ में रखा जाता है। इसके साथ ही निर्वाह योग्य विकास में अपशिष्ट पदार्थो के प्रबन्धन, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, प्रजाति दुर्लभता का नियंत्रण, भावी पीढ़ियों के कल्याण हेतु विनियोग भी शामिल है।

निर्वाह योग्य विकास से अभिप्राय ऐसे विकास से है जो पर्यावरण को हानि पहुँचाए बिना जीवन की गुणवत्ता जारी रख सके।

निर्वाह योग्य विकास के लक्ष्य – ब्रंटलैण्ड आयोग के अनुसार निर्वाह योग्य विकास के निम्न लक्ष्य निर्धारित किये गये है –

1. रोजगार, भोजन, ऊर्जा, जल तथा स्वच्छता जैसी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना।
2. जनसंख्या को इतना ही रखना कि उसका पोषण स्थायी तौर पर हो सके।
3. प्रौद्योगिकी को नई दिशा देना।
4. संसाधन स्त्रोतों का संरक्षण तथा परिवर्द्धन करना।
5. नीतिगत निर्णयों में पर्यावरण एवं अर्थशास्त्र का समन्वय करना।

निर्वाह योग्य विकास की विशेषताएँ :-

1. निर्वाह योग्य विकास में व्यक्तियों को प्रमुख स्थान दिया गया है। इसमें न केवल वर्तमान पीढ़ी बल्कि भावी पीढ़ी के विकास का भी ध्यान रखा जाता है।
2. निर्वाह योग्य विकास में विभिन्न पीढ़ियों के बीच तथा एक ही पीढ़ी के विभिन्न वर्गो के बीच समानता पर जोर दिया जाता है।
3. निर्वाह योग्य विकास समानता तथा सामाजिक न्याय के सिद्धांतों पर आधारित है।
4. निर्वाह योग्य विकास में निर्धनता को कम करने, रोजगार का सामाजिक एकीकरण, पर्यावरण के नवीनीकरण पर जोर देने के साथ-साथ सामाजिक क्षेत्र जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य आदि पर अधिक विनियोग की आवश्यकता पर भी बल दिया जाता है।
5. निर्वाह योग्य विकास में पर्यावरण संरक्षण पर बल दिया जाता है तथा उसमें गुणात्मक सुधार के प्रयास भी किये जाते हैं।
6. निर्वाह योग्य विकास में पर्यावरणीय घटक जैसे- वायु, जल एवं भूमि की गुणवत्ता को बनाये रखने पर जोर दिया जाता है तथा ये वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों की सामूहिक विरासत का प्रतिनिधित्व करते हैं।

निर्वाह योग्य विकास के सूचक – निर्वाह योग्य विकास का संबंध जहाँ एक ओर पर्यावरण पारिस्थितिकी से है वहीं दूसरी ओर आर्थिक गतिविधियों से भी है। अत: निर्वाह योग्य विकास के सूचक का संबंध इन दोनों से होना चाहिए। निर्वाह योग्य विकास के अंतर्गत पर्यावरण तथा सामाजिक हितों के अनुकूल विकास के कार्यक्रमों को योजनाबद्ध रूप में क्रियान्वित किया जाता है। निर्वाह योग्य विकास के विभिन्न सूचक इस प्रकार है-

1. निर्वाह योग्य कृषि विकास – इसमें रासायनिक उर्वरकों एवं खतरनाक कीटनाशकों के स्थान पर जैव उर्वरकों तथा जैव कीटनाशकों का प्रयोग कर कृषि उत्पादन को बढ़ावा दिया जाता है।

2. निर्वाह योग्य औद्योगिक विकास – इसके अंतर्गत उद्योगों को प्रदूषण फैलाने से रोकने का प्रयास किया जाता है। औद्योगीकरण की प्रक्रिया में वृहद्, मध्यम तथा लघु उद्योग स्थापित किये जाते हैं। इनमें प्रदूषण के शमन से संबंधित संयंत्र नहीं लगाये जाते हैं। निर्वाह योग्य विकास में ऐसे उद्योगों को स्थापित किया जाता है जो उपभोक्ता तथा पूँजीगत वस्तुओं का उत्पादन तो करें किन्तु वस्तु की कीमत पर समाज को प्रदूषित न करें।

3. प्रदूषण मुक्त परिवहन – यह भी निर्वाह योग्य विकास का एक सूचक है। परिवहन के विभिन्न साधन हानिकारक धुंए का उत्सर्जन कर वायु एवं ध्वनि प्रदूषण फैलाते हैं। अत: निर्वाह योग्य विकास में ऐसे परिवहन साधनों का विकास किया जाना चाहिए जो वातावरण प्रदूषित न करें।

4. प्रदूषण मुक्त ऊर्जा उत्पादन – यह भी निर्वाह योग्य विकास का एक महत्वपूर्ण सूचक है। ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोतों से विद्युत उत्पाद करने पर पर्यावरण के प्रदूषित होने का खतरा रहता है। अत: ऊर्जा उत्पादन के लिए गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों को भी अपनाया जाना चाहिए।

5. जनसंख्या नियंत्रण – अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि निर्धनता तथा पर्यावरण प्रदूषण दोनों को प्रोत्साहित करती है। अत: निर्वाह योग्य विकास

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

के लिए जनसंख्या नियंत्रण अनिवार्य है। जनसंख्या नियंत्रण होने पर निर्धनता तथा बेरोजगारी की समस्याओं को भी हल किया जा सकता है।

6. **संतुलित विकास –** पूर्ण आर्थिक सामाजिक कल्याण प्राप्ति के लिए संतुलित विकास के साथ ही उन क्षेत्रों या संसाधनों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए जिनका अत्यधिक विदोहन किया गया है।

7. **अपशिष्टों का पुन: चक्रण –** अनेक वस्तुओं एवं पदार्थों के अपशिष्टों का पुन: चक्रण करके पर्यावरण प्रदूषण को रोककर निर्वाह योग्य विकास किया जा सकता है।

8. **जल का उचित उपयोग –** सतही जल एवं भूमिगत जल संसाधनों का संतुलित तथा न्यायोचित उपयोग करके निर्वाह योग्य विकास को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

9. **सीमित संसाधनों का उचित उपयोग –** निर्वाह योग्य विकास के लिए सीमित संसाधनों का वैज्ञानिक तरीके से अनिवार्य कार्यो में ही उपयोग किया जाना चाहिए।

10. **पर्यावरणीय शिक्षा –** संसाधनों के संरक्षण के लिए स्थानीय क्षेत्रीय, प्रादेशिक तथा केन्द्रीय सरकारों के साथ नागरिक संगठनों तथा गैर सरकारी स्तर पर जागरूकता एवं सहयोग होना आवश्यक है।

11. **पर्यावरण के क्षेत्र में शोध –** पर्यावरणीय शोध के माध्यम से निर्वाह योग्य विकास की धारणा को मजबूत बनाना आवश्यक है।

12. **वनस्पति, पशु, पक्षियों, कीट पतंगों का संरक्षण –** इन सभी का पर्यावरण संतुलन बनाने में महत्वपूर्ण योगदान है। अत: इन सभी के समुचित संरक्षण से ही निर्वाह योग्य विकास संभव है।

निष्कर्ष – निर्वाह योग्य विकास की धारणा के अनुसार विकास को मात्र आर्थिक उत्पादन से न जोड़कर उसके आर्थिक, सामाजिक एवं पारिस्थितिकीय पक्षों पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। पारिस्थितिक तंत्र के अनुरूप विकास हेतु पर्यावरण को कम से कम हानि पहुँचाने वाली प्रौद्योगिकी का विकास, जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण, भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए संसाधनों का नियोजित तथा नियमित उपयोग, संसाधन संरक्षण आदि उपायों को क्रियान्वित करना आवश्यक है। पर्यावरण के बिना हम अस्तित्वहीन हैं अत: पर्यावरण को संरक्षित रखते हुए निर्वाह योग्य विकास की धारणा को विकसित करना सामयिक होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विकास एवं पर्यावरण का अर्थशास्त्र – डॉ.जे.पी.मिश्रा, डॉ.एम.सी.जैन
2. विकास एवं पर्यावरण का अर्थशास्त्र – डॉ.वी.सी.सिन्हा, डॉ.पुष्पा सिन्हा
3. भारतीय आर्थिक नीति – डॉ.पी.डी.माहेश्वरी, डॉ.शीलचन्द्र गुप्ता
4. योजना – भारत सरकार का प्रकाशन

****

भारत में कृषि के विकास के लिये योजनाऐं, नीतियाँ एवं कार्यक्रम एक अध्ययन

डॉ. आर. एस. मण्डलोई *

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है यहां की वर्तमान में 60 प्रतिशत जनसंख्या कृषि क्षेत्र पर आजीविका के लिए निर्भर है। इतनी बढ़ी आबादी का कृषि पर निर्भर रहने का प्रमुख कारण कृषि उत्पादन की पुरानी तकनीक, मानसून पर निर्भर सिंचाई सुविधाओं का अभाव तथा औद्योगिक क्षेत्र का पीछड़ापन। भारत आज के विकसीत देशों से काफी पुराना देश है। कृषि भारत में कई शताब्दी पूर्व ही सापेक्षिक दृष्टि से परिपक्वता की स्थिति में पहुंच चुकी थी और उस समय देश में कृषि तथा उद्योग में संतुलन था जिससे कृषक वर्ग की दशा उतनी खराब नहीं थी जितनी आज है। यह स्थिति अठारहवीं शताब्दी तक बनी रही। भारत में अंग्रेजों की घुसपेठ और उनकी मिलों में बने माल की बिक्री से भारतीय अर्थव्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गयी। हाथकरघा और चरखा उद्योग नष्ट हो गये। व्यापार के नाम पर अंग्रेजों ने प्रत्यक्ष खुलेआम लुटमार करते रहते थे। हालात क्या थे इसका अंदाजा बंगाल के नवाब की कम्पनी को उसके एजेन्टों की शिकायत से लगाया जा सकता है। अंग्रेज गर्वनर के नाम बंगाल के नवाब ने अपने मेमोरेण्डम में लिखा था ''वे (कम्पनी के एजेन्ट) किसानों, व्यापारियों आदि को जबरदस्ती एक चौथाई देकर उनके माल और उत्पादन को हड़प लिया और किसानों को मारपीट कर वे अपनी एक रूपये की वस्तु पाँच रूपये में बेचे।'' इस तरह कम्पनी द्वारा किसानों को लुटने का दूसरा सीधा तरीका मालगुजारी का था परंतु किसानों की सुध लेने वाला कोई नहीं था।

स्वतंत्रता के पश्चात् भी लगभग दो दशक तक भारतीय कृषि में आमूलचूल परिवर्तन नहीं हुआ, परंतु 1966 के बाद हरितक्रांति के आगमन से भारतीय कृषकों तथा कृषि की स्थिति में परिवर्तन हुआ। महात्मा गांधी हमेशा कहा करते थे कि पूर्ण स्वराज का रास्ता ग्राम स्वराज होकर जाता है। चूंकि 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 83 प्रतिशत जनता गांवों में निवास करती है और उनका मुख्य व्यवसाय कृषि तथा कृषि से जुडे उद्योग है। ऐसी स्थिति में कृषि विकास के बिना देश का संपूर्ण विकास असंभव है। अत: भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ कृषि है।

भारत में कृषि का महत्व-

भारतीय अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि प्रधान है। आज देश की 121 करोड़ की जनसंख्या में लगभग 83 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है जो पूर्णत: कृषि व्यवसाय पर आश्रित है। इस प्रकार भारतीय कृषि का जो महत्व भारतीय जीवन में है वह हमारी संस्कृति हमारे विचारों से जुड़ा है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। देश के समग्र सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में कृषि का योगदान काफी अधिक है किन्तु यह धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। 1950-51 में यह 55.4 प्रतिशत था जो 2011-12 में घटकर 15 प्रतिशत से भी कम हो गया है। फिर भी कृषि आज भी विकास का आधार है। देश की कुलश्रम शक्ति का लगभग 52 प्रतिशत भाग कृषि एवं उससे संबंधित उद्योग-धन्धों से अपनी आजीविका कमाते है और निजी क्षेत्र का यह सबसे बड़ा अकेला व्यवसाय है। उद्योग में कच्चा माल कृषि से ही प्राप्त होता है। विदेशी व्यापार का अधिकांश भाग कृषि से जुडा हुआ है, वर्ष 2012-13 में 11 प्रतिशत देश के निर्यात में कृषि का योगदान हैं भारत में वर्ष 1960-61 में 8202 मिलियन मिट्रन से बढकर 2011-12 में 250 दर मिलियन मिट्रन हो गया है।

योजनाकाल में कृषि विकास – भारतीय अर्थव्यवस्था में विकास का दौर 1950-51 में प्रथम पंचवर्षीय योजना से आरंभ हुआ, और इन 62 वर्षो की विकास अवधि में 11 पंचवर्षीय योजनाएं पूर्ण की जा चुकी है। जिसके परिणामस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था के स्वरूप में काफी परिवर्तन हुआ है।प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि पर 601 करोड़ रूपये व्यय किये गये जो कुल व्यय किये गये। द्वितीय पंचवर्षीय में 950 करोड रूपये कृषि पर व्यय किये गये। तृतीय पंचवर्षीय योजना में कृषि पर 1750 करोड़ रूपये व्यय गये।

पांचवी पंचवर्षीय योजना में कृषि विकास पर कुल 8740 करोड़ रूपये व्यय किये गये। छठीं योजना में 26100 करोड़ रूपये कृषि पर व्यय करते हुए 43 प्रतिशत की वार्षिक कृषि विकास दर प्राप्त की है। सातवीं एवं आठवीं पंचवर्षीय योजना में क्रमश: 47100 करोड़ रूपये एवं 101599 करोड़ रूपये व्यय किये गये है। इन योजनाओं में कृषि विकास के लिए राष्ट्रीय वाटर शेड कार्य, सुखी कृषि विकास, राष्ट्रीय तिलहन विकास, सामाजिक वानिकी आदि कार्यक्रम लागू किये। नौवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि एवं संबंधित क्षेत्रों पर 1,61880 करोड रूपये व्यय किये गये। दसवीं पंचवर्षीय योजना में 3,05,055 करोड़ रूपये कृषि विकास पर व्यय किये गये। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि विकास की दर 4 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया था। बारहवीं योजना प्रगति पर है। इस योजना में विशेष रूप से कृषि एवं ग्रामीण विकास पर ध्यान दिया जा रहा है।

भारतीय कृषि नीति – भारत में योजनाकाल के दौरान कृषि विकास एवं ग्रामीण विकास पर विशेष महत्व दिया गया है। स्वतंत्रता के पूर्व भारतीय कृषि का स्तर बहुत निम्न था। खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धि दर भी काफी कम थी। इसी तथ्यों के मद्देनजर देश के नीति निर्माताओं ने कृषि विकास हेतु नियोजित तरीके अपनाये। कृषि संबंध के पुनर्गठन के लिए तथा ग्रामीण विकास हेतु राष्ट्रीय स्तर पर भूमि सुधार कार्यक्रम और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को शुरू किये।

राष्ट्रीय कृषि नीति – 28 जुलाई 2000 को भारत सरकार ने राष्ट्रीय कृषि नीति की घोषणा की है। इस नीति का उद्देश्य भारतीय कृषि की व्यापक छुपी

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

हुई विकास संभावनाओं का पूरा लाभ उठाना, कृषि विकास को प्रोत्साहित करने के लिए ग्रामीण आधार संरचना को मजबूत बनाना, मूल्य संवर्धन को प्रोत्साहन देना, कृषि व्यवसाय के विकास को तेज करना, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर पैदा करना, किसानों तथा कृषि श्रमिकों एवं उनके परिवारों के लिए एक उचित जीवन स्तर की व्यवस्था करना, ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की और पलायन रोकना तथा आर्थिक उदारीकरण एवं वैश्वीकरण से पैदा होने वाली चुनौतियों का सामना करना।

राष्ट्रीय कृषि नीति के लक्ष्य-

1. कृषि क्षेत्र में 4 प्रतिशत वर्ष संवृद्धि दर प्राप्त करना।
2. विकास के साथ समानता
3. विकास मांग प्रेरित
4. घरेलू बाजार के अनुरूप
5. धारणीय विकास
6. संसाधनों का कुशल उपयोग

कृषि विकास के लिए योजनाएँ एवं कार्यक्रम – शासन ने कृषि उत्पादन में गिरती प्रवृत्ति को रोकने एवं किसानों को सक्षम आजीविका और आय स्तर के स्थायी समाधान खोजने के लिए कई महत्वपूर्ण कृषि विकास योजना एवं कार्यक्रम लागू किये गये है जिनमें प्रमुख निम्नवत है-

1. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन – यह योजना 16 अगस्त 2007 से लागू की गई थी। इस योजना में वर्ष 2007-08 से 2010-11 की अवधि के लिए 3381 करोड रूपये व्यय किये गये।ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना के दौरान इस योजना का कुल परिव्यय 48825 करोड़ रूपये का है तथा 2011 तक 3381 करोड़ रूपये खर्च किये जा चुके है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के तहत प्रस्तावित आवंटन अग्र तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 1

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन के तहत प्रस्तावित आवंटन (करोड रूपये)

वर्ष	चावल	गेहूँ	दाले	कुल
2007-08	70.8	234.6	96.9	402.3
2008-09	348.1	682.7	285.9	1316.8
2009-10	366.3	290.8	287.2	944.2
2010-11	428.3	341.5	286.4	1056.3
2011-12	508.8	570.8	283.4	1163.00
कुल	**1722.3**	**1920.3**	**1239.9**	**4882.5**

स्त्रोत- प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक भारतीय अर्थव्यवस्था 2008

2. राष्ट्रीय कृषि विकास योजना – यह योजना 16 अगस्त 2007 को 25000 करोड़ रूपये आवंटन के साथ लागू की गई। इस योजना का मुख्य उद्देश्य कृषि और संबद्ध क्षेत्रों की सम्पूर्ण विकास करके ग्यारहवीं योजना के दौरान 4 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि प्राप्त करना। इस योजना के अंतर्गत वर्ष 2011-12 में 7860 करोड आवंटित किया गया। इसी योजना के संदर्भ में भारत के वित्त मंत्री ने वर्ष 2011-12 में अपने बजट भाषण में सराहना करते कहा था कि यह योजना 60000 गांवोंमें पूर्ण बजट एवं लक्ष्य के साथ विस्तार किया जायेगा।

3. राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना – यह योजना 1999-2000 से लागू की गई। योजना के मुख्य उद्देश्य सूखे, बाढ, अकाल, अतिवृष्टि, ओलावृष्टि, कीटबीमारियों आदि जैसी प्राकृतिक आपदाओं के कारण फसल को हुई क्षति से किसानों को आर्थिक सहायता प्रदाना करना। इस योजना में 2007-08 तक 10 करोड़ किसानों को लाभ प्रदान किया जा चुका है। योजना 2008 के बजट में 100 करोड़ रूपये आवंटन किया गया है।

4. कृषि आय बीमा योजना – इस योजना को 2003-04 में लागू किया गया है। योजना के अंतर्गत किसानों को उनकी उपज का कुल मूल्य न्यूनतम समर्थन मूल्य पर आधारित मिलने की गारंटी वर्ष 1999 से 2011 तक 176 मिलियन कृषकों को बीमा कवर दिया गया।

5. वर्षा बीमा योजना – मनसून पर आधारित कृषि होने के कारण वर्षा बीमा योजना को वर्ष 2004 से शुरू की गई। इस योजना का मुख्य उद्देश्य मानसून असफल होने पर कृषि पर बीमा कवर तथा सूखा पडने पर बीमा कवर, बुआई में विफलता होने पर बीमा के तहत कृषकों के बीमा होने पर आर्थिक सहायता दी जाती है।

6. किसान क्रेडिट कार्ड योजना – किसान क्रेडिट कार्ड योजना अगस्त 1998 से प्रारंभ किया गया है योजना में वर्ष 2007 में 705.55 लाख किसान क्रेडिट कार्ड जारी किये गये तथा वर्ष 2012 तक 12.78 करोड़ किसान क्रेडिट कार्ड जारी किये जा चुके है।

7. किसानों के लिए ऋण माफी योजना – यह योजना 2009 से लागू किया गया है। इस योजना में 2008 एवं 2009 में 15-15 हजार करोड़ रूपये, 2010 में 12 हजार करोड़ रूपये, 2011 में 8314 हजार करोड़ रूपये व्यय किये जा चुके है।

8. राष्ट्रीय कृषक नीति – भारत सरकार ने राष्ट्रीय कृषक आयोग की सिफारिशों को मानते हुए राष्ट्रीय कृषक नीति को मंजूरी दे दी है। इस नीति की मुख्य बातें -उत्पादन एवं उत्पादकता पर ही किसानों के आर्थिक स्थिति में सुधार करने पर ध्यान देना।

उक्त कार्यक्रमों के अतिरिक्त कृषि विकास के कार्यक्रम जैसे- आइसोपोम, किसान काल सेंटर एवं कृषि चैनल, राष्ट्रीय बांश मिशन, जल प्रबंधन, भूमि सुधार, कृषि श्रमिक सामाजिक सुरक्षा योजना आदि योजनाएँ लागू कर कृषकों को उत्पादन एवं उत्पादकता बढाने हेतु शासन द्वारा युद्ध स्तर प्रयास किया जा रहा है।

समस्याएँ एवं सुझाव- भारत में कृषि विकास कार्यक्रमों एवं नीतियों के क्रियान्वयन में निम्न समस्याएँ है-

1. कृषि विकास कार्यक्रमों का सही क्रियान्वयन न होना।
2. कृषि विकास योजना का लाभ वास्तविक कृषकों को न मिलना।
3. व्यापक भ्रष्टाचार होने के कारण कृषकों को वास्तविक लाभ प्राप्त न होना।
4. सतत् मॉनीटरिंग एवं मूल्यांकन का अभाव।
5. किसानों को उचित बीज, रासायनिक खाद का उपलब्ध न होना।
6. किसानों की आय बढ़ाने के उचित व्यापार नीति तंत्र का न होना।
7. कृषकों को उनकी फसल का उचित मूल्य प्राप्त न होना।
8. कृषि संबंधी नीतियों एवं कार्यक्रमों में मानवीय एवं लैंगिक आयामों को मुख्य धारा के साथ न जोडना
9. कार्यक्रमों का व्यापक प्रचार-प्रसार न होना।
10. कृषि उत्पादों के भण्डारण की उचित व्यवस्था न होना।
11. कृषि क्षेत्र के विकास शोध अनुसंधान की व्यवस्था का अभाव।
12. सिंचाई सुविधाओं का अभाव।

सुझाव –

1. कृषकों के लिए बीज, सिंचाई, खाद मशीनरी और उपकरणों आदि के

क्रय करने के लिए उचित मूल्य पर पर्याप्त मात्रा में ऋण व सब्सिडी उपलब्ध कराया जाना चाहिए।
2. किसान परिवारों के लिए गैर कृषि क्षेत्र में रोजगार के लिए समुचित उपाय करके उपयुक्त अवसर प्रदान करना।
3. कृषि विकास कार्यक्रमों एवं नीतियों का सही क्रियान्वयन होना चाहिए।
4. भ्रष्टाचार को खत्म करना चाहिए।
5. कृषकों को पर्याप्त मात्रा में तथा आसानी से कृषि ऋण उपलब्ध कराना चाहिए।
6. सभी कृषकों को कृषि बीमा योजना कवर करवाना चाहिए।
7. कृषि अनुसंधान पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।
8. वास्तविक कृषकों को योजनाओं का लाभ सीधे दिया जाना चाहिए।
9. कृषकों में कृषि के प्रति जागरूकता बढ़ाना चाहिए।
10. कृषि से पलायन को रोका जाना चाहिए।
11. कृषि विकास पर आवंटन बढ़ाया जाना चाहिए।
12. कृषि उपज का उचित मूल्य दिया जाना चाहिए जिससे कृषक अधिक से अधिक उत्पादन करने हेतु प्रोत्साहित होंगे।
13. सार्वजनिक निजी सहभागिता पद्धति में कृषि के लिए टर्मिनल मंडियों का विकास किया जाये।

निष्कर्ष – विश्व के सबसे बडे लोकतंत्र भारत की खुशहाली एवं समृद्धि का रास्ता गांवों की गलियों से ही होकर गुजरता है। चूंकि भारत की आत्मा गांवों में निवास करती है ऐसी स्थिति में ग्रामीण विकास एवं कृषि विकास किया जाना अतिआवश्यक है। भारत एक ग्रामीण एवं कृषि प्रधान देश है। यहां 83 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है तथा उनका मुख्य व्यवसाय कृषि ही है। अत: कृषि विकास के बिना भारत के विकास की कल्पना करना व्यर्थ है। इस संदर्भ में भारत सरकार के प्रयासों की प्रशंसा करनी होगी जो 1951 से लेकर ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना तक कृषि विकास को पूर्ण रूप से समर्पित होकर इसके लिए गम्भीर प्रयास किये। जिस कारण भारत में खाद्यान्न उत्पादन में आत्म निर्भरता प्राप्त की है।

शासन द्वारा प्रत्येक योजना में कृषि एवं संबंध क्षेत्र में बजट बढ़ाया है। दूसरी तरफ देश की जनसंख्या में निरंतर वृद्धि होती रही। जिससे ज्यादा खाद्यान्न की मांग होने लगी। भूमि क्षेत्र में कुछ संस्थागत सुधार हुए जिनका खेती पर बेहतर असर हुआ। इनमें जमींदारी प्रथा की समाप्ति तथा असामी संरक्षण प्रमुख थे। खेती की कुल पैदावार में फसलों का योगदान 80 प्रतिशत से घटकर 1971 के दशक में 67 प्रतिशत रह गया। हालांकि हरित क्रांति से गेहूँ और चावल का उत्पदान बढ़ा। भारत सरकार द्वारा बढ़ती जनसंख्या तथा घटता खाद्यान्न संकट में संतुलन बनाये रखने के लिए कृषि विकास कार्यक्रम जैसे- राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, कृषि बीमा योजना, फसल बीमा योजना, भूमि सुधार, राष्ट्रीय कृषक नीति, जल प्रबंधन, किसान क्रेडिट कार्ड योजना, बीज एवं रासायनिक खाद कार्यक्रम आदि क्रियान्वित कर देश में कृषि विकास बढ़ावा देने का अथक प्रयास कर रही है। जिसका परिणाम आज भारतीय कृषक नगदी फसलों के साथ खाद्यान्न उत्पादन पर भी ध्यान दे रहे है तथा कृषि विकास दर में भी परिवर्तन आया है। किन्तु इसका दूसरा पहलू यह है कि आज भी भारतीय कृषि लचर है। सिंचाई सुविधाओं का अभाव है। कृषि मानसून पर निर्भर है। आज भी कई कृषक कृषि को छोड़कर दूसरे व्यवसाय में पलायन कर रहे है। प्रतिदिन किसान आत्म हत्या कर रहे। कृषि घाटे का सौदा बनती जा रही है। कृषि विकास दर गिरती जा रही है। खाद्यान्न का संकट बढता जा रहा है। कुपोषण जैसी बीमारियां घर करने लगी।

अंत में कहा जा सकता है कि शासन द्वारा कृषि विकास की जितनी योजनाएं चल रही है, उन्हीं का सही क्रियान्वयन करके कृषकों का संरक्षण कर उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। कृषकों को सभी प्रकार की फसलों के उत्पादन बढाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, कृषि से पलायन रोककर कृषि में निवेश बढाना चाहिए। साथ ही कृषकों को समय-समय पर योजनाओं का लाभ तथा ऋण उपलब्ध कराये जाये तथा आधुनिक मांक के अनुसार फसलों का उत्पादन किया जाये तो निश्चित रूप से हमारी कृषि में अच्छी विकास हागी, कृषक खुशहाल होगें और अधिक कृषि हेतु प्रोत्साहित होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Amarlya Sem, “Poverty and Economic Development New Delhi” P. 246
2. मोहनदास करमचंद्र गांधी (1969), ‘मेरे सपनों का भारत’ सर्व सेवा संघ वाराणसी पृ.15
3. जवाहरलाल नेहरू (1986) ‘विश्व इतिहास की झलक’ सस्ता साहित्य मंडल नई दिल्ली, पृ.589
4. Subrata Ghatak and Ken Ingersent (1984), "Agriculture and Economic Development, New Delhi, P' 69
5. Manilal B Nanavati and J.J. Anjaria (1970), "The Indian Rural Problem” Bombay P' 331-333
6. Govt. of India (2000-01) Economic survey, Delhi Box 8.1 P 170.
7. मिश्र: पुरी (2007)ए ‘भारतीय अर्थव्यवस्था’ हिमालया पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली पृ.372-376
8. दत्ता एवं सुन्दरम (2011) ‘भारतीय अर्थव्यवस्था’ एस.चन्द प्रकाशन नई दिल्ली पृ.475-476
9. भारत सरकार आर्थिक समीक्षा (2011-2012)
10. प्रतियोगिता दर्पण विशेषांक (2008) ‘भारतीय अर्थव्यवस्था’ उपकार प्रकाश, आगरा
11. योजना (पत्रिका) विशेषांक (जनवरी 2012) प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, दिल्ली

****

महिला सशक्तिकरण में स्वसहायता समूह की भूमिका

डॉ. ए. के. पाण्डेय *

प्रस्तावना – स्वसहायता समूह एकसमान सामाजिक–आर्थिक स्तर के लोगों का एक ऐसा समूह है जो नियमबद्ध तरीके से संचालित हो। और आपसी सहयोग व संसाधनों से विकास के लिये प्रयासरत् हों। स्वसहायता समूह **'संगठन में शक्ति'** की अवधारणा पर आधारित हैं। स्वसहायता समूह मुख्य रुप से गरीबी में जीवन–यापन कर रहे लोगों के जीवन–स्तर के उन्नयन के लिये निर्मित किये जाते हैं।

ग्रामीण भारत में महिला स्वसहायता समूहों ने लाखों अशिक्षित गरीब तबके की महिलाओं को न केवल घर के चूल्हा–चौके के बंधन से बाहर निकाला वरन् उन्हें महत्वपूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने में समर्थ बनाया है। भारत में स्वसहायता समूहों की शुरूआत व विकास कुछ स्वयं सेवी संगठनों ने गरीब महिलाओं को संगठित करके आय संवर्द्धन गतिविधियों के संचालन के लिये 1980 के दशक के अंत में की।

पिछले कुछ सालों से महिला स्वसहायता समूहों के माध्यम से महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया चल रही हे। इसके अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में बचत समूह गठित कर उनके आर्थिक सशक्तिकरण के प्रयास किए जा रहे हैं। किन्तु इन समूहों को महिलाओं के राजनैतिक सशक्तिकरण के रुप में भी देखा जा सकता है। हालांकि पंचायतों में महिलाओं के एक तिहाई आरक्षण के फलस्वरुप गांव की सत्ता में महिलाओं को अपनी भागीदारी निभाने का अवसर जरुर मिला है। लेकिन विकास में उनके संगठित प्रयासों की जरुरत महसूस की जाती रही है। इस दशा में महिला स्वसहायता समूह एक ऐसे संगठन के रुप में उभर कर आए हैं, जिनमें महिलाएं अपने आर्थिक विकास के साथ–साथ गांव के विकास के बारे में भी सोचने लगी। ऐसे कई उदाहरण भी सामने आए हैं, जब स्वसहायता समूह की महिलाओं ने ग्राम सभा में शामिल होकर अपनी समस्याओं पर पंचायत और प्रशासन का ध्यान आकर्षित किया और उन्हें हल करने की पहल की।

देश के अन्य राज्यों की भांति मध्यप्रदेश में भी लाखों की संख्या में महिला स्वसहायता समूह गठित किये गए। ये समूह सरकारी एजेंसियों के अलावा महिला आर्थिक विकास निगम तथा स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा संचालित किए जा रहे हैं। कई सरकारी योजनाओं का लाभ भी इन समूहों के माध्यम से महिलाओं को दिया जाता रहा है। जबकि स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा गठित समूहों ने राजनैतिक पहलुओं को भी छूने का प्रयास किया हे। पिछले कुछ सालों में ऐसी कई संस्थाएं सामने आई जब महिला स्वसहायता समूहों ने जल संकट जैसी कई समस्याओं के निदान के लिए ग्राम सभा में न सिर्फ अपनी आवाज बुलंद की, बल्कि उसके समाधान के भी प्रयास किये हैं।

महिला स्वसहायता समूह तंगहाली व गरीबी से जूझती महिलाओं के लिये नवजीवन का संदेश लेकर आए हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में सतना जिलें में संचालित महिला स्वसहायता समूहों की महिलाओं के आर्थिक व सामाजिक उन्नयन में योगदान का विस्तृत विश्लेषण किया गया है।

वर्तमान में सतना जिलें की कुल जनसंख्या में 79 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या है जिनमें 48.4 प्रतिशत महिलाएं हैं। इस प्रकार जिलें में ग्रामीण महिलाओं की संख्या लगभग आधी है। ऐसी स्थिति में ग्रामीण अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाओं के आर्थिक व समाजिक उत्थान में स्वसहायता समूहों की महत्वपूर्ण भूमिका है। सतना जिलें में मुख्य रुप से निम्न क्षेत्रों में स्वसहायता समूह कार्य कर रहे हैं–

- गुलमेंहदी (लैन्टाना) से फर्नीचर निर्माण
- आर्टिफिशियल ज्वेलरी निर्माण
- दुग्ध उत्पादन
- अगरबत्ती निर्माण
- मसाला निर्माण
- सब्जी उत्पादन आदि।

जिलें में वर्ष 1999 से 2012 के मध्य स्वसहायता समूहों की सदस्य संख्या में उत्साहजनक वृद्धि दर्ज हुई है, जो निम्नानुसार है–

स्वसहायता समूहों में सदस्य संख्या

वर्ष	SC	ST	Minor-ities	women	others	Total
1999	1,085	1,060	10	1,950	05	4,110
2012	20,082	13,624	955	29,656	49,036	1,13,353

स्त्रोत – जिला पंचायत, सतना, 2012

उक्त सारिणी से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1991 की तुलना में 2012 में स्वसहायता समूहों की सदस्य संख्या में लगभग 28,000 की वृद्धि देखी गयी है। यह एक उत्साहजनक संकेत हैं । इससे यह प्रतीत होता है कि स्वसहायता समूहों के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक व सामाजिक विकास के नये द्वार खोलने की राह और भी आसान हो गयी है।

जिले में सबसे अधिक महिला स्वसहायता समूहों का गठन स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत हुआ है। विशेषकर घरेलू उद्योग जैसे अगरबत्ती निर्माण, मसाला बनाना, दुग्ध उत्पादन क्षेत्र में महिला स्वसहायता समूह अधिक सक्रिय है। जिसे निम्न सारिणी में देखा जा सकता है–

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (सितम्बर–2012)
(सारणी पीछे देखें)

जिले में स्वसहायता समूहों के माध्यम से महिलाओं के आर्थिक व सामाजिक विकास में तेजी से परिवर्तन हुआ है। किंतु आज भी स्वसहायता समूहों विशेषकर महिला स्वसहायता समूहों के समक्ष अनेक चुनौतियां हैं जिनका सामना करके महिलाओं को अपनी प्रबंधन क्षमता, एकता, कार्यक्षमता, बाजार व्यवस्थापन तथा लाभदायक प्रवृत्ति को प्रमाणित करना होगा।

वसुन्धरा महिला मंडल (एन.जी.ओ.) के कदम – महिला सशक्तिकरण में गैर सरकारी संगठनों की महती भूमिका है। आज गैर सरकारी संस्थाएं आम

* प्राध्यापक विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

ग्रामीण महिलाओं के लिए ताकत, शक्ति, सामर्थ्य एवं स्वाबलम्बन प्रदान करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। इसी दिशा में वसुन्धरा महिला मंडल सिलपरी, सतना, जो महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में स्वसहायता समूहों के गठन तथा उनके परिचालन में महिलाओं की सक्रिय भूमिका सुनिश्चित करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रही है।

वसुन्धरा महिला मंडल म.प्र. राज्य में गैर सरकारी संस्था के रुप में सराहनीय कार्य कर रही है। यह संस्था पिछले एक दशक से महिला सशक्तिकरण के लिए बेटी बचाओ अभियान से लेकर महिलाओं की आत्मनिर्भरता के लिए विभिन्न स्वरोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से ग्रामीण अंचल की महिलाओं की सहायता कर रही है। जिनमें प्रमुख रुप से संस्था द्वारा वर्ष 2010-11 एवं 2011-12 के मध्य महिला उत्प्रेरक प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसमें लगभग 290 महिलाएं प्रत्यक्ष रुप से लाभान्वित हुई।

ग्राम देवरा, उचेहरा में जेंडर एवं महिला हिंसा के विरूद्ध जागरूकता अभियान चलाया गया, जिसमें लगभग 290 महिलाओं की प्रत्यक्ष भागीदारी रही। वसुन्धरा महिला मंडल, सतना ने महिलाओं को स्वसहायता समूह के गठन के लिए प्रेरित किया। साथ ही संस्था द्वारा विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन भी समय-समय पर किया जाता रहा है। ग्रीन वैली विलेज, अमिलिया, रामनगर, सतना में 30 महिलाओं ने फ्लावर डेकोरेशन एवं गुलदस्ता निर्माण का 30 दिवसीय प्रशिक्षण प्राप्त किया।

लेन्टाना ने महिलाओं की जिंदगी में रोशनी भरी - लेन्टाना जिसका देशी नाम गुलमेंहदी है। सतना जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में नदी-नालों के किनारे बहुतायत में पायी जाती है। जिसके व्यावसायिक उपयोग की जानकारी ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिकों को नही थी, वे इसका उपयोग सिर्फ बाड़ लगाने के लिये ही किया करते थें। किन्तु उपसंचालक कृषि विभाग के सौजन्य से वसुन्धरा महिला मंडल सतना द्वारा ग्राम अमिलिया, रामनगर, सतना में 45 दिनों का गुलमेंहदी (लेन्टाना) से फर्नीचर निर्माण का प्रशिक्षण दिया गया, जिसमें 30 महिलाएं प्रशिक्षण प्राप्त कर लेन्टाना से फर्नीचर बनाने का कार्य कर रही हैं। जिससे उनके जीवन में आत्मनिर्भरता की नई रोशनी भर गयी। लाभार्थी कमला दाहिया, शकुन्तला वर्मा, माया सिंह ने कहा कि 'लेन्टाना से फर्नीचर बनाना बहुत ही आसान लगने लगा है। ये फर्नीचर पूर्वोत्तर राज्यों में बनने वाले बेंत के फर्नीचर से कहीं अधिक सस्ते, सुन्दर तथा टिकाऊ होते हैं। माया वर्मा ने बताया कि पहले हम लोग गुलमेंहदी को काटकर बाड़ या जलाऊ लकड़ी के रुप में उपयोग किया करते थे, लेकिन आज यह बहुत ही उपयोगी लकड़ी हो गयी है। इनके फर्नीचरों की बाजार में काफी मांग है।'

इसी प्रकार ग्राम पंचायत गोवरॉव खुर्द उंचेहरा, सतना में 2011-12 में महिला स्वसहायता समूह की लगभग 60 महिलाओं ने आर्टिफिशियल ज्वेलरी निर्माण का प्रशिक्षण प्राप्त कर आत्मनिर्भरता प्राप्त की। आर्टिफिशियल ज्वेलरी निर्माण एक लाभदायक व्यवसाय है। समूह की सदस्य पूनम देवी बताती हैं कि 'जबसे हमने ये काम सीखा है, तबसे मेरी आमदनी से घर का खर्चा बहुत ही आसानी से चल जाता है, और कुछ बचत भी कर लेती हूँ।'

आज ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं ने स्वसहायता समूहों के माध्यम से अगरबत्ती निर्माण, जूट उत्पाद, मसाला निर्माण, सब्जी तथा दुग्ध उत्पादन आदि जैसे अनेक क्षेत्रों में भी आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है।

सही अर्थों में देखा जाए तो महिला सशक्तिकरण का अर्थ ही है, महिला को आत्म सम्मान देना। उसे आत्म निर्भर बनाना।
तभी यह नारा सार्थक होगा -

सशक्त नारी, सशक्त समाज।
सशक्त समाज, सशक्त देश।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्र एवं पुरी, 'भारतीय अर्थव्यवस्था' हिमालया पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली, 2009।
2. डॉ. माहेश्वरी पी.डी. एवं डॉ. गुप्ता शीलचंद, 'भारतीय आर्थिक नीति', कैलाश पुस्तक सदन, 2006।
3. म.प्र. जन अभियान परिषद्, जनवरी 2013।
4. उद्यमिता, मई 2013।
5. योजना, नवम्बर 2011।
6. कुरूक्षेत्र, अगस्त 2013।

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (सितम्बर-2012)

क्र सं.	उत्पाद	संलग्न महिला/पुरुष	उत्पादन क्षमता (क्विंटल प्रतिदिन)
1.	अगरबत्ती निर्माण	1,000 महिलाएं	15 वि प्रतिदिन
2.	जूट उत्पाद निर्माण	100 महिलाएं	-
3.	मसाला निर्माण	50 महिलाएं	10 से 15 किलो ग्राम प्रति.
4.	सब्जी उत्पादन	200 पुरुष	100 से 150 वि प्रति.
5.	दुग्ध उत्पादन	1000 महिलाएं	60 से 65 वि प्रति.
6.	गुलमेंहदी (लैन्टाना) से फर्नीचर निर्माण	30 महिलाएं	50 प्रतिदिन
7.	आर्टिफिशियल ज्वेलरी निर्माण	60 महिलाएं	-

स्त्रोत - जिला पंचायत, सतना 2012

****

भारत में बढ़ती जनसंख्या एवं उसका आर्थिक प्रभाव

नमिता गुप्ता *

प्रस्तावना – भारत उन चुनिंदा देशों में से एक है जो प्राकृतिक तथा मानवीय संसाधनों से समृद्ध तथा सम्पन्न है। भारत का क्षेत्रफल विश्व के क्षेत्रफल का 2.4 प्रतिशत है किंतु यहां विश्व की 17.5 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। भारत में सन् 1872 में पहली बार जनगणना की गई थी लेकिन जनसंख्या की क्रमवार गणना का कार्य सन् 1881 से किया जा रहा है।

सन् 1891 में भारत की कुल जनसंख्या 23.6 करोड़ थी जो मार्च 2011 में बढ़कर 121.02 करोड़ हो गई। जिसमें 62.37 करोड़ पुरूष तथा 58.65 करोड़ महिलाएं हैं। देश की जनसंख्या चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। किंतु 2030 में भारत चीन को पीछे छोड़ते हुए विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश हो जायेगा। संयुक्त राष्ट्र संघ के जनसंख्या अनुमान के अनुसार, 2030 में चीन की जनसंख्या 144 करोड़ तथा भारत की जनसंख्या 144.9 करोड़ होने की संभावना है। सन् 2050 में भारत की जनसंख्या 159.3 करोड़ हो जाने का अनुमान लगाया गया है। जबकि चीन की जनसंख्या उस समय 139.2 करोड़ होगी।

भारत की जनसंख्या की प्रकृति को परिणात्मक तथा गुणात्मक दो रुपों में देखा जा सकता है। परिणात्मक प्रवृत्ति के अंतर्गत मुख्य रुप से जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति, प्रतिशत वार्षिक वृद्धि, दशकीय वृद्धि, महिला एवं पुरूष अनुपात तथा ग्रामीण व शहरी जनसंख्या का प्रतिशत आदि को सम्मिलित किया गया है।

भारत की जनसंख्या की परिमाणात्मक प्रवृत्ति

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	दशक में परिवर्तन (करोड़ में)	स्त्री/पुरूष अनुपात (प्रतिहजार पुरूषों पर महिलाएं)
1901	23.84	–	972
1911	25.21	1.37	964
1921	25.13	–.08	955
1931	27.90	2.77	950
1941	31.87	3.97	945
1951	36.11	4.24	946
1961	43.92	7.81	941
1971	54.82	10.90	930
1981	68.33	13.57	934
1991	84.64	16.30	927
2001	102.87	18.23	933
2011	121.02	18.15	940

स्त्रोत :- भारतीय अर्थव्यस्था, प्रतियोगिता दर्पण, 2013

उक्त सारिणी से स्पष्ट है कि 1901 से 2011 तक लगातार जनसंख्या में वृद्धि हुई है। मात्र 1921 में जनसंख्या –.08 करोड़ की गिरावट दर्ज की गई है। 2001 की तुलना में 2011 में जनसंख्या में मामूली गिरावट दर्ज की गई जिसमें औसत वार्षिक घातांक 1.95 (2001) की तुलना में 1.64 (2011) रहा है।

जनगणना के महापंजीयक की एक अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार, देश में कुल प्रजनन दर (TFR) में 0.1 प्रतिशत बिंदु की कमी 2010 में हुई थी। वर्ष 2008 व 2009 में यह दर 2.6 पर बनी हुई है। जो 2010 में 2.5 रही है। इससे पूर्व वर्ष 2000 में देश में कुल प्रजनन दर 3.2 थी। इस प्रकार 2000 से 2010 की अवधि में देश में कुल प्रजनन दर में 19 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई। रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इंडिया की सिम्पल रजिस्ट्रेशन सिस्टम (SRS) रिपोर्ट में कहा गया है कि शैक्षणिक स्तर व कुल प्रजनन दर में स्पष्ट संबंध है।

वर्ष 2010 में निरक्षर महिलाओं में कुल प्रजनन दर जहां 3.4 पाई गई थी वहीं साक्षर महिलाओं में यह 2.2 ही रही है। जनसंख्या वृद्धि का वितरण देश के सभी प्रदेशों में भिन्न-भिन्न है। देश के 5-6 बड़े प्रदेशों में जनसंख्या वृद्धि उच्चतम शिखर पर रही है।

सर्वोच्च प्रजनन दर वाले राज्य एवं न्यूनतम प्रजनन दर वाले राज्यों की स्थिति निम्न सारिणी प्रदर्शित है - (सारणी पीछे देखें)

देश में कुल प्रजनन दर को 2010 तक रिप्लेसमेंट लेबल 2.1 तक लाने का लक्ष्य राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 में निर्धारित कियागया था। रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इंडिया की रिपोर्ट के अनुसार, 35 राज्यों में से केवल 10 राज्यों में ही इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सका है। जिनमें औसत कुल प्रजनन दर 1.83 प्रतिशत रहा है। इन राज्यों में देश की कुल जनसंख्या का 42.91 प्रतिशत हिस्सा निवास करता है।

किंतु चिंता की बात यह है कि 10 बड़े राज्यों में जहां देश की कुल जनसंख्या का 54.63 प्रतिशत भाग निवास करता है वहां औसत कुल प्रजनन दर 2.6 है। इससे स्पष्ट होता है कि जनसंख्या की आंतरिक संरचना में चिंताजनक विसंगति है।

देश की कुल जनसंख्या की वृद्धि दर में 1971 से दशक वृद्धि दर से गिरावट दर्ज की गई है। किंतु कुल जनसंख्या में निरंतर तेजी से वृद्धि हो रही है। क्योंकि कुल जनसंख्या का 51 प्रतिशत भाग जनन आयु वर्ग (15-49) का है। इसलिए इस जनसंख्या में प्रतिवर्ष लाखों लोग और बढ़ जाते हैं। देश में प्रतिवर्ष 260 लाख बच्चे पैदा होते हैं व केवल 53 प्रतिशत दम्पत्ति ही गर्भ निरोधक उपायों का उपयोग करते है। देश में शिशु मृत्यु दर बहुत अधिक है। शिशु मृत्यु दर के अधिक होने का कारण बच्चों के प्रति असुरक्षा भी मध्यम एवं निम्न मध्यम वर्ग में जनसंख्या में वृद्धि का कारण रही है।

जनसंख्या का आर्थिक विकास पर प्रभाव – जनसंख्या को प्राय: लोगों की बढ़ती हुई संख्या की समस्या के रुप में देखा जाता है। किंतु यह विकास की समस्या भी है। बढ़ती हुई जनसंख्या केवल सामाजिक और आर्थिक

* शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

विकास के अभाव का सूचक ही नहीं वरन् यह धारणीय विकास को भी प्रभावित करती है।

देश में पिछले कुछ वर्षो से योजना निर्माण में धारणीय विकास की अवधारणा एवं आवश्यकता पर जोर दिया जा रहा है। धारणीय विकास तभी प्राप्त किया जा सकता है जबकि उसके प्रमुख घटकों जैसे, शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि, गतिशील सामाजिक ढांचा, एवं स्वास्थ्य के प्रति जीवन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति जथा जनसंख्या संसाधन की गुणवत्ता आदि मानक स्तर तक विकसित हो।

देश में जनसंख्या संसाधन आर्थिक विकास को दो प्रकार से प्रभावित करती है, एक तो सकारात्मक रुप में जिसके अंतर्गत विश्व में सबसे युवा राष्ट्र के रुप में 50 करोड़ युवाओं की उपस्थिति, एक समृद्ध बाजार, तकनीकी उन्नतशीलता तथा भारतीयों का कौशल जो कि विश्वभर में अपनी छाप छोड़ने में सफल रहा है। जिसके कारण भारत विश्व की पांचवीं बड़ी अर्थव्यवस्था की दिशा में आगे बढ़ा है। वही दूसरी ओर जनसंख्या धारणीय विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने में सबसे बड़ी बाधा है। वर्तमान में जनसंख्या की अनियंत्रित विकास दर देश को आर्थिक एवं सामाजिक रुप से अनेक अनपेंक्षित समस्याओं से ग्रसित कर रही है। तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्यान्न की अत्यधिक आवश्यकता खाद्यान्न संकट के रुप में मौजूद है। तथा यह पेयजल की उपलब्धता, पर्याप्त आवास की कमी, स्वास्थ्य, शिक्षा एवं सामाजिक कल्याण जैसी बुनियादी आवश्यकताओं पर भी प्रश्न चिन्ह लगा रही है। देश की एक तिहाई आबादी जीवन की समुचित सुविधाओं एवं आवश्यकताओं से भी वंचित है। जिसका मुख्य कारण तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या है।

जनसंख्या वृद्धि का सबसे अधिक दुष्परिणाम जनसंख्या के संरचनात्मक बनावट पर पड़ता है। क्यों कि जनसंख्या वृद्धि मध्य एवं निम्न वर्ग से अधिक हो रही है। जिससे गुणवत्ता विहीन जनसंख्या अधिक होती जा रही है। और भविष्य में इनका प्रतिशत और अधिक होने की संभावना है जो सबसे अधिक चिंता का विषय है। कम उम्र में विवाह एवं 20 वर्ष की आयु से पहले गर्भ धारण करना मां और बच्चे दोनों के जीवन के लिए जोखम को बढ़ा देता है। निम्न और मध्यम वर्ग में सामाजिक दबाव के कारण भी अधिक बच्चे पैदा करने एवं बच्चों के जन्म में पर्याप्त अंतर न होने के कारण यह मां और बच्चे दोनों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल डालता पड़ता है। इससे जन्म, मृत्यु और बुरे स्वास्थ्य का दोषपूर्ण चक्र प्रारंभ हो जाता है। तथा यह दोषपूर्ण चक्र समस्त विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

निष्कर्ष के रुप में कहा जा सकता है कि जनसंख्या जहां एक तरफ कुशल मानव संसाधन के रुप में आर्थिक एवं सामाजिक विकास का मूल आधार हैं वहीं दूसरी ओर अनियंत्रित एव अनपेक्षित जनसंख्या आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधक भी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्र एवं पुरी, 'भारतीय अर्थव्यवस्था' हिमालया पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली, 2009
2. सिन्हा वी.सी. - भारतीय आर्थिक नीति (2008)
3. प्रतियोगिता दर्पण 'भाारतीय अर्थव्यवस्था' विशेषांक 2013।
4. आर्थिक समीक्षा 2011-12
5. आर्थिक समीक्षा 2010-11
6. मानव विकास रिपोर्ट 2011-12
7. कुरूक्षेत्र, अगस्त 2013

सर्वोच्च प्रजनन दर वाले राज्य एवं न्यूनतम प्रजनन दर वाले राज्यों की स्थिति निम्न सारिणी प्रदर्शित है

सर्वोच्च प्रजनन दर वाले राज्य			न्यूनतम प्रजनन दर वाले राज्यों		
राज्य	**कुल प्रजनन दर**	**कुल जनसंख्या में राज्य का प्रतिशत**	**राज्य**	**कुल प्रजनन दर**	**कुल जनसंख्या में राज्य का प्रतिशत**
बिहार	3.7	8.58	तमिलनांडु	1.7	5.96
उत्तर प्रदेश	3.5	16.49	पं. बंगाल	1.7	7.55
मध्य प्रदेश	3.2	-6.00	आंध्र प्रदेश	1.7	7.00
राजस्थान	3.1	-5.67	हिमाचल प्रदेश	1.8	2.76
झारखंड	3.0	2.72	केरल	1.8	0.57
छत्तीसगढ़	2.8	2.11	पंजाब	1.8	2.29
असम	2.5	2.58	महाराष्ट्र	1.9	9.29
गुजरात	2.5	4.99	दिल्ली	1.9	1.38
हरियाणा	2.3	2.02	जम्मू कश्मीर	2.0	1.04
ओडिशा	2.3	3.47	कर्नाटक	2.0	5.05
औसत	**2.6**	**54.63**	**औसत**	**1.83**	**42.91**

स्त्रोत :- भारतीय अर्थव्यस्था, प्रतियोगिता दर्पण, 2013

****

सामाजिक न्याय का स्वरूप और भारतीय दर्शन

डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह *

शोध सारांश – सामाजिक न्याय व्यक्ति के हितों की अवहेलना तो नहीं करता किन्तु यह सेवाओं और संसाधनों के न्यायोचित विभाजन, समतामूलक वितरण तथा नियमों की सामूहिक उपयोगिता पर अधिक ध्यान देता है। इस दृष्टि से सामाजिक न्याय का परिप्रेक्ष्य व्यापक है यह नियमों के निर्माण उनकी व्याख्या और उन्हें लागू करने में सामूहिक हितों की पूर्ति के साथ वैयक्तिक हितों के समायोजन पर बल देता है। सम्पत्ति के अधिकार तथा संविदात्मक स्वतंत्रता का कानून, श्रम सन्नियम, आरक्षण नारी एवं कमजोर वर्गों की सुरक्षा तथा पर्यावरण अनुरक्षण संबंधी विधान उन्नीसवीं सदी के पूर्व एवं उसके पश्चात् न्याय के वैयक्तिक आधार से सामाजिक आधार की ओर झुकाव को दर्शाते है।[3]

सामाजिक न्याय का सिद्धांत अन्याय, हिंसा, शोषण, उत्पीड़न, जातिवाद, छुआछूत का भेदभाव, असमानता, असहिष्णुता, बेगार, बंधुआप्रथा, रूढ़ीवाद, स्वार्थ, गरीबी सबका विरोधी है। सामाजिक न्याय में समानता और कानून के शासन की अनिवार्य शर्त है। सामाजिक न्याय के लक्ष्य में जन उपयोगिता, समान अधिकार और बंधुत्व की भावना आवश्यक है। सामाजिक न्याय विधिक दायित्वों के निर्वाह पर बल देता है। सामाजिक न्याय की अवधारणा में हितों की एकता और सामंजस्यता का महत्वपूर्ण तत्व निहित है। सामाजिक न्याय व्यवस्था में वर्तमान स्थिति का विवेकशील समायोजन तथा भविष्य के जीवन की आशा निहित है।

शब्द कुंजी – सामाजिक न्याय, समायोजन, अस्पृश्यता, विकेन्द्रीकरण, नियामतें, एकेश्वरवाद, जूड़ाइज्म।

प्रस्तावना – 'सामाजिक न्याय का स्वरूप कल्याणकारी है। यह सांस्कृतिक होने के साथ ही विविध एवं नैतिक भी है।'[1] सामाजिक न्याय की सोच एक आदर्श समाज व्यवस्था की सोच है इसमें मूल्यांकन के मानक भी आदर्श पर निर्मित होते हैं ये गणितीय नहीं होते हैं। आदर्श समाज के संचालन में कानून, संविधान, परंपराएँ, सरकारी नियम और कार्य पद्धति का गुण दोषों के आधार पर मूल्यांकन करना सामाजिक न्याय का विषय है कि यह आदर्शात्मक है अथवा नहीं। इसका खुलासा इस प्रकार है कि आज जैसे समाज में जाति–भेद, ऊँच–नीच, अस्पृश्यता, सती–प्रथा, दहेज–प्रथा, बेगार–प्रथा है। इनका हम मूल्यांकन इस आधार पर करते हैं कि ये वर्तमान में न्याय संगत है अथवा नहीं।

सामाजिक न्याय का संबंध सम्पूर्ण समाज से है अर्थात् हर वर्ग एवं व्यक्ति से रिश्ता है किन्तु इसका मूल उद्देश्य समाज के उन लोगों से है जो समाज में वंचित हैं, अभावग्रस्त हैं तथा धन और सम्मान दोनों से दरिद्र हैं। सामाजिक न्याय से तात्पर्य है – 'समाज के प्रत्येक व्यक्ति को जीवन की मूलभूत अनिवार्य आश्यकताओं तथा भोजन, वस्त्र एवं मकान की पूर्ति हो, प्रत्येक व्यक्ति को विकास का उचित अवसर मिले। व्यक्ति द्वारा व्यक्ति के शोषण को रोका जाए तथा आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो।'[2]

सामाजिक न्याय का अध्ययन निषेध और सृजन दोनों पहलू प्रस्तुत करता है। उसमें जड़ता नहीं है इसीलिए यह यथा स्थिति का निषेध करता है यदि यह अहितकारी है और इसमें क्रियाशीलता है इसीलिए यह सृजन का कार्य करता है। सामाजिक न्याय का अध्ययन अपना निर्णय चुपचाप नहीं सुनता बल्कि अपने निर्णयों के मूल्यों का सार्वजनिक बोध भी कराता है और उनका अनुसरण करने की प्रेरणा भी देता है। सामाजिक न्याय का अध्ययन जो भी निष्कर्ष निकालकर देता है वह मनुष्य को गरिमा प्रदान करता है और सुखमय न्याय संगत तथा शांतिप्रिय जीवन निर्वाह के लिए मार्ग प्रस्तुत करते हैं।

उद्देश्य – इस शोध आलेख का उद्देश्य यह है कि सामाजिक न्याय एक समाज विज्ञान का विषय है किन्तु अभी तक यह अध्ययन एवं अध्यापन का अलग से विषय नहीं बनाया गया है। यह सामाजिक विज्ञान का एक भाग है किन्तु इसको सामाजिक विज्ञान में भी कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं दिया जाता है यदि इसे छात्रों के अध्ययन का विषय बना दिया जाए तो आदर्श समाज की स्थापना में बहुत बड़ा सहयोग मिल सकता है।

सामाजिक न्याय का स्वरूप – जॉन राल्स न्याय को सामाजिक संस्थाओं का प्रथम सद्गुण मानता है और इसलिए वह एक ऐसे आदर्श समाज की संरचना करना चाहता है जो न्याय पर आधारित हो। रॉल्स यह मानता है कि उचित न्याय के लिए न्याय के सिद्धांत की प्रक्रिया भी उचित होनी चाहिए। प्रक्रिया को महत्व देने के कारण रॉल्सीय न्याय को प्रक्रियात्मक न्याय भी माना जाता है। न्याय के सिद्धांतों की खोज की उचित प्रक्रिया अपनाने के लिए रॉल्स मूल स्थिति की अवधारणा देता है। मूल स्थिति वह आरम्भिक स्थिति है जिसमें न्याय के सिद्धांतों को खोजने के लिए व्यक्ति सामाजिक समझौते का सहारा लेते हैं। यह मूल स्थिति एक काल्पनिक अवस्था है ऐतिहासिक या वास्तविक नहीं। राज्य की उत्पत्ति के लिए रॉल्स, हॉब्स, लॉक एवं रूसो की तरह सामाजिक समझौते के सिद्धांत को मानता है। रॉल्स की 'मूल स्थिति' सामाजिक समझौतेवादियों की 'प्राकृतिक अवस्था' की अवधारणा से तुलनीय है। मूल स्थिति के व्यक्ति विवेकी होते हैं और न्याय के सिद्धांतों की खोज वस्तुनिष्ठ तरीके से करने के लिए 'अज्ञान के पर्दे' में रहते हैं। यह 'अज्ञान का पर्दा' व्यक्ति की वर्गीय स्थिति विस्मृत कर देता है। जिससे व्यक्ति विवेकीकृत तरीके से वस्तुनिष्ठता में न्याय के सिद्धांत खोजता है। ऐसा व्यक्ति स्वतंत्रता, विवेकी, नैतिक, अज्ञान के पर्दे से विस्मृत हुआ एवं अन्य व्यक्तियों के प्रति उदासीन है। सामाजिक न्याय व्यक्ति के हितों की अवहेलना तो नहीं करता किन्तु यह सेवाओं और संसाधनों के न्यायोचित

*अतिथि विद्वान राजनीति शास्त्र,शासकीय महाविद्यालय, सिरोंज (म.प्र.) भारत

विभाजन, समतामूलक वितरण तथा नियमों की सामूहिक उपयोगिता पर अधिक ध्यान देता है। इस दृष्टि से सामाजिक न्याय का परिप्रेक्ष्य व्यापक है यह नियमों के निर्माण उनकी व्याख्या और उन्हें लागू करने में सामूहिक हितों की पूर्ति के साथ वैयक्तिक हितों के समायोजन पर बल देता है। सम्पत्ति के अधिकार तथा संविदात्मक स्वतंत्रता का कानून, श्रम सङ्गियम, आरक्षण नारी एवं कमजोर वर्गों की सुरक्षा तथा पर्यावरण अनुरक्षण संबंधी विधान उन्नीसवीं सदी के पूर्व एवं उसके पष्चात् न्याय के वैयक्तिक आधार से सामाजिक आधार की ओर झुकाव को दशति है। '[3]

रॉल्स के अनुसार विवेकी व्यक्ति स्वहित से प्रेरित होता है और परोपकार उसका स्वाभाविक गुण नहीं है इसलिए वह समझौता स्वहित को पूरा करने के लिए ही करता है। ऐसे व्यक्ति जिस न्याय की खोज करते हैं उसे रॉल्स 'न्याय उचितता' के रूप में परिभाषित करता है। ऐसे व्यक्ति एक ही कृत्य में आपस में समझौता करते हैं। उनके द्वारा ऐसे सिद्धांत चुने जाते हैं जिनमें व्यक्तियों को मूल अधिकार एवं कर्त्तव्य दिए जा सके एवं सामाजिक लाभों का बँटवारा हो सके। न्याय के वे सिद्धांत दो तरह के होते हैं। सामान्य सिद्धांत एवं विशिष्ट सिद्धांत।

सामान्य सिद्धांत के अनुसार – सभी प्राथमिक–सामाजिक वस्तुएँ (मूल्य) – स्वतंत्रता, अवसर, आय, धन एवं आत्म–सम्मान के आधारों को समान रूप से वितरित किया जाए जब तक कि सबसे कम लाभान्वित व्यक्ति का अहित न हो।

विशिष्ट सिद्धांत के दो सिद्धांत –

(1) प्रत्येक व्यक्ति को ऐसी अत्यन्त विस्तृत मूल स्वतंत्रता का समान अधिकार है जो दूसरों की ऐसी ही स्वतंत्रता के अनुरूप हो।

(2) सामाजिक और आर्थिक असमानताएँ इस प्रकार से व्यवस्थित की जाए जिससे कि – (अ) सबसे कम लाभान्वित व्यक्ति को अधिकतम लाभ मिल सके तथा (ब) अवसरों की न्यायोचित समानता की स्थितियों के अंतर्गत सबके लिए खुली पद पर एवं पदानुशंग से संबंधित हो।

विशिष्ट सिद्धांत में शब्दकोशीय व्यवस्था पर प्राथमिकता का सिद्धांत लागू होता है जिसका अर्थ है कि जब तक प्रथम सिद्धांत तुष्ट नहीं होगा दूसरा सिद्धांत आरम्भ नहीं होगा। इस प्रकार जब तक लोगों को समान व पर्याप्त स्वतंत्रता नहीं मिलेगी तब तक सबसे कम लाभान्वित व्यक्ति के लाभ की बात नहीं की जाएगी।

रॉल्स न्याय के विशिष्ट सिद्धांत में अधिक रुचि लेता है तथा स्पष्ट करता है कि न्याय के ऐसे सिद्धांत चुनने के पश्चात् उन पर आधारित राज्य को मूर्त स्वरूप प्रदान करने के लिए एक संवैधानिक सम्मेलन बुलाया जाता है जिसमें लोगों के प्रतिनिधि न्याय के विशिष्ट सिद्धांत पर आधारित राज्य का संविधान बनाते हैं तथा संविधान को लागू करने का नियम बनाते हैं। ऐसे आदर्श राज्य को रॉल्स संविधानिक प्रजातंत्र नाम देता है। संस्थागत कार्यो के लिए रॉल्स सरकार को चार शाखाओं में विभाजित करता है –

(1) आवंटन शाखा,
(2) स्थरीकरण शाखा,
(3) स्थानान्तरण शाखा एवं
(4) वितरणात्मक शाखा।

ऐसा आदर्श राज्य प्लेटो के राज्य की तरह काल्पनिक है लेकिन यह वास्तविक राज्यों के सही दिशा–निर्देश के लिए एक मापदण्ड है। रॉल्स ने न्याय की आदर्शवादी, सार्वभौमिक एवं नैतिक अवधारणा की अपेक्षा यथार्थवादी, उदारवादी व्यवस्था के अंतर्गत राजनैतिक अवधारणा के रूप में विवेचना की है। अपनी तीसरी पुस्तक **'द लॉ ऑफ पीपुल्स' (1999)** में रॉल्स न्याय के सिद्धांत को अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के सिद्धांत एवं व्यवहार के संदर्भ में परिभाषित करता है।'[4]

सामाजिक न्याय और भारतीय दर्शन – सामाजिक न्याय का भारतीय दर्शन का मुख्य आधार 'गीता' और 'मनुस्मृति' है। जो वर्ण–व्यवस्था पर आधारित है। यह हिन्दू अवधारणाओं को व्यक्त करने वाली पुस्तके हैं। इनके अनुसार आदमी को परिणामों की चिंता किए बिना अपने–अपने वर्ण का काम करते रहना चाहिए। गीता में कहा गया है कि ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चारों वर्णों के कर्तव्य मनुष्य के जन्म जात गुणों पर निर्धारित होते हैं। अपने–अपने कर्मों को करते हुए सबको मोक्ष प्राप्त होगा। हिन्दू न्याय व्यवस्था शोषण पर आधारित है वह शक्तिशाली व्यक्ति के शोषण का हथियार है। वह सामाजिक न्याय व्यवस्था में शूद्रों का दमन उत्पीड़न न्याय व्यवस्था का अंग है। इसमें कार्य विभाजन वर्णों के आधार पर है। हिन्दू सामाजिक न्याय व्यवस्था का संबंध दार्शनिक 'नीत्सेय के विचारों से मिलता जुलता है। हिन्दू व्यवस्था सामाजिक न्याय की सबसे बुरी और अति घृणित व्यवस्था है।

1. **बौद्ध दर्शन –** बौद्ध दर्शन के आधार पर सामाजिक न्याय का सिद्धांत विशुद्ध रूप से मानवतावादी और लौकिक है। यह दर्शन सामाजिक न्याय को आचरण के साथ जोड़ता है। बौद्ध दर्शन पंचशील पर आधारित है, हिंसा, चोरी, व्याभिचार, मद्यपान, झूठ–वचन न करना पंचशील है। शील ही समाज को धारण करने वाले तत्व हैं शांत और न्याय–प्रिय जीवन मध्यम मार्ग में निहित है जहाँ न अति हिंसा है बौद्ध दर्शन में मनुष्य का आचरण ही समाज व्यवस्था के लिए उत्तरदायी है। सदाचार के लिए अष्टांग मार्ग बताया गया है अहिंसा, अचोरी, सत्यवाक, अव्यभिचार, अहिंसा, आदरभाव, सहयोग, सद्भावना, करुणा, मैत्री, दया, बौद्ध दर्शन के मूल तत्व हैं। संक्षेप में बौद्ध दर्शन में सामाजिक न्याय में सदाचरण निर्णायक है। नैतिक और मानव मैत्री मूल आधार हैं। जैन दर्शन भी इन्हीं समस्त तत्वों में विश्वास करता है।

2. **इस्लामी दर्शन –** हजरत मोहम्मद साहब के इस्लामी दर्शन सामाजिक न्याय में समस्त न्याय प्रक्रियाओं को अल्लाह के नाम पर छोड़ दिया जाता है। इस्लाम दर्शन वितर्णात्मक सामाजिक न्याय पर विश्वास करता है। अल्लाह की हर नियामत को बाँटकर भोगने का आदेश देता है। सारी नियामतें अल्लाह की देन हैं। सभी मनुष्य अल्लाह के बन्दे हैं, इसलिए हर नियामत को आपस में बाँटकर भोगने का आदेश देता है। इस्लाम वितरण के लिए सत्ता पर निर्भर नहीं करता है। वह मनुष्य के हृदय को न्यायसंगत बनाने का काम करता है। सामाजिक न्याय की स्थापना हेतु कानून की दमनकारी शक्तियों के प्रयोग में भी विश्वास करता है। अल्लाह को प्रेम करने वाला अल्लाह के बन्दों से भी प्यार करे।

3. एकेश्वरवाद – एकेश्वरवाद जूडाइज्म के सिद्धांत का मूल आधार है। यह ईश्वर द्वारा दी गई अमीरी–गरीबी पर विश्वास करता है, यह ईश्वरीय न्याय है। सामाजिक न्याय ईश्वरीय इच्छा पर निर्भर है।

कबीर, नानक और रैदास ने ईश्वर के सामने सबको समान माना है। उन्होंने प्रेम, सद्भाव, समानता, बंधुत्व को सामाजिक न्याय का आधार माना है। जाति के आधार पर भेदभाव सामाजिक न्याय विरोधी व्यवस्था है, वर्तमान भारत के सामाजिक न्याय के पुरोधा डॉ. अम्बेडकर हैं जिनके समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व सामाजिक न्याय के आधार हैं।सामाजिक न्याय का सिद्धांत अन्याय, हिंसा, शोषण, उत्पीड़न, जातिवाद, छुआछूत का भेदभाव, असमानता, असहिष्णुता, बेगार, बंधुआप्रथा, रूढ़ीवाद, स्वार्थ, गरीबी सबका विरोधी है। '[5]

निष्कर्ष –निष्कर्षत: हम कह सकते है कि सामाजिक न्याय मानव व्यक्तित्व का एक सद्‌गुण था व्यक्तिगत व्यवहार की सामाजिक अभिव्यक्ति है। यह नैतिक आचरण की उत्कृष्टता है। उसे प्रभावी बनाने के लिए विविध विधिक आधार आवश्यक है। सामाजिक न्याय का सीधा संबंध समाज से है और यह समाज के हर व्यक्ति को उसके कर्त्तव्य एवं दायित्व को निभाने के लिए प्रेरित करता है।

सामाजिक न्याय समानता का पक्षधर है पर यह विशिष्ट प्राथमिकताएँ भी निर्धारित करता है। सामाजिक न्याय में समानता और कानून के शासन की अनिवार्य शर्त है। सामाजिक न्याय के लक्ष्य में जन उपयोगिता, समान अधिकार और बंधुत्व की भावना आवश्यक है। सामाजिक न्याय विधिक दायित्वों के निर्वाह पर बल देता है। सामाजिक न्याय की अवधारणा में हितों की एकता और सामंजस्यता का महत्वपूर्ण तत्व निहित है। सामाजिक न्याय व्यवस्था में वर्तमान स्थिति का विवेकशील समायोजन तथा भविष्य के जीवन की आशा निहित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एस.एल. सागर, 'सामाजिक न्याय', सागर प्रकाशन, मैनपुरी, वर्ष- 1999, पृ. 14-15.
2. डॉ. पूरणमल,'मानवाधिकार : सामाजिक न्याय और भारत का संविधान', प्वांटर पब्लिशर्स, जयपुर, 2003, जयपुर, पृष्ठ सं. 72'
3. डॉ. आर.जी. सिंह,'सामाजिक न्याय लोकतंत्र और जातीय व्यवस्था', रावत पब्लिकेशन्स जयपुर, 1999, पृष्ठ सं. 18.
4. नरेश दधीच, 'जान रॉल्स का न्याय का सिद्धांत', अविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष-2003, पृ. 111-112
5. एस.एल. सागर, 'सामाजिक न्याय', सागर प्रकाशन, मैनपुरी, वर्ष- 1999, पृ. 26-31.

अन्य स्त्रोत –

1. प्रतियोगिता दर्पण
2. परीक्षा मंथन
3. वेब साइट

****

दलितों के मसीहा : बाबा साहेब अम्बेडकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व : एक मूल्याकंन

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – भारतीय स्वतंत्रता संग्राम अंग्रेजी शासन के विरूद्ध एक निर्णायक लड़ाई थी। विदेशी शासकों को देश की जनता ने सीधी चुनौती दी थी। लक्ष्य के प्रति एकमत होने पर भी आंतरिक रूप से देश में सत्ता के स्वरूप और उसमें भागीदारी के प्रश्न को लेकर एक परस्पर विरोधी त्रिकोण निर्मित हो गया था। इसका नेतृत्व कर रहे थे, राष्ट्र पिता महात्मा गांधी, मोहम्मद अली जिन्ना और बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर। आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि इन तीनों को अपने मिशन में सफलता मिली है।

कांग्रेस के कर्णधार गांधीजी सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह के अस्त्र के माध्यम से आजादी की लड़ाई में सफलता के लिये जो प्रयोग कर रहे थे, इस पर देशवासियों सहित विश्वभर के चिन्तकों की दृष्टि थी। राजनीतिक वर्चस्व की लड़ाई के परम्परागत स्वरूप से सर्वथा भिन्न गांधीजी की नैतिक तथा मानवीय आदर्शो पर आधारित अपने हक के लिये संघर्ष के परिणामों ने एक नया इतिहास बना दिया। अंग्रेजों ने मुँह की खाई। भारत स्वतंत्र हो गया।

मुस्लिम लीग का नेतृत्व करते हुए जिन्ना ने भारत में पहली बार, दो राष्ट्रों का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। भारत की गंगा-यमुना, समन्वयवादी संस्कृति और साम्प्रदायिक भाईचारे की परम्परा के मध्य जिन्ना ने, परस्पर अविश्वास और वैमनस्य की ऐसी आग सुलगाई जिसके कारण विश्व पटल पर एक नये, राष्ट्र का ही उदय हो गया। 'फूट डालो और राज्य करो' की अंग्रेजों की नीति को सहज सफलता मिल गई। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि अंग्रेजों ने मुस्लिम शासक मुगल बादशाहों के पतन की नींव पर भारत में औपनिवेशिक साम्राज्य खड़ा किया था। अंग्रेजों के विरूद्ध 1857 का स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करने वाले मुसलमान अंग्रेजों की सत्ता की बंदर बाट की नीति के झांसे में आ गये। परिणामस्वरूप जिन्ना को भी पाकिस्तान का तौहफा मिल ही गया।दलितों के मसीहा बाबा साहेब अम्बेडकर स्वयं दूध के जले तो थे ही। वे ऐसे नेता थे, जो हिन्दू धर्म के दलितों के प्रति अस्पृश्यता और सामाजिक अन्याय के चरम अमानवीय व्यवहार से पीड़ित थे। वे ऐसी जाति व वर्ग की चिंता से व्यथित थे जो वस्तुत: दीन-हीन और असहाय स्थिति में हिन्दू धर्म के ही अमानवीय शोषण की शिकार बनी हुई थी। बहुसंख्यक इस वर्ग के लिये आजादी और राष्ट्रीय चेतना से ज्यादा सामाजिक व आर्थिक न्याय आवश्यक था।

दलितों की लड़ाई को प्राथमिकता देने के कारण बाबा साहेब ने मनु स्मृति द्वारा पोषित सनातन धर्म की सड़ी गली अमानवीय समाज व्यवस्था पर निर्मम कटु प्रहार किये। संभवत: हिन्दू समाज के कर्मकाण्ड तथा अन्यायपूर्ण विधि-निषेधों पर खुलकर प्रहार करने वाले वे दलित वर्ग में से पहले व्यक्ति थे। 25 दिसम्बर 1927 को महद की एक सभा में उन्होंने दलितों पर अन्याय की जड़ 'मनुस्मृति'को सार्वजनिक रूप से जलाकर हिन्दू समाज के विरूद्ध संघर्ष का बिगुल बजा दिया। परिणामस्वरूप तत्कालीन हिन्दू समाज उन्हें अपना दुश्मन समझने लगा और उन्हें हिन्दू धर्म विनाशक कहा गया। अस्पृश्य जाति के मानव अधिकारों के लिये भारत में लंबी मैदानी लड़ाई तो अम्बेडकर ने लड़ी किन्तु लंदन में आयोजित तीन गोलमेज सम्मेलनों के माध्यम से भी कानूनी लड़ाई में, मैकडोनल्ड अवार्ड जिसे 'कम्यूनल अवार्ड' भी कहते है प्राप्त किया। अम्बेडकर के इस आजीवन संघर्ष का सुखद अंत उनके माध्यम से भारतीय संविधान में सभी नागरिकों के लिये समान मानव अधिकारों का प्रावधान किये जाने से हुआ। अंतोगत्वा बाबा साहेब को जो श्रेय मिला वह अपूर्व है।[1]

11 जनवरी 1950 को बम्बई दलित जाति फेडरेशन ने बाबा साहेब को स्वर्ण पात्र में भारतीय संविधान की प्रति भेंटकर सम्मानित किया। तब बाबा साहेब ने कहा कि पिछले 20 सालों से सवर्णो तथा कांग्रेसी नेताओं ने मुझे मुस्लिम समर्थक तथा ब्रिटिश समर्थक, हिन्दू विनाशक एवं स्वतंत्रता विरोधी नेता कहकर निंदित किया, अब मुझे आशा है कि जो काम मैंने संविधान के निर्माण में किया है, उसमें मुझे वे सही रूप में समझ सकने में समर्थ होंगे और उन झूठे आरोपों को तिलांजलि दे देगें, जिन्हें वे मुझ पर लगाते आये है।[2]

डॉ. अम्बेडकर की दलितों के हित रक्षा के लिये प्रतिबद्धता उनके इस कथन से स्पष्ट है 'मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा है कि मैं उन पद दलितों की सेवा एवं हित में मरूँ जिनके बीच मेरा जन्म हुआ, पालन पोषण हुआ, और रह रहा हूँ। मैं अपने इस शुभ कार्य से एक इंच भी इधर-उधर नहीं हटूंगा। निन्दकों द्वारा उग्र निरूत्साही आलोचना की तनिक भी परवाह नहीं करूंगा।'[3] गोलमेज सम्मेलन के निर्णय के माध्यम से दलितों को जब राजनीतिक अधिकार (कम्यूनल अवार्ड के रूप में) प्राप्त हुआ तब यह स्पष्ट हो गया कि स्वतंत्रता संग्राम तथा देश के समाजिक स्वरूप में, अब मुसलमानों के समान्तर दलितों का भी हिन्दूओं से अलग वर्ग स्वीकार कर लिया गया है। हिन्दू समाज के लिये यह सबसे बड़ा आघात था कि समाज का एक बड़ा वर्ग टूटने के कगार पर पहुँच गया है। अत: इस अवार्ड के विरोध में महात्मा गांधी 22 सितम्बर 1932 को यरवदा जेल में आमरण अनशन पर बैठ गये। देश में तहलका मच गया। अनशन का समय बढ़ता गया। देश चिन्ता में डूब गया। गांधी ने भी हिन्दू समाज की एकता के लिये अपने प्राणों को दाँव पर लगा दिया था। अम्बेडकर किसी भी स्थिति में कदम से पीछे हटने को तैयार नहीं थे। गहन चिंता और अनेक दबावों के बीच राष्ट्रपिता के प्रति हार्दिक अनुराग व सम्मान तथा हिन्दू धर्म व समाज की एकता के लिये प्रखर, तर्कवादी अम्बेडकर ने निर्णायक क्षणों में भावुक होकर ही 'पूना पेक्ट' स्वीकार कर गांधी के सामने

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

समर्पण कर दिया। इस प्रकार जीती बाजी हारकर भी देशव्यापी झंझावत में उन्होंने घोषित किया कि 'वर्तमान काल में, मैं हिन्दू भारत का सबसे घृणित व्यक्ति हूँ, विश्वास करो कुछ दिनों पश्चात् जब धूल स्थिर हो जाये और भावी इतिहासकारों द्वारा गोलमेज सम्मेलन की कार्यवाही का निष्पक्ष भाव से जायजा लिया जायेगा, तब हिन्दूओं की आने वाली पीढ़िया राष्ट्र के प्रति मेरी सेवाओं का जयघोष करेगी।'[4] बाबा साहेब द्वारा की गई भविष्यवाणी भारतीय इतिहास का एक अपूर्व प्रसंग है, जो आज सौ प्रतिशत सत्य सिद्ध हो रही है।

यह भी अजीब लगता है कि देश की संस्कृति के ताने बाने वाल्मीकि और वेदव्यास(जो दलित वर्ग से आये थे) द्वारा रचे गये। जिसकी आत्मा की कल्पना कबीर, नानक, दादू, रैदास और घासीदास जैसे लोगों से तैयार हुई। उसी परम्परा व उद्देश्य के पोषक अम्बेडकर को एलियन (पराए) के रूप में, देश में खड़ा करने की कोशिश हुई। लेकिन एक समन्वयवादी संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि उसे एक तरफा खारिज नहीं किया जा सकता। अम्बेडकर ने जब धर्म परिवर्तन करने का निश्चय किया तब वे इस्लाम या ईसाईयत में किसी को भी चुन सकते थे। दोनों तरफ से उन्हें बुलावा था। हिन्दू भी भयाक्रांत थे कि उनका एक बड़ा अंग संभवत: इस्लाम स्वीकार कर लेगा। लेकिन अम्बेडकर ने महसूस किया कि इस्लाम और ईसाईयत दोनों हिन्दू धर्म के किसी अन्त: संघर्ष के फल नहीं है। जबकि जैन तथा बौद्ध धर्म इतिहास की उसी सनातन ग्रह कथा से उत्पन्न हुए हैं, जिसमें वे स्वयं भी है। अत: उन्होंने सुदूर अतीत में हिन्दू वर्ण व्यवस्था से विद्रोह करने वाले महापथिक बुद्ध का अनुयायी बनने का निर्णय लेकर ही अपने भारतीय होने के गर्व को अक्षुण्य रखा।[5]

डॉ. अम्बेडकर के दलित उद्धार कार्यक्रम की पृष्ठभूमि में हिन्दूओं द्वारा सदियों से दलितों पर हुए निर्मम अत्याचार की दारूण गाथा थी। इस सच्चाई से गांधीजी परिचित थे। देश में हिन्दू धर्म की एकता को बनाये रखने के लिये भी गांधी ज्यादा चिंतित थे। अत: उन्होंने भी स्वतंत्रता संग्राम की गतिविधियों के समान्तर हरिजन कल्याण कार्यक्रम को प्राथमिकता दी थी। यद्यपि गांधी और अम्बेडकर में मतभेद रहे, क्योंकि अम्बेडकर ज्यादा उग्र व क्रांतिकारी थे। उन्होंने कई बार गांधीजी के विचारों की कटु आलोचना की तो उस पर गांधीजी की प्रतिक्रिया उल्लेखनीय है 'डॉ. अम्बेडकर के लिए मेरे मन में गहरा सम्मान है। उन्हें मेरे प्रति कटु आलोचना का सब प्रकार से अधिकार है। यह तो उनका आत्म संयम है कि वे हमारा सिर नहीं फोड डालते। वे आज प्रत्येक हिन्दू को अछूतों का पक्का विरोधी मानते है और यह सर्वथा स्वाभाविक हैं।[6] गांधीजी का यह कथन इस बात की पुष्टि करता है कि गांधीजी तत्कालीन परिस्थिति में हिन्दूओं के प्रति डॉ. अम्बेडकर द्वारा की जाने वाली तीव्र आलोचना को स्वाभाविक प्रतिक्रिया मानते थे क्योंकि वे जानते थे कि अछूतों के प्रति हिन्दूओं के लगातार अत्याचार ने ही अम्बेडकर को हिन्दू विरोधी बना दिया था। हिन्दू विरोधी होकर भी वे हिन्दुस्तान विरोधी नहीं हुए थे। तभी तो डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय संविधान निर्माण में प्रारूप समिति के अध्यक्ष तथा विधि मंत्री के रूप में अद्धितीय भूमिका निभायी।

स्वतंत्रता संग्राम के अपने कटु संस्मरणों को याद करते हुए इस राष्ट्रवादी नेता ने संविधान सभा को संबोधित करते हुए 11 दिसम्बर 1946 को अपने भाषण में स्वीकार किया था – 'मैं जानता हूँ कि आज हम राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से बंटे हुए है। हम सभी आपस में एक प्रकार से युद्धरत रहे हैं, और मैं इस बात को भी स्वीकार करता हूँ कि मैं भी संभवत: ऐसे ही संघर्षरत समूह के नेताओं में एक हूँ। लेकिन श्रीमान इस सबके बावजूद, मैं इस बात से पूर्णतया आश्वस्त हूँ कि आने वाले समय और परिस्थितियों में इस देश को एक होने से विश्व की कोई चीज नहीं रोक सकेगी।[7] यह उनकी राष्ट्रीय चेतना का आत्मविश्वास सदा ही रहा है।

बाबा साहेब को संविधान निर्माण का सर्वाधिक राष्ट्रीय महत्व का कार्य, उनसे प्राय: असहमत रहे गांधी व नेहरू ने पूरे विश्वासपूर्वक सौंपा था। उनकी निष्पक्षता, ईमानदारी तथा गहन ज्ञान को मान देते हुए ही उन्हें देश के प्रथम मंत्रीमण्डल में कानून मंत्री का पद भी दिया गया था। पद को उन्होंने महत्व नहीं दिया सदैव सरल भाव दलितों की सेवा ही रहा। उन्होंने स्वीकार किया 'मैं संविधान सभा में किसी उच्च आकांक्षा के साथ नहीं आया बल्कि अनुसूचित जातियों के हितों की रक्षा करने के लिये आया हूँ।[8]

स्त्री मुक्ति के प्रणेता डॉ. साहब ने हिन्दू कोड बिल की स्वीकृति के लिये कानून मंत्री के रूप में पंडित नेहरू के साथ पूरजोर प्रयास किये थे, किन्तु परम्परावादी नेताओं के विरोध के कारण उनको सफलता नहीं मिली। अत: मानवीय सिद्धान्तों के विरूद्ध किसी प्रकार के समझौते को अस्वीकार करते हुए, अम्बेडकर ने 11 अक्टूबर 1951 को कानून मंत्री के पद से स्वेच्छा से इस्तीफा देकर पद की तुलना में आदर्श की महत्ता का, देश में प्रथम उदाहरण प्रस्तुत किया।[9]

दलितों के मसीहा बाबा साहब अम्बेडकर का व्यक्तित्व और कृतित्व जिस दर्शन और चिंतन की अभिव्यक्ति होती है उससे स्पष्ट है कि प्राय: अम्बेडकर की आजीवन द्वैध दृष्टि और निष्ठा रही। अम्बेडकर ने इसे कभी छिपाया भी नहीं। निस्संदेह अम्बेडकर राष्ट्रीय हित को भी अत्याधिक महत्व देते थे। उनका पूना पेक्ट स्वीकार करना, बौद्ध धर्म अंगीकार करना तथा संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष का पदभार ग्रहण करना इसके प्रमाण है इसके साथ ही अपने कृतित्व में दलितों के हित को सर्वोपरि मानते थे। उनका स्पष्ट कथन था कि जहां उनके हित और राष्ट्र हित में टकराव होगा वे अपना हित त्याग देंगे, (बाबा साहेब ने हिन्दू कोड बिल पर मंत्री पद त्याग दिया) जहां उनके हित और दलित हित में संघर्ष होगा वे दलितों के हित को प्राथमिकता देगें। किन्तु जहाँ राष्ट्रीय हित और दलितों के हित में टकराव हुआ वे राष्ट्रीय हित को छोड़ दलित के लिये कार्य करेगें।[10]

राष्ट्रीयता के तीन तत्व है, धरती, जन और जन की संस्कृति। बाबा साहब ने धरती (सत्ता) से अधिक जन और जन की संस्कृति के क्रमश: अधिकारों की रक्षा एवं पुनर्रचना को प्राथमिकता दी थी। आजादी की लड़ाई में उन्होंने दूरी बनाकर उचित समय पर यह प्रश्न खड़ा किया, देश के बहुसंख्यक हिन्दू समाज के नेतृत्व में स्वतंत्रता में दलितों की क्या स्थिति होगी ? यह ज्वलन्त प्रश्न उठाकर जब लोहा गर्म था उन्होंने उस पर प्रहार किया। स्वाभाविक गांधीजी सहित सभी राष्ट्रीय नेता चौंकन्ना हो गये। वर्णाश्रम व्यवस्था का कठोर शिकंजा सिर्फ ध्वस्त ही नहीं हुआ देश के सभी नागरिकों को स्वतंत्रता, समता और भ्रातृत्व का सहज उपहार प्राप्त हो गया।

अम्बेडकर की सोच थी कि स्वतंत्रता के अभाव में न तो व्यक्ति का और नहीं समाज का स्वाभाविक विकास संभव है। किन्तु स्वतंत्रता कोई कानून या किताब की वस्तु नहीं है। संविधान द्वारा स्वतंत्रता की प्रत्याभूति कर देने से नागरिकों में अपनी स्वतंत्रता के साथ दूसरों की स्वतंत्रता का सम्मान करने का भाव नहीं आ जाता है। इसी प्रकार समाज में समानता की स्थापना भी जोर जबरदस्ती से नहीं की जा सकती यदि ऐसा किया तो वह स्थायी नहीं रहेगी। अत: यदि समाज में वास्तविक रूप में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, लोकतंत्र लाना है तो वह स्वतंत्रता, समानता व भ्रातृत्व के धर्म के चिरन्तन आदर्शो द्वारा ही संभव है।[11]

इसीलिये अछूतों के मसीहा अम्बेडकर अंत में बौद्ध धर्म की शरण में चले गये। वह बौद्ध धर्म जिसका प्रतीत्य सम्प्रदाय व्यक्ति को चिंतन की स्वतंत्रता देता है और बुद्ध का साम्यवाद व्यक्ति की सम्पत्ति संग्रह की प्रवृत्ति पर अंकुश लगता है। अपने संरचनात्मक प्रारूप में यह धर्म निरपेक्ष है। राष्ट्र धर्म के सभी आदर्श गुण, वैदिक परम्परा के अनुगामी इस धर्म में विद्यमान है, जिसके द्वारा लोकतंत्र व समाजवाद को बिना किसी पूर्वाग्रह व अवरोध के मूर्त स्वरूप दिया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सोनवलकर दिनकर : उपेक्षा और अपमान ने बनाया विद्रोही : नईदुनिया इंदौर प्रसंग वश नवम्बर 1993
2. शहारे डॉ. म.ला : भारतीय संविधान के निर्माता डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर : विधायिनी अम्बेडकर स्मृति अंक अप्रेल जून 1989 म.प्र.विधानसभा सचिवालय भोपाल, पृष्ठ 53-54
3. अग्रवाल सुदर्शन : संविधान निर्माता के रूप में डॉ. अम्बेडकर का योगदान (1) विधायिनी अप्रैल जून 1989 : पृष्ठ 32
4. ऋषि हरिशचन्द्र : मानव अधिकारों के प्रबल पक्षधर : विधायिनी अप्रैल जून 1989, पृष्ठ 117
5. श्रीवास्तव मनोजकुमार : प्रस्तावना अम्बेडकर कांफ्रेस अंक 4 जून 1995, पृष्ठ (1) एम.एस.एस. आर.जरनल मंदसौर.
6. तिवारी गिरीराज प्रसाद : डॉ. अम्बेडकर और सामाजिक न्याय : विधायिनी अप्रैल जून 1989, पृष्ठ 27
7. अग्रवाल सुदर्शन : संविधान निर्माता के रूप में डॉ. अम्बेडकर का योगदान विधायिनी अप्रैल जून 1989 पृष्ठ 32
8. अग्रवाल सुदर्शन : संविधान निर्माता के रूप में डॉ. अम्बेडकर का योगदान विधायिनी अप्रैल जून 1989 पृष्ठ 33
9. सिंह रामगोपाल सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष : राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर (1994) पृष्ठ 111-114
10. सिंह रामगोपाल : डॉ. अम्बेडकर का भारतीय सामाजिक संरचना का प्रारूप एक विश्लेषण : विधायिनी अप्रैल जून 1989, पृष्ठ 96
11. सिंह रामगोपाल : डॉ. अम्बेडकर का भारतीय सामाजिक संरचना का प्रारूप एक विश्लेषण : विधायिनी अप्रैल जून 1989, पृष्ठ 94
12. अम्बेडकर डॉ. बाबा : राइटिंग्स एण्ड स्पीचेस (खण्ड-1) महाराष्ट्र सरकार बम्बई 1979.

****

भारत में समाजवादी क्रांति के उन्नायक डॉ.राममनोहर लोहिया

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – भारत में समाजवादी क्रांति के उन्नायक, इसके सिद्धान्तों और कार्यक्रमों के जनक डॉ. राममनोहर लोहिया का भारतीय राजनीतिक विचारकों की श्रेणी में विशिष्ट स्थान है। लोहिया गांधी के सत्याग्रह और अहिंसा के भी अखण्ड समर्थक थे, लेकिन वे इसे गांधी का अधूरा दर्शन मानते थे। वे समाजवादी थे,लेकिन मार्क्स के विचारों को भी एकांगी मानते थे। ये जहां प्रखर राष्ट्रवादी थे, वहीं विश्व सरकार का सपना देखते थे। वे आधुनिकतम आधुनिक थे, लेकिन आधुनिक सभ्यता को बदलने का प्रयत्न करते रहते थे। वे अपने चिंतन में विद्रोही क्रांतिकारी और उग्र थे लेकिन शांति और अहिंसा के अनूठे उपासक थे। 1 उनका व्यक्तित्व चिंतन और चरित्र अद्भूत था।

लोहिया अपने आदर्श विचारों और मान्यताओं के लिये आजीवन संघर्षरत रहे। सुकरात जिस तरह अपने विचारों के लिये एथेन्स की गलियों में घूमते हुए बालक, युवा, वृद्ध सभी से न्याय धर्म कानून की बातें करते थे, उसी प्रकार लोहिया भी देश, विदेश में शहरों, कस्बों और मोहल्लों में शोषण और उत्पीड़न के विरोध में तथा रंगभेद, समानता, नारी के सम्मान आदि मुद्दों पर बहस छेड़ते थे।[2]

डॉ. लोहिया ने समाजवादी विचारों के उग्र प्रचारक के रूप में राजनीति में अपनी पृथक पहचान बनाई है। जर्मनी से उच्च शिक्षा प्राप्त कर भारत आते ही उन्होंने अपने आपको मातृभूमि की सेवा में समर्पित कर दिया। आजीवन वे अपने विचारों के समाजवाद के उन्नयन में लगे रहे। डॉ. लोहिया के समाजवादी आंदोलन की संकल्पना के मूल में अनिवार्यत: विचार और कर्म दोनों की उपस्थिति थी। कर्म और विचार की इस संयुक्ति को उन्होंने अपने आचरण में भी जीवंत उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है।

स्वतंत्रता आंदोलन के शीर्ष नेतृत्व गांधीजी से वे प्रभावित थे। कांग्रेस के भीतर उनका अपना सोशलिस्ट ग्रुप था तथा वे कांग्रेस के विदेश विभाग के भी प्रमुख रहे। स्वतंत्रता संघर्ष में वे कई बार जेल गये तथा सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में उनकी भूमिका आश्चर्यजनक रही है। इसमें उन्होंने गुप्त रेडियो केन्द्र की स्थापना की तथा 15 माह तक भूमिगत रहे। जब फरवरी 1947 में लोहिया की अध्यक्षता में कानपुर में ' कांग्रेस समाजवादी दल' का अधिवेशन हुआ तब इसमें दल के नाम से 'कांग्रेस' शब्द हटाने का निर्णय हुआ था। अत: 1948 में कांग्रेस के नासिक अधिवेशन के समय समाजवादी कांग्रेस से अलग हो गये। सन् 1952 में किसान मजदूर प्रजापार्टी का समाजवादी पार्टी में विलय होने से जब प्रजा समाजवादी दल अस्तित्व में आया तब डॉ. लोहिया इसके अध्यक्ष बने। डा. लोहिया ने इस अधिवेषन में भी समाजवादी विचारधारा के साथ गांधीवादी विचारधारा के समन्वयपर जोर दिया। वे गांधी के प्रबल समर्थक थे। उनका मत था कि गांधीवाद या मार्क्सवाद का अंधानुकरण नहीं करना चाहिए। इस तरह वे पूंजीवाद और समाजवाद के सहअस्तित्व पर जोर देते थे।

डॉ. लोहिया को गांधीवादी समाजवादी विचारक कहा जा सकता है। जब वे 1952 में समाजवादी दल के अध्यक्ष रहे उन्हीं के प्रयत्नों से 1953 में एशियायी समाजवादी सम्मेलन का आयोजन हुआ। वे चाहते थे कि दुनियाभर के समाजवादी एकजुट होकर मजबूत संघ बनाए। सन् 1955 में उन्होंने भारतीय समाजवादी दल की स्थापना की।[3]

सन् 1947 में आजादी मिलने पर देश के विभाजन में नेहरू की भूमिका से वे बहुत खिन्न हुए और नेहरू से सदा के लिए उनका रास्ता भिन्न हो गया। उनको नेहरू की विदेश नीति व राष्ट्र नीति पर विश्वास नहीं था। अत: देश में उन्होंने कांग्रेस के एक छत्र शासन के विरूद्ध गैर कांग्रेसवाद का अलख जगाया। कांग्रेस के प्रति उनमें इतना रोष व क्षोभ था कि दक्षिण पंथी और वामपंथियों दोनों को साथ लेना भी उन्हें बेहतर विकल्प प्रतीत हुआ। इस तरह भारत में गैर कांग्रेस वाद के वे प्रथम शिल्पी कहे जा सकते है। उनके प्रयासों से 1967 के निर्वाचन में कई राज्यों में कांग्रेस को पराजय मिली। वे नहीं रहे परन्तु उनका सपना सन् 1977 में साकार हुआ जब केन्द्र में पहली बार गैर कांग्रेस सरकार बनी। वे मानते थे रोटी पलटी नहीं जावेगी तो वह जल जावेगी। अधिक समय की सत्ता का अधिनायकवादी होना अनिवार्य है।

डॉ. लोहिया के राजनीतिक विचारों की स्पष्ट झलक उनकी 'इतिहास चक्र' पुस्तक में दिखाई देती है। उनका विश्वास था कि इतिहास कठोरतापूर्वक बिना किसी आवेश एवं भावना के चक्राकार ढ़ंग से गतिमान दिखाई देता है। वे हीगल और मार्क्स द्वारा की गई इतिहास की व्याख्या को स्वीकार नहीं करते। उनका सिद्धान्त अरस्तू के कालचक्र सिद्धान्त से मेल खाता है। इतिहास सीधी और सरल रेखा की तरह आगे नहीं बढ़ता अपितु उसकी गति चक्र की तरह टेढ़ी-मेढ़ी है। पश्चिम के विद्धान स्पेलगर, सोरोकिन, टायनवी आदि इस सिद्धान्त से सहमत है। समय चक्र के अनुसार एक देश जो उन्नति शिखर पर है वह पतन के गर्त में गिर सकता है। ऐसे ही कोई भी देश पतन की दशा से उन्नति के शिखर पर पहुँच सकता है। लोहिया के अनुसार राष्ट्रों और सभ्यताओं का उत्थान, पतन सदैव होता रहता है। उदाहरण रूप में ब्रिटिश साम्राज्य का उत्थान, फरोह साम्राज्य का पतन, गुप्त राज्य का उत्थान और रोम साम्राज्य का पतन सभी को ज्ञात है।[4]

मानव इतिहास में उन्नत व संगठित जातियों तथा मिश्रित वर्गो में संघर्ष की प्रवृत्ति आम रही है। वर्ग और जाति के बीच की आंतरिक हलचल इतिहास का गुण व कारण रही है। वर्गो और जातियों एवं सभ्यताओं और विचार प्रेरक प्रवृत्तियों के मध्य संघर्ष शाश्वत रहा हैं। अत: पश्चिम की पूंजीवादी संस्कृति की शक्ति, समृद्धि और बौद्धिक श्रेष्ठता के दंभ को लोहिया सीरे से नकार देते है। उनका विश्वास रहा है कि अंतत: मानव जाति में बहुरंगी एकता स्थापित करने में विश्व सफल रहेगा।[5] वे आशावादी थे।

डॉ. लोहिया ने साम्य की वकालात करते हुए सामाजिक समता, आर्थिक

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

समता और समान राजनीतिक अधिकारों के लिये 'सप्त क्रांति' द्वारा क्रांतिकारी परिवर्तन का आव्हान किया। सामाजिक न्याय की स्थापना और अन्याय के विरोध में इस संघर्ष के लिये डॉ. लोहिया ने एक साथ सात क्रांतियों का विचार किया। सप्त क्रांति के निम्न मुद्दे है।

1. अन्याय व असमानता के विरूद्ध लड़ाई
2. अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में रंगभेद व नस्लीकरण के भेदभाव के विरूद्ध संघर्ष
3. खर्च की सीमा, निजी पूंजी से उत्पन्न आर्थिक भेदभाव समाप्ति के लिये संघर्ष
4. नर नारी के बीच समानता
5. संस्कारगत, जन्मगत व जातिगत भेदभाव के विरूद्ध संघर्ष
6. स्वतंत्रता प्राप्ति तथा विश्व लोक राज्य के लिये संघर्ष
7. निजी जीवन में अन्यायी हस्तक्षेप के विरूद्ध लोकतंत्रीय पद्धतियों से संघर्ष सप्त क्रांति के ये विचार अप्रेल 1966 में संयुक्त समाजवादी दल के अधिवेशन में लोहिया ने प्रस्तुत किये थे। इनके आधार पर ही दल ने 1967 के चुनाव में भाग लिया था।

महिलाओं के प्रति वे बहुत संवेदनशील थे। वे मानते थे कि दुनिया मे कोई महिला असुन्दर नहीं होती, फर्क इतना है कि कुछ महिलाऐं दूसरे की तुलना में ज्यादा सुन्दर होती है। उनका दृढ़ विश्वास था कि 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो'। लोहिया मूलत: रंगभेद के प्रबल विरोधी थे। उनका मत था कि पश्चिम के गोरों की श्रेष्ठता का भ्रम गुलामी की मानसिकता की देन है। सन् 1951 में अमेरिका के हार्वर्ड विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए रंगभेद नीति की उन्होंने कटु आलोचना करते हुए नीग्रो लोगों को सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारंभ करने की सलाह भी दी। गौरो को श्रेष्ठ मानने की प्रवृत्ति को वे मानसिक रोग मानते थे।

डॉ. लोहिया ने रंगभेद के साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर जातिप्रथा के खिलाफ संघर्ष किया। उनका मत था कि जाति के आधार पर जब तक कुछ लोग कमजोर और असहाय छोटी जाति के लोगों का शोषण करते रहेगें तब तक विश्व में शांति व मानव प्रगति संभव नहीं होगी। वे आर्थिक विषमता को राष्ट्र के लिये कैंसर के समान भयानक रोग मानते थे। उन्होंने समाज की विकृत मनोवृत्तियों को पहचाना था तथा विलासिता और फिजूलखर्ची पर बहस शुरू की थी। बाजार की लूट समाप्त करने के लिये दाम बांधे जाने की नीति की कल्पना की थी। वस्तुत: उन्होंने समाजवादी विचारधारा को गांधी की दृष्टि से देखने तथा व्यवहारिक रूप में भारतीयता की मिट्टी में रोपित करने का रास्ता खोजा था। उनकी समग्र कल्पना को हम भारतीय समाजवाद की प्रथम व्यवस्था कह सकते है। जमीनी स्तर के आंदोलनों में उल्लेखनीय, राष्ट्रभाषा हिन्दी व भारतीय भाषाओं का प्रश्न उन्होंने पहली बार उठाया था। उन्होंने उद्घोषित किया कि अंग्रेजी महारानी पोशाक रानी है अत: उसका स्थान हिन्दी, उर्दू, तमिल, तेलगू आदि कोई भी देशी भाषा ले वे कट्टरपंथ के भी विरूद्ध थे चाहे वह भाषाई, क्षेत्रिय अथवा वैचारिक ही क्यों न हो।[6]

राजनीतिक शक्ति के विकेन्द्रिकरण के लिए उन्होंने चौखम्बा राज्य का विचार प्रस्तुत किया। उनका समाजवादी राज्य चार स्तरीय होगा। इसमें शक्ति केन्द्र राज्य,ग्राम व नगर पंचायत तथा विश्व सरकार में विभाजित होगी। उन्होंने चौखम्बा राज्य की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए प्रतिपादित किया कि –

1. संपूर्ण सरकारी योजना व्यय का एक चौथाई स्वायत्त शासन संस्थाओं के माध्यम से खर्च किया जावें।
2. पुलिस द्वारा शांति व्यवस्था का उत्तरदायित्व ग्राम, मण्डल व नगर पंचायतों को दिया जावें तथा केवल सशस्त्र पुलिस राज्य के अधीन रहे।
3. कलेक्टर का पद समाप्त कर इसका दायित्व मण्डल के अधिकारियों तथा विभिन्न संस्थाओं में विभाजित किया जाना चाहिए।
4. बड़े उद्योगों व मूल्यों का नियंत्रण केन्द्र के पास रहेगा।
5. सिर्फ कृषि सहकारिता शिक्षा तथा भू राजस्व वसूली राज्य के आधीन होगें।[7]

लोहिया राज्यपाल के पद को भी समाप्त करना चाहते थे। वे न्यायपालिका में भी सुलभ व सस्ते एवं शीघ्र न्याय के लिये, परिवर्तन के पक्षधर थे। इस तरह चौखम्बा राज्य गांधी की स्वावलम्बन व ग्राम स्वराज्य की धारण से मिलता जुलता है।

डॉ. लोहिया के एशियाई समाजवाद का विचार भी महत्वपूर्ण है। उनका मत था कोई विचार कितना भी उपयोगी व सुन्दर क्यों न हो सभी देशों में एक ही प्रकार से लागू नहीं किया जा सकता है। विश्व के प्रत्येक देश की अपनी परिस्थिति, परिवेश, प्रकृति व संस्कृति होती हैं, इसी संदर्भ में चिंतन आवश्यक है। उनका दृष्टिकोण था कि एशियाई देशों का चरित्र यूरोप से भिन्न है। दो शताब्दियों से एशियाई पुराने निरकुंश शासन एवं सामन्तवादी व्यवस्था से छुटकारा पाकर नया जीवन जीने के लिये प्रयत्न कर रहे है। अत: सन् 1952 में लोहिया ने भारत में एशियाई सोशलिस्ट कांग्रेस की स्थापना की जिसका 1953 में रंगून में महिला सम्मेलन हुआ। एशियाई राजनीति का चरित्र भिन्न होने से यहां पश्चिम् ढ़ंग का समाजवाद या प्रजातंत्र या मार्क्सवादी व्यवस्था उपयुक्त नहीं है।[8]

इस तरह लोहिया ने भारत तथा एशियाई देशों दोनों की जनता, जमीन व परिवेश के संदर्भ में नवीन समाजवाद के स्वरूप का प्रतिपादन किया। इसे वे सप्तक्रांति द्वारा लाना चाहते थे। इसके पांच उद्देश्य है – समानता, प्रजातंत्र, अहिंसा, विकेन्द्रिकरण तथा समाजवाद। इसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचार जन की आय के असमान स्वरूप को नियंत्रित करना तथा खर्च की सीमा द्वारा सम्पन्नता व निर्धनता के जीवन स्तर को मानवोचित बनाना है। इसके लिये उन्होंने 1967 में संसद में खर्च की सीमा नामक ऐतिहासिक प्रस्ताव रखा था। आर्थिक विकेन्द्रिकरण का समर्थन करते हुए वे मशीनों पर आधारित उद्योग नीति के समर्थक थे। वे राष्ट्रीयकरण के साथ ही नियंत्रण को भी विकेन्द्रित करना चाहते थे, जिससे सरकार को असीमित शक्तियाँ नहीं मिल जावें। उनका यह आर्थिक चिन्तन समता और शोषण रहित लोकतांत्रिक समाजवाद की स्थापना के लक्ष्य से प्रभावित था। वस्तुत: उन्होंने समाजवाद को पश्चिम की धारणा के स्थान पर, भारत की परिस्थितियों के अनुकूल ढ़ाला। इसके लिये उन्होंने आर्थिक सिद्धान्तों में अतिवाद के स्थान पर मध्यम मार्ग का अनुसरण किया। उनकी चिंता यह रही कि भारत की बहुसंख्यक जनता का हित छोटी मशीनों पर आधारित उद्योगों से ही संभव है।[9] सबको काम मिले। सबको अवसर प्राप्त हो।

डॉ.लोहिया का व्यक्तित्व बहुमुखी था। उन्होंने कांग्रेस में रहकर भी स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रहते हुए कांग्रेस की समाजवादी विचारधारा से जुड़े रखने का महत्वपूर्ण कार्य किया। यहां यह उल्लेख अप्रांसगिक नहीं होगा कि उन्होंने अपना घर नहीं बसाया, शरीर, मन, बुद्धि, पुरूषार्थ आदि प्रकृति ने जैसा कुछ दिया सभी राष्ट्र को समर्पित कर दिया। वे निजी जीवन में सुख, वैभव, पद, परिवार सभी से निरसक्त वे स्वयं त्यागी व स्वभाव से क्रांतिकारी थे। उन्होंने कई क्रांतियों के लिये आव्हान किया जो अहिंसक स्वरूप में थी।

संसद सदस्य के रूप में डॉ. लोहिया ने कई बुनियादी सवाल उठाए थे। पंडित नेहरू के विरूद्ध अविश्वास प्रस्ताव में भाग लेते हुए जब उन्होंने कहा कि ' देश में 22 करोड़ व्यक्ति तीन आने के खर्च पर रोज गुजारा करते है और प्रधानमंत्री के कुत्ते पर 3 रूपया रोज खर्च आता है, तथा प्रधानमंत्री पर पच्चीस तीस हजार रूपया रोज खर्च होता है।' तब सदन अचम्भित रह गया था। वस्तुत: आय-व्यय की जनता व सत्ता तथा सम्पन्न वर्ग में जो दूरी है, उसे नियंत्रित करने के उद्देश्य से यह चर्चा उठाई गई थी। संसद की बौद्धिक चर्चाओं में यह महत्वपूर्ण मानी जाती है।[10]

डॉ. लोहिया ने राज्य संबंधित अपने समाजवाद की व्याख्या में चौखम्बा राज्य, सप्त क्रांतियाँ तथा अन्य कई महत्वपूर्ण आर्थिक सुझाव प्रस्तुत किये है। इनमें उनके मौलिक चिन्तन व नई दृष्टि का परिचय मिलता है। उनके विचारों से असहमत हुआ जा सकता है, परन्तु उनके तर्को व निहित सद्भावपूर्ण सत्ता व समाज के प्रति मार्गदर्शन की मौलिक सूझबूझ को खारिज नहीं किया जा सकता है।

डॉ. लोहिया ने सर्वथा नवीन दृष्टि से भारतीय समाजवादी चिंतन की आधाशिला रखी और उसे क्रियान्वित करने का सक्रिय प्रयास भी किया। स्वतंत्र भारत की आर्थिक व सामाजिक नीतियों के निर्माण में वे एक ऐसे समाजवादी चिंतक के रूप में याद रहेगें जिस पर मार्क्स का उतना प्रभाव नहीं है जितना गांधी का प्रभाव देखने को मिलता है। यह स्वीकार करना होगा कि स्वतंत्र भारत की आर्थिक औद्योगिक नीतियां उनके सुझावों से प्रभावित रही है। भारत में समाजवादी चिन्तन के उन्नयन में उनका योगदान अविस्मरणीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शरद डॉ. ओंकार : लोहिया के विचार : पृष्ठ 236
2. शर्मा डॉ. ओंकारसिंह : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन (2011) पृष्ठ 192.
3. परते डॉ. गौरीसिंह : समाजवाद में डॉ.राममनोहर लोहिया का योगदान : ए जरनल ऑफ एशिया फार डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेन्ट : वाल्यूम XIII (1) 2013 पृष्ठ-98
4. शर्मा विश्वनाथ प्रसाद : भारतीय राजनीतिक विचार, पृष्ठ 529
5. शर्मा विश्वनाथ प्रसाद : भारतीय राजनीतिक विचार, पृष्ठ 529
6. लोहिया डॉ.राममनोहर : वील ऑफ हिस्ट्र, पृष्ठ 111.
7. लोहिया डॉ.राममनोहर : आस्पैक्ट ऑफ सोशलिस्ट पॉलिसी : पृष्ठ 10
8. शर्मा डॉ. गोविन्द प्रसाद : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन : पृष्ठ 197-198
9. ठाकुर कृष्णानंदन : राममनोहर लोहिया आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक विचार, पृष्ठ 212
10. शर्मा डॉ.गोविन्द प्रसाद : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन : पृष्ठ 201

****

मानवेन्द्रनाथ राय का नव मानववाद

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – मानवेन्द्रनाथ राय आधुनिक भारत के सबसे अधिक विज्ञ तथा विद्वान विचारक थे। अपने सक्रिय सावर्जनिक जीवन के बीच भी उन्होंने क्रमबद्ध विचारण और सैद्धांतिक निर्धारण का उत्तरदायित्वपूर्ण उल्लेखनीय कार्य किया है। उनकी कुछ कृतियाँ राजनीतिक चिन्तन की श्रेष्ठतम् धरोहर मानी जाती है यथा – ' दी फ्यूचर ऑफ इण्डियन पालिटिक्स ', ' मेटीरियलिज्म ', न्यू ' ह्योमेनिज्म एण्ड पालिटिक्स ' तथा ' रेडिकल ह्यूमेनिज्म' आदि।1 उनके द्वारा प्रस्तुत नव मानववाद का सिद्धान्त जिसे मौलिक मानववाद अथवा वैज्ञानिक मानववाद आदि नाम से भी जाना जाता है राजनीतिक चिन्तन के क्षेत्र में उनका अपूर्व योगदान है।

बंगाल के 24 परगना जिले में जन्में जन्मजात क्रांतिकारी मानवेन्द्रनाथ की एक निर्भक विचारक के रूप में भी पृथक से विशिष्ट पहचान है। उन्होंने अपने राजनीतिक विचार विपिनचन्द्र पाल, अरविन्द घोष तथा सुरेन्द्रनाथ बनर्जी से प्राप्त किये, किन्तु ब्रिटिश सरकार की दमनकारी नीति से क्षुब्ध होकर , इन्होंने क्रांतिकारी ' युगान्तर दल' के नेता यतीन्द्र मुखर्जी से घनिष्ठता स्थापित कर ली थी। एक क्रांतिकारी के रूप में हावड़ा षड़यंत्र केस के संदर्भ में राय को सन् 1910 और 1915 में जेल भी जाना पड़ा था।[2]

सन् 1915 के अंत में वे डच इंडीज भाग गये। वहां से वे जावा, फिलिपिन्स, कोरिया तथा मंचूरिया भी गए तथा सन् 1917 में मेक्सिको जा पहुँचे। मेक्सिको में राय ने समाजवादी शक्तियों को संगठित कर वहाँ साम्यवादी दल की स्थापना की तथा उसकी नेशनल कान्फ्रेस के प्रथम चेयरमेन बन गए। सन् 1919 में मानवेन्द्रनाथ लेनिन के आमंत्रण पर रूस गये जहां वे लगभग एक शताब्दी तक साम्यवादी दल के घनिष्ठ सम्पर्क में रहे। कहा जाता है कि अपनी बौद्धिक प्रतिभा से उन्होंने लेनिन को बहुत प्रभावित किया था। सन् 1926 में साम्यवादियों की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की ओर से प्रतिनिधि मण्डल के नेता के रूप में चीन भेजा गया। जहां 1927 के अंत तक उन्होंने चीन को कृषि क्रांति योजना लागू करने की सलाह दी थी। ' मास्को इंस्टीट्यूट के पौर्वात्य विभाग ' के प्रधान के रूप में राय ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को प्रभावित करने तथा भारत में साम्यवादी दल की स्थापना की स्थापना की भी पृष्ठभूमि तैयार की। अपनी निर्भिक एवं स्पष्ट आलोचना शैली से स्टालिन के लाल क्षेत्रवाद तथा वामपंथी नीतियों की कटु आलोचना करने के कारण उनका रूस की साम्यवादी पार्टी से संबंध समाप्त हो गया और उन्हें ' कोमिन्टर्न ' से निकाल दिया गया। वे नाम बदलकर भारत आ गये। यहां भी कानपुर षड्यंत्र केस में पकड़े जाने से वे सन् 1931 से 1936 तक जेल में रहे।[3]

सन् 1936 से राय भारतीय राजनीति में सक्रिय हुए। वे कांग्रेस में रहे परन्तु गांधी की नीति से असंतुष्ट रहे। अत: वहाँ उन्होंने सन् 1939 में कांग्रेस में ही रेडिकल डेमोक्रेटिक पार्टी के संगठन का कार्य किया। वे कांग्रेस में ऐसे साम्यवादी थे जो गांधी के साथ–साथ स्टालिन व लेनिन से भी सहमत नहीं थे। राय के राजनीतिक विचारों में आरंभ से अंत तक एकरूपता नहीं है। उनके विचार स्थिर नहीं रहे, उनमें परिवर्तन होता रहा। इसे वैचारिक विकास के रूप में तीन पडावों में बांटा जा सकता है। प्रथम काल वह रहा जब वे बंगाल के शस्त्र क्रांतिकारी नेताओं के सम्पर्क में रहे। इस काल में वे रोमान्टिक क्रांतिकारी की भूमिका में दिखाई देते है। दूसरी अवस्था यह है जब वे कट्टर साम्यवादी बन गये तथा उन्होंने सक्रिय रूप में मेक्सिको, रूस और चीन तथा अंत में भारत में साम्यवादी आंदोलन में भाग लिया। अंतिम व्यवस्था वह है जब उन्होंने साम्यवाद को त्याग दिया तथा उनके स्थान पर उदार मानवतावाद का प्रचार किया।[4]

राय ने अपने जीवन के प्रारंभिक काल में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद से प्रेरणा ग्रहण की। उनका विश्वास था कि क्रांतिकारी और आंतकवादी उपायों द्वारा ब्रिटिश सरकार को भारत छोड़ने के लिये विवश किया जा सकता है। क्रांतिकारी कार्यो के लिये धन आदि की व्यवस्था में मुख्य रूप से उनका योगदान रहा है। बंगाल में प्रसिद्ध ' युगान्तर गुट ' के नेताओं के सम्पर्क व क्रांतिकारी कार्यो में उनकी भागीदारी उल्लेखनीय रही है।

भारत छोड़कर डच इण्डीज इण्डोनेशिया पहुँचने के पश्चात् वे दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में घुमते हुए, मेक्सिको पहुँचे। यहाँ से उनका निजी सक्रिय राजनीतिक जीवन प्रारंभ हुआ। सन् 1920 में लेनिन ने उन्हें रूस आने का निमंत्रण दिया। रूस में उन्होंने साम्यवादी दल की सर्वोच्च सत्ता के सम्पर्क में रहकर जो कार्य किया उससे यह स्वीकार करना होगा कि प्रथम भारतीय के रूप में उनका व्यक्तित्व व कार्य अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के रहे है।[5] साम्यवादी दल की भारत में स्थापना की पृष्ठभूमि राय ने ही तैयार की थी। वे आरंभ में सैद्धान्तिक दृष्टि से रूढ़िवादी साम्यवादी अवश्य थे। उन्होंने लेनिन तथा स्टालिन के साथ काम किया। सोवियत रूस में मार्क्सवाद के व्यवहारिक रूप को भी उन्होंने देखा। बुद्धिजीवी राय मार्क्सवाद की वैज्ञानिक पद्धति से सहमत थे। वे नहीं चाहते थे कि इसे कट्टरपंथ बनाया जावें। अत: उन्होंने मार्क्सवाद को आर्थिक नियतिवाद के दुराग्रहों से मुक्त करने तथा उसके मानवीय नैतिक एवं स्वतंत्रता प्रिय स्वरूप को पुन: स्थापित करने का प्रयत्न किया। इस तरह उन्होंने मार्क्सवाद के पुनर्निरीक्षण का महत्वपूर्ण कार्य किया है। वस्तुत: वे वास्तव में मार्क्सवाद को देशकाल व परिस्थितियों के अनुरूप लचीला व परिवर्तनशील बनाने के पक्षधर थे। रूढ़ीवादी के स्थान पर उनका चिंतन प्रगतिशील था। उन्हें कम्युनिस्ट जगत पर रूस का एकाधिकार भी पसंद नहीं था। अत: रूस में दूसरी इन्टरनेशनल में उनका लेनिन से मतभेद हो गया। राय ने स्टालीन व वामपंथी नीतियों तथा लालपंथी कार्यवाही की खुली आलोचना की, परिणामस्वरूप कम्युनिस्ट इंटरनेशनल से उनको अलग कर दिया गया। अत: वे भाग कर रूस छोड़ भारत आ गये। भारत में भी कानपुर षड़यंत्र केस में उन्हें 6 वर्ष जेल में रहना पड़ा।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

जेल से मुक्त होने के बाद वे भारतीय राजनीति में सक्रिय हुए। कांग्रेस में वे गांधी के विचारों से असहमत होकर उन्हें प्रतिक्रियावादी सामाजिक दर्शाने बताने लगे। उन्होंने गांधी के सिद्धान्तों की खुलकर आलोचना की। उन्होंने कहा ' गांधीवाद घिसी पीटी और निरस बातों का मुरब्बा और निराशापूर्ण परस्पर विरोधी बातों का समूह हैं। उनके मत में गांधी का दर्शन अपने आप में स्थिति को यथावत रखने का प्रयत्न है। गांधी के अहिंसा व अप्रतिरोध के दर्शन ने लोगों को निश्क्रिय बना दिया है। वे पूंजीवादी सामाजिक शोषण को छिपाने का सूक्ष्म प्रयास करने के दोशी है। गांधी ने मजदूरों को जमींदारों व पूंजीपतियों के शोषण से बचाने का कोई कार्य नहीं किया आदि। चरखा अर्थशास्त्र को भी राय प्रतिक्रियावादी मानते है।[6] इस तरह वे गांधी को भारतीय पिछड़ेपन का प्रतीक व सुधार विरोधी सिद्ध करते है। साम्यवादी नीति के अनुरूप उन्होंने भारत छोड़ों आंदोलन की भी भर्त्सना की। यह सच है कि साम्यवाद के प्रति रूढ़ीवादी दृष्टिकोण न रख पाने से वे मार्क्सवादी नहीं रह सके। कांग्रेस के नेतृत्व से भी असहमत होकर उन्होंने रेडिकल डेमोक्रेटिक पार्टी का गठन किया तथा राजनीति को एक वैज्ञानिक दिशा देने का यत्न किया। मौलिक मानववाद का विकास करने में उन पर यद्यपि मार्क्स, फेवर बेक, लेनिन, हॉब्स तथा हैजलैंड का प्रभाव है, तदापि उन्होंने विभिनन वैचारिक धाराओं का अपने मानववाद में अन्तर्विलीनीकरण करने का ही प्रयत्न किया है।[7]

कांग्रेस में सम्मान नहीं पाने पर उन्होंने 1940 में अपनी पृथक रेडिकल डेमोक्रेटिक पार्टी का गठन किया था, किन्तु उनका यह प्रयोग असफल रहा। वे समझ गये कि जब तक भारत में सांस्कृतिक और दार्शनिक क्रांति नहीं आयेगी तब तक लोग मौलिक लोकतंत्र को नहीं समझ सकेगें। अत: उन्होंने अपनी संपूर्ण शक्ति भारतीय पुनर्जागरण में लगा दी। जिसका उद्देश्य मौलिक मानववाद के विकास के लिए मार्ग प्रशस्त करना था। अपने मानववाद को उन्होंने मौलिक व नव इसलिए कहा कि वे सिद्ध करना चाहते थे कि यह पूर्ववर्ती व समकालीन विचारकों द्वारा प्रतिपादित मानववाद से सर्वथा भिन्न वैज्ञानिक चिन्तन है। पूर्ववर्ती विचारक मानववादी व्यक्ति को अति प्राकृतिक सत्ता की अधीनता से नहीं बचा पायेगें तथा आधुनिक मानववादी मनुष्य को अपेक्षित वांछित केन्द्रिय महत्व देने में असफल रहे है।[8]

राय ने अपने दर्शन में मनुष्य को किसी रहस्य, आध्यात्मक या विश्वास का विषय नहीं बनाया। उनके मत में मनुष्य ही मानव जाति का मूल है तथा मनुष्य ही संसार में प्रत्येक वस्तु का मानदण्ड है। तात्पर्य यह कि मनुष्य का मुख्य संबंध स्वायं मनुष्य से है। अत: उनके मत में यह अतर्क संगत है कि मनुष्य स्वयं को दैवी इच्छा, आत्मा, परमात्मा जैसी रहस्यमय शक्तियों से सम्बद्ध रखे। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र सिर्फ वैज्ञानिक अध्ययन के विषय है उनसे मानव जीवन व कर्म किसी प्रकार प्रभावित नहीं होता है। राय संसार की वास्तविकता में विश्वास करते हुए यह प्रतिपादित करते है कि भौतिक संसार सिर्फ मनुष्य की बुद्धि तथा क्रियात्मक शक्तियों का ही परिणाम है।

राय का मौलिक मानववाद संदेश देता है कि मनुष्य स्वयं अपने भाग्य का निर्माता है और उसमें इतनी क्षमता है कि वह संसार को आज की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ और सुन्दर बना सकता है। प्रकारान्तर से वे कहना चाहते है कि उनका मानववाद उन लोगों के लिए है, जो संसार की वास्तविकता में विश्वास करते है और यह नहीं मानते कि इसका निर्माण किसी दूसरी शक्ति या जादुई शब्द द्वारा हुआ है।

राय यह मानकर चले है कि मनुष्य स्वभाव से नैतिक और विवेकपूण है। अत: वह स्वयं उन्मुक्त और न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के निर्माण में समर्थ है। वर्तमान में नैतिक मूल्यों में हुए पतन के संदर्भ में ही वे सामाजिक दर्शन व राजनीतिक सिद्धांतों के पुनर्नवीनीकरण पर जोर देते है। वे सामाजिक जीवन में नैतिक मूल्यों को सर्वोच्च प्राथमिकता देते है। परन्तु उन्होंने स्पष्ट शब्दों में धर्म पर नैतिकता की निर्भरता का खण्डन किया। धर्म के कारण मनुष्य में अतिप्राकृतिक शक्तियों तथा मूल्यों पर निर्भर रहने की प्रवृत्ति पनपति है। अत: आधुनिक जीवन के सभी क्षेत्र में वे धर्म के निर्देशन को अस्वीकार करते है। राय के मत में नैतिकता अतिमानवीय या थोपी गई बाह्य वस्तु न होकर आंतरिक शक्ति है, जो मनुष्य को समाज कल्याण की दिशा में स्वत: प्रेरित करती है। नैतिकता व बुद्धिवादिता न रहने पर मनुष्य को मनुष्य नहीं कहा जा सकता है। राय ने स्पष्ट कर दिया कि हमारे द्वारा हुए वैज्ञानिक विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य में कोई अति मानवीय शक्ति नहीं है, सिर्फ भौतिक विज्ञान की प्रगति ही इसकी पृष्ठभूमि में है। व्यक्ति केन्द्रित इस संसार के लिये सिर्फ बुद्धि संगत नैतिक आचरण की सिर्फ स्वतंत्रता अपेक्षित है। चिन्तन की यह स्वतंत्रता ही नवमानववाद की कुंजी है। स्वतंत्रता के उन्होंने तीन आधार स्तम्भ बनाए - मानववाद, व्यक्तिवाद और विवेकवाद।[9]

राय स्वतंत्रता को जीवन की अतिकर्म शक्ति मानते है। जीवन के लिये स्वतंत्रता तथा स्वतंत्रता के लिये संघर्ष को आवश्यक मानते हैं। स्वतंत्रता वस्तुत: आत्मरक्षण के लिए व्यक्ति द्वारा किये गये अनवरत संघर्ष के मूल में है। स्वतंत्रता जैविक विकास की ही विरासत है। स्वतंत्रता सामूहिक उन्नति और सामाजिक प्रगति की मूल प्रेरणा है। अत: राय ने मनुष्य को स्वतंत्रता प्रिय, कल्पनाशील एवं रचनात्मक प्रवृत्ति का माना है। मनुष्य को बंधन, नियंत्रण और दबाव में रखना घातक है। राय ने मार्क्स की तरह समाज को प्राथमिकता देकर व्यक्ति को दूसरे स्थान पर नहीं रखा। नवीन मानववाद मनुष्य को ही सर्वोच्च मानता है। व्यक्ति के लिये समाज है।[10]

राज्य सत्ता और संविधान कैसा भी हो, वह व्यक्ति को विभिन्न प्रकार के शोषणों को शिकार बनाता ही है। उसके द्वारा प्रदत्त स्वतंत्रता यद्यपि व्यक्ति द्वारा ही व्यक्ति के हित में दी जाती है, परन्तु यथार्थ में उसमें निर्बाध स्वतंत्रता देने की नियत का सदैव अभाव रहता है। स्टालिन के साम्यवाद में, विचारों की स्वतंत्रता तथा आलोचना के प्रति असहिष्णुता के परिणामस्वरूप हो इतने महत्वपूर्ण व्यक्ति को रूस का त्याग, भाग कर करना पड़ा था। यही कारण है, उन्होंने अपने मौलिक मानववाद में अर्थात् अपने नवमानववाद में स्वतंत्रता, नैतिक मूल्य तथा विवेक आधारित दल विहिन लोकतंत्र की कल्पना को मूर्त रूप दिया। यहां वे सर्वहारा वर्ग की तानाशाही की जगह राज्य के लिये संगठित लोकतंत्र का समर्थन करते है, जिसमें दल के स्थान पर सिर्फ व्यक्ति को सर्वोच्च महत्व दिया गया है। मौलिक मानववाद में राय ऐसे व्यक्ति का विचार प्रस्तुत करते है , जो राष्ट्रीयता की संकुचित व संकीर्ण परिधि में सिमटा हुआ नहीं है। इसी तरह उन्होंने राष्ट्रवाद को भी प्रतिक्रियावादी प्रवृत्ति घोषित किया। अपने मौलिक मानवतावाद में राष्ट्रवाद की जगह, विश्व सरकार का समर्थन करते हुए कहा कि ' राष्ट्र राज्यों वाला विश्व कभी भी शांति स्थापित नहीं कर सकता, क्योंकि शांतिकाल में भी ये राज्य कूटनीति द्वारा युद्ध जारी रखते है।[11]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि राय की वैचारिक यात्रा काफी लंबी और घुमावदार है। क्रांतिकारी राष्ट्र भक्त के रूप में प्रारंभ होकर शांति स्थापक तथा व्यक्ति स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक के रूप में समाप्त हुई। उन्होंने देश-विदेश में व्यापक कार्य किया। मार्क्सवाद से उनका गहरा संबंध रहा पर वहां भी वे संशोधनवादी की मुख्य भूमिका में ही आगे आये।

राय भौतिकवादी थे और सिर्फ इसी दर्शन को एकमात्र श्रेष्ठ दर्शन मानने के लिये वे अतिवादी भी नजर आते है। उनके विचारों का मूल्याकंन करते हुए विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने लिखा है कि उनका सिर्फ आलोचनात्मक रूप ही प्रखर है, रचनात्मकता का उसमें सर्वथा अभाव है। राजनीति तथा दर्शन दोनों में उन्होंने किसी पूर्णत: विकसित अविकल पद्धति का प्रतिपादन नहीं किया है। मानवेन्द्रनाथ राय ने मुख्य रूप से चिन्तन के विविध तत्वों को समन्वित करने का प्रयत्न किया है। वे बुद्धिवादी पुनर्जागरण, भौतिक यथार्थवाद, ब्रह्माण्ड शास्त्र, मानववाद तथा स्वतंत्रता की उत्कृष्ट अभिलाषा को एक बिन्दु पर केन्द्रित करने का प्रयत्न किया है। वे वर्तमान चिन्तकों से संभवत: सर्वाधिक विज्ञ और विद्धान थे, इसलिये इनके तार्किक विवेचन की गंभीरता को स्वीकार करते हुए इसे मौलिक चिंतन नहीं माना जा सकता है।

राज्य के भौतिक मानववाद में व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता श्रेष्ठता तथा वैज्ञानिक चिन्तन के फलस्वरूप प्राप्त उपलब्धियों के संदर्भ में स्वतंत्रता को सर्वोच्च महत्व दिया गया है। उनका मत है कि मानव के नैतिक मूल्यों को मानव जीवन को कल्याणकारी बनाने के प्रयास के रूप में देखा जाना चाहिए। एक क्रांतिकारी जिसने तीन क्रांतियों - रूस, चीन तथा भारतीय में सीधे भागीदारी की, अपने बौद्धिक चरित्र बल, गतिील व्यक्तित्व तथा सक्रिय राजनीतिक जीवन के बावजूद भारतीय लोगों को प्रभावित नहीं कर सका इसका कारण उनमें स्वाभाविक दंभ न दबने की भावना के साथ विषय के प्रति मौलिक रचनात्मक दृष्टि की अपेक्षा कटु आलोचनात्मक दृष्टिकोण की प्रधानता रहा है। वैयक्तिक स्वतंत्रता के प्रवक्ता, व्यक्ति की गरिमा को महिमा मंडित करने वाले चिंतक तथा सर्वदेशीय विश्व सरकार के स्वप्न दृष्टा के रूप में याद किये जावेगें।[12]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. त्यागी पी.के. : भारतीय राजनीतिक विचारक : (2006) पृष्ठ 473
2. अवस्थी डॉ.अमरेश्वर एवं अवस्थी डॉ.रामकुमार : प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक चिन्तक (2009) पृष्ठ 255.
3. अवस्थी डॉ.अमरेश्वर एवं अवस्थी डॉ.रामकुमार : प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक चिन्तक (2009) पृष्ठ 255.
4. शर्मा गोविन्द प्रसाद : आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन (2011) पृष्ठ-239.
5. घोष शंकर : सोशलिज्म एण्ड कम्यूनिज्म इन इंडिया, पृष्ठ-166
6. त्यागी पी.के. : भारतीय राजनीतिक विचारक : (2006) पृष्ठ 476
7. राय एम.एन. न्यू ओरिएन्टेशन (1946), पृष्ठ 166
8. अवस्थी डॉ. अमरेश्वर एवं अवस्थी डॉ.रामकुमार : प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक चिन्तक (2009) पृष्ठ-260-261
9. पाटिल कोकिला पी. : एन.मन. राय का मानवतावाद : ए जरनल ऑफ एशिया फार डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेन्ट मुरैना (अक्टूम्बर-दिसम्बर 2010) पृष्ठ-151.
10. राय एम.एन. : रेडिकल ह्यूमिनीज्म, पृष्ठ 29-30
11. राय एम.एन. : पोलिटिक्स, पॉवर एण्ड पार्टीज : पृष्ठ-84
12. त्यागी पी.के. : भारतीय राजनीतिक विचारक : पृष्ठ-499

****

भारतीय राजनीति व क्षेत्रीयतावाद

डॉ. सिंधु लाहोरिया *

प्रस्तावना – भारतीय राजनीति व क्षेत्रीयतावाद विविधता में एकता भारत के सामाजिक और राजनीतिक जीवन की एक महत्वपूर्ण विशेषता है भारत के स्वाधीनता संग्राम की सबसे बड़ी विशेषता थी भारत की एकता आजादी के संघर्ष में उत्तर और दक्षिण, पूरब और पश्चिम सभी क्षेत्रों के लोगों ने समानरूप से अपनी आहूति दी। भाषा, रहन-सहन तथा सांस्कृतिक विविधता के बाबजूद संपूर्ण भारत एक विशाल चट्टान की तरह स्वाधीनता संग्राम में खड़ा रहा और अपनी आजादी के लिए संघर्ष करता रहा यद्यपि ब्रिटिश सरकार ने भाषा एवं क्षेत्र के आधार पर लोगों को विभाजित करने का प्रयास किया था, लेकिन इस कार्य में सफल नहीं रहा, स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ वर्षो के बाद तक भारत की एकता और अखंडता की अवधारणा बनी रही, पिछले तीन दशकों में भारत में क्षेत्रीयतावाद का रूप इतना व्यापक औ भयावह हो गया कि भारत की संघीय व्यवस्था के लिए खतरा बनता जा रहा है।

क्षेत्रीयतावाद का अर्थ – सामान्य अर्थ में क्षेत्रवाद का अर्थ किसी भौगोलिक क्षेत्र के लोगों की उस भावना एवं प्रयत्नों से है जिनके द्वारा वे अपने क्षेत्र विशेष के लिए आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक शक्तियों में वृद्धि चाहते है तथा पृथक अस्तित्व के लिये जागरूक है।

भारत में क्षेत्रीयतावाद का अर्थ सामान्य अर्थ से भिन्न है, भारत को व्यावहारिक दृष्टि से एक महादेश कहा जा सकता है, यहां विभिन्न धर्मो, जातियों, विभिन्न भाषाओं तथा विभिन्न सम्प्रदायों के लोग रहते है, भारतीय संदर्भ में क्षेत्रीयतावाद का अर्थ है संपूर्ण शब्द की तुलना में किसी विशेष राज्य या किसी विशेष क्षेत्र के प्रति वहाँ के लोगों में विशेष लगाव तथा उस राज्य या क्षेत्र के हितों के लिए राजनीतिक और सामाजिक दृष्टि से संगठित होना तथा उनके संरक्षण एंव सवंर्द्धन के लिए संगठित प्रयास करना, उदाहरण के लिए पंजाब में, महाराष्ट्र में, असम में, तमिलनाडू में वहाँ के लोगों के द्वारा समय-समय पर जिस राजनीतिक भावना को व्यक्त किया गया है, उससे क्षेत्रीयतावाद को बढ़ावा मिला है, दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि क्षेत्रीयतावाद एक संकीर्ण एवं संकुचित भावना है जो राष्ट्रीयता का विलोम है और उसका एकमात्र उद्देश्य है क्षेत्र के हितों की प्रधानता, भले ही उससे राष्ट्रीय हित क्यों न कमजोर हो जाए।

क्षेत्रीयतावाद के स्वरूप – क्षेत्रीयतावाद एक भावना है जो विभिन्न रूपों में समय-समय पर व्यक्त होता रहता है अभी तक भारत में क्षेत्रीयतावाद की अभिव्यक्ति के निम्नलिखित रूप देखे गए है-

1. **पृथक राज्य की मांग –** भारत में क्षेत्रीयतावाद का सर्वाधिक आक्रामक रूप पृथक् राज्य की मांग में अभिव्यक्त हुआ है 1956 में राज्य पुनर्गठन के बाद पृथक् राज्य की मांग में काफी बढोत्तरी हुई है, अधिक पिछडेपन और जाति, भाषा, धर्म को लेकर विभिन्न क्षेत्रों द्वारा पृथक् राज्य की मांग समय-समय पर उठाई गई तथा क्षेत्रीय आंदोलनों की शुरूआत की गई अनेक राज्यों के निर्माण के बाद सन् 2000 में उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ और झारखंड का निर्माण किया गया।

वर्तमान में तेलंगाना क्षेत्र को पृथक् राज्य बनाने और उत्तरप्रदेश का विभाजन कर तीन पृथक् राज्य बनाने के लिए मांग की जा रही है।

2. **संघ से पृथक् होने की मांग –** क्षेत्रीयतावाद का स्वरूप सिर्फ पृथक् राज्य की मांग तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि पृथक् देश की मांग इस आधार पर होने लगी, क्षेत्रीयतावाद के आंदोलन को प्रबंल बनाने में तमिलनाडू के द्रविड मुनेत्र कड़गम दल ने 1950 में मद्रास राज्य में पृथकतावादी आंदोलन संगठित किया और मद्रास, आन्ध्र प्रदेश, केरल और मैसूर राज्यों को भारतीय संघ से अलग करके एक पृथक् सम्प्रभु द्रविड-स्थान राज्य बनाए जाने की मांग की मास्टर तारासिंह के नेतृत्व में पंजाब के सिख संप्रदाय ने स्वाधीनता से पूर्व खालिस्तान की मांग की थी, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी पृथक् सिख राज्य की मांग की गई, सन् 1950 से 1969 के बीच सिखों ने हिंसात्मक आंदोलनों के माध्यम से पृथक् पंजाबी सूबे की मांग की। 1980 में पुन: सिख चरमपंथियों द्वारा खालिस्तान की मांग की गई, सिख चरम-पंथियों द्वारा आनन्दपुर साहिब में आयोजित सम्मेलन मे पृथक सिख राज्य की मांग की गई। उस समय खालिस्तान आन्दोलन को विदेश में रहने वाले सिखों की एक बड़ी संख्या का समर्पण प्राप्त हुआ था। 1986 में प. बंगाल के पहाड़ी क्षेत्र में लोगों ने स्वतंत्र गोरखालेण्ड की मांग की। उसी तरह मिजो राष्ट्रीय फ्रन्ट के द्वारा स्वाधीन मिजोरम की मांग उठने लगी, कहने का तात्पर्य यह है कि क्षेत्रीयतावाद की राजनीति ने अलगाववादी राजनीति को बढ़ावा दिया इस तरह की राजनीति देश की एकता व संप्रभुता के लिए गंभीर चुनौती है।

3. **अन्तर्राज्यीय विवाद ओर क्षेत्रीयता –** संघात्मक शासन के अंतर्गत संघ और इकाईयों के बीच तथा विभिन्न ईकाईयों के बीच मतभेद या वैधानिक संघर्ष होने की संभावना तो रहती ही है, किन्तु जब इस प्रकार के संघर्ष या विवादों का आधार क्षेत्रीयतावाद हो जाता है तो यह संघर्ष या विवाद देश के संघीय स्वरूप के लिए खतरा बन जाता है, भारत में मुख्यरूप से अन्तर्राज्यीय विवाद के विषय नदियों के जल का बंटवारा, क्षेत्रों पर दावा, विद्युत वितरण की समस्या इत्यादि है, मध्यप्रदेश, गुजरात और राजस्थान के बीच नर्मदा नदी के जल के वितरण का विवाद, भाखरा नागल बांध में उत्पन्न बिजली के वितरण का विवाद, तमिलनाडू और कर्नाटक के बीच कावेरी नदी के जल के वितरण का विवाद अन्तर्राज्यीय विवाद के मुख्य उदाहरण है।

4. **स्वायत्तता की माँग –** भारतीय संविधान द्वारा संघ और ईकाईयों के बीच अधिकार क्षेत्र बंटे हुये है, फिर भी दोनों के बीच टकराव होता रहता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद केन्द्र तथा अधिकांश राज्यों में 40 (चालीस) वर्षों तक कांग्रेस की सरकार रही उस समय राज्यों की स्वायत्तताकी माँग कम उठी,

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

लेकिन जब से केन्द्र तथा राज्यों में अन्य विभिन्न दलों की सरकार बनने लगी तब से राज्यों द्वारा स्वायत्तता की माँग उठने लगी, क्षेत्रीयता के आधार पर राज्य स्वायत्ता की माँग करने लगे, इस प्रकार की माँग कश्मीर, अरूणाचल प्रदेश, असम, नागालैण्ड इत्यादि राज्यों द्वारा होने लगी केन्द्र-राज्य के बीच टकराव का होना संघीय व्यवस्था में स्वाभाविक है, परंतु भारत में केन्द्र-राज्य टकराव ने क्षेत्रीयतावाद का रूप धारण कर लिया है।

5. उत्तर-दक्षिण का विभाजन- भारत के राजनीति संस्कृति के अंतर्गत दो उप-संस्कृतियाँ पनप रही है। वे है उत्तर भारत की संस्कृति और दक्षिण भारत की संस्कृति, दक्षिण भारत में यह आम धारणा है कि उत्तर भारत के लोग दक्षिण भारत के हितों की उपेक्षा करते है तथा उन पर अपनी संस्कृति थोपना चाहते है अभी हाल ही में महाराष्ट्र नव-निर्माण सेना के अध्यक्ष राज ठाकरे द्वारा उत्तर-भारतीयों पर विशेषकर बिहारी एवं उत्तरप्रदेश के लोगों के संदर्भ में जो प्रतिक्रिया व्यक्त की गई वह क्षेत्रीयतावाद की भावना से प्रभावित होकर की गई भाषा को लेकर भी उत्तर और दक्षिण भारत में गहरा मतभेद है दक्षिण भारत के लोगों में इस धारणा के कारण क्षेत्रीयतावाद की भावना विकसित हो गई है यही कारण है कि वहां के लोग क्षेत्रीय दलों को प्राथमिकता देने लगे है। तमिलनाडु में डी एम.के. तथा अन्ना डी.एम. के की सरकार को सदैव सत्ता में आना इस बात का ज्वलंत उदाहरण है आन्ध्रप्रदेश में तेलुगु देशम दल का उदय भी इसका उदाहरण है। महाराष्ट्र के राजनीति में शिवसेना के बढते प्रभाव को देखा जा सकता है। अधिकांश दक्षिण-भारत के राज्यों में क्षेत्रीय दलों का महत्व बढ़ता जा रहा है इससे भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद का प्रभाव बढ़ा है।

क्षेत्रीयतावाद के बढ़ने का कारण - 1980 के बाद भारतीय राजनीति में जिस तरह से क्षेत्रीयतावाद की भावना बढ़ी है उससे भारतीय संघीय व्यवस्था के सामने एक गम्भीर चुनौती उत्पन्न हो गई है, महाराष्ट्र की घटना, पंजाब की स्थिति, असम की स्थिति, कश्मीर की स्थिति इसके ज्वलंत उदाहरण है, भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद के उदय और विकास के कई कारण रहे है जिसमें निम्नलिखित कारण अति महत्वपूर्ण है -

1. भौगोलिक - भारत एक विशाल देश है, क्षेत्रफल और जनसंख्या की दृष्टि से भारत को महादेश का दर्जा दिया जा सकता है। भारत के अलग-अलग क्षेत्रों में अनेक प्रकार की विभिन्नताएँ पाई जाती है उसमें संतुलित ढंग से विकास नहीं हो पाया है। इस प्रकार क्षेत्रों की असमानता ने क्षेत्रीयतावाद को जन्म दिया है और इसे बढ़ाया है। देश के विभिन्न भागों में विकास की गति असमान और असंतुलित हो रही है। लोग रोजी-रोटी की तलाश में उस राज्य की ओर जा रहे है जहां अधिक उद्योग या कल-कारखाने लगे है, यही कारण है कि मुम्बई, गुजरात, दिल्ली कोलकाता इत्यादि महानगरों की जनसंख्या में काफी वृद्धि हुई है, जिसके कारण वहाँ के स्थानीय लोगों में प्रतिक्रियास्वरूप क्षेत्रीयता की भावना बढ़ी है, अभी मुम्बई की घटना को इस संदर्भ में देखा जा सकता है। मुम्बई की अर्थव्यवस्था में 50% से अधिक का योगदान बाहरी लोगों का है, मुम्बई में अधिकांश व्यापारी राजस्थान, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और मध्यप्रदेश के है।

ठाकरे परिवार के कार्यकलाप क्षेत्रीयता की भावना से प्रेरित है, शिव सेना एवं महाराष्ट्र नव-निर्माण सेना क्षेत्रीय दल है, क्षेत्रीय दलों के अलगाववादी नीति से देश विघटन की राह पर जा रहा है यह राजनीति बँटवारे की राजनीति से भी घातक है। इस राजनीति से देश का संघीय स्वरूप भिन्न-भिन्न हो जाएगा।

2. ऐतिहासिक कारण - स्वाधीनता संग्राम के समय ब्रिटिश सरकार ने क्षेत्रीयतावाद को बढ़ावा देने का हर प्रयास किया था, परंतु वे क्षेत्रीयतावाद की भावना को उभारकर भारतवासियों को बाँटने में सफल नहीं हो सके। उस समय भारत क्षेत्रीयतावाद को प्रोत्साहित करने में जहाँ ब्रिटिश सरकार असफल रही, लेकिन भारत के राजनीतिज्ञ अपने वोट-बैंक की राजनीति के चलते क्षेत्रीयता की भावना को आगे बढ़ाने में सफल रहे प्रान्तों का विभाजन अगर प्रशासनिक आधार पर होता, तो क्षेत्रीयता की भावना भारतीय राजनीति में नहीं बढ़ती, लेकिन 1956 में भाषा को मुख्य आधार मानकर राज्यों के पुनर्गठन के बाद क्षेत्रीयतावाद की भावना और भी तेज गति से आगे बढ़ी, पंजाब, हरियाणा, गुजरात, मिजोरम, मुम्बई इत्यादि राज्यों के जन्म के पीछे क्षेत्रीयतावाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रबंल कारण रही है।

3. सांस्कृतिक विभिन्नता - भारत में विभिन्न क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के बीच पाई जाने वाली सांस्कृतिक विभिन्नता भी क्षेत्रीयतावाद के विकास का प्रबल कारण रही है, अलग-अलग क्षेत्र में वास करने वाले लोग अपनी संस्कृति, अपनी भाषा, अपनी लिपि, अपनी परम्पराओं तथा अपनी वेष-भूषा की रक्षा करने के उद्देश्य से क्षेत्रीयतावाद की भावना के वशीभूत हुए। इस कारण भी भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद की भावना बढ़ी।

4. भाषा संबंधी विवाद - भारत में भाषागत विविधता रही है। उत्तर और दक्षिण की भाषा एक-दूसरे से भिन्न रही है भाषा संबंधी विवाद भी क्षेत्रीयतावाद के उदय और विकास में एक महत्वपूर्ण कारक रहा है। संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने की घोषणा की गई, परंतु सभी क्षेत्रों के लोगों ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के पक्ष में नहीं है। यही कारण है कि अहिन्दी भाषी लोगों ने अपनी भाषा को प्रधानता प्रदान करने के लिए क्षेत्रीयतावाद को अपनाया।

5. आर्थिक तत्व - क्षेत्रीयतावाद को बढ़ाने में आर्थिक तत्वों की अहम भूमिका रही है, आजादी के बाद भारत के सभी क्षेत्रों का आर्थिक-विकास संतुलित ढंग से नहीं किया गया है इससे पिछड़े क्षेत्रों में असंतोष फैलने लगा और क्षेत्रीयता की भावना फैलने लगी उदाहरणस्वरूप आन्ध्रप्रदेश में तेलंगाना का क्षेत्र, राजस्थान में दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान, महाराष्ट्र में विदर्भ क्षेत्र में तेज गति से विकास नहीं हो सका और मैं अपने लिए पृथक् राज्य की मांग करने लगे अत: कहा जा सकता है कि आर्थिक तत्व क्षेत्रीयतावाद के लिए विशेष रूप से उत्तरदायी है।

6. राजनीतिक कारण - विभिन्न क्षेत्रों में क्षेत्रीय राजनीतिक दलों या समूहों के गठन के कारण भी क्षेत्रीयतावाद को बढ़ावा मिला है तमिलनाडू में डी.एम.के., अन्ना डी.एम.के. पंजाब में अकाली दल, आन्ध्र प्रदेश में तेलुगु देशम, असम में असम गण परिषद, मुम्बई में महाराष्ट्र नव-निर्माण सेना, तथा शिव सेना जैसे क्षेत्रीय दलों के गठन के कारण क्षेत्रीयतावाद को बढ़ावा मिला है। भारत में जब से गठबन्धन सरकार बनने लगी तब से भारतीय राजनीति में क्षेत्रीय दलों का महत्व बढ़ा है इसके अलावा समय-समय पर भिन्न-भिन्न राजनीतिक आंदोलनों ने भी क्षेत्रीयतावाद को विकसित करने में योगदान किया है।

7. जाति के आधार पर -जाति के आधार पर भी क्षेत्रीयता की प्रवृत्ति बढ़ी है। हरियाणा, उत्तरप्रदेश व महाराष्ट्र में क्षेत्रीयता की प्रवृत्ति फैलाने में जाति प्रभावक तत्व रहा है।

क्षेत्रीयतावाद के दुष्परिणाम - क्षेत्रीयतावाद के निम्नलिखित दुष्परिणाम है -

1. **विभिन्न क्षेत्रों के बीच संघर्ष और तनाव –** संकीर्ण क्षेत्रवाद के कारण विभिन्न क्षेत्रों के बीच आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, यहां तक कि मनोवैज्ञानिक संघर्ष और तनाव दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

2. **राज्य तथा केन्द्रीय सरकार के बीच संबंधों का विकृत होना –** भारतीय राजनीति में क्षेत्रीयतावाद के बढ़ने से केन्द्र तथा राज्य सरकार के आपसी संबंध अत्यंत कटु बन जाते है, प्रत्येक क्षेत्र के दबाव समूह, क्षेत्रीय नेतागणों, बड़े-बड़े उद्योगपति या राजनीतिज्ञ अपने-अपने क्षेत्र के स्वामी को प्राथमिकता देते है और केन्द्रीय सरकार का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयत्न करते है। अगर केन्द्र की सरकार उनकी बातों पर समुचित ध्यान नहीं देती तो उस स्थिति में राज्य सरकारें केन्द्र सरकार पर गलत आरोप लगाती है इससे केन्द्र तथा राज्य सरकारों के आपसी संबंध कटु हो जाते है।

3. **स्वार्थी नेतृत्व व संगठन का विकास –** क्षेत्रीयता का एक दुष्परिणाम यह होता है कि इसके फलस्वरूप अलग-अलग क्षेत्र में कुछ इस प्रकार के नेतृत्व व संगठनों का विकास हो जाता है, जो कि जनता की भावनाओं को उभारकर अपने संकीर्ण स्वार्थों की पूर्ति करना चाहते है देश के अनेक क्षेत्रों जैसे – महाराष्ट्र, कश्मीर, पूर्वोत्तर भारत के कुछ राज्यों में स्थानीय नेतागण अपनी स्वार्थपूर्ति में लगे है।

4. **भाषा की समस्या का अधिक जटिल होना –** क्षेत्रीय भाषा की समस्या को सुलझाने में सहायक न होकर उसे और भी जटिल बनाती है, भारतीय राजनीति में कई बार भाषा को लेकर विवाद उत्पन्न हुआ, लेकिन आज तक इस समस्या का निदान नहीं निकल सका जिस कारण हिन्दी संपूर्ण भारत की संपर्क भाषा नहीं बन सकी संविधान द्वारा हिन्दी को शब्दभाषा का दर्जा तो अवश्य मिला, लेकिन दक्षिण भारत के राज्य हिन्दी का लगातार विरोध करते रहे है।

क्षेत्रीयतावाद को रोकने के उपाय – क्षेत्रीयतावाद भारत जैसे संघीय व्यवस्था वाले देशों के लिए एक गंभीर समस्या है। समय रहते हुए इस समस्या का सही निदान करना आवश्यक है क्षेत्रीयतावाद को रोकने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते है।

1. केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों की नीतियाँ इस प्रकार की होनी चाहिए कि सभी क्षेत्रों का संतुलित आर्थिक विकास संभव हो सके, जिससे कि विभिन्न क्षेत्रों के बीच आर्थिक तनाव कम से कम हो।
2. सभी क्षेत्र के लोगों को समान आर्थिक सुविधाएं प्रदान की जाएं जिससे कि अनावश्यक प्रतिस्पर्द्धा की भावना न पनप सके।
3. चुनाव आयोग की राजनीतिक दलों की गतिविधियों पर चुनाव के बाद भी ध्यान रखना चाहिए जो राजनीतिक दल चाहे वह राष्ट्रीय स्तर का हो या क्षेत्रीय स्तर का, जाति, धर्म क्षेत्र एवं भाषा के आधार पर समाज को बांटने की कोशिश करते हो ऐसे राजनीतिक दलों पर प्रतिबंध लगा देना चाहिए, भारत में द्विदलीय व्यवस्था को प्रोत्साहित करना चाहिए। राष्ट्रीय स्तर की पार्टियों को सरकार बनाने के लिए ऐसे क्षेत्रीय दलों से समझौता नहीं करना चाहिए जो जाति, धर्म या क्षेत्र के आधार पर राजनीति करते हो।
4. केन्द्रीय मंत्रीमंडल एवं राज्य मंत्री मंडल में सभी क्षेत्रों का उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जिससे कि क्षेत्रीय पक्षपातपूर्ण नीतियों का खंडन हो सके तथा सरकार के गठन में सभी क्षेत्रों को उचित भागीदारी प्राप्त हो सके।
5. राज्य सभा में सभी राज्यों को समानता के आधार पर प्रतिनिधित्व दिए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए जैसा कि अमरीका के सीनेट में किया गया है।
6. भाषा संबंधी विवादों का हल शीघ्र ही करना चाहिए इस संबंध में सबसे उचित हल यह है कि सभी क्षेत्रीय भाषाओं को मान्यता प्रदान की जाए।
7. हिन्दी भाषा को किसी भी क्षेत्रीय समूह पर जबरदस्ती लादा न जाये। अपितु इस भाषा का प्रचार व विस्तार इस ढंग से किया जाए कि विभिन्न क्षेत्रीय समूह स्वत: ही इसे संपर्क भाषा के रूप में स्वीकार कर ले।
8. प्रचार के विभिन्न साधनों के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रों के सांस्कृतिक लक्षणों के विषय में लोगों के सामान्य ज्ञान को बढाया जाए जिससे कि एक क्षेत्र के लोग दूसरे क्षेत्र के प्रति अधिक सहनशीलता की भावना को अपना सके।
9. जहां तक संभव व व्यावहारिक हो, उप-सांस्कृतिक क्षेत्रों की उचित आकांक्षाओं की पूर्ति की जाए, यदि उनका कोई बुरा प्रभाव राष्ट्रीय जीवन व संगठन पर न पड़ता हों

निष्कर्ष – क्षेत्रीयतावाद से जुडे उपर्युक्त तथ्यों के अध्ययन करने के बाद यह कहा जा सकता है कि भारत जैसे विशाल देश में क्षेत्रीयतावाद एक स्वाभाविक एवं तार्किक परिणाम है जिस प्रकार हम आज भारतीय राजनीति से जाति की भूमिका को समाप्त नहीं कर सकते उसी प्रकार हम क्षेत्रीयतावाद को भी न तो समाप्त कर सकते है। आवश्यकता इस बात की है हम उसके सकारात्मक पहलू को आगे बढ़ाएँ।

क्षेत्रीयतावाद की प्रबल मांगे है सभी क्षेत्रों में समान गति से संतुलित विकास, क्षेत्रीय समस्याओं का समय पर समुचित निदान, क्षेत्र में रहने वाले लोगों को रोजगार की समान सुविधाएँ तथा क्षेत्र में उद्योग धंधे, कल-कारखानों की स्थापना जिससे क्षेत्र का विकास हो।

अंत में कहा जा सकता है कि भारत जैसे विशाल विविधतापूर्ण और लोकतांत्रिक देश में क्षेत्रवाद और उपक्षेत्रवाद एक स्वाभाविक अवधारणा है। क्षेत्रीयतावादी प्रवृत्तियाँ संयमित और नियंत्रित रूप में रहे तथा क्षेत्रवाद और राष्ट्रवाद में सामंजस्य की स्थिति संपूर्ण अंशों में बनी रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजनीतिक सिद्धांत – डॉ. पुखराज जैन
2. भारतीय राजनीति और क्षेत्रीयतावाद – डॉ. सी.पी. सिंह
3. प्रतियोगिता दर्पण
4. दैनिक भास्कर
6. नवीन दुनिया

****

पं. जवाहर लाल नेहरू का चिंतन

डॉ. मीनाक्षी व्यास *

प्रस्तावना – नेहरू वैभव के मध्य उत्पन्न हुए थे। उन्होनें आर्थिक सम्पन्नता स्वयं के वैभवशीलता में आमोद-प्रमोद में खर्च ना करके अपना सर्वस्व राष्ट्र के प्रति समर्पित कर दिया। युवा जीवन का श्रेष्ठ समय उन्होनें देश हित हेतु कारावास में गुजारा, सन् 1921 से कारावास का जीवन प्रारंभ हो गया था। नेहरू 1918 में कांग्रेस महासमिति के सदस्य चुने गये। कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में जिनेवा में साम्राज्यवादी सम्मेलन में जाने का अवसर 1927 में मिला। कांग्रेस के 1929 के लाहौर अधिवेशन के वे अध्यक्ष निर्वाचित हुए। नेहरू ने व्यक्ति तथा राज्य के सम्बन्धों पर बल देते हुए बताया राज्य व्यक्ति के लिए है न कि व्यक्ति राज्य के लिए, व्यक्ति समाज के प्रति उत्तरदायी है। किन्तु राज्य का आधार एवं कार्य व्यक्ति के कल्याण पर निर्भर करता है। व्यक्ति के अधिकार उसके सामाजिक उत्तरदायित्वों से संतुलित किए जाते है। कर्तव्यों के बिना अधिकारों का बोध नहीं हो सकता है।

नेहरू की लोकतंत्र के प्रति गहरी आस्था थी। लोकतंत्र को वे जीवन की एक शैली मानते थे। नेहरू ने लोकतंत्र को शांतिपूर्ण पद्धति मानते हुए साध्य प्राप्त करने का उचित साधन माना। अनुशासन के स्थान पर लोकतंत्र का आत्मानुशासन अन्य पद्धतियों से श्रेष्ठ है। अल्पसंख्यकों के प्रति सहिष्णुता का भाव केवल लोकतंत्र में ही सम्भव है। संघर्ष के स्थान पर शांतिपूर्ण परिवर्तन लोकतंत्र का प्राण है। नेहरू के चिंतन में वैज्ञानिक एवं प्राविधिक क्रांति, धर्मनिरेपक्षता, फेबियनवाद, मार्क्सवाद, उदारवाद, मानवतावाद, लोकतन्त्रवाद, नियोजनवाद, विश्वबन्धुत्व, राष्ट्रवाद इनके मध्य समन्वय स्थापित किया गया है। लोकतंत्र एवं आर्थिक नियोजन में भारतीय करण करने में पण्डित जी ने व्यावहारिक एवं वैचारिक आयाम विश्व में स्थापित किए।

स्वतन्त्रता तथा समानता एवं वैयक्तिक स्वतन्त्रता के मध्य आर्थिक समृद्धि का समाजवादी क्रम लाना चाहते थे। उनका दृष्टिकोण सार्वभौम-मानववादी था। वे उन मूल्यों एवं विश्वासों को जनजीवन में उतारना चाहते थे।

संसदात्मक लोकतंत्र को भारत में स्थापित करने के साथ वर्षो से भारत में चली आ रही जड़ता अज्ञानता सामाजिम अंधविश्वादिता दूर कर राष्ट्रीय एकता राजनीतिक समानता के आदर्शो को उन्होनें स्थापित किया।

नेहरू की संविधानवाद में दृढ निष्ठा थी। वे सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार के माध्यम से लोकतांत्रिक पद्धति के क्रांतिकारी कार्य को सम्पादित करना चाहते थे। सामाजिक आर्थिक विकास राष्ट्रनिर्माण के कार्यो के साथ सम्बद्ध करके जनता में निर्वाचक आत्मविश्वास नेहरू ने जागृत किया। नेहरू के दृष्टिकोण में भारत की महत्वपूर्ण समस्या राजनीतिक एवं आर्थिक स्थायित्व प्राप्त करने की थी। आर्थिक स्थायित्व प्राप्त करने के लिए सहकारिता आन्दोलन के माध्यम से कुटीर एवं लघु उद्योगों की स्थापना तथा सम्पत्ति के उचित वितरण पर ध्यान केन्द्रित किया। उनके द्वारा स्वीकृत मिश्रित अर्थव्यवस्था का क्रम राष्ट्रीय उत्पादन क्षमता तथा राष्ट्रीय आय में अभिवृद्धि का कारण बना सम्पत्ति के सम्बन्ध में समाजवादी दृष्टिकोण के कारण नवीन धारणाऐं विकसित हुई।

समाजवादी व्यवस्था की स्थापना के शांतिपूर्ण प्रयासों में वर्ग संघर्ष की स्थिति को टालना तथा इस संघर्ष को पारस्परिकवार्ता मजदूर संगठनों के विकास एवं बढ़ते हुए प्रभाव तथा उपयोगी व्यवस्थापन के माध्यम से दूर करने का उनका विचार सर्वथा समाजवादी था। वे समाजवाद को भारतीय पर्यावरण के अनुकूल स्थिति में ढ़ालना चाहते थे। नेहरू ने लोकतांत्रिक समाजवाद के माध्यम से उत्पादन में वृद्धि पूंजीवादी व्यवस्था के समर्थक थे क्योंकि पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पादन प्रधान होती है। इसी हेतु राष्ट्रीयकरण की नीति का सर्मथन किया। समाजवाद की अवधारणा को गत्यात्मक लचीली एवं विकासोन्मुख मानते थे। लोकतांत्रिक समाजवाद मानवीय मूल्यों पर आधारित है।

नेहरू ने मार्क्सवाद के सामाजिक तथा आर्थिक दर्शन को अत्यधिक वैज्ञानिक एवं विचारोत्पादक स्वीकार करते थे। किसी भी दृष्टि से वर्ग संघर्ष का विचार पुराना है। वर्तमान में गांधीजी द्वारा प्रस्तुत समन्वय, सहयोग, सहअस्तित्व तथा प्रगतिशील समीकरण के समाधान अनुसरण करना ही श्रेयस्कर है।

नेहरू के अन्तर्राष्ट्रीय चिंतन में विश्व को युद्ध की विभीषिका से बचने का प्रयास अन्तर्निहित था। वे आणविक अस्त्रों की होड़ से चिंतित थे। विश्व की महाशक्तियों की शक्ति लोलुपता एवं नव-उपनिवेशवादी प्रवृत्तियों के वे कट्टर आलोचक थे। वे शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के सूत्रधार थे। पण्डित जी का विष्वास था कि यदि विश्व में शांति के प्रयासों तथा सह-अस्तित्व की भावना को नही बनाए रखा गया तो सम्पूर्ण विश्व का विनाश हो जाएगा। पण्डितजी ने अन्तर्राष्ट्रीय शांति तथा सुरक्षा को बनाए रखने का निरन्तर प्रयास किया। नेहरूजी ने विश्व एकता के स्वप्न को सदैव अपने मस्तिष्क में संजोय रखा राष्ट्रों में व्याप्त परस्पर भय तथा घृणा का अंत करके स्वतन्त्रता तथा पारस्परिक सहयोग पर आधारित विश्व राज्य की स्थापना सम्भव है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. शर्मा जे. एस., ए. डेस्क्रेप्टिव बायोग्राफी ऑफ नेहरू, दिल्ली एस. चॉद एण्ड कम्पनी 1955
2. आधुनिक भारत के राजनीतिक विचारक – प्रकाश नारायण नाटाणी
3. भारतीय राजनीतिक चिन्तन – डॉ. ए. अवस्थी

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया में बदलाव की प्रस्तावित अवधारणा

डॉ. श्रीकांत दुबे *

प्रस्तावना – भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्रात्मक देश है। भारत में कार्यपालिका एवं व्यवस्थापिका से न्यायपालिका को पूर्ण स्वतंत्र स्थान प्राप्त है। भारतीय न्यायपालिका विश्व की विभिन्न न्यायपालिकाओं के समान स्वतंत्र एवं सर्वोच्च मानी जाती है। संविधान में उच्चतम न्यायलय को बहुत मजबूत एवं स्वतंत्र स्थान प्राप्त है। किन्तु प्राय: यह कयास लगाए जाते रहे है कि न्यायाधीशों के चयन की प्रक्रिया में और पारदर्शिता लाने की आवश्यकता है। भारत में न्यायाधीशों के चयन की प्रक्रिया एवं उसमें बदलाव हेतु किये जा रहे प्रयासों को जानने हेतु इसे संपूर्ण परिदृश्य में समझना आवश्यक होगा।

वर्तमान में भारत में न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया– सर्वोच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। भारत के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति संविधान के अनुच्छेद 124 के अंतर्गत की जाती है। राष्ट्रपति परंपरागत रूप से प्राय: मुख्य न्यायाधीश के रूप में उन्हें ही नियुक्त करता है जो सर्वोच्च न्यायालय में वरिष्ठतम न्यायाधीश हो। मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति के पश्चात् मुख्य न्यायाधीश की सलाह से अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया प्रचलित है। 1956 में स्थापित विधि आयोग ने सुझाव दिया था कि मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति केवल वरिष्ठता के आधार पर न होकर गुण एवं उपयुक्तता के आधार पर की जानी चाहिए। कालांतर में विधि आयोग के सुझाव के अनुरूप न्युक्तियाँ की गई लेकिन इससे जुड़े संवैधानिक विवाद भी खड़े हो गये। न्यायाधीशों की नियुक्ति करने की राष्ट्रपति की शक्ति व्यवहार में औपचारिक है, क्योंकि राष्ट्रपति मंत्रीमंडल की सलाह से कार्य करता है। 1964 एवं 1973 से वरिष्ठता के सिद्धांत का पालन नहीं किया गया जिससे विवाद उत्पन्न हुए अत: कालांतर में वरिष्ठता के सिद्धांत का अनुसरण किया गया।

कालेजियम सिस्टम– न्यायाधीशों की नियुक्ति से संबंधित कालेजियम सिस्टम विगत दो दशकों से प्रचलित है। कालेजियम सिस्टम वह प्रणाली है जिसके द्वारा सर्वोच्च न्यायालय एवं राज्यों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्तियाँ एवं स्थानांतरण किये जाते हैं। इसके अंतर्गत मुख्य न्यायाधीश एवं सर्वोच्च न्यायालय के चार अन्य वरिष्ठतम न्यायाधीश होते हैं। सरकार कालेजियम की तरफ से भेजे गये नामों को मंजूरी देकर सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति करती है। यह माना जाता है कि उक्त प्रक्रिया में सरकार का कोई दखल नहीं होता है। कालेजियम की उत्पत्ति सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पूर्व में लिये गये फैसलों के अधीन हुई है। यह व्यवस्था 1993 से लागू हुई है। इस सिस्टम में यह व्यवस्था है कि यदि सरकार कालेजियम सिस्टम के अंतर्गत की गई सिफारिशें नहीं मानती है तो माना जाएगा कि सरकार न्यायपालिका के काम में दखल दे रही है यानि सरकार सिफारिशें मानने के लिए बाध्य है। 1993 में स्थापित कालेजियम सिस्टम के पूर्व 1950 के संविधान निर्माण के बाद से ही न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति की मंजूरी पर केन्द्र सरकार करती थी। भारत के मुख्य न्यायाधीश अन्य न्यायाधीशों की सलाह पर नाम तय कर राष्ट्रपति को देते थे ऐसे में इस व्यवस्था पर राजनीतिक दबाव हावी रहने की बात कही जाती थी।

कालेजियम सिस्टम के तहत की जाने वाली न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में यह विवाद उठाया जाता रहा है कि सर्वोच्च न्यायालय एवं राज्यों के उच्च न्यायालयों की नियुक्ति 5 सदस्यीय कालेजियम किस व्यवस्था के तहत करता है यह आज भी स्पष्ट नहीं है इस व्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह उठाए जाते रहे हैं। यह आरोप लगाये जाते रहे है कि (अ) इस नियुक्ति प्रक्रिया में पारदर्शिता का अभाव है, (ब) न्यायाधीशों के लिए योग्यता का मापदण्ड तय नहीं था, (स) यह प्रणाली किसी के प्रति जबावदेह नहीं है तथा (द) जो न्यायाधीश हेतु नहीं चुने गये वे इसका कारण नहीं पूछ सकते थे।

प्रस्तावित राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग 2014 की अवधारणा– न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया में यह तीसरे बदलाव की अवधारणा है सर्वप्रथम 1950 में संविधान निर्माण के बाद से अदालतों में न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति की मंजूरी पर केन्द्र सरकार करती थी। द्वितीय 1993 से कालेजियम सिस्टम के तहत न्यायाधीशों की नियुक्तियॉ की जाने लगी तथा तृतीय राष्ट्रीय न्यायाधीश नियुक्ति आयोग 2014 का प्रावधान किया गया है जिसमें न्यायाधीशों के चयन की प्रक्रिया परिवर्तित करने हेतु विभिन्न प्रावधान किये गये है। इसके लागू होने के पश्चात् न्यायाधीशों की नियुक्ति हेतु प्रचलित कालेजियम सिस्टम खत्म हो जाएगा। इस प्रस्तावित आयोग में प्रावधान है कि – (अ) राष्ट्रीय न्यायाधीश नियुक्ति आयोग में 06 सदस्य होंगे जिनमें भारत के मुख्य न्यायाधीश, सर्वोच्च न्यायालय के दो न्यायाधीश, प्रधानमंत्री, कानून मंत्री एवं लोकसभा में विपक्ष के द्वारा चुने गए दो प्रतिष्ठित व्यक्ति होंगे। (ब) भारत के मुख्य न्यायाधीश आयोग के अध्यक्ष होंगे, (स) प्रतिष्ठित व्यक्तियों का चयन भारत के मुख्य न्यायाधीश, प्रधानमंत्री व लोकसभा की विपक्षी पार्टी के नेता मिलकर करेंगे। (द) यह व्यवस्था भी है कि यदि आयोग के सदस्यों ने किसी नाम पर आपत्ति की तो नियुक्ति रोक दी जावेगी (ई) आयोग में किसी भी प्रकार के विवाद को रोके जाने का प्रावधान है। (फ) आयोग न्यायाधीशों की नियुक्ति के साथ ही राज्यों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के तबादले से संबंधित आदेश भी दे सकेगा (ज) फैसला लेने में सर्वसम्मति के सिद्धांत को लागू किया जा सकेगा। (ह) जिसे नियुक्ति नहीं मिलेगी वो नियुक्त नहीं किये जाने का आधार पता कर सकेगा। आयोग में एक सदस्य एस.सी./एस.टी./महिला या अल्पसंख्यक समुदाय से होगा।

इस आयोग को संसद से स्वीकृति के पश्चात् 99वां संविधान संशोधन विधेयक संसद से पारित हो चुका है। राज्य विधानसभाओं से मंजूरी मिलने के पश्चात निकट भविष्य में न्यायिक नियुक्ति आयोग अस्तित्व में आ जावेगा। राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग 2014 अस्तित्व में लाने के लिए संविधान

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय गृहविज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

की धारा 124 (सुप्रीमकोर्ट का गठन एवं उससे संबंधित प्रावधान) तथा धारा 217 (हाई कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं नियुक्ति की शर्तें) ये संशोधन होगा। 120वें संशोधन से आयोग को संवैधानिक दर्जा मिलेगा। संवैधानिक दर्जा दिये जाने के लिए संविधान में अनुच्छेद 124(ए) और 124(ब) दो जोड़े जावेंगे। 124(ए) न्यायाधीश नियुक्ति करने के नियम एवं 124(ब) में उनके कार्यों को परिभाषित किया जावेगा। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2003 में भी पूर्ववर्ती सरकार ने कालेजियम प्रणाली को खत्म कर आयोग बनाने संबंधी कानून बनाने की पहल की थी किन्तु यह योजना क्रियान्वित नहीं हो सकी। कालांतर में भी सरकार ने प्रयास किये किन्तु सफलता हाथ नहीं लगी।

आयोग की कार्यप्रणाली – राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के कार्य करने के तरीके निम्नांकित अनुसार होंगे –

1. कानून बनने के एक माह के अंदर सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों के खाली पदों की जानकारी आयोग को दी जावेगी। आयोग उक्त जानकारी के आधार पर एक माह में नियुक्ति करेगा।
2. किसी न्यायाधीश की मृत्यु या त्यागपत्र दिये जाने की जानकारी आयोग को प्राप्त होने पर आयोग नई नियुक्ति हेतु नाम राष्ट्रपति को प्रस्तावित करेगा।
3. सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के साथ ही उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के स्थानांतरण का कार्य भी आयोग करेगा।
4. उच्च न्यायालयों के संबंध में आयोग संबंधित राज्य के राज्यपाल एवं मुख्यमंत्री से सलाह ले सकेगा।
5. यह भी प्रावधान है कि आयोग की सिफारिशें राष्ट्रपति यदि वापस लौटा दे तो उस पर विचार हेतु सर्व सम्मति की आवश्यकता नहीं होगी।

राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग के पक्ष विपक्ष में तर्क – आयोग के गठन के संबंध में विभिन्न दलीलें दी जा रही हैं। यह मांग उठी है कि आयोग को संवैधानिक दर्जा दिया जाना चाहिए। इस मांग के पीछे यह दलील दी जा रही है कि ऐसा होने पर आयोग के साथ भविष्य में किसी प्रकार की छेड़छाड़ नहीं की जा सकेगी।

पक्ष में तर्क – आयोग के गठन के पक्ष में अग्रलिखित तर्क प्रस्तुत किये जा रहे हैं –

1. आयोग के गठन के बाद न्यायपालिका में न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया को पारदर्शी बनाया जा सकेगा।
2. लिए गये फैसलों का आधार पता चल सकेगा।
3. योग्यता के आधार पर न्यायाधीशों की नियुक्ति हो सकेगी।
4. न्यायाधीशों की नियुक्ति के पूर्व सारी परिस्थितियॉ जॉची जा सकेगी।
5. फैसला लेने में सर्वसम्मति के सिद्धांत को लागू किया जा सकेगा।
6. जिसे नियुक्ति नहीं मिलेगी उसे नियुक्त न किये जाने का कारण पता चल सकेगा।

विपक्ष में तर्क –

1. आयोग के लागू होने के बाद न्यायपालिका के अधिकारों में कमी आ जावेगी क्योंकि कालेजियम प्रणाली में न्यायपालिका के पास ज्यादा अधिकार होते हैं।
2. आयोग की कार्य प्रणाली लागू होने के बाद न्यायपालिका में दखल पड़ सकता है क्योकि नियुक्तियों में राजनीतिक प्रभाव का अंदेशा है।
3. न्यायाधीशों की नियुक्ति की वर्तमान प्रणाली के पक्ष में भेद–भाव नहीं होने का तर्क देकर कहा जा रहा है कि नई व्यवस्था में चयन में भेद–भाव की संभावना हो सकती है।
4. आयोग के गठन के विरोध में एक दलील यह भी है कि इसमें बार कांउसिल को कोई महत्व नहीं दिया गया है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – भारत के अलावा अमेरिका, जापान, जर्मनी, कनाडा, ब्रिटेन जैसे देशों में न्यायाधीशों को चुनने का कार्य आयोग/सरकार करती है। भारत अकेला ऐसा देश है जहॉ न्यायाधीश ही न्यायाधीशों का चयन करते हैं। कालेजियम सिस्टम समाप्त करने की पीछे सरकार का तर्क यह है कि न्यायाधीशों के खिलाफ शिकायतें निपटाने के लिए कोई तंत्र नहीं है। आचरण और कार्यशैली समेत तमाम शिकायतों से सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय आंतरिक तौर पर ही निपटते हैं। कालेजियम सिस्टम का विरोध कोई नई बात नहीं है। सरकार की दलील है कि न्यायपालिका विगत वर्षो में अपनी सीमा से बाहर जाकर कार्यपालिका के कार्यों में दखल दे रही है। न्यायपालिका के द्वारा लिये गये पिछले कुछ फैसले इस तर्क के आधार माने जा रहे हैं। कालेजियम सिस्टम में परिवर्तन हेतु न्यायपालिका का एक बड़ा धड़ा सक्रिय है। वर्तमान में न्यायपालिका में न्यायिक अधिकारियों के 4655 पद खाली हैं तथा 313605409 मामले देश की विभिन्न अदालतों में लंबित हैं। सरकार की मंशा है कि न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया में तेजी लाकर रिक्त पद भर दिये जावें तो लंबित मामले निपटाये जा सकेंगे एवं आम आदमी को न्याय सुलभ हो सकेगा जो पीढ़ियों तक न्यायालयों के चक्कर लगाने का दंश झेल रहे हैं।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि न्यायपालिका एवं कार्यपालिका में टकराव कोई नई बात नहीं है पहले भी कई बार ऐसे मौके आये हैं मसलन 1993 से प्रारंभ हुए कालेजियम सिस्टम में बदलाव हेतु कई बार मांगें उठी एवं कहा गया कि इस सिस्टम के कारण न्यायपालिका पूर्णरूपेण हावी हो गई है। 1993 के पूर्व न्यायाधीशों की नियुक्ति में कार्यपालिका का दखल रहता था। वास्तव में इन विवादों में नुकसान जनता का हुआ है आज भी करोड़ों लोग मुकदमें के निपटारे के इंतजार में है। हमें यह याद रखना चाहिए कि यह टकराव लोकतंत्र के हित में कतई नही है। इस समस्या का समाधान कार्यपालिका एवं न्यायपालिका को आपस में मिलबैठकर ढूंढना चाहिए। न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया में न्यायपालिका, सरकार एवं विपक्ष की बराबर भूमिका होनी चाहिए। एक ऐसा मॉडल तैयार किया जाना चाहिए जो सर्वस्वीकार्य हो एवं उसमें जटिलता न हो। यह भी ध्यान रखा जावे कि न्यायपालिका से जुड़े हुए मुद्दों को राजनीतिक रंग न दिया जा सके। न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रक्रिया जितनी अधिक पारदर्शी होगी न्यायपालिका में लोगों का उतना ही विश्वास बढ़ेगा। प्रस्तावित न्यायिक नियुक्ति आयोग को संवैधानिक दर्जा दिया जावे तो न्यायपालिका की स्वतंत्रता को बचाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जय नारायण पाण्डे, भारत का संविधान
2. भारत का संविधान , अनुच्छेद 124 एवं 127
3. भारत 2004, प्रकाशन विभाग, सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली
4. सुभाष कश्यप, हमारा संविधान
5. एम. व्ही. पायली, कांस्टीट्यूशनल गवर्मेंट इन इंडिया
6. सुभाष कश्यप, भारतीय राजनीति के नये सेतू
7. इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस
8. योजना
9. पत्रिका जयपुर राजस्थान
10. टाईम्स ऑफ इंडिया नई दिल्ली

एक समान नागरिक संहिता एवं महिला अधिकार

डॉ. ममता शर्मा *

शोध सारांश – सभ्य समाज की किसी भी परिकल्पनायें मानवीय गरिमा, सामाजिक न्याय एवं समता के आदर्श पंथिक आस्थाओं, परंपराजन्य विश्वासों तथा अहमवादी उद्घोषों से निश्चय ही वरीय है। महिला अधिकारों का प्रश्न उक्त आदर्शो का पारदर्शी मानदंड हैं। एक समान नागरिक संहिता पर जो बहस राष्ट्रीय स्तर पर छिड़ गई है, उसका विश्लेषण एवं मूल्यांकन महिला अधिकारों तथा लैंगिक न्याय के संदर्भ में करना सभीचीन है। कारण यह है कि एक समान नागरिक संहिता मात्र वैधानिक मुद्दा नहीं है, अपितु वैधानिकता भी सामाजिक वैद्यता का भी मसला है। साथ ही एक समान नागरिक संहिता का विरोध अथवा समर्थन गिने चुने महिला अधिकारों की सूची बढ़ाने या घटाने से संबंध नहीं है, बल्कि संपूर्ण सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि में परिवर्तन से आबद्ध है। अत: यह प्रश्न समग्र क्रांति की अवधारणा से असंबद्ध नहीं है।

प्रस्तावना – एक समान नागरिक संहिता पर बहस में उग्रता लाने का श्रेय भारतीय न्यायपालिका को जाता है। सर्वोच्च न्यायालय ने मई 1995 के ऐतिहासिक निर्णय में प्रधानमंत्री एवं भारत सरकार को एक समान नागरिक संहिता के निर्माण की दिशा में उचित कदम उठाने के निर्देश दिये। निर्देश में धारा 44 का विशेष उल्लेख किया गया। ज्ञातव्य है कि इससे पूर्व भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस प्रकार के निर्देश केन्द्र सरकार को दिये गये थे। लगभग 10 वर्ष पूर्व, तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश वाई.वी. चंद्रचूड ने एक समान नागरिक संहिता के संदर्भ में निष्क्रियता के लिये सरकार को दोषी ठहराया था। न्यायालय ने यह शेष विवादास्पद शाहबानो प्रकरण के संबंध में जताया था। कुछ समय पश्चात एक विशिष्ट वैवाहिक विवाद सिख पति तथा ईसाई पत्नी के संदर्भ में, न्यायालय द्वारा पुन: एक समान संहिता की आवश्यकता महसूस की गई। तीसरी बार मई 1995 में दूसरी शादी के लिये धर्म परिवर्तन के मसले को गंभीर मानते हुये, न्यायालय ने सरकार को धारा 44 पर नवीन एवं गंभीर दृष्टि से विचार कर, अपेक्षित कदम उठाने के निर्देश दिये हैं।

भारतीय संविधान के भाग 4 में नीतिनिर्देशक तत्वों के अंतर्गत, धारा 44 में स्पष्ट प्रावधान है कि भारतीय राज्य संपूर्ण देश में प्रत्येक नागरिक के लिये एक समान नागरिक संहिता का निर्माण एक संवैधानिक दायित्व है, जिसे दुर्भाग्यवश अब तक भारत सरकार ने गंभीरता से नहीं लिया है। तर्क यह दिया जाता रहा है कि निर्देशक तत्वों की प्रकृति ऐच्छिक है, बाध्यकारी नहीं। उनका क्रियान्वयन सरकार की ऐच्छिकता का विषय है। निश्चय है, निदेशक तत्वों की वैधानिक बाध्यता नहीं है, किन्तु 'सुशासन' में उनकी भूमिका 'मूलभूत' है, मात्र हाशिये में नहीं। वस्तुत: मूल अधिकारों की वास्तविक अर्थपूर्णता नीति निदेशक तत्वों के उचित क्रियान्वयन पर काफी हद तक निर्भर है। संविधान सभा में भी स्वीकार किया गया था कि सरकार के कार्य निष्पादन की समीक्षा में निदेशक तत्व मानदंड होगें। अत: निदेशक तत्वों को निरर्थक प्रावधान मानना उचित नहीं है। निदेशकों का दर्जा राजनीतिक व्यवस्था के आदर्श प्रयोजनों तथा दिशा निर्देशकों का है। एतद् स्वरूप, एक समान नागरिक संहिता का आग्रह मात्र ऐच्छिकता का विषय नहीं अपितु संविधान में आदर्श प्रयोजन है, जिसे वैधानिक दायित्व के रूप में लिया जाना चाहिये।

ज्ञातव्य है कि संविधान में एक समान (यूनिफार्म) शब्द का प्रयोग किया है, समान (कॉमन) शब्द का नहीं। अवधारणात्मक स्तर पर दोनों में विभेद है। 'समान' का विचार बाह्य परिस्थितिजन्य तथा शीघ्र परिवर्तनीय है, जबकि 'एक समान' की धारणा में 'सिद्धान्त: समानता' का प्रत्यय निहित है। 'समान संहिता' के आग्रह में 'असमान' की विद्यमानता तथा असमान तत्वों पर आवश्यकता से अधिक बल दिये जाने की आशंका है। अतीत के 'समानता' तत्व वर्तमान में 'असमानता' के पोषक हो सकते है। वर्तमान की असमानताएँ भविष्य में समानता की नई दिशाओं का आधार बन सकती हैं अथवा और अधिक असमान व्यवस्था को जन्म दे सकती हैं। 'एक समान' संहिता के आव्हान में सामयिक या सतही समानता को खोज नहीं, अपितु सभी के लिये अधिकारों एवं अधिकारों के अवसरों की 'सिद्धान्त: समानता' की खोज है। इस खोज में यह भी अंतर्विहित है कि उक्त अधिकारों का हनन दंडनीय है। वैधानिक दृष्टि से यह भी कहा जा सकता है कि उक्त अधिकारों का हनन दंडनीय है। वैधानिक दृष्टि से यह भी कहा जा सकता है कि एक समान संहिता 'कानून के शासन' सिद्धान्त का ही विस्तारीकरण है – अपक्षों तक जो सामाजिक न्याय से सीधे जुड़े हैं।

बी.आर. अम्बेडकर ने संविधानसभा में ठीक ही कहा था कि लोकतांत्रिक व्यवस्था की बहुत सी सीमाएं हैं तथा किसी भी वैधानिक प्रयोजन का क्रियान्वयन धीमी गति एवं विवादास्पद स्थितियों से गुजरने के बाद ही संभव है। इस समान संहिता का निर्माण भी एक दूभर दायित्व है, विशेषत: भारत के बहुलवादी सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में, जहाँ प्रत्येक पंथिक, सांस्कृतिक इकाई अपनी आस्थाओं, पंथिक मान्यताओं तथा रीतिरिवाजों के प्रश्न पर अडिग है। एक समान संहिता पंथिक आग्रहों से पंथ – निरपेक्षता की ओर अग्रसर होने का प्रयास है। दूसरे शब्दों में, यह आधुनिकीकरण, पंथनिरपेक्षीकरण तथा सामाजिक न्याय की वृहद परिकल्पना की दिशा में संभावित कारगर कदम है।

प्रश्न यह नहीं है कि धर्म अथवा पंथ महत्वपूर्ण है या नहीं। निश्चय ही धर्म/पंथ की समाज एवं सामाजिकता में निर्णायक भूमिका रही है, जिसे ऐतिहासिकत: नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। किन्तु आज महत्वपूर्ण प्रश्न है कि क्या विवाह, तलाक, विरासत आदि मात्र धार्मिक/पंथिक विषयक है अथवा उनका मूल स्वरूप सामाजिक एवं आर्थिक है। यदि हाँ तो इनके लिये संघर्ष भी सामाजिक एवं आर्थिक संघर्ष के रूप में ही होना चाहिये। साथ ही यह भी विचारणीय है कि अतीती के पंथिक, सामाजिक नियम कब तक परिवर्तित परिस्थितियों की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम रह सकत

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

हैं। क्या पंथिक वैधानिक मधुगनिता वर्तमान परिवेश में अंतर्विरोधी नहीं है, क्या पंथिक सामुदायिक नियमावलियों (पर्सनल लॉज) का रूप शाश्वत एवं तत्कालीन है, क्या उनमें समयानुसार परिवर्तन एवं सुधार वॉछनीय नहीं हैं? संभवत: यह तो निर्विवाद है कि सामुदायिक नियमों में सुधार आवश्यक हैं, किन्तु सुधार कहाँ, कितना एवं किस दिशा में किया जाए, विवादास्पद है।

विवाद में मूल तर्क यह दिया जाता है कि व्यक्तिगत धार्मिक/पंथिक, सांस्कृतिक विषयों में राज्य का वैधानिक हस्तक्षेप नहीं होना चाहिये। सिद्धान्त: यह आदर्श स्थिति है क्यों कि किसी भी स्वत: प्रेरित सुधार की विश्वसनीयता एवं दीर्घकालिकता, वैधानिक रूप से आरोपित सुधारों की तुलना में निश्चय ही स्वत: सिद्ध है। किन्तु जन स्थितियाँ आदर्श नहीं रहे तब वैधानिक हस्तक्षेप आवश्यक हो जाता है। ऐतिहासिक साक्ष्य यह दर्शातें हैं कि धार्मिक/सामाजिक मसलों में संबंधित समुदायों की सहमति अथवा उनकी स्वयं की मांग तथा कभी-कभी एक बड़े भाग की असहमति के बावजूद कानूनी दखल किया गया है तथा कारगर भी सिद्ध हुआ है। ज्ञातव्य है कि स्वतंत्र भारत को विरासत में ब्रिटिश सरकार द्वारा निर्मित एवं क्रियान्वित एक समान कानूनों का समुच्चय प्राप्त हुआ जो शासन प्रशासन के लिये आवश्यक था। इंडियन पीनल कोड, क्रिमिनल, प्रोसजिर कोड, सिविल प्रोसजिर कोड, इंडियन एवीडेंस एक्ट, ट्रांसफर ऑफ प्रॉपर्टी एक्ट आदि ऐसे एक समान कानून थे जो सभी भारतीयों पर लागू होते थे और आज भी लागू होते हैं। यह सच है कि साम्राज्यवादी खबर अपने हितों के संबंध में बहुत स्पष्ट थी। सामाजिक/धार्मिक मसलों में यथासंभव अहस्तक्षेप की नीति को सुरक्षित माना गया तथा हिन्दू एवं मुस्लिम समुदायों की सामुदायिक नियमावलियों में अधिक हस्तक्षेप नहीं किया गया। लेकिन इसका यह तात्पर्य भी नहीं कि इन्हें कानून से परे स्वीकार कर लिया गया था। ईसाईयों एवं पारसियों की सामुदायिक नियमावलियों में वैधानिक हस्तक्षेप किया गया। हिन्दुओं एवं मुसलमानों की सामुदायिक नियमावलियाँ भी अछूती नहीं रहीं। हिन्दू विडोंज रिमैरिज एक्ट 1856, हिन्दू विमंस राइट टू प्रॉपर्टी एक्ट 1937, शरियत एक्ट 1937 तथा डिजोलूशन ऑफ मुस्लिम मैरिज एक्ट 1939 आदि सामुदायिक नियमावलियों में वैधानिक हस्तक्षेप के उदाहरण हैं, जिन्हें महिला विरोधी या लैंगिक न्याय विरोधी नहीं माना जा सकता था तथा जिन्हें थोड़े बहुत प्रारंभिक रोष के बाद आमतौर पर स्वीकार भी कर लिया गया। स्वतंत्र भारत में सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रसंग है - शाहबानो केस। इस प्रकरण में एक प्रगतिशील न्यायिक निर्णय को, भारतीय संसद ने कतिपय रूढ़िवादी मुस्लिम तत्वों के दबाव में विधायक द्वारा बदल दिया यहाँ प्रश्न उठाया जा सकता है कि यदि रूढ़िवादी मत के पक्ष में वैधानिक हस्तक्षेप का स्वागत किया जा सकता है - जैसे कि शाहबानों प्रकरण में मुस्लिम पंथिक नेताओं ने किया, तो परिवर्तन सम्मत, प्रगतिशील मसलों पर ऐसा क्यों नहीं किया जा सका? इस संदर्भ में, एक समान संहित का विरोध पूर्वाग्रहों से ग्रसित माना जा सकता है। इसी संदर्भ में ज्ञातव्य है कि मई 1995 में भारतीय न्यायपालिका ने दूसरे विवाह की वैधता के लिये गैर मुसलमानों द्वारा इस्लाम धर्म में परिवर्तन को अनुचित ठहराया एवं विविध पंथिक नियमावलियों में व्याप्त विषमताओं एवं लैंगिक न्याय विरोधी प्रवृत्तियों को रोकने के प्रयोजन से एक समान संहिता के निर्माण का निर्देश दिया।

न्यायालय के उक्त निर्देश के विरोध में एक प्रमुख तर्क यह दिया गया है कि एक समान नागरिक संहिता धार्मिक स्वतंत्रता के मूल अधिकार के हनन का प्रयास है। यदि इस तर्क को निरपेक्ष न मानकर वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखें तो स्पष्ट होगा कि पितृ सत्तात्मक धार्मिक-सामाजिक संरचनाओं में महिला की मानवीय गरिमा आहत ही नहीं, नष्ट हुई है। संभवत: सामाजिक न्याय के संघर्ष की प्रक्रिया में यह प्रश्न उठना समांचीन होगा कि क्या दमन की संस्थागत एवं सांस्कृतिक अभिवृत्तियों को स्वतंत्रता-धार्मिक सवतंत्रता, अधिकार, मूल अधिकार की संज्ञा देना उचित होगा। मानव अधिकारों का परिप्रेक्ष्य अवश्य ही इस प्रश्न की वैधता को सुनिश्चित करेगा।

एक समान संहिता के विरोध में एक अन्य तर्क अल्पसंख्यकों की आशंका पर आधारित है। अल्पसंख्यकों के कुछ तबकों द्वारा यह आशंका व्यक्त की जा रही है कि न्याय पालिका द्वारा अनुशंसित एक समान संहिता का रूप वस्तुत: हिन्दू पंथिक नियमों का अल्प संख्यकों पर आरोपण होगा। संभवत: यह सर्वाधित गंभीर आशंका है जिसने अल्पसंख्याओं के कुछ तबकों में उग्रविरोध को जन्म दिया है। किन्तु उक्त आशंका, संशय एवं संदेह पर अधिक आधारित है, वस्तुस्थिति की संभावनाओं पर कम।

एक समान संहिता के निर्माण के मूल में यह बुनियादी दृष्टि है कि विवाह, परिवार, स्त्री पुरूषों के अंतर्संबंध ऐसे सामाजिक घटक हैं जिन्हें किसी काजी या पंडित या पादरी या अन्य धर्मसत्ता के निर्णय द्वारा नहीं, लोकतांत्रिक कानून के शासन एवं समतावादी समाज व्यवस्था द्वारा संचालित किया जाना चाहिये।

स्मरणीय है कि भारतीय संविधान की धारा 44 के अंतर्गत जिन शब्दों का प्रयोग किया गया है (राज्य एक समान नागरिक संहिता के निर्माण का 'प्रयास' करेगा) उनमें क्रमिक प्रयास की आवश्यकता पर बल दिया गया है, त्वरित, क्रांतिकारी, हिंसावादी या आरोपणवादी परिवर्तन पर नहीं। इसलिये आरोपणवाद की आंशका की अतिरंजना उचित नहीं है।

ज्ञातव्य है कि रूढ़िवादी तत्व एक समान संहिता के कट्टर विरोधी हैं, किन्तु सुधारवादियों का भरसक प्रयास है कि विभिन्न सामुदायिक/पंथिक नियमावलियों में सुधार की प्रक्रिया प्रारंभ हो तथा कालांतर में एक समान संहिता के लिये आधार भूमि तैयार हो। दूसरी ओर आधुनिकतावादियों की दृष्टि में पंथिक मानसिकता से मुक्ति समय की मांग है एवं एक समान संहिता इस दिशा में वांछनीय कदम है। ऐसा प्रतीत होता है कि एक समान संहिता के पक्ष तथा विपक्ष में तर्कनिहित हितों पर उसके संभावित परिणामों पर अधिक आधारित हैं सामाजिक एवं लैंगिक न्याय के विशिष्ट मुद्दे पर कम।

यह भी रूचिकर है कि विभिन्न महिला संगठनों ने एक समान संहिता का सदैव विरोध ही नहीं किया है। बल्कि अस्सी के दशक में एक समान संहिता का निर्माण, उनकी प्रमुख मांगों में शामिल था। यहाँ तक कि महिलाओं के एक प्रगतिशील मंच-फोरम 'अंगेस्प्ड ऑप्रेशन ऑफ वीमेन बंबई, नेने एक मॉडल एक समान संहिता' का निर्माण भी किया था, जिसे विभिन्न समुदायों के समक्ष बहस के लिये रखा जाना प्रस्तावित था। किन्तु जब कुछ सांप्रदायिकतों ने आक्रामक बहुमतवाद का प्रवर्तन प्रारंभ कर दिया तो महिला संगठनों ने अपनी नीति में परिवर्तन किया एवं एक समान संहिता के विकल्प के रूप में विभिन्न सामुदायिक/पंथिक नियमावलियों में आंतरिक सुधार पर बल देना प्रारंभ किया। निश्चय ही आतंरिक सुधार की प्रक्रिया का प्रस्ताव अधिक लोकतांत्रिक है तथा अधिक दूरगामी भी किन्तु यह भी निश्चित है कि यह प्रक्रिया अत्यंत ही धीमी है तथा अत्यधिक दीर्घकालिक थी। क्या त्वरित परिवर्तनों के वर्तमान परिवेश में हमारे पास अनंत दीर्घकालिकता भी गुंजाईश है? स्पष्ट है, महिला संगठनों की दृष्टि पंथिक रूढ़िवादिता से भिन्न है जो परिवर्तन विरोधी है। महिला संगठन परिवर्तन के पक्षधर हैं - महिलाओं में पक्ष में सकारात्मक परिवर्तन के पक्षधर, किन्तु परिवर्तन की प्रक्रिया में उभरने वाले अंतर्विरोधों तथा उनके संभावित समाधानों के लिये आरोपणवादी

विकल्पों में अत्यधिक आशंकित हैं। लैंगिक न्याय के लिये वृहद स्तर पर दुनिया में परिवर्तन की आवश्यकता है तथा बुनियादी परिवर्तन के लिये क्रांतिकारी रणनीति की।

यहाँ यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इतने विवादास्पद माहौल में एक समान संहिता का क्या स्वरूप हो सकता है? निश्चित ही चुनौतियाँ गंभीर हैं। इसलिये, एकमुश्त एक समान संहिता व्यवहारिक नहीं होगी। संभवत: वांछनीय भी न हो। अत: प्रथम चरण में कुछ मूलभूत प्रश्नों, जिन पर आम सहमति भी है, वैधानिक नियमन की पेशकश की जाय तथा उसके बाद विवादास्पद प्रश्नों पर खुली बहस की जाय ताकि पक्ष तथा विपक्ष सही परिप्रेक्ष्य में उभर सकें। कतिपय पक्षों से संबंधित ऐच्छिक कानूनों से भी प्रारंभ किया जा सकता है। प्रक्रियागत प्रश्नों पर बहस जारी रखी जा सकती है, प्राथमिकता है एक समान संहिता की आवश्यकता को स्वीकार करने की। हाल ही में, अलीगढ़ वि.वि. के विकास अध्ययन संस्थान द्वारा किये गये सर्वेक्षण से स्पष्ट होता है कि हिन्दू उत्तरदाताओं में 74% ने एक समान संहिता का समर्थन किया है जबकि मुस्लिम उत्तरदाताओ में 8.65% ने तथा इन उत्तरदाताओं में अधिकांश, मध्यमवर्गीय, सुशिक्षित, शहरी एवं प्रोफेशनल सेवाओं के व्यक्ति हैं। यह भी स्पष्ट है कि शिक्षा, साक्षरता एवं जागरूकता की कमी संभवत: एक समान संहिता जैसे मुद्दों पर आम परिवर्तनवादी दृष्टि कायम करने में आड़े आती है। अत: व्यवस्था की बुनियादी चुनौतियों से सतत् समानांतर संघर्ष उक्त सोच को पनपाने के लिये अपेक्षित है। अंततोगत्वा यह संघर्ष किसी भी एक मंच से नहीं, अपितु समान दृष्टिधारक मंचों के एकजुट प्रयासों से ही फलीभूत होगा।

फिलहाल, एक समान संहिता के प्रश्न पर सुनिश्चित एवं स्पष्ट बहस की जरूरत है। इसके लिये आवश्यक है कि आजमाइसी तौर पर कुछ मोटे मुद्दों को लेकर एक समान संहिता का मसविदा तैयार किया जाये जिस पर राष्ट्रीय बहस प्रारंभ की जाये। उदाहरणार्थ, एकल विवाह की मर्यादा का प्रश्न मूलभूत है, जिसे एक समान नागरिक संहिता में शामिल किया जाना चाहिये द्वितीयक तलाक के कानूनों में लैंगिक न्याय की दृष्टि से उचित परिवर्तन किये जाने चाहिये। तृतीय, निराश्रित महिलाओं की देखभाल एवं परवरिश के लिये, एक समान न्यूनतम आर्थिक सुरक्षा का प्रावधान हो। चतुर्थ, विरासत में स्त्री-पुरूषों की समान भागीदारी सुनिश्चित की जाये। पंचम गोद लेने संबंधी कानूनों में नारीवादी दृष्टि का समावेश हो।

अंतिम महिलाओं के प्रति हर प्रकार की हिंसा को जुर्म का दर्जा दिया जाये तथा इस प्रकार की हिंसा में लिप्त एवं सहभागी व्यक्तियों को मुजरिमों की तरह सजा दी जाये। समाज में महिला अधिकारों के हनन की प्रवृत्ति को गंभीरता से लिये जाने तथा उसके विरोध में सशक्त कदम उठाये जाने की आवश्यकता है। एक समान संहिता इस दिशा में कारगर संयंत्र साबित हो सकती है।

उक्त प्रावधानों को प्रारंभिक एवं प्रायोगिक तौर पर एक समान संहिता के मसविदे में आधारभूत तत्वों के रूप में कानूनबद्ध किया जा सकता है तथा पर्याप्त राष्ट्रीय बहस के पश्चात विस्तृत सुधारों एवं तदनुरूप विधायन का कदम उठाया जा सकता है। अवश्य ही, विवादास्पद मसलों को संहिता में शामिल करते वक्त यह बेहतर होगा कि संहिता का स्वरूप 'ऐच्छिक' रखा जाये तथा समानांतर रूप में पंथिक नियमों में सुधारों की प्रक्रिया को भी तेज किया जाये। इस प्रक्रिया में सभी सुधारवादी-प्रगतिवादी, पंथ निरपेक्षतावादी ताकतों की एक जुट सहभागिता आवश्यक है। साथ ही राजनीतिक इच्छाशक्ति एवं प्रतिबद्धता भी अपेक्षित है। उचित होगा यदि सरकार राष्ट्रीय स्तर पर वृहद समिति में संगठनों, बुद्धिजीवियों एवं पंथिक संगठनों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो। ये समितियाँ उपलब्ध मतों के आधार पर एक समान संहिता का प्रायोगिक रूप तैयार करें जिसे राष्ट्रीय बहस के लिये प्रस्तुत किया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एक समान नागरिक संहिता एवं महिला अधिकार/आशाकांशिक
2. समान नागरिक संहिता का महिला पक्ष/नुसरत बानो रूही
3. स्त्री : मुक्ति का सपना/प्रो. कमला प्रसाद, राजेन्द्र शर्मा
4. स्त्री : मुक्ति का राजनीतिक अर्थशास्त्र/मार्गरिट बेंस टेन

****

विवेकानन्द का राजदर्शन : एक अध्ययन

प्रो. हरीसिंह कुशवाह * प्रो. भावना कुशवाह **

शोध सारांश – विवेकानन्द आध्यात्मिक जगत के शिखर पर थे। उन्होंने इस दुनिया को आध्यात्मिक विचारों का अनमोल उपहार दिया। वे आध्यात्म एवं संस्कृति के नेता थे। रोमां रोला ने उन्हें **आध्यात्मिक जगत का नेपोलियन** कहा था। श्री अरविन्द ने कहा– 'विवेकानन्द का जन्म ही विश्व विजयी भारत का निर्माण करने के लिए हुआ था।'

रामधारीसिंह दिनकर के अनुसार – वर्तमान भारत जिस ध्येय को लेकर उठा है उसका सारा आख्यान विवेकानन्द कर चुके थे। बाद के महात्मा व नेता उस ध्येय को कार्य रूप देने का प्रयास करते रहे है। जिस स्वप्न के कवि विवेकानन्द थे, गांधी व नेहरू उसके इंजीनियर हुए है। विवेकानन्द युवाशक्ति के प्रतीक एवं युवाओं के प्रेरणा स्त्रोत रहे है। विश्व के सबसे बड़े युवाराष्ट्र के आदर्श पुरूष रहे वे भारतीय अस्मिता के शिखर ध्वज बन गये। भारत में राष्ट्रीय चेतना की मशाल जलाकर आजादी की पृष्ठभूमि का आधार रखने वाले विवेकानन्द ही है। इसी प्रकार 'दिनकर' के (विवेकानन्द पर लिखे श्रेष्ठ आलेख) '**संस्कृति के चार अध्याय**' में कहा कि 'स्वामी विवेकानन्द ने सुस्पष्ट रूप से राजनीति का एक भी संदेश नहीं दिया, किन्तु जो भी उनके अथवा उनकी रचनाओं के सम्पर्क में आया, उसमें देशभक्ति और राजनीतिक मानसिकता आप से आप उत्पन्न हो गई।'

प्रस्तावना – 'स्वामी विवेकानन्द आधुनिक भारत के महान दार्शनिक, विचारक एवं प्रचारक थे। जिन्होंने स्वयं तो प्रत्यक्ष राजनीति में भाग नहीं लिया। किन्तु अपनी प्रखर प्रतिभा से राष्ट्र में आध्यात्मिक चेतना, स्वाधीनता प्रेम की ज्योति प्रज्ज्वलित कर दी, राष्ट्रीय गौरव व स्वाभिमान की चेतना जागृत की और पूर्व व पश्चिम में भारतीयता का यशध्वज फहरा कर भारतीय संस्कृति के प्रति धाक जमा दी। जिस समय पश्चिम का गौरवगान स्वर चारों ओर हो रहा था उस समय पश्चिम को पूर्व की महानता का परिचय देकर चकित व चमत्कृत कर दिया। उन्होंने भारतीय अस्मिता के शिखर ध्वज बनने का गौरव पाया।'

विवेकानन्द का कहना था–

'ईश्वर और सत्य ही मेरी एकमात्र राजनीति है।'

आध्यात्मिक राष्ट्रवाद – विवेकानन्द का राष्ट्रवाद आध्यात्मिकता पर आधारित है। वे राष्ट्रप्रेमी एवं सच्चे राष्ट्रवादी थे। उनका कहना था–'गर्व से कहो, हम भारतीय है।' आध्यात्म ही हमारे राष्ट्र का प्रधान तत्व है, वही राष्ट्र की रीढ़ है। भारत में आध्यात्म ही राष्ट्र का हृदय है, इसी को राष्ट्र का मूलाधार कहा जा सकता है, इसी पर राष्ट्र की नींव है, जिस पर राष्ट्ररूपी इमारत खड़ी हुई है। हमें अपने इतिहास व सांस्कृतिक विरासत पर गर्व होना चाहिए, गौरवमयी अतीत ही हमारी शक्ति बनता है। यही हमारी एकता का सबसे बड़ा सूत्र है। जिसमें भाषा, जाति, क्षेत्र व शासन की विविधता भी बाधा नहीं बन सकती। उच्च राष्ट्रीय चरित्र ही राष्ट्रीय एकता व संगठन की प्राण वायु है। हमारी शक्ति आत्मा की शक्ति है। विश्व में हम प्रेम व शांति की ध्वजा ही फहरा सकते है। इसके कारण विश्व में हमारा देश सहिष्णुता एवं सहनशीलता में सिरमौर बना रहेगा। वे युद्ध से नहीं विचारों से दुनिया जीतने में विश्वास करते है।

हमें सारी दुनिया से सीखना भी है और सीखाना भी होगा। आध्यात्म ने ही हमें जगत् गुरू बनाया है। भारत माता हमारी आराध्य देवी है उसकी आराधना की आज भी हमें उतनी ही आवश्यकता है जितनी गुलाम भारत में आजादी के लिए थी, अब हमें अन्य बंधनो को तोंड़ राष्ट्र को विकास की राह पर विश्व दौड़ मे शामिल होना होगा। राजधानी हमारा हृदय व मस्तिष्क है। यही से सब कुछ निरन्तर आरंभ होकर राष्ट्र में फैलते है। राष्ट्र में एकता व संगठन आवश्यक होता है। यही राष्ट्र को जोड़ सकती है। आज हमारे राष्ट्र की आध्यात्मिकता को बौद्धिकता में बदलना होगा, युवाशक्ति को आगे आकर राष्ट्र की रक्षा, एकता का विकास में अपना योगदान देना होगा। यह युवाशक्ति ही पीढ़ी से अनुभव की सीख ले विकास की लौ जलायेगी।

स्वाधीनता का संदेश – स्वतंत्रता आत्मा का संगीत है। स्वतंत्रता ही पुण्य है, पराधीनता पाप। स्वतंत्रता विकास प्रथम चरण है। युगों से सारी मानवता स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती रही है। इसी स्वाधीनता को पाने के लिए मानवता ने बड़े से बड़े बलिदान दिए है। सम्पूर्ण मानवता का इतिहास स्वाधीनता के संघर्ष का इतिहास है।

स्वाधीनता आत्मा का मूल स्वभाव है, परन्तु संसार से नाता तोड़कर आध्यात्मिक स्वतंत्रता नही ढूंढी जा सकती है। पराधीन देश के लिए स्वाधीनता का अमृत पाना प्रथम आवश्यकता है। स्वामी विवेकानन्द ने मनुष्य की सम्पूर्ण और व्यापक स्वतंत्रता पर बल दिया। उन्होंने कहा कि भौतिक मानसिक और आध्यात्मिक स्वतंत्रता की ओर अग्रसर होना तथा दूसरों को इस ओर अग्रसर होने में सहायता देना सबसे बड़ा सत्कर्म है। जो नियम स्वतंत्रता में बाधक है। उन्हे तुरंत समाप्त कर देना चाहिए। जो संस्थाएँ स्वतंत्रता के विकास में सहायक हो, उन्हें बढ़ावा देना चाहिए। स्वतंत्रता यही मांग करती है कि सब व्यक्तियों को सम्पत्ति, शिक्षा व ज्ञान अर्जित करने के समान अवसर मिले। स्वतंत्रता मानव का प्राकृतिक अधिकार है। इसकी रक्षा की जाना ही चाहिए। विवेकानन्द ने स्वाधीनता का संदेश काव्यमयी रूप में प्रस्तुत किया है। 'सन्यासी का गीत' में स्वतंत्रता की महिमा का गुणगान इतना प्रभावी ढंग से किया कि राष्ट्रप्रेमियों की प्रेरणा का स्त्रोत बन गया। स्वाधीनता संदेश जन–जन तक पहुँचा–

'अपनी बेड़ियां तोड़ डालो;
जिन जंजीरो से तुम जकड़े हो–
वे चाहे चमचमाते स्वर्ण की हों,
या काले स्याह लोहे की,
प्रेम की हो या घृणा की,
पुण्य की हो या पाप की–

* प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

दोनों दशाओं में वे तुम्हें
असीम पीड़ा पहुँचाती है।'

अपनी 'मुक्ति' कविता 04 जुलाई, अमेरिका के स्वाधीनता दिवस पर रची है, जो स्वाधीनता की प्रभावी अभिव्यक्ति है।

शक्ति की अवधारणा – राजनीतिक चिंतन के क्षेत्र में विवेकानन्द की शक्ति अवधारणा महत्वपूर्ण देन है। उन्होंने सारी मानव जाति को शक्ति का संदेश दिया। वे कहते है कि 'शक्ति ही मेरा धर्म है।' केवल तुम शक्तिशाली बनो समस्त भय रोगों की दवा शक्ति ही है। 'तुम्हारे भीतर अनन्त शक्ति है' इसे ही जागृत करो। उपनिषदों का प्रत्येक पृष्ठ भी हमें शक्ति का संदेश देता है। मेरे मित्रों मैं तो तुमसे यही कहूंगा कि तुम बलशाली सिंह हो। दुनिया का सबसे बड़ा पाप अपने आपको दुर्बल समझना है। विवेकानन्द के अनुसार 'बल ही पुण्य और दुर्बलता पाप।' शक्ति और विकास ही जीवन के लक्षण है।

सभी पापों और बुराईयों के लिए एक शब्द पर्याप्त है– वह है दुर्बलता। संसार में दुख का मुख्य कारण भय ही है। यही सबसे बड़ा कुसंस्कार है, यह भय ही हमारे समस्त दु:खो का कारण है। बलवान लोग ही अपना भाग्य बना सकते है। उठो, साहसी बनो, वीर्यवान बनों। ज्ञान व आत्मविश्वास रूपी शक्ति से तुम अपना भविष्य गढ़ सकते हो। बाहरी आडम्बर नहीं पुरूषार्थ प्रकट करो। हम अपने आध्यात्मिक पुरूषार्थ से प्रेरणा जागृत करे। मुक्ति केवल वीरों के लिए होती है, कायरों के लिए नहीं।जितना ही कोई राष्ट्र निर्बल होगा या कायर होगा उतना ही उसमें अवगुण अधिक प्रकट होगा। विवेकानन्द कहते है अपने में अद्भुत बलों को धारण करो। तभी तुम आगे बढ़ सकोगे। शक्ति ही वह तत्व है शुद्ध, अनन्त पूर्ण है विश्व की महाशक्ति तुम्हारे भीतर है। तुम्हारी आध्यात्मिक शक्ति ही समाज को नया रूप देने में आधार स्वरूप होगी। विवेकानन्द कहते है 'शक्ति ही भारत को मेरी विरासत है।'

शिक्षा दर्शन – मानव जाति का चरम लक्ष्य ज्ञान प्राप्ति है। अज्ञान से मुक्ति ही ज्ञान है। विवेकानन्द कहते है –' मेरा मूलमंत्र है कि जहॉ जो कुछ अच्छा मिले सीखना चाहिये।' कठिनाईयों व विषम परिस्थितयों से बढ़कर कोई दूसरा शिक्षक और कोई नहीं है। अनुभव ही हमारा एकमात्र शिक्षक है। अशिक्षा ही हमारे दुख का कारण है। मन की एकाग्रता शिक्षा प्राप्ति के लिए अनिवार्य है। अपनी समस्त शक्तियों का संचय करो और उसमे जी, मन और प्राण लगा दो। शिक्षा का लक्ष्य है– जीवन का निर्माण, चरित्र निर्माण एवं मनुष्य निर्माण। यह सब निरन्तर संघर्ष से ही सीखा जा सकता है।

'ज्ञान ही पुण्य है, अज्ञान पाप।' यदि तुम ज्ञान चाहते हो तो सब प्रकार की दुर्बलताओं का परित्याग करो। ज्ञानी लोग ही इस जीवन का उपभोग करते है। 'ज्ञान ही ज्ञान का सर्वोच्च पुरस्कार है।' ज्ञान सर्वोच्च श्रेष्ठ व पावन है, ज्ञान में ही हमारी समस्याओं के हल अन्तर्निहित है। शिक्षा वह जो हमारा संस्कारित व्यक्तित्व निर्माण करे। हमें ऐसे मनुष्य दे जो स्वाधीन, स्वाभिमानी एवं चरित्रवान बनाये। शिक्षा रूपी शस्त्र धारण कर ही युग को जीत सकते हो।

राष्ट्र के विकास के साथ जनसाधारण का विकास हो इसके लिए मुख्य साधन चरित्र निर्माण जन सामान्य की शिक्षा है। सच्ची शिक्षा वह है जिससे चरित्र का गठन हो, मन का बल बढ़े बुद्धि का विकास हो एवं व्यक्ति स्वावलम्बी बने। शिक्षा वह जो व्यक्तित्व का सर्वांगिण विकास करे। हमें मनुष्य बनाये। जो मानव को तेजस्विता, ओजस्विता, दिव्यता, प्रदान करे। जनसाधारण को शिक्षा का अमृत पिलाने के लिए शिक्षित वर्ग को आगे आना ही होगा।

मानवतावादी चिंतन – विवेकानन्द का चिंतन विश्वव्यापी चिंतन है जो राष्ट्र की सीमाओं से परे सम्पूर्ण मानवता के हित व कल्याण का चिंतन है। मानवीय श्रेष्ठता में उनकी गहरी आस्था है। इनका व्यक्तियों में पुरूषत्व, मानव गरिमा तथा सम्मान की भावना आदि श्रेष्ठ गुणों का विकास किया जाना चाहिए। आवश्यकता इस बात की है व्यक्ति अपने अहम् को राष्ट्र में एकाकर कर दे। तभी मानव विकसित होते हुए मानवीय गुणों से विभूषित होकर मानवतावादी बन सकता है। विवेकानन्द मानव सेवा को ही माधव सेवा मानते थे। वे कहते है प्रत्येक मानव में दिव्यता का भाव विद्यमान है, उसे अभिव्यक्त किया जाना चाहिए। मानव सर्वश्रेष्ठ प्राणी है, उसकी श्रेष्ठता धूमिल न हो जो सदैव व्यक्त हो। विवेकानन्द ने मनुष्य को देवत्व का संदेश दिया, वे मानवजाति की सेवा व भलाई में विश्वास करते थे। उनका मानना था कि मानवतावादी बने बिना कोई भी भला व्यक्ति नहीं बन सकता।

स्वामी विवेकानन्द मानवतावादी है, किन्तु मानवतादियों से भी अधिक मानवतावादी। हम सब मानवतदावाद में विश्वास करते है हमें मानव मात्र की सेवा व भलाई में विश्वास रखते है। हम केवल भौतिक दृष्टि से मानवतावादी बनकर रह जाते है। पाश्चात्य जगत विनाश के खतरे से जूझ रहा है और जहॉ शारीरिक स्वस्थ्यता बढ़ रही किन्तु मानसिक रोगों मे वृद्धि हो रही है। विवेकानन्द मानसिक स्वस्थ्यता के महानायक है। हमें उस आध्यात्मिक दवाई की आवश्यकता है। हमारे व्यक्तित्व का सर्वांगीण शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक विकास हो, मानव का निर्माण चाहिए, सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास। मानव का तभी सही मानवतावादिता का पावन वातावरण निर्मित हो पायेगा। विवेकानन्द स्वयं सही रूप में पूर्णरूपेण मानवतावादी थे। आध्यात्मिक ज्ञान शक्ति इसमें अहम भूमिका निभा सकती है। आज विश्व को मानवतावादी होने की आवश्यकता है।

समाजवादी विचार – बीसवीं शताब्दी का सर्वाधिक आकर्षण व चिंतन का केन्द्र समाजवाद रहा है। यह समाजवाद एक प्रक्रिया भी है और व्यवस्था भी। समाजवाद निर्धन व अभावग्रस्त जनता के लिए आशा व विश्वास के महल खड़े करता है। समाजवाद की मूल भावना समानता सिद्धांत एवं समान अवसर की प्राप्ति है। विवेकानन्द स्वयं को समाजवादी कहते थे। समाजवादी चिंतन से उनका मस्तिष्क गहराई तक प्रभावित रहा। वे समाजवाद को पूर्णव्यवस्था नहीं मानते थे किन्तु प्रचलित व्यवस्थाओं में सर्वश्रेष्ठ मानते थे। उनका कहना था 'दरिद्र देवो भव:' में विश्वास करते थे। उनका कहना था भूख, दरिद्रता, अज्ञान व भय पर विजय आवश्यक है। यही विकास की सही दिशा है। मानव सेवा ही माधव सेवा है। वे मानव सेवा को ही परम धर्म मानते थे।

भारत के सभी अनर्थो की जड़ गरीबी है। इन गरीबों को शिक्षा देकर हम इनकी समस्याओं के हल भी खोज सकते है। राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ने के योग्य बना सकेंगे। विवेकानन्द तो निर्धन के उत्थान के समर्थक रहे है। वे आमूल सुधार चाहते थे। राष्ट्र को उठाओ, संगठित करो और आगे बढ़ो। विवेकानन्द का समाजवाद, आध्यात्मिक मान्यताओं से जुड़ा हुआ है।जो सिद्धान्त समाज को साध्य और व्यक्ति को साधन मानता है, वह समाजवाद है। दूसरे शब्दों में समाजवाद वह व्यवस्था है जिसमें व्यक्ति अपने हित, अपने ध्येय और व्यक्तित्व को समाज के हित, ध्येय और अस्तित्व मे विलीन कर देता है।

विवेकानन्द की वाणी से समाजवाद का यश फैला, हम उन्हें सच्चा समाजवादी कह सकते है। वे मानते थे कि भारत का विकास हो किन्तु वह सब गरीब लोगों को सुखी बनाकर ही संभव होगी। उनके अधिकार छीनकर नहीं, उन्हें अन्याय से मुक्त कर ही होगा।

अन्तर्राष्ट्रीयतावाद – विवेकानन्द का चिंतन विश्वव्यापी चिंतन है। वे अन्तर्राष्ट्रीयतावाद थे। राष्ट्र की सीमाओं से ऊपर सोचते थे। विश्व प्रेम का संदेश उनकी महत्वपूर्ण देन है। 'वसुदेव कुटुम्बकम्' में विवेकानन्द की पूर्ण आस्था थी। उन्होंने विश्व को बन्धुत्व का संदेश दिया। विवेकानन्द ने कहा–'मेरे कार्य अन्तर्राष्ट्रीय है; केवल राष्ट्रीय सीमाओं में बंधे नहीं है।' मेरा अनुभव यही कहता है विभिन्न विविधताओं के बाद अखिल विश्व का मानव

एक ही है। प्रेम ही वह तत्व जो मानव को मानव से जोड़ता है।

अन्तर्राष्ट्रीयतावादी वही हो सकता है जो कूपमण्डूपता छोड़कर व्यापकता को स्वीकारता हो। विवेकानन्द के अनुसार– 'विस्तार ही जीवन है और संकुचन मृत्यु'। हमें अपना दृष्टिकोण व्यापक बनाना होगा। हमारे स्वार्थ टूटना ही चाहिए। वे परिवार समाज व राष्ट्र से विस्तार पाते हुए सम्पूर्ण विश्व मे समाहित हो जाना चाहिए। यही मानवहित, मानवकल्याण और विश्वहित में होगा। तुम सारी दुनिया के कल्याण बारे में सोचो, तुम सदा ही लोकहितकारी कार्य करों। सारे संसार मे सही चिंतन का स्त्रोत रहा है वह संसार मे सभी सुखी हो, सभी शांति लाभ प्राप्त करें, सभी आनन्द पायें। 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाया।' सबका हित हों, सबका कल्याण, सारी मानव जाति मे समाहित हो। यही सारी मानवता के लिए कल्याणकारी होगा।

आदर्श राज्य की परिकल्पना – आदर्श राज्य की परिकल्पना मानव का स्वभाव रहा है। आदर्श की सोच हमारी अनमोल धरोहर होती है। कैसा होगा आदर्श राज्य, यह युगों से चिंतन होता रहा है। प्लेटो के आदर्श राज्य तथा राज्य के सम्बन्ध विवेकानन्द की कल्पना उच्चतम चिंतन एवं श्रेष्ठ विचारों का फल रही है।

लन्दन से कुमारी हेल को लिखे पत्र मे विवेकानन्द का आदर्श राज्य वर्णित है– 'मानवीय समाज पर चारों वर्ण पुरोहित, सैनिक, व्यापारी, मजदूर बारी–बारी से राज्य करते है। हर अवस्था का अपना गौरव एवं दोष होता है। जब ब्राह्मण का राज्य होता है, तब जन्म के आधार पर भयंकर पृथकता रहती है। पुरोहित स्वयं और उनके वंशज नाना प्रकार के अधिकारों से सुरक्षित रहते है। इनके अतिरिक्त और किसी को कोई ज्ञान नहीं होता है, न ही किसी अन्य को शिक्षा देने का अधिकार होता है। इस विशिष्ट काल मे रहस्य विद्याओं की नींव पड़ती है, यही इसका गौरव है, ब्राह्मण मन को उन्नत करता है। क्षत्रिय राज्य क्रूर और अन्यायपूर्ण होता है, परन्तु इसमें पृथकता नहीं होती है। इनके काल मे कला और सामाजिक शिष्टता उन्नति के शिखर पर पहुँच जाती है।'

विवेकानन्द के अनुसार – 'आदर्श राज्य वह होगा जिसमें ब्राह्मण युग के ज्ञान, क्षत्रिय युग के पराक्रम, वैश्य युग की समृद्धि और शूद्र युग की समानता में संतुलन कायम रखा जा सके।' यह एक ऐसी आदर्श राज्य व्यवस्था होगी, जहॉ वह गुणों से युक्त व इनके अवगुणों से मुक्त होगा। ज्ञान, सभ्यता, प्रचार व समानता के समन्वय से ही आदर्श राज्य निर्माण संभव होगा।

नेतृत्व व प्रबन्धन – विवेकानन्द आध्यात्मिक गुरू के रूप में आध्यात्म के शिखर पर थे। आध्यात्म का आलोक भारत की विश्व को अनमोल धरोहर है। विवेकानन्द का जीवन चरित्र वैयक्तिक उपलब्धियों पर आधारित नेतृत्व का एक विशिष्ट उदाहरण है। नोबल पुरूस्कार विजेता फ्रांस के रोमां रोलां– 'विवेकानन्द को आध्यात्मिक जगत का नेपोलियन मानते है।' 'प्रसिद्ध क्रांतिकारी सुभाषचन्द्र बोस विवेकानन्द को अपना आध्यात्मिक गुरू मानते थे।'

आज का युग प्रबन्धन का युग है। किसी भी कार्य को योजनाबद्धता, संगठनात्मकता, समन्वयात्मकता एवं उसके संचालन में कुशलता लाने के तरीके व उपाय प्रबन्धन में शामिल होते है। एक व्यक्ति श्रेष्ठ प्रबन्धन से एकला चलते हुए किस प्रकार से अपने ज्ञान व श्रेष्ठ विचारों से दुनिया को सही दिशा, आदर्श, लक्ष्य देकर अपनी अभिव्यक्ति अद्भुत साहस व संगठनात्मकता से सफलता के शिखर छू लेता है। इससे वे राष्ट्र, समाज व समय की पहचान बन स्वयं भारतीयता की पहचान व अस्मिता बनकर उभरते है। नरेन्द्र से विवेकानन्द बनना, मानव से महामानव बनने की कहानी है। विवेकानन्द का आकर्षक व्यक्तित्व, प्रभावी अभिव्यक्ति, अथाह ज्ञान व अद्भुत साहस उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व–कृतित्व को परिभाषित कर देता है। विश्व में बदलाव के नये युग का शुभारंभ हुआ।

विवेकानन्द विश्व के उन चंद लोगों में से है जिन्होंने अपनी बौद्धिक क्षमताओं का सर्वाधिक उपयोग कर यह साबित किया कि एक नवयुवक ज्ञान की पूंजी ले जाकर विश्वविजयी पताका अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर कैसे फहरा सकता है। विवेकानन्द का नेतृत्व व प्रबंधन एक महान आदर्श व लक्ष्य के प्रति समर्पित होकर नि:स्वार्थ भाव से राष्ट्र में स्वयं को एकाकार कर देना है, जिससे दुनिया में विकास, सुख–शांति का वातावरण बनेगा।विवेकानन्द के विचार समय से आगे थे। वे एक युगद्रष्टा थे। उनके विचार क्रांतिकारी थे। जो बदलाव के अग्रनायक बनकर, भारतीयता के सांस्कृतिक दूत बने। रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार–'यदि भारत को समझना है तो विवेकानन्द को पढ़ना होगा।'

रामधारीसिंह दिनकर का कहना था 'भारत को जो कुछ कहना था, वह सबकुछ भारत के मुख से कह चुका है।' विवेकानन्द वर्तमान भारत के अग्रदूत एवं भारतीय संस्कृति की मूलात्मा के सजग प्रहरी थे। वे भारतीयता की गौरवमयी पहचान रहे। उन्होंने भारतीय संस्कृति को खोया हुआ गौरव लौटाया। विदेशों में विजय पताका फहराई। विश्व के सम्मुख भारत का गौरवमयी चित्र प्रस्तुत किया। वास्तव में वैचारिक रूप से विवेकानन्द ने विश्व विजित कर लिया था। इसीलिए उन्हें गर्व से विश्व विजेता संन्यासी कहा जाता है।

आज हमारे देश को विवेकानन्द के विचारों की उस समय से भी ज्यादा आवश्यकता है। उनके विचार वर्तमान समय में उतने ही सार्थक व सकारात्मक है जितने उस समय थे। उनके विचारों ने सम्पूर्ण राष्ट्रीय चेतना को प्रभावित किया। वे राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति सदैव सतर्क सजग रहे उनके विवेचन की उनमें अद्भुत क्षमता थी। उन्होंने अपने चिंतन के माध्यम से भारत को एक नई दिशा दी। यही चिंतन हमारी अनमोल धरोहर है। विवेकानन्द भारत के अग्रनायक है जिन्होंने भारत के जनमानस को संपादित कर उसकी आत्मा को प्रबुद्ध बनाया। जो सदैव भारत को दिशा निर्देश देते रहेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विवेकानन्द साहित्य – (खण्ड एक से दस) : अद्वैत आश्रम, कलकत्ता (1985)
2. विवेकानन्द चरित – सत्येन्द्र नाथ मजूमदार : 1982 (अष्ठम् संस्करण) रामकृष्ण मठ – नागपुर
3. युग नायक विवेकानन्द – स्वामी गंभीरानन्द (भाग –1, 2 एवं 3) रामकृष्ण मठ – नागपुर (1994)
4. विवेकानन्द : रोमां रोलां अनुवाद – सच्चिदानंद वात्सायन 'अज्ञेय' रघुवीर सहाय लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद (नवम् संस्करण– 1996)
5. यौद्ध संन्यासी विवेकानन्द – हंसराज रहबर राजपाल प्रकाशन (1995) नई दिल्ली
6. विवेकानन्द – राजेन्द्र मोहन भटनागर (उपन्यास) राजपाल प्रकाशन, नई दिल्ली
7. विश्व विजेता संन्यासी – स्वामी विवेकानन्द : डॉ. ओम नागपाल कमल प्रकाशन, इन्दौर (1997)
8. कालजयी स्वामी विवेकानन्द (भाग एक व दो) – सत्य शकुन सन्मार्ग प्रकाशन, नई दिल्ली (2001)
9. विवेकानन्द – एक जीवनी स्वामी निखिलानन्दकृत अद्वैत आश्रम, कलकत्ता (1993)
10. स्वामी विवेकानन्द और उनका अवदान अद्वैत आश्रम, कलकत्ता (2002)
11. आधुनिक भारतीय राजनीतिक विचारक : डॉ. वी. पी. वर्मा
12. विवेक ज्योति – त्रैमासिक पत्रिका, विवेकानन्द आश्रम, रायपुर (छत्तीसगढ़)

Family And Status Of Muslim Women In Bhopal

Dr. Indira Burman * **Mudassir Assad** ** **Shabeer Ahmad Ganaie** ****

Abstract - Muslim women are mainly family oriented women.Decisions among muslim families are mainly taken jointly.Muslim women of Bhopal are having a strong share interms of family matters like they themselves do shopping.e,g. buying vegetables, and other house hold items.Majority of respondents where from nuclear families and a least number of respondents were from nuclear families.Nuclear families are overtaking joint families very fastely among Muslims also. The study was carried out in 2012,380 respondents were interviewed with the help of interview schedule, through random sampling. The main aim of paper is to find out the status of Muslim women in their families.

Key words - Muslim women, family, status.

Introduction - Family is one of the permanent social institutions, which in one form or another is found in almost all societies of the world. It is one of man's most valued possessions. There are a large number of scholars who have discussed the importance of family institutions for its mem-bers. Burgess, Locke and Thomas (1963) observed that family is con-sidered to be valuable for its members.

One of the most classical and functional definition of family was given by MacIver & Page (1949). They say, "The family is a group defined by a sex relationship sufficiently precise and enduring to provide for the procreation and upbringing of children." This definition deals with a number of social and biological functions of the family. Scholars have also talked of different forms and types of family on a number of con-siderations. For example, based on authority there are two types of families viz. patriarchal and matriarchal. Similarly, family is also clas-sified as patrilocal and matrilocal on the basis of residence and locality. If family is classified on the basis of lineage, we talk of matrilineal and patrilineal family. One of the most important bases for classifying family is on the basis of its size- joint family and nuclear family. Joint family is found in Indian society. Dealing with its feature, Karve (1953) emphasized the importance of jointness found within it. Jointness is found in the case of property possession, income, production, domestic consumption etc. According to Elliot and Merrill (1961: 226), the role of women in society is still defined largely in their functions as wife and mother. This is most true of Muslim women. For the majority of Muslim women, family is their only world. The Muslim woman spends a major portion of her time looking after her family and children. Here economic position, emotional security and social position, everything is accorded to her by family, so much so that her role and functions in the family determine her position in society.

Position of women in the family - In Islam, the husband is given a superior position in the family. "The husband is superior to his wife, men are a degree above them," says the Quran (2.228). Another verse of the Quran is related to the position of man and women. "And mothers shall give suck to their children two full years for him who desires to complete the suckling, and on him (father) to whom it is born devolves their sustenance, of the child and his mother and their clothing, according to what is just" (Sura 11, 233).

The superiority of men over women has been explained in another verse of the Quran, "Men stand above women, for that God has graced the one of them above the other and for that they spend on their sustenance". (Quran, Surah, IV, 34). In Islam a woman is worth half a man in matters concerning ransom for murder inheritance and giving of evidence. The Muslim Law exposes the wife to the continual threat of repudiation with no need to justify it, or of the marriage of the husband to a new, additional wife, whose presence can greatly modify the nature of the family life. (Gaudefory , 1950:132-33).

Islam has prescribed certain duties for a wife to perform. They are-

i) Residence in the house of her husband.
ii) Obedience to him in his reasonable orders,
iii) Performing her marital functions whenever required by the husband at reasonable times and places, with due regard to health and decency,
iv) Observing strict conjugal fidelity and
v) Refraining from undue familiarity with strangers and all unnecessary appearance in public (Thomas, 1964: 245)[7]

For Muslim women in Bhopal, the family remains their main field of work and the majorities stay at home and do not go out for work. As ZarinaBhatty (1976:99-100) points out, "A series of social sanctions have limited her role, principally to that of a mother and wife, and for all practical purposes, denied

* H.O.D (Sociology) Govt. Home Science College, Houshangabad (M.P) INDIA
** Research Scholars, Barkatullah University, Bhopal (M.P) INDIA
*** Research Scholars, Barkatullah University, Bhopal (M.P) INDIA

her the freedom to choose a role or a combination of roles which, after all, is the fundamental pre-condition for self-realisation what has made this severe restriction particularly oppressive is the low social valuation.What a mother or a wife does or achieves in here assigned role is taken for granted. It may be emotionally rewarding through satisfying interpersonal relations within the intimate family circle, but it is not deemed to have any social value and hence carries no recognition, whether approbative or otherwise" (Quoted in B.R.Nanda, 1976:99)

Ross (1961) has observed that comfort and freedom for women is available more in the nuclear families. In joint families, a number of restrictions are imposed upon them and they are usually made the scapegoats.

Mandelbaum (1970) says, "A young wife of any jati or region usually has the lowest status in the family and is given the more onerous chores. Whatever goes awry, she is apt to be called a culprit. Whenever the finger of blame is pointed, it somehow swings to her."

As **Ahmad** mentions (1976-xxii), a Muslim family norms in India corresponds closely to those held among the Hindus. Thus, Rizvi, Ahmad and Conklin explicitly state that the norms favouring joint family living (a feature so characteristic of the Hindus on account of the support provided for it in Hindu scriptural literature) are equally widely held among the Muslims. The feeling for the norm is indeed so strong that, as Rizvi notes, even while living severally in a Common house (each family unit having its own hearth and keeping its purse separately, their members continue to convey an impression of great solidarity among the different persons living in the same building.

Kapur (1973) finds that although working people are allowed to take part in the decision-making process in the family her decision is not final. She is of the view that a working woman is free to go to her place of work but not to any other place without the permission of her husband. She has no privilege of spending her own earnings the way she likes. She expected to hand over all her salary to her husband or in-laws and it is up to them to give or not to give her some pocket money. She thinks that the working women themselves do not want to take part in the decision-making process. **Gore (1968)** finds that out of his total sample of 586 women only 2% wanted to take active part in the decision-making process in the family. Thus, we find that there are divergent views regarding participation of working women in the decision-making process in the family.

Methodology - For the present study, primary data has been, collected though interview of 380 women respondents of Bhopal:-

1. This data was collected through a schedule and questionnaire devised by keeping in view the type of data required, which will be appropriate enough in analysing the changing status of women. The secondary data was collected from the published sources, which gives a clear idea and picture of the position of the Muslim women in different periods and at various places as well as their position in law and in practice. This data has facilitate the researcher to give a clear picture on comparing the present status and change.

2. The secondary data was also collected from few prominent persons, belonging to Muslim culture and welfare organizations, in order to know their views and compare or substantiate them with the findings under the study. Also the data was collected from Census and Government reports, reports by NGO's research and research cells as the background material to develop the context for the study.

Conclusion - In the present study 89.6% of the respondents mentioned that it was, the nuclear family where women got not only more freedom and due recognition but also their status was high. Only 5.8% thought that women had higher status and more freedom in the joint family; 4.6% remained indecisive on the issue. Two types of families are generally found among the Muslims in Bhopal, namely the joint family and the nuclear family. Although the number of single or nuclear families is large there are some joint families which have their own characteristics. Out of 380 respondents, 35.25percent respondents lived in nuclear families, and 64.44 percent lived in joint families. Among higher educated group, 63.89 percent were living in nuclear families, and only 36.11 percent in joint families. Among the illiterate and primary educated group only 38.57 percent were living as a nuclear family, and 61.43 percent as joint families. In the nuclear family, decisions are arrived at through mutual consultations. This shows that the family runs on the principle of co-partnership, in which both the married partners occupy a status of equality, and a decision is made after taking into consideration the pros and cons of the things discussed between them. In a joint family, belonging to the illiterate and primary educated group, it is usually the bride's mother-in-law who enjoys precedence over the father-in-law in decision-making. But the educated respondents consider that the best things is to delegate all decision-making authority to the mother-in-law. It is obvious that, in the case of unmarried girls, much of the decision-making power is vested in their parents.The largest majority of Muslim families of Bhopal prefer a joint decision in the education and the marriage of their children. Since two heads are better than one, this is a sound attitude. The child belongs neither to the father nor to the mother alone; he is the joint responsibility of both. In general, the mother's observation of the growth of the various traits of the child's personality since his birth is closer than that of the father. When this contribution of the mother is added to the experience and wisdom of the father on account of his contact with a wider area of practical life, the joint decision gains greater weight. The answers of our respondents showed that there were some Muslim families in Bhopal where the percentage of wives in their role as decision-makers, was equal to that of the husbands in the same role. This seems to be a sheer coincidence but it indicates a definite trend. In other words, in families where decision-making is not a joint result, the wife is considered as much responsible and competent as the husband in deciding where and how the child is to be educated and when and how he is to be married. It is evident from the available figures that, as the level of education rises, the tendency towards decision-making through joint consultation increases at the

illiterate and primary level it is 26.66% at the higher secondary level it is 30%, at the graduate level 46.43% and the post-graduate level and above it goes up as high as 52.78%. The attitude of a large majority of Muslim in Bhopal city towards Planned Parenthood has undergone a rapid change since the last decade or so.In the present study when the respondents were asked about their attitude towards family planning, 91.68 answered in favour of family planning and only 8.31% answered against it. Among the illiterate group, we find that 64.77 percent favoured family planning and only 35.22% respondents were against it. However, among educated groups we find 100% support for family planning. This shows that the education of the respondents has a very good influence on their attitude towards limiting the family size. When analysed on the basis of age, it was found that age has some influence towards family planning. The higher age group thinks it is not right to limit the family size. This may be due to the fact that because of their education the younger women think that there is nothing wrong in limiting the family size.

Suggestions -

i) Nuclear families should be promoted, so that their condition can be modified

ii) The Muslim women should be given property rights as per the Islamic law

References -

1. Eillot, Mabel, A. and Merrill, Francis E., Social Disorganization, Harper and Row publishers, 4th Ed., New York, 1961, p.226.
2. NawabSultaan Jahan Begum, Muslim Married Couple, Award publishing Hose, New Delhi, 1980, pp.35-36
3. Ahmad, Imtiaz, Family, Kinship and Marriage Among Muslims in India, Manohar Book Service, New Dehhi, 1976, p.xxii.
4. Quran, 2:228.
5. Surah, ii, 233.
6. Quran Surah, IV, 34.
7. Thomas, p., Indian women Through The Ages, Asia publishing House, Bombay, 1964, p. 245.
8. Bhatty. Z., "Status of Muslim women and Social change", in Nanda, B.R. (ed.) Indian women From Purdah to Modernity, Vikas publishing House, New Delhi, 1976, pp. 99-100.
9. Dehlstrom, Edmund, the changing Roles of Men and women, Gerald Duckworth and Co., Ltd., London, 1967, p.189.
10. Bhatty, Z., Op. cit., p.99

****

महिलाओं के विरुद्ध घरेलु हिंसा - निर्णय का अधिकार

कृष्णा शर्मा *

हिंसा की परिभाषा-हिंसा की कोई सर्वव्यापक या सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। हिंसा की परिभाषा यह की गई है कि यह एक व्यक्ति या समूह द्वारा दूसरे पर शारीरिक रूप से आक्रमण है। इसमें वह समूह या व्यवहार भी शामिल है जिससे दूसरे व्यक्ति को अपमान, नुकसान या चोट पहुंचती है और या जिससे किसी अन्य व्यक्ति का डर बना रहता है।

वियना में हुए मानव अधिकार के विश्व सम्मेलन 1993 में घोषित किया है - कि सशस्त्र संघर्षो में महिलाओं के मानव अधिकारों का उल्लंघन अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार और मानवीय कानून के बुनियादी सिद्धांतों का उल्लंघन है। **बीजिंग -** में हुए चौथे विश्व महिला सम्मेलन के मुख्य दस्तावेज में घोषणा की गयी है कि महिलाओं के खिलाफ हिंसा का अर्थ है बुनियादी मानव अधिकार का हनन और यह समानता विकास और शांत के उद्देश्यो को प्राप्त करने में एक बाधा है।

सीड़ी के अनुसार- महिलाओं को पुरूषों से नीचा समझने और उनकी भूमिका को रूढ़िबद्ध मानने का जो पारंपरिक नजरिया है उसके कारण ऐसे व्यापक रिवाजों ने जड़े जमा ली है जो हिंसा जोर जबर्दस्ती से जुड़े है जैसे घरेलू हिंसा और गाली-गलौच, बलात् विवाह, दहेज, मौत, महिलाओं के ऊपर तेजाब डालना और महिलाओं का खतना। महिलाओं की शारीरिक और मानसिक निष्ठा पर ऐसी हिंसा का असर महिलाओं को मानव अधिकारों और बुनियादी आजादी का बराबरी से लाभ उठाने उसका उपयोग करने और उसे जानने से वंचित रखने का होता है।

महिलाओं के विरूद्ध हिंसा के प्रकार - विभिन्न स्थितियों में महिलाओं द्वारा भोगी हिंसा में परिवार/समाज में महिलाओं पर आधिपत्य स्थापित करने या उन पर नियंत्रण रखने के लिए परिवार या समाज के किसी सदस्य द्वारा की गई शारीरिक यौन संबंधी, भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और आर्थिक प्रताड़ना शामिल है। महिलाओं के विरूद्ध हिंसा के प्रकार निम्नलिखित है :-

1. शारीरिक हिंसा
2. यौन हिंसा
3. भावनात्मक हिंसा
4. मनोवैज्ञानिक हिंसा
5. आर्थिक हिंसा
6. घरेलू हिंसा
7. सामाजिक हिंसा

1. शारीरिक हिंसा- शारीरिक हिंसा में चांटा मारना, घूंसे मारना, पीटना, काटना और हथियार से या उसके बिना आघात पहुंचाना जिससे चोट लग सकती है या मृत्यु हो सकती है शामिल है।

2. यौन हिंसा - यौन हिंसा में, छेड़खानी, बलात्कार, शील हरण, यौन उत्पीड़न, गुप्तांगों को विकृत करना बलात् बाध्याकरण, बलात् गर्भपात और गर्भ निरोधकों का बलात् प्रयोग आते है तथा कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न भी यौन हिंसा का प्रकार है।

3. भावनात्मक हिंसा - भावनात्मक हिंसा में जानबूझकर की गई ऐसी सभी कोशिशे आती है जो कि इस इरादे से की जाती है कि महिलाओं को बुरा लगे। किसी महिला को सार्वजनिक या निजी स्थानों में ऐसा अपमानित या प्रताड़ित करना कि जिससे उसे क्लेश और शर्मिंदगी हो उसमें शामिल है।

4. मनोवैज्ञानिक हिंसा - मनोवैज्ञानिक हिंसा ऐसी धमकियां है जो वित्तीय या भावनात्मक आघात पहुंचाने के उद्देश्य से ब्लैकमेल करने, धमकाने, शोषण और भेदभाव करने के लिए की जाती है जिससे पीड़ित महिला को मानसिक आघात पहुंचता है।

5. आर्थिक हिंसा - आर्थिक हिंसा पीड़ित में वित्तीय निर्भरता पैदा करने के लिए और नि:सहायता का अनुभव कराने के लिए होती है।

महिला उत्पीड़न - मुंशी प्रेमचंद जी ने अपनी कहानी बड़े भाई साहेब में एक स्थान पर लिखा था टाइम टेबिल बनाना एक बात है और उस पर अमल करना दूसरी बात, ठीक यही स्थिति महिला कानूनों की है। अशिक्षा, पर्दा आदि कुप्रथा ये आज भी स्त्री को स्वतंत्र जीवन जीने में बाधक है।

तेहरान विश्वविद्यालय की डॉ. हेमा दरेजी ईरान में स्त्रियों पर लादे गये ड्रेस कोड का विरोध करती है तो उन्हें नौकरी से बर्खास्त कर दिया जाता है। इसके बावजूद वे अपना विरोध जारी रखती है लेकिन तंत्र उन्हें इतना ज्यादा परेशान करने लगता है कि उन्हें आत्मदाह का रास्ता अपनाना पड़ता है। तिब्बत की आजादी के लिए काम करने वाली दावा लैगजोम को 1989 में पुलिस पकड़ कर ले जाती है और व्यवस्था का विरोध करने की सजा के रूप में बड़ी बर्बरता से उनके स्तन काट दिये जाते है। ऐसी ही एक और आंदोलनधर्मी सोनम डोलकर को नंगा करके पीटा जाता है और उनके गुप्तांगों में बिजली के छड़े डालकर उन्हें क्रूर यातनाऐं दी जाती है।

इन सभी घटनाओं का संबंध मानवधिकारों के उस पक्ष से है जो बेशुमार आंकड़ों में नजर आता है। शोषण और भेदभाव का भीतरी और खतरनाक रूप समाज को शक्ति संरचना से उपजता है जो कदम-कदम पर औरत के आत्मविश्वास को हिलाने की कोशिश करती है उसे हीन बनाने पर तुली रहती है। घरेलू मोर्च पर देखें तो भारत और बांग्लादेश से लेकर दुनिया के सबसे अग्रणी माने जाने वाले अमेरिका जैसे देश में भी औरते हमेशा घरेलू पिटाई का शिकार होती है या उसकी आशंका से आंतकित रहती है। पारिवारिक और सामाजिक सत्ता पर छोटे-बड़े मसले में औरत के सोच की अपेक्षा की जाती है। इसके साथ ही राज्य के अधिकारी वर्ग, पुलिस और कानून द्वारा भी स्त्री के

* सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

साथ जो भेदभाव और दुर्व्यवहार किया जाता है वह औरत को सभी प्रकार के अपमान और अनाचार को चुपचाप सहने के लिए विवश करता है। इन सबके अलावा बालिका भ्रूण हत्या, सती प्रथा, दहेज, बाल विवाह, विधवाओं से दुर्व्यवहार, लड़कियों की शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण की उपेक्षा, बलात वेश्यावृत्ति और यौन शोषण के अन्य रूप स्त्री के जीवन को अभिशप्त बनाये रहते है।

स्त्री अधिकारों को लेकर सुलझे हुए चिंतन और ठोस काम किये जाने की जरूरत है। असंगत भू-मंडलीकरणकी कोशिश के मद्देनजर स्थानीय अस्मिता के सवाल को और मजबूती से उठाया जाना चाहिए। स्त्री अधिकार का सीधा संबंध जीने के अधिकार से है इसलिए उसे खेत, जमीन, पर्यावरण, संरक्षण तथा मजदूर आंदोलनों से जोड़े जाने की जरूरत है। अंतर्राष्ट्रीय और स्थानीय स्तरों पर एक गैर सरकारी स्त्री आयोग बने जो निगरानी और दवाब समूह का काम करें। प्रशासन और पुलिस जहां न्याय दिलाने में अक्षम साबित हो वहां पर आयोग न्याय प्रक्रिया में सीधा हस्तक्षेप कर सकें।

महिलाओं के अधिकार – मध्यप्रदेश में महिलाओं के विरूद्ध हिंसा रोकने और उन्हें सहयोग देने के लिए राज्यस्तरीय एजेन्सियां बनाई गई है जो निम्नलिखित है।

मध्यप्रदेश राज्य विधिक सेवाऐं प्राधिकरण –

राज्य कार्यालय– 574, साउथ सिविल लाइन्स, जबलपुर,

विधिक सेवाऐं प्राधिकरण (संशोधन) अधिनियम 1994 द्वारा संशोधित विधिक सेवाऐं प्राधिकरण अधिनियम 1987 के प्रावधानों के अंतर्गत विधिक सेवाऐं उपलब्ध है। राज्य सरकार ने कानून के अंतर्गत सौंपे गये और उसे दिये गये अधिकारों में उपयोग के लिए तथा उसे सौंपे गये कृत्यों को संपन्न करने के लिए मध्यप्रदेश के लिए राज्य विधिक सेवाऐं प्राधिकरण का मुख्यालय जबलपुर के उच्च न्यायालय भवन में स्थित है जबकि जिला विधिक सेवाऐं प्राधिकरण जिला मुख्यालयों में जिला अदालतों में स्थित है।

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश राज्य विधिक सेवाऐं प्राधिकरण के प्रधान संरक्षक है। राज्य विधिक सेवाऐं प्राधिकरण के कृत्य और जिम्मेदारियां, केन्द्रीय प्राधिकरण की नीतियों और निर्देशों को असरकारी बनाना है और जरूरतमंद और गरीब लोगों को विधिक सेवाऐं देने के काम को बढ़ावा देने में लगी सरकारी एजेन्सीयों और स्वैच्छिक समाज सेवा संस्थाओं के साथ समन्वय करना है।

जिला विधिक सेवाऐं प्राधिकरण – जिला विधिक सेवाऐं प्राधिकरण राज्य विधिक सेवाऐं प्राधिकरा द्वारा दिये गये अधिकारों का उपयोग करने और दिये गये कृत्यों को संपन्न करने के लिए जिला स्तर पर गठित किये गए है।

जरूरत और गरीबों को जो ऐसी सेवाऐं पाने के पात्र है कानून सेवाऐं उपलब्ध कराना है। ये सेवाऐं उन लोगों को उपलब्ध है जो अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, देह व्यापार की शिकार, भिखारी महिला या बच्चा या मानसिक रूप से बीमार या अशक्त है जो या तो कानूनी प्रक्रिया शुरू करता है या जिसे खुद का बचाव करने की जरूरत है।

पारिवारिक अदालतें – शादी और पारिवारिक मामलों से संबंधित विवादों में सुलह और शीघ्रता से निपटाने के लिए राज्य सरकार ने पारिवारिक अदालत अधिनियम 1984 के अंतर्गत पारिवारिक अदालतों का गठन किया है। ये अदालतें इंदौर, भोपाल, उज्जैन, ग्वालियर, रीवा, जबलपुर और सागर में है। पीड़ित व्यक्ति विवाह की डिग्री अमान्य करने, दाम्पत्य अधिकारों की पुन: स्थापना, न्यायिक पृथक्करण तलाक किसी व्यक्ति की वैवाहिक स्थिति की घोषणा, विवाह संबंधी संपत्ति के मामले रखरखाव के दावे, बच्चों की अभिरक्षा, बच्चों पर अधिकार या वैवाहिक मामलों में अधिकारिक आदेश से संबंधित मामलों में याचिका या प्रतिवेदन द्वारा पारिवारिक अदालत में पहुंच सकता है।

दहेज निषेध अधिकारी –दहेज निषेध अधिनियम 1961 की धारा उपधारा (1) में दहेज निषेध अधिकारियों की नियुक्ति का प्रावधान है। इसके अंतर्गत मध्यप्रदेश शासन ने 8 जुलाई 2023 को जनपद पंचायतों के सभी कार्यपालन अधिकारियों को दहेज निषेध अधिकारी नियुक्त किया था। इस आदेश को रदद् करते हुए अब मध्यप्रदेश राज्य विधि सेवा प्राधिकरण के जिला स्तर के सभी कानूनी सहायता अधिकारियों को अपने-अपने अधिकार क्षेत्रों में दहेज निषिध अधिकारी नियुक्त किया है। राज्य शासन ने 24-25 जून 2004 को मध्यप्रदेश दहेज निरोधक नियम 2004 भी अधिसूचित किए है।

प्रत्येक देहक निषेध अधिकारी को नीचे लिखे अधिकारों का उपयोग और कृत्यों का निर्वहन करना है। यह देखना है कि अधिनियम के प्रावधानों का पालन हो रहा है। दहेज लेने या देने को या उसके लिए उकसाने की जहां तक संभव हो रोकना। जनसंपर्क विभाग, पंचायत समितियों मीडिया आदि के जरिये शिविर आयोजित करके और प्रचार करके लोगों में जागरूकता पैदा करना। प्राप्त शिकायतों की जांच और अदालती मामले की कार्यवाही में पुलिस की सहायता करना। वह कुछ परिस्थितियों में एक पुलिस अधिकारी के अधिकारों का भी उपयोग कर सकता है।

गर्भधारण पूर्व तथा प्रसव पूर्व निदानकारी तकनीक अधिनियम के अंतर्गत उपयुक्त प्राधिकारी है – अधिनियम के अंतर्गत क्रियान्वयन के संबंध में पुलिस की कोई भूमिका नहीं है। मुख्य क्रियान्वयन प्राधिकारी के रूप में संचालक स्वास्थ्य सेवाऐं, राज्य स्तर पर उपयुक्त अधिकारी है। जिला स्तर पर जिला अस्पतालों के मुख्य चिकित्सा अधिकारी तथा उप जिला स्तर पर विकास खण्ड चिकित्सा अधिकारी उपयुक्त अधिकारी है। उपयुक्त अधिकारियों के निम्नलिखित प्रमुख कर्त्ताव्य है :-

1. पंजीयन स्वीकृत करना, अस्वीकृत करना, निलंबित करना, निरस्त करना।
2. निरीक्षण और अनुसंधान करना।
3. कानूनी कार्यवाही प्रारंभ करना।
4. जागरूकता बढ़ाना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मानव अधिकार और महिला उत्पीड़न	–	सुधारानी श्रीवास्तव रागिनी श्रीवास्तव
2. यूनिफाइड समाजशास्त्र	–	डॉ. डी.एस. बघेल
3. सोसियोलॉजी	–	पी.एन.गुप्ता
4. Family Interection	–	जे. वहे
5. Human Development	–	डॉ. शशिप्रभा जैन
6. पारिवारिक संबंध	–	डा. पी.एन. प्रभु

****

भारतीय जनजाति के सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन में विकास योजनाओं की भूमिका

डॉ. कंचन ठाकुर *

प्रस्तावना – आर्थिक संरचना और सामाजिक विकास को समाज विज्ञानियों में एक दूसरे का पूरक माना जाता है। विश्व के सभी भू–भागों के क्षेत्रीय निवासी अपने भू–भाग के प्राकृतिक संसाधनों पर श्रम कर जो उत्पादन करते हैं। उसी से उनका भरण–पोषण होता है। उत्पादन पर समाज की अर्थव्यवस्था आधारित होती है। जनजातीय समाज की आर्थिक संरचना एवं जटिल समाजों की आर्थिक संरचना में काफी अन्तर होता है। जनजाती की आर्थिक संरचना कृषि वनोपज और शिकार पर आधारित होती है।

पातालकोट नैसर्गिक पर्वतीय वन बाहुल्य घाटी है। अत: वनोपज यहाँ की आर्थिक संरचना का प्रमुख घटक है। दुर्गम घाटी क्षेत्र में पहुँच विहिन भागों में बसाहट के कारण आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त कमजोर है। यहाँ प्रारम्भ से लेकर आज तक आजीविका का प्रमुख साधन प्राकृतिक वनोपज ही है। यहाँ के जंगल भारिया जनजाति को दो तरह से वनोपज प्रदत्त करते हैं। प्रथम भोजन के रूप में दूसरा वनोपज का प्रयोग बेचकर अपनी दैनिक आवश्यकता की पूर्ति द्वारा छिन्दवाड़ा जिले से 68 किलोमीटर की दूरी पर स्थिति पातालकोट के 12 ग्रामों में विशेष पिछड़ी भारिया जनजाति निवासरत है। यह क्षेत्र अत्यन्त पिछड़ा हुआ है। यह आदिवासी क्षेत्र होने के कारण विभिन्न सरकारी योजनाओं का पूर्ण लाभ यहाँ की आदिवासी जनसंख्या के विकास पर केन्द्रीत रहा है।

अध्ययन क्षेत्र – पातालकोट का कुल क्षेत्र 79 वर्ग किलोमीटर है जिसमें कुल 12 गाँवों में बसाहट है। 12 ग्रामों में तीन ग्राम पंचायत – हर्रा कछार, घटलिंगा और कारेआम रातेड़ है। क्षेत्र का कुल रकवा 5185 हेक्टेयर है। पातालकोट के किसी भी गाँव में पहुँचने के लिये 1200–1900 फिट गहराई तक पैदल उतरना–चढ़ना पड़ता है तथा एक गाँव से दूसरे गाँव तक जाने के लिये मीलों पैदल यात्रा करनी पड़ती है। एकांत जीवन यापन के दृष्टिकोण को जीवन का आयाम मानने वाली भारिया जनजाती अन्य जनजातीय समुदाय से पिछड़ी हुई है। पूर्णत: शासकीय मदद एवं भाग्य पर निर्भर भारिया विकास के प्रति जागरूक नहीं है। इसलिये भारिया जनजीवन विकास से कोसों दूर होता जा रहा है।

उद्देश्य –

(1) भारिया जनजाति के सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन का अध्ययन करना।

(2) जनजातियों के विकास के लिये सरकार द्वारा संचालित योजनाओं की भूमिका है पता लगाना।

(3) भारिया जनजाती में विभिन्न विकास योजनाओं के प्रति जागरूकता का पता लगाना।

उपकल्पना – (1) भारिया जनजाती समुदाय के लोग विभिन्न विकास योजनाओं के कार्यक्रमों से लाभान्वित हो सकेंगे

(2) भारिया जनजाति परिवारों का आर्थिक दृष्टि से जीवन स्तर अन्य क्षेत्रों की जनजाति से भिन्न है।

अध्ययन विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु पातालकोट के 12 ग्रामों में से जनसंख्या के आधार पर देव निदर्शन द्वारा 300 परिवारों के मुखिया का चयन किया गया है तथा समकों के संकलन के लिये दोनों ही प्रकार के प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको का यथा उचित स्थान पर उपयोग किया गया है। प्राथमिक तथ्यों के लिये अध्ययन क्षेत्र में जाकर स्वयं सूचनाएं एकत्र की गई हैं तथा द्वितीयक समंकों को शासकीय कार्यालय के दस्तावेजों एवं सांख्यिकी पुस्तीका मानव विकास रिपोर्ट भारिया विकास अभिकरण तामिया की प्रगति रिपोर्ट का प्रयोग कर तथ्य संकलित किये हैं।

तालिका क्रमांक – 01

विभिन्न क्षेत्रों की योजनाओं के संबंध में जानकारी संबंधी

क्र.	योजनाएं	संख्या	प्रतिशत
1.	शिक्षा से संबंधित योजनाएं	15	2.94
2.	आवास से संबंधित योजनाएं	130	52.45
3.	कृषि से संबंधित योजनाएं	35	6.85
4.	स्वास्थ्य संबंधित योजनाएं	10	1.95
5.	जानकारी प्राप्त नहीं	110	35.81
	योग	**300**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में निवासरत भारिया जनजाति में से 52.45 प्रतिशत लोगों को आवासीय योजनाओं की तथा 6.85 प्रतिशत लोगों को कृषि योजनाओं की 2.94 प्रतिशत लोगों को शिक्षा से संबंधित योजनाओं की जानकारी है तथा 1.95 प्रतिशत लोगों को स्वास्थ संबंधी योजनाओं की जानकारी है जबकि 35.81 प्रतिशत को किसी भी प्रकार की योजनाओं की जानकारी नहीं है।

स्पष्ट है कि पातालकोट क्षेत्र में आवासीय योजनाओं को छोड़कर शेष सभी योजनाओं की जानकारी न के बराबर है।

तालिका क्रमांक – 02

कृषि हेतु शासन द्वारा संचालित योजनाओं से प्राप्त लाभ

क्र.	कृषि हेतु योजनाएं	संख्या	प्रतिशत
1.	खाद बीज वितरण	30	11.35
2.	बलराम ताल योजना	20	6.07
3.	मेढ़ बंधान योजना	30	9.59
4.	कृषि उपकरण योजना	10	7.44
5.	लाभ अप्राप्त	210	65.55
	योग	**300**	**100.00**

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय गृह विज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

तालिका से स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में संचालित कृषि योजनाओं से लाभ प्राप्त करने वाले परिवारों में 1135 प्रतिशत परिवार खाद बीज वितरण, 9.59 प्रतिशत परिवार मेढ़ बंधन योजना, 7.44 प्रतिशत कृषि उपकरण योजना और 6.07 प्रतिशत परिवार बलराम ताल योजना का लाभ प्राप्त किये हैं जबकि 5.55 प्रतिशत परिवारों को कृषि योजनाओं से कोई लाभ प्राप्त नहीं किया है।

तालिका क्रमांक - 03

व्यावसायिक योजनाओं की एवं अनुदान प्राप्त करने की जानकारी

क्र.	योजना एवं अनुदान की जानकारी	संख्या	प्रतिशत
1.	कुक्कुट पालन	45	11.54
2.	मछली पालन	20	6.07
3.	मधुमक्खी पालन	15	4.70
4.	लाख पालन	30	6.26
5.	जानकारी नहीं	190	71.43
	योग	**300**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि व्यावसायिक योजनाओं के लिये अध्ययन क्षेत्र से 11.54 प्रतिशत कुक्कुट पालन, 6.07 प्रतिशत मछली पालन तथा 4.70 प्रतिशत मधुमक्खी पालन तथा 6.26 प्रतिशत परिवारों को लाख पालन हेतु योजनाओं की जानकारी थी तथा वहीं 71.43 प्रतिशत परिवारों को योजनाएं एवं अनुदान संबंधी जानकारी नहीं है।

निष्कर्ष - विकास की परम्पराओं में अभी भी भारिया आदिवासी शैक्षणिक दृष्टि से शून्य है। आर्थिक दृष्टि से कृषि मजदूरी करके जीवन निर्वाह करना पड़ता है। वह विकास कार्यक्रमों के विभिन्न आयामों से अनभिज्ञ है और मिलनवाली सुविधाओं से भी वंचित है। शासन द्वारा स्थापित विकास अभिकरण की स्थापना उनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाने के लिये की गयी है। किन्तु अध्ययन से यह पाया गया कि उपलब्धियां लगभग शून्य मात्र ही रह गई हैं तथा उनके पारिवारिक व सामुदायिक उन्नति में आदिवासी विकास योजनाओं के प्रभाव से परिवर्तन की झलक बहुत कम देखने को मिली है।

सुझाव -

1. भारिया जनजाति के शैक्षणिक स्तर में सुधार होना चाहिये।
2. वनोपज संग्रहण करने वाले लोगों के लिये शासकीय दर पर खरीदी केन्द्रों की स्थापना की जाये ताकि बिचौलिये द्वारा ये जनजाति ठगी का शिकार न हो।
3. बारहमासी सड़कों की व्यवस्था की जानी चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल जीके. - सामाजिक नियन्त्रण एवं परिवर्तन, आगरा बुक, 1983
2. मिश्रा एच.एम. - पातालकोट में निवास करने वाली एक जनजाति भारिया (सामाजिक, सांस्कृतिक अध्ययन), बुलेटिन आदिम जाति अनुसंधान एवं विकास संस्थान, भोपाल, 1988
3. भारिया मोनोग्राफ पातालकोट, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल

****

वैश्वीकरण का भारतीय समाज में सामाजिक आर्थिक प्रभाव

प्रो. प्रिशिला अन्देस्स *

प्रस्तावना – वैश्वीकरण का अभिप्राय भू-मण्डल के विभिन्न देशों के मध्य आर्थिक सम्बन्धों को विकसित करने वाली प्रक्रिया से है। आमतौर पर वैश्वीकरण की प्रक्रिया का सम्बन्ध आर्थिक जगत से माना जाता है, लेकिन सामाजिक आर्थिक परिवर्तन की यह प्रक्रिया समाज के अन्य क्षेत्रों से भी सम्बन्धित हो सकती है। 20वीं सदी के अंतिम दशक में भारत में आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया प्रारंभ हुई। इन आर्थिक सामाजिक सुधारों को लागू करने से भारतीय समाज में व्यापक बदलाव आया है।

वैश्वीकरण वर्तमान आधुनिक युग की पहचान है। वैश्वीकरण ने विश्व को अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक सूत्र में बांधा है, वहीं दैनिक क्रियाओं को भी प्रभावित किया है। कहीं सकारात्मक रूप में तो, कहीं नकारात्मक रूप में। यह एक ऐसी व्यापक सामाजिक प्रक्रिया है, जो सम्पूर्ण मानव जीवन को स्वयं में समाहित कर लेती है।

वैश्वीकरण का सर्वाधिक विरोधाभास पहलू है - सामाजिक आर्थिक विषमता, असमानता, अन्याय, असुरक्षा जो विश्व समाजों की अर्थव्यवस्था, शासनतंत्र और समाज संरचना में व्याप्त है। भारत में वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप मानव के वैयक्तिक व सामूहिक जीवन पर बहुआयामी एवं व्यापक प्रभाव पड़ा है। यह प्रभाव समाज के सभी संवर्गों एवं व्यक्तियों पर समान रूप से नहीं पड़ता है। वैश्वीकरण के प्रभाव में भिन्नता इसलिए नहीं पाई जाती है क्योंकि लोगों में इसके प्रति जागरूकता समान रूप से नहीं होती है और अगर यह समान है भी तो उनकी पृष्ठभूमि, गुणवत्ता व क्षमता में समानता नहीं है, जिससे वे इसे न तो समान रूप से ग्रहण कर पाते हैं और न ही इससे समान रूप से लाभ उठा पाते हैं।

आधुनिकीकरण एवं वैश्वीकरण के कारण सामाजिक जीवन एवं मूल्य संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन परिलक्षित हुए हैं जो युवा पीढ़ी में अधिक स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। आधुनिकता के इस दौर में युवाओं की वेशभूषा, रहन-सहन ही नहीं बदला अपितु उनकी सोच, व्यवहार एवं विचारों में भी व्यापक परिवर्तन आया है। उन पर परिवार व समुदाय का प्रभाव शिथिल हुआ है। भारतीय संस्कृति में परिवर्तन की प्रकृति कमोबेश पाश्चात्य मूल्यों, प्रतिमानों एवं संस्थाओं के साथ सामंजस्य बनाने की रही है, न कि उन्हें स्थानापन्न करने की। वैश्वीकरण का महत्वपूर्ण प्रभाव शिक्षा में गुणात्मक सुधार हुआ है, विशेषकर तकनीकी शिक्षा में। आज परिवहन एवं संचार के साधनों ने विभिन्न देशों की दूरियों को बहुत कम कर दिया है। कम्प्यूटर का प्रयोग अब अधिकांश लोगों द्वारा होने लगा है। महिलाओं में जागरूकता का आभास, वे अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गई हैं। प्रत्येक क्षेत्र में पुरूषों के साथ काम कर रही हैं। भारतीय महिलाओं ने भी विश्व में अपनी अलग पहचान बनाई है।

वैश्वीकरण सामाजिक सम्बन्धों को औपचारिक बना देता है। व्यक्ति, व्यक्ति न रहकर एक मशीन बन जाता है। परिवार, नातेदारी प्रथा, विवाह पर वैश्वीकरण का प्रभाव व्यापक रूप से पड़ रहा है। संयुक्त परिवारों का स्थान एकल परिवारों ने ले लिया है, जिससे बच्चों पर परिवार का नियंत्रण भी कम रह गया है। पारिवारिक तनाव में वृद्धि हो रही है। आज विवाह एक धार्मिक संस्कार न रहकर एक सामाजिक उत्सव-सा हो गया है। विवाह की उम्र भी अब पहले से अधिक बढ़ गई है। विवाह से जाति का बंधन शिथिल हो रहा है। विवाह विच्छेद और अन्य वैवाहिक समस्याओं का जन्म हो रहा है। विवाह न करने की प्रवृत्ति का विकास हो रहा है। इतना ही नहीं अविवाहित जोड़ों के साथ-साथ रहने की प्रवृत्ति भी बढ़ रही है।

वैश्वीकरण से जाति प्रथा के कठोर बंधन धीरे-धीरे ढीले पड़ने लगे हैं। औद्योगीकरण के कारण सभी जातियों के लोग एक साथ मिलकर काम कर रहे हैं, लेकिन आज वर्गों की संख्या बहुत अधिक हो गई है। हर वर्ग के अनेक उपवर्ग हो गए हैं। आय के आधार पर अन्य नये विभिन्न वर्गों का उदय हो रहा है। राष्ट्रीय एवं प्रति व्यक्ति आय में सुधार हुआ है। उद्योग-धंधों के साथ-साथ कृषि उत्पादन में भी वृद्धि हुई है। आर्थिक विकास की उच्च दर प्राप्त करने के लिए घरेलू पूंजी निवेश बढ़ाने में विदेशी पूंजी निवेश से काफी मदद मिली है। इसके द्वारा केवल घरेलू उद्योग को ही लाभ नहीं पहुंचा है वरन् उपभोक्ताओं को उन्नत व तकनीकी प्रबंध कुशलता, मानव व प्राकृतिक संसाधनों का पूरा उपयोग, भारतीय उद्योगों को अंतर्राष्ट्रीय बाजार में स्पर्धात्मक बनाने, निर्यात बाजारों को खोलने, अंतर्राष्ट्रीय स्तर का सामान और सेवाऐं जुटाने का भी लाभ प्राप्त हुआ है।

वैश्वीकरण का सामाजिक आर्थिक प्रभाव बहुआयामी होता है इसके स्वरूप भी दृश्य और अदृश्य होते हैं। व्यक्ति के विचार, समाज और परिवार के प्रति धारणा, धर्म और संस्कार, परम्पराऐं और रूढ़ियों आदि पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। अत: वैश्वीकरण परिवर्तन की ऐसी प्रक्रिया है जो जीवन को विविध रूपों में प्रभावित करती है।

निष्कर्ष - वैश्वीकरण से समाज में गतिशीलता बढ़ी है। व्यक्ति के निजी जीवन, व्यवहार करने के तरीके, मूल्यों, मानकों एवं रीतियों में एकरूपता का विकास करता है। संक्षेप में वैश्वीकरण से समाज में आर्थिक, सामाजिक चेतना का उन्नयन हो रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विकास एवं परिवर्तन का समाजशास्त्र - डॉ. जी.आर. मदन, डॉ. अमित अग्रवाल
2. नातेदारी, विवाह एवं परिवार का समाजशास्त्र - डॉ. डी.एस. बघेल
3. डॉ. अम्बेडकर के सामाजिक विचार - डॉ. रामगोपाल सिंह
4. भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य - डॉ. धर्मवीर महाजन, डॉ. कमलेश महाजन
5. सामाजिक विचारधारा - डॉ. रवीन्द्रनाथ मुकर्जी

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

महिलाओं की सामाजिक स्थिति एवं पुलिस का अपेक्षित व्यवहार

डॉ. राजश्री शाह *

प्रस्तावना – दुनिया बहुत तेजी से बदल रही है, यह बदलाव कई दिशाओं में हो रहा है, पढ़–लिखकर विकास की दौड़ में महिलाओं की भागीदारी अनुपम है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएँ बढ़–चढ़ कर हिस्सा ले रही है। हम चाहे राजनीति की बात करें, या व्यवसाय की बात, मीडिया की हो या भारी उद्योग, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, अंतरिक्ष, अनुसंधान की हर क्षेत्र में महिलाओं ने अपनी योग्यता और दक्षता हासिल की है।

विकास एक सतत् प्रक्रिया है, जो समय के साथ चलता रहा है। विकास के दो पंख है मानव (जनसंख्या) और संसाधन। यदि संसाधनों का उपयोग कर हम मानव जाति की आधारभूत आवश्यकताओं को पूरी करें तो हम कह सकते है कि विकास कर रहे है। रोटी, कपड़ा और मकान के अलावा, उच्च लिंगानुपात, सामाजिक व व्यक्तिगत सुरक्षा आदि को विकास का पैमाना माना जा सकता है। अत: यदि भारतीय महिलाओं की स्थिति को इन कसौटियों पर कसना शुरू किया जाये तो निष्कर्ष निकलेगा कि भारतीय महिलाऐं, पुरूषों के मुकाबले एवं अन्य देश की महिलाओं के मुकाबले विकास की दौड़ में काफी पीछे है। महिलाओं की समस्याऐं भी अनेक प्रकार की है। विशेष कर दहेज प्रथा, बला विवाह, घरेलू हिंसा। प्रतिदिन पुलिस के पास घरेलू हिंसा एवं अन्य समस्याओं से संबंधित प्रकरण आते है। पुलिस का कार्य समाज में शांति, व्यवस्था की स्थापना करना है। आज पुलिस का कार्य समाज को अपराधियों से सुरक्षित रखना, अपराधियों को दण्ड दिलवाकर पीड़ित को क्षतिपूर्ति शांति एवं सुरक्षा प्रदान करना है पर आज परिवर्तन के इस दौर में पुलिस का महिलाओं के प्रति व्यवहार अच्छा नहीं है। पुलिस का कार्य रक्षा करना है, किन्तु आज वह भक्षक के रूप में कार्य करती है।

पुलिस एक ऐसा संगठन है जो समाज विरोधी कार्यो पर नियन्त्रण लगाकर व्यवस्था और शांति को स्थापित करता है। पुलिस अपराधी के साथ व्यवहार एवं उपचार करने वाली संस्थाओं एवं संगठनों में से एक है, अपराधी के सुधार से संबधी दूसरी प्रमुख संस्था न्याय पालिका है।

किसी भी समाज का कानून व्यवस्था में पुलिस की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता, अपराधियों के सुधार में भी पुलिस की अहम् भूमिका होती है। समाज में न्याय व्यवस्था की स्थापना के लिए यह आवश्यक है कि पुलिस अभियुक्त को बंदी बनायें। इसका अर्थ यह हुआ कि अपराधी की व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर अंकुश लगाना तथा भविष्य में अपराधों के सम्पादन को नियंत्रित करना है। आधुनिक युग में पुलिस अपनी सुधार भूमिका को पूर्ण रूप से नहीं निभा पा रही है। विशेष कर महिलाओं के साथा पुलिस का रूख अच्छा नही है।

हमारे देश में साक्षरता की दृष्टि से निरक्षर महिलाओं का अनुपात ज्यादा है। उनकी समस्याऐं भी अनेक प्रकार की है। घरेलू हिंसा या अन्य किसी भी प्रकार के प्रकरण को लेकर जब महिला पुलिस के सामने जाती है तो पुलिस को दमनात्मक व्यवहार न अपना कर धैर्यपूर्वक महिला की स्थिति को समझ कर उसके साथ मित्रवत् व्यवहार करना चाहिये। अपराधी के बारे में पूर्ण जानकारी लेकर अभियोजक का भूमिका निभानी चाहिये। पुलिस का सर्वप्रथम कार्य अपराध की रोकथाम करना है। इसके लिए पुलिस के दस्ते दिन को व रात को गश्त करते है, अपराधी व असामाजिक तत्वों को पकड़ते है, किन्तु पीड़ित महिला के शिकायत करने पर उसके साथ तर्क ,कुतर्क , प्रमाण आदि की मांग करते है। नहीं प्रस्तुत करने पर उसकी सुनवाई नहीं होती है। पुलिस का उसके साथ दुर्व्यवहार होने से वह रिपोर्ट वापस ले लेती है।

जबकि पुलिस व्यवस्था समाज की उन संस्थाओं का संकुल है, जो राज्य द्वारा पारित कानूनों के कार्यान्वयन की जिम्मेदारी लेते है। पुलिस का कार्य यह देखना है कि कानून का पालन हो और कानून भंग करने वाले को प्रमाण एकत्रित करके न्याय के लिए न्यायालय के सम्मुख उपस्थित करना होती है। पुलिस कर्मचारी महिला के साथ ऐसा व्यवहार करते है कि मानों वह पशु हो। पुलिस के हथकण्डो और अपराध स्वीकार कराने के लिए अपनाए गए अमानुषिक तरीके जिनकी (थर्ड डिग्री तरीके कहा जाता है) कि लोमहर्षक गाथाऐं प्रमाण है। भारत जैसे समाज में जहॉ पहले विदेशी शासन था और राज्य में केवल पुलिस राज्य था। पुलिस के ऐसा व्यवहार महिलाओं के साथ समझ में आता था, परन्तु स्वतंत्र भारतीय समाज में भी वहीं तौर तरीके, तेवर और रवैया रहे कुछ समझ में नहीं आता।

महिला के साथ आज वो ही बलात्कार, दैहिक शोषण किया जाता है। भारतीय न्यायालयों में अनेक बार विद्धान न्यायधीशों ने पुलिस के विरूद्ध विचार व्यक्त करते हुए कड़ी आलोचना भी की है। मीडियाकर्मी द्वारा भी अखबारों में पुलिस के दुर्व्यवहार का भी उल्लेख किया जाता है। इन सबका परिणाम यह होता है कि पुलिस की गिरफ्त में आने पर वहॉ से निकलना उसका मुश्किल होता है। कोई रास्ता शेष नहीं होने पर वह आत्महत्या कर लेती है। पुलिस अधिकारी कहते है कि सज्जनता का व्यवहार सफल सिद्ध नहीं होता। यह एक भ्रांति पूर्ण धारणा है।

पुलिस अफसरों को केवल शस्त्र चलन, शारीरिक योग्यता और कानून की शिक्षा में ही प्रशिक्षित न किया जाए, बल्कि उन्हें एक कल्याणकारी राज्य के उत्तरदायी होने के कारण उन्हें सामाजिक कार्य एवं मनोविज्ञान की ट्रेनिंग भी दी जाना चाहिये।

यदि महिला के साथ मारपीट करते है तो कानून के रक्षक नहीं, बल्कि भक्षक बन जाते है, पुलिस का अमानवीय व्यवहार भारतीय संस्कृति में एक कलंक है। देवी लक्ष्मी सरस्वती के रूप में पूजे जाने वाली महिला के सामने पुलिस को ससम्मान किया जाना चाहिये आदर, सत्कार के साथ महिला के सामने पेश आना चाहिये। हमारे देश में भी अन्य विकसित राष्ट्रों की तरह एक ही फोन पर उनकी सुनवाई होनी चाहिये। उनका खोया हुआ सम्मान तभी प्राप्त होगा जब पुलिस महिला के साथ अच्छा व्यवहार करें।

पुलिस को स्वाभाविक नियन्त्रण भौतिक, धार्मिक शिक्षा दी जाना चाहिये। राजनैतिक, भ्रष्टाचार से दूर रहकर ईमानदारी एवं अपने कर्त्तव्यों का पालन कर जनता के बीच अपनी छवि को स्वच्छ रखना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महिला विकास एक परिदृष्य – स्वप्निल सारस्वत
2. समाज राजनीति और महिलाए – डॉ. निशांत सिंह
3. अपराध शास्त्र – डॉ. धर्मवीर महाजन
4. पत्र/पत्रिकाएं – डॉ. कमलेश महाजन

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

न्याय में विलंब- कारण एवं परिणाम

संध्या देव *

प्रस्तावना – न्याय व्यवस्था का संबंध व्यक्तियों तथा उनके अधिकारों एवं दायित्वों का नियमन करने से है। व्यक्तियों को उनके अधिकार या हक दिलाना तथा शोषण से उनकी रक्षा करना न्याय के सिद्धांत का प्रमुख तत्व है। न्याय प्रक्रिया का संबंध राज्य द्वारा बताये गये नियमों से है। राज्य के संविधान एवं विधि द्वारा निर्मित नियम कानूनी न्याय का आधार बनते है।

वर्तमान समय में हमारे देश की न्याय व्यवस्था में अनेक दोष दिखायी दे रहे है। जैसे- महंगी एवं जटिल न्याय प्रक्रिया, न्याय व्यवस्था में भ्रष्टाचार, न्याय प्राप्त होने में अत्यधिक समय लगना आदि।

विलंब से मिले न्याय को भी अन्याय बराबर माना जा सकता है। जो व्यक्ति विलंब से न्याय प्राप्त करने के अनुभव से गुजरा हो वही इसके दुख को महसूस कर सकता है। समाज का कमजोर वर्ग इस कष्ट को न जाने कब से भुगत रहा है किंतु उनकी आवाज इतनी ऊंची नहीं है कि उसे सुनकर न्याय व्यवस्था में सुधार की संभावना बने।

मुंबई बम धमाका (1993) के अदालती फैसलों की शुरूआत 2006 में हुई। इन 13 वर्षों के दौरान पीड़ित पक्ष एवं अभियुक्त पक्ष दोनों को ही बहुत कुछ भुगतना पड़ा।

भारतीय न्याय प्रणाली से ऐसे कई उदाहरण दिये जा सकते है जिसके निर्णय में आवश्यकता से अधिक समय लगा है।

देश की न्याय व्यवस्था संबंधी कुछ महत्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार है-

अदालतों में लंबित मामले	–	लगभग 3 करोड़
जजों के खाली पद	–	लगभग 3 हजार
जजों की संख्या	–	1 जज प्रति एक लाख

गृह मंत्रालय भारत सरकार के एक प्रकाशन के अनुसार आधे से अधिक मुकदमा का निर्णय लेने में 1 से 5 वर्ष का समय लगता है। इस लंबे समय की लंबाई एवं त्रासदी को वही महसूस कर सकता है जो अदालत के चक्कर काट काट कर थक गया हो।

देश के जेलों में अधिकतर विचाराधीन कैदी है जो न्याय पाने की आशा में एक-एक दिन काट रहे है।

प्रश्न यह उठता है कि भारत में न्याय प्राप्ति से होने वाले विलंब का क्या कारण है। वास्तव में इसके लिये अनेक कारण उत्तरदायी है। जैसे- अदालती कार्यवाही की धीमी गति, मुकदमे की तारीखे बढ़ना, न्यायाधीशों की कमी एवं व्यस्तता गवाहों का बयान बदलना, वकीलों का अनुपस्थित रहना एवं अभियुक्त का प्रभावशाली होना आदि।

कारण कुछ भी हो विलंब से प्राप्त होने वाला न्याय अनेक समस्याओं एवं दोषों को जन्म देता है।

1. जेलों में विचाराधीन कैदियों की भीड़ के कारण जेल व्यवस्था पर अतिरिक्त व्यय होता है।
2. पीड़ित पक्ष के परिवार के लोगों को मानसिक असंतोष एवं आर्थिक हानि होती है।
3. पीड़ित पक्ष एवं आरोपी पक्ष के बच्चों के जीवन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
4. न्याय व्यवस्था पर से लोगों का विश्वास उठ जाता है।
5. समाज में अपने स्तर पर न्याय पा लेने या बदली भावना का विकास होता है।
6. सबूतों के नष्ट होने एवं गवाहों के बयान बदलने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं

उपरोक्त समस्त स्थितियों का समाजिक व्यवस्था की स्थापना पर गलत प्रभाव पड़ता है। इस कारण न्याय प्रक्रिया में विलंब नहीं होना चाहिए।

कुछ समय में न्याय प्रदान करने हेतु न्यायिक प्रक्रिया में सुधार आवश्यक है। जजों की संख्या पर्याप्त हो जज योग्य एवं ईमानदार हो, जो न्यूनतम समय में निर्णय देने हेतु प्रतिबद्ध हो। मुकदमों की तारीखें न बढ़ायी जाये एवं गवाहों को अपने बयान न बदलने दिये जायें।

हमारे देश की न्याय व्यवस्था में न्याय की कमी है। कम से कम उस न्याय की जिसका वादा हमारे देश का संविधान करता है।

देश की न्याय व्यवस्था के संबंध में पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम ने कहा है- 'इस बात की आज सख्त जरूरत है, अदालत में सुनवाई कम से कम स्थगित हो ताकि इंसाफ में देर न लगे।'

अत: कम से कम समय पर प्राप्त होने वाला न्याय ही वास्तविक न्याय हो। न्याय में विलंब भी अन्याय है एवं इसे रोकना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बघेल. डी. एस. - अपराध शास्त्र
2. महाजन धर्मवीर एवं महाजन कमलेश, अपराध शास्त्र
3. नेमा जी पी एवं शर्मा के के मानवाधिकार सिद्धांत एवं व्यवहार
4. न्यायिक सुधारों की जरूरत : संपादकीय दैनिक भास्कर दिनांक 23 जुलाई 2014
5. भारतीय संविधान : अनुच्छेद 14 से अनुच्छेद 22

****

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

विशेष पिछड़ी भारिया जनजाति के विकास में भारिया विकास प्राधिकरण की भूमिका

डॉ. इंदिरा बर्मन * कंचन ठाकुर * *

प्रस्तावना – भारिया मध्यप्रदेश की तीन विशेष जनजाति- बैगा, सहरिया, भारिया आदिम जनजाति में से एक है। शहरी जीवन से दूर पर्वतीय क्षेत्र में एकांत जीवन यापन करती भारिया जनजाति छिन्दवाड़ा जिले की पातालकोट घाटी में देखी जा सकती है। पातालकोट की भौगोलिक दुर्गमता से असाध्य जीवन-यापन कर रहे सभ्यता से कोसों दूर भारिया आज देश-विदेश के नेतृत्वशास्त्रियों समाजशास्त्रीयों को अध्ययन के साथ-साथ सोचने को विवश करते हैं कि इस दुर्गम स्थल में भी जीवन है।

मध्यप्रदेश के छिन्दवाड़ा जिले की धरती पर एक ऐसा यथार्थ लोक है - पातालकोट जो आदिम संस्कृति का प्रतीक है, जो तीनों ओर से पहाड़ों से घिरा है। यह क्षेत्र आवागमन के साधनों से रहित है। यहाँ पहुँचने के लिये 1200 से 1700 किलोमीटर उतरना चढ़ना पड़ता है। पातालकोट के कुल 12 ग्रामों में से कुछ ही ग्राम घटलिंगा, गुढ़ीछतरी एवं हर्राकछार तक वाहन द्वारा पहुँचा जा सकता है। शेष ग्रामों में पैदल चलना एकमात्र साधन है।

पातालकोट के भारिया आदिवासी दुर्गम क्षेत्र में रहते हुये भी विपरित परिस्थितियों से जूझते हुए शासन की मदद से धीरे-धीरे विकास की ओर बढ़ रहे हैं। विकास की नई गतिविधियों में भारिया जनजाति को सम्मिलित करने के लिये 26 जून 1978 में भारिया विकास अभिकरण तामिया जिला छिन्दवाड़ा कार्यालय की स्थापना की गई। पातालकोट क्षेत्र के अन्तर्गत कुल आबाद ग्राम 12 एवं 8 विरान ग्राम सहित तहसील तामिया राजस्व निरिक्षक मण्डल तामिया के अन्तर्गत आते हैं। वर्ष 2011 के अनुसार पातालकोट क्षेत्र के ग्रामों की कुल जनसंख्या 3820 है तथा 792 परिवार यहाँ निवासरत हैं जिसमें कुल 3820 जनसंख्या आदिवासियों की है।

की-वर्ड –

1. विकास प्राधिकरण - विकास की योजनाओं को संचालित करने वाली व्यवस्था।
2. विशेष पिछड़ी - मध्यप्रदेश सरकार द्वारा कुछ जनजातियों को विशेष पिछड़ी जनजाति घोषित किया गया।
3. विकास - विकास वह प्रक्रिया है जो पहले की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन से सम्बंधित है।
4. योजना - सुनियोजित तरीके से बनाई गई वह कार्य योजनाहै जो समय परिस्थिति और उद्देश्य के आधार पर परिवर्तित होती रही है ।

उद्देश्य –

1. भारिया जनजाति की विकास संभावनाओं का ज्ञान प्राप्त करना।
2. सरकार द्वारा विशेष प्राधिकरण के द्वारा किये गये विभिन्न प्रयासों और लाभों का ज्ञान प्राप्त होगा।
3. भारिया जनजाति के उक्त योजनाओं से होने वाले लाभ का प्रतिशत ज्ञान होगा।
4. विकास योजनाओं की समीक्षा की जा सकेगी ताकि योजनाओं के संचालन को दिशा प्रदान की जा सके।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक समंकों पर आधारित है। समंकों द्वारा भारिया विकास प्राधिकरण के अन्तर्गत भारिया जनजाति के विकास में योगदान संबंधी तथ्यों का अध्ययन एवं विश्लेषण कर निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न किया गया है।

विवेचना – पातालकोट क्षेत्र के भारिया जनजाति के चहुँमुखी विकास के लिये निम्न कल्याणकारी कार्यक्रम क्रियान्वित किये जा रहे हैं जिसमें अध्ययन के लिये शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास को चयन किया गया है।

1. **शिक्षा –** संरक्षण सह विकास योजना के अन्तर्गत 2007-08 में स्थानीय बोली में पढ़ाने हेतु पातालकोट क्षेत्र के 09 प्राथमिक शालाओं में 09 भारिया शिक्षकों की संविदा वर्ग-3 में नियुक्ति की गई है, जिससे स्थानीय बोली में छात्रों को पढ़ाने से साक्षरता का स्तर को बढ़ाया जा सके। वर्ष 2009-10 के अन्तर्गत इस योजना के लिये 11.19 लाख वित्तीय एवं 413 भौतिक लक्ष्य निर्धारित किया गया है, जिसमें 9.140 लाख वित्तीय तथा 439 भौतिक विकास हेतु एजेन्सियों को प्रदान किया गया है। जिनके माध्यम से 11.170000 वित्तीय 363 भौतिक उपलब्धि के अन्तर्गत 90 प्रतिशत कार्य पूर्ण किये गये तथा 10 प्रतिशत कार्य अपूर्ण इसलिये रह गये क्योंकि पात्र शिक्षक नहीं होने के कारण तथा 2008-09 में प्रदाय राशि का व्यय पूर्ण नहीं होने के कारण।

2. **स्वास्थ्य –** पातालकोट क्षेत्र विशेष पिछड़ी जनजाति भारिया की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का विशेष अध्ययन हेतु जनजाति आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र जबलपुर को वर्ष 2007-08 में 100 लाख राशि तथा वर्ष 2008-09 में प्राप्त 10 लाख राशि उपलब्ध कराई गई है तथा वर्ष 2009-10 में प्राप्त आवंटन से 900 लाख राशि उपलब्ध करायी गयी है, जिससे भारिया जनजाति की स्वास्थ्य समस्याओं का स्थायी रूप से निराकरण किया जा सके।

3. **आवास –** विशेष केन्द्रिय सहायताकेन्द्र क्षेत्रीय योजना अन्तर्गत पातालकोट क्षेत्र की भारिया परिवारों के लिये वर्ष 2005-06 में 103 आवास गृह के लिये राशि 2060 लाख वर्ष 2007-08 में 78 आवास गृह के लिये राशि 2130 लाख रुपये वर्ष 2008-09 में 155 आवास गृह के लिये 4535 लाख वर्ष 2009-10 में 95 आवास गृह के लिये 3325 लाख रुपये स्वीकृत की गई है जिसमें वर्ष 2008-09 तथा 2009-10 में संरक्षण

* विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशांगाबाद (म.प्र.) भारत
* * सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशांगाबाद (म.प्र.) भारत

सह विकास योजना (सेटलमेंट योजना) के अन्तर्गत जो आवास गृह स्वीकृत किये गये हैं उनके साथ किचन गार्डन पशु आवास, शौचालय निर्मित, विद्युत व्यवस्था भी स्वीकृत है जिसमें पातालकोट के 503 परिवारों में से 431 भारिया परिवारों हेतु आवास गृह स्वीकृत किये गये हैं।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि 1200 से 1500 फुट गहरी घाटियों में बसे 12 गाँवों के लिये शासन द्वारा जा विकास के कदम उठाये जा रहे हैं उसमें भारिया विकास अभिकरण की अहम भूमिका है। प्राप्त तथ्यों के आधार पर जो भारिया जनजाति के लिये शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास हेतु संरक्षण सह विकास योजना के अन्तर्गत एक महत्वपूर्ण बनाया गया है जो भारिया आदिवासियों की नवीन पीढ़ी के लिये उपयोगी सिद्ध होगा तथा उन्हें ऊर्जावान बनायेगा ताकि वे अपना चहुँमुखी विकास कर सकेंगे। इस तरह पातालकोट में विकास की नई किरणें प्राप्त होंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना तामिया जिला छिन्दवाड़ा की वर्ष 2008-09 की रिपोर्ट।
2. आदिमजाति अनुसंधान एवं विकास संस्थान, मध्यप्रदेश शासन भोपाल (श्यामला हिल्स) वर्ष 2011 का सर्वेक्षण प्रतिवेदन।
3. तिवारी डीएन.वन आदिवासी एवं पर्यावरण (1989)

****

शिक्षा के द्वारा ही महिला उत्थान एवं सशक्तिकरण

जागृति आर्य *

प्रस्तावना – शिक्षा व ज्ञान ही मनुष्य को अन्य प्राणियों से इतर करती है जिस तरह ऑक्सीजन जीवन के लिये जरूरी है उसी तरह शिक्षा सभी मनुष्यों चाहे पुरूष हो या स्त्री सभी के लिये समान रूप से जरूरी है।

वैसे तो शिक्षा प्राप्त करना हर पुरूष और महिला का अधिकार है लेकिन महिलाओं के लिये इसका महत्व अधिक है क्योंकि जब एक पुरूष शिक्षित होता है तो वह एक ही परिवार को शिक्षित करता है किन्तु वहीं जब एक महिला शिक्षित होती है तो वह दो परिवारों में शिक्षा व संस्कारों की नींव रखती है। एक सुसंस्कारी पीढ़ी के विकास में एक स्त्री का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

वर्तमान के आधुनिक व सूचना प्रौद्योगिकी के दौर में जहाँ बच्चे सोशल नेटवर्किंग साइट्स फेस बुक, वाट्स अप, विडियो चैट में लगे रहते हैं जो उनके चरित्र को बिगाड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं ऐसे में एक शिक्षित व जागरूक माँ ही अपने बच्चों को इनके प्रभाव से सुरक्षित रख सकती है व समय की आवश्यकताओं के अनुसार बच्चों को प्रशिक्षित कर उनमें नैतिक मूल्यों व संस्कारों के बीज रोपित कर उनके बेहतर भविष्य का निर्माण कर सकती है।

महिला शिक्षा केवल आने वाली पीढ़ी के भविष्य के लिये ही नहीं बल्कि महिला के स्वयं के विकास व प्रगति के लिये और देश के निर्माण व विकास के लिये देश की आधी आबादी का शिक्षित होना जरूरी है।

दरअसल वर्तमान में महिलाओं की शिक्षा के स्तर में सुधार तो आया है वे आगे आकर शासन प्रशासन, अंतरिक्ष, खेलकूद हर क्षेत्र में देश का प्रतिनिधित्व कर रहीं हैं किन्तु फिर भी भारत के दूरदराज के पारम्परिक व पिछड़े क्षेत्र में महिलाओं की साक्षरता दर व उनके विकास का प्रतिशत बहुत ही कम है। इसका कारण पुरूष प्रधान समाज, हमारे सामाजिक प्रथा, रीति – रिवाज तथा रूग्ण सामाजिक सोच तथा महिला जागरूकता की कमी है। वर्तमान में महिलाऐं पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही है ना सिर्फ शहरी महिलाऐं बल्कि ग्रामीण महिलाऐं भी अपने पैरों पर खड़ी होकर आत्मनिर्भर बन रहीं हैं अपनी जिम्मेदारियों का सफलतापूर्वक निर्वहन कर घर से लेकर समाज, प्रदेश व देश के विकास में हाथ बँटा रही है ऐसे में फिर भी महिला उत्थान आशातीत स्तर तक नहीं हो पा रहा है? क्यों?

इसका एक बड़ा कारण महिलाओं में मानसिक सशक्तिकरण की कमी व महिलाओं का दूसरी महिला की सहायता के लिये आगे ना आना है वर्तमान में घरेलू हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या दहेज प्रताड़ना जैसे कई मामले घरों में महिलाओं के सामने होते हैं लेकिन पीड़िता को बचाने के लिये घर की अन्य महिला सदस्य आगे नहीं आती हैं। कोई सास जेठानी के रूतबे को बनाए रखने के लिये पुरूष शक्ति से महिला को प्रताडित करवाती है तो कुछ पुरूष शक्ति के भय से खुद को निर्बल समझकर महिला की मदद के लिये आगे नहीं आती। द्रौपदी के चीरहरण के दौरान गांधारी थी तो सीता की अग्नि परीक्षा के समय हजारों महिलाऐं तमाशा देखती रहीं लेकिन विरोध के लिये कोई आगे ना आई। वर्तमान में आधी आबादी को अबला शब्द से मुक्ति दिलाने के लिये हमारी आधी आबादी ने क्या किया? चाहे द्रोपदी हो या सीता या फिर आज की बांग्लादेशी लेखिका तसलीमा या म्यांमार की सू की हो इनके बचाव के लिये कितनी महिलाऐं खडी हुई है?

वास्तव में वर्तमान में महिलाओं के मानसिक सशक्तिकरण की आवश्यकता है महिलाओं को अपने कमजोर होने की मानसिकता को दूर करना होगा और ये सिर्फ शिक्षा के ही माध्यम से संभव होगा क्योंकि शिक्षा के द्वारा ही महिलाओं के सोचने विचारने की क्षमता में व उनके आत्मविश्वास में वृद्धि होगी जिससे उनके अंदर पुरूष सत्ता व शक्ति के विरूद्ध विरोध करने की हिम्मत जग पाएंगी।

इसके साथ ही साथ महिलाओं को संघे शक्ति व सहकार के सिद्धांत पर भी चलना होगा अर्थात् जब एक महिला आत्म निर्भर व सशक्त बनती है तो उसे अपनी यात्रा यहीं समाप्त ना करके उसे अन्य महिलाओं को भी अपने समकक्ष खड़ा करना चाहिये।

वर्तमान में सरकार की कई महिला सशक्तिकरण की योजनाऐं संचालित हो रहीं हैं। जन अभियान परिषद की प्रस्फुटन समितियाँ व स्वयंसेवी संस्थाऐं भी कार्यरत हैं, इसी के अंतर्गत सतना जिले के पवैया ग्राम की अंजना सिंह ने आगे आकर ना सिर्फ अपने आप व अपने गाँव की महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाया बल्कि पवैया ग्राम को निर्मल ग्राम पुरस्कार भी प्राप्त करवाया। इसी तरह लखनऊ (उ.प्र.) की उषा विश्वकर्मा ने अपने पर बीती से सबक लेकर दृढ संकल्प लेकर रेड ब्रिगेड नाम का संगठन बनाया जो महिलाओं को आत्मरक्षा के गुर सिखाता है ऐसे ढेरों उदाहरण हमारे समाज में उपस्थित हैं।

वास्तव में वर्तमान में भले ही महिलाओं के लिये नित नए कानून व आयोग बनवा दें इनकी सत्ता में भागीदारी सुनिश्चित करवा दें, किन्तु महिला प्रताड़ना का सिलसिला व उनके विरूद्ध अपराधों के ग्राफ में तब तक कमी नहीं आएगी जब तक की उन्हें शिक्षित कर उनका मानसिक सशक्तिकरण ना किया जाए तभी सही मायनो में महिला सशक्तिकरण होगा और देश के विकास में हमारी आधी आबादी को योगदान सुनिश्चित हो सकेगा और देश के बेहतर भविष्य का निर्माण संभव हो पाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वेबदुनिया
2. दैनिक जागरण
3. नवभारत टाइम्स
4. म.प्र. संदेश

* अतिथि विद्वान (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला–मन्दसौर (म.प्र.) भारत

बालश्रम एवं कानूनी दृष्टिकोण

अंशुल खरे *

शोध सारांश – 'बालश्रम' सामाजिक आर्थिक और मानव अधिकार से संबद्ध एक ऐसी चर्चित समस्या है जिसे इन दिनों बहुत महत्व दिया जा रहा है। वर्तमान में सारे विश्व में 25 करोड़ से अधिक पर्याप्त शिक्षा, बेहतर स्वास्थ्य तथा मूलभूत सुरक्षा से वंचित होकर कठोर श्रम कर रहे है। इसकी कीमत बाल श्रमिकों को चुकानी ही पड़ती है जो अपना बचपन तथा शारीरिक, बौद्धिक, विकास की सर्वाधिक उपयुक्त आयु को धनोपार्जन में गवा देते है। इसका परिणाम उन देशों को भी भुगतना पड़ता है। जहाँ बालकों से कार्य कराया जाता है।

प्रस्तावना – बालक का मन कोमल एवं तन कमजोर होता है पुरूषों की भांति उनमें श्रम करने की क्षमता नहीं होती यदि बालकों से कठोर कार्य अथवा श्रम लिया जाता है तो यह उनके स्वास्थ्य के लिए घातक है इतना ही नहीं इससे बालकों का मानसिक बौध्दिक एवं शारीरिक विकास अवरूद्ध हो जाता है।

वर्तमान औद्योगीकरण के युग में यह समस्या अधिक भयंकर रूप में प्रस्फुटित हुई है। बालश्रम प्रथा किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर एक बोझ है। मानवता के नाम पर एक कलंक तथा बच्चों के लिए अभिशाप है। लेकिन कुछ वर्गों के निजी स्वार्थों के रहते ये न केवल भारत या तीसरी दुनियाँ के देशों में बल्कि संसार के विकसित देशों में तेजी से प्रचलित है। उसी प्रकार मध्य और पूर्वी यूरोप तथा रूस तक में इस प्रकार की समस्या से जुड़ी घटनाओं में वृद्धि दिख रही है। लेकिन तीसरी दुनिया के देशों में समस्या का वीभत्स रूप हैं। यहाँ सभी देशों में बच्चों को विभिन्न उद्योगों और कार्यों में नियोजित कर इनका शोषण किया जा रहा है। उदाहरण के लिए पाकिस्तान में बनने वाले कालीनों को 50 प्रतिशत बच्चे बनाते है। इंडोनेशिया के तम्बाखू उद्योग, श्रीलंका में चायपत्ती, ब्राजील में संतरे, बांग्लादेश के टी–शर्ट बनाने थाईलैण्ड में बेग बनाने, मिश्र में चमेली बीनने में बच्चे लगे है। भारत वर्ष में भी कालीन उद्योग, माचिस उद्योग, पटाखे उद्योग आदि में बच्चे काम करते है। इसके अतिरिक्त पीतल व काँच उद्योग जरी की कड़ाई हीरे जवाहरात तराशने, स्लेट, पत्थर की खुदाई, लकड़ी की नक्काशी के काम में भी बाल श्रमिक कार्यरत् है।

बालश्रमिक की संख्या 1971 की जनगणना के अनुसार 1 करोड़ 5 लाख एवं 1981 में यह बढ़कर 1 करोड़ 11 लाख हो गई है। 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में कुल 1 करोड़ 42 लाख 18 हजार 388 बालश्रमिक थे। 1991 की जनगणना के अनुसार भारत 14 वर्ष तक के कुल बच्चों की संख्या 26 करोड़ के करीब है। जो कुल आबादी का 30 प्रतिशत है। वर्तमान में भारत सरकार 1.77 करोड़ बच्चों को बालश्रमिक मानती है। 1993 में आयोजित एक राष्ट्रीय सेमीनार के बालश्रमिकों की संख्या 6 करोड़ होने का अनुमान लगाया गया। जनवरी 2000 में विश्व बैंक द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार दुनियाँ में सबसे अधिक यानी 6 करोड़ बालश्रमिक भारत में है। इनमें डेढ़ करोड़ बंधुआ बाल मजदूर भी शामिल है। बालश्रमिक महानगरों में ज्यादा है अकेले दिल्ली में बालश्रमिक 4 लाख बताये गये हैं।,

समस्या उन्मूलन हेतु कानूनी प्रावधान – भारत में बालश्रम की प्रथा काफी समय से प्रचलन में है। इनमें काम करने हेतु सरकारी एवं गैरसरकारी स्तर पर प्रयास होते रहे लेकिन स्वतंत्रता के बाद से इस दिशा में अनेक प्रयास किये गये है। सरकार द्वारा देश के 6 से 14 वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों की नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था संविधान की धारा 45 के अनुसार की गई है। बाल कल्याण के प्रति भारत की प्रतिबध्दता संविधनिक प्रावधानों में परिलक्षित होती है अनुच्छेद में प्रावधान निम्न है–

राज्य विशेषरूप में अपनी नीति को इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निर्देशित करेगा – कि श्रमिकों पुरूषों और महिलाओं और सुकुमार उम्र के बच्चों के स्वास्थ्य और शक्ति के साथ दुर्व्यवहार नहीं हो और आवश्यकता के कारण नागरिकों द्वारा ऐसे व्यवसाय करने को बाध्य नहीं किया जाय जो उनकी आयु और शक्ति के अनुकूल नहीं बाल अधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की भी भारत सरकार पक्षधर है। इसी के आधार पर सरकार ने एक राष्ट्रीय बाल नीति घोषित की। 22 अगस्त 1974 में इस नीति में बच्चों को राष्ट्र की महत्वपूर्ण संपत्ति निरूपित की गई है। बच्चों का सर्वांगीण विकास सुनिश्चित करने के लिए जन्म से पूर्व और इसके बाद बढ़ती उम्र के पर्याप्त सेवाएं प्रदान करना राज्य की नीति होगी। राष्ट्रीय बाल बोर्ड के गणन की बात भी बालनीति में कहीं गई है।

बच्चों के संबंध में किसी औपचारिक या अनौपचारिक सामाजिक कार्य के लिए बच्चों से संबंधित कानूनी ढांचे की जानकारी पूर्व शर्त है किन्तु विधियों की विविधता और बच्चों की समस्याओं के प्रति उनका चयनात्मक दृष्टिकोण बच्चों से संबंधित विधियों के संपूर्ण निरीक्षण के प्रयत्न में बाधा पहुँचाता है।

बालश्रम को भारत में पूर्णरूप से प्रतिबंधित नहीं किया गया है बल्कि कुछ उद्योगों में बालश्रम को पूर्णरूपेण प्रतिबंधित किया गया है अन्य में नहीं। यह प्रतिबंध बच्चे की आयु के आधार पर भी लगाया गया है। इस संबंध में कुछ अधिनियम इस प्रकार है–

1. **बाल (श्रमगिरवी करण) अधिनियम 1933** – इस अधिनियम में 15 वर्ष से कम आयु के बच्चे के श्रम को गिरवी करने का करार शून्य होगा। इसमें उल्लंघन करने वाले को दंड की व्यवस्था है।
2. **बाल नियोजन अधिनियम 1938** – यह अधिनियम बालश्रम अधिनियम 1976 द्वारा निराल कर दिया गया है।
3. **कारखाना अधिनियम 1948** – बच्चों के अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करने वाला यह महत्वपूर्ण अधिनियम है। इनमें बालक से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जिसने 15 वर्ष की वय प्राप्त कर लिया हो किन्तु 18 वर्ष से कम हो वह

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

किशोर है। इसमें धारा 67 से 77 में तथा धारा 23, 27, 38 और 104 में विवेचना की गई हो। इसमें 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखाने में नियोजन प्रतिबंधित है।

4. **खान अधिनियम 1952** – बालश्रम भूमिगत या खुली खदानों में प्रतिबंधित है। यहां भी 14 वर्ष की आयु के बालकों से श्रम कराने पर प्रतिबंध की व्यवस्था करता है।

5. **वाणिज्य पोत परिवर्तन अधिनियम 1958**– यह अधिनियम भी 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों का नियोजन पोत उद्योग में प्रतिबंधित करता है। इसमें कुछ अपवाद घोषित है जैसे प्रशिक्षण पोत एक ही परिवार का पोत, या 200 लदान टन वाला घरेलू पोत आदि।

6. **मोटर परिवर्तन कार्यकार अधिनियम 1961**– यह अधिनियम भी बच्चों के नियोजन का प्रतिबंध घोषित है। किन्तु किशोर को अनुमति देता है।

7. **वंधित श्रम पद्धति (उत्सादन) अधिनियम 1976**– इसका उद्देश्य जनता के दुर्बल वर्गों के आर्थिक और शारीरिक शोषण का निवारण है। एक अधिनियम में दंड की व्यवस्था थी।

8. **बालश्रम (प्रतिशोध और विनयम) अधिनियम 1986**– इसमें धारा 2 के अनुसार बालक एक व्यक्ति से अभिप्रेत है जिसने अपनी उम्र का 14 वर्ष पूरा न किया हो। इसमें कुछ नियोजन पर प्रतिबंध एवं कुछ नियोजनों में कार्य की शर्तो का विनियमन किया गया है।

1977 में राष्ट्रीय बाल श्रम नीति की घोषणा और इसके क्रियान्वन हेतु प्रभावी कदम भी उठाये गये। दिसम्बर 1990 में 11 राष्ट्रीय श्रमिक संरचना में बालश्रमिक जेल की स्थापना की गई। सड़को पर घूमकर जीविका चलाने वाले बच्चों के कल्याण के लिए भी केन्द्र सरकार द्वारा आठवीं एवं नवमीं पंचवर्षीय योजनाओं में विशेष व्यवस्था की गई थी। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग द्वारा भी विभिन्न श्रमों में कार्यरत श्रमिकों की समस्याओं के उन्मूलन हेतु प्रभावी कदम उठाये गये है।

देश में बच्चों के कल्याण एवं भरण–पोषण के लिए सुस्पष्ट नीति का निर्धारण 22 अगस्त 1974 को सरकार ने की पिछले कुछ वर्षों से इस समस्या के निराकरण के लिए सर्वोच्य न्यायालय द्वारा भी विशिष्ट भूमिका का निर्वाह किया गया है। जैसे तमिलनाडु के शिवकाशी के माचिस व पटाखे उद्योग में बच्चों के काम पर प्रतिबंध लगाया एवं पुनर्वास हेतु बाल कल्याण कोष की स्थापना केन्द्र सरकार द्वारा अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की सहायता से की राज्य सरकारी, गैर सरकारी संगठनों, श्रम संगठनों और कर्मचारियों के सहयोग से बालश्रम निवारण हेतु देश में कई प्रायोजनाएं प्रारंभ की गई है। इनका उद्देश्य धीरे–धीरे बालश्रमिकों को हटाना है। इस समय देश के 250 से अधिक गैर सरकारी संगठन बालश्रमिकों के लिए कल्याणकारी योजनाएं चला रहें है। यद्यपि यह प्रयास बड़े शहरों तक की सीमित है।

इन सबके बाद भी बालश्रमिकों के नियोजन के कलंक से मुक्ति दिलाने हेतु अभी तक किये गये प्रयासों और उनसे मिले परिणामों के अनुभवों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अभी अनेक चुनौतियाँ और समस्याएं है। जिस हेतु व्यवहारिक समाधान खोजना जरूरी है।

बाल कल्याण का रास्ता बड़ा लेना है गंतव्य दूर है परंतु इस हेतु उठाये गये कदम पर्याप्त नहीं कहे जा सके फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि सरकार और समाज इसके प्रति संवेदन शील और सचेत नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मानव अधिकार डॉ. टी. पी त्रिपाठी
2. भारत कार्य विधान प्रो. जी. एच. पांडे
3. भारत का संविधान– डॉ. बसंतीलाल वावेल
4. प्रतियोगिता दर्पण
5. भारत में मानव अधिकार रमेश प्रसाद गौतम एवं पृथ्वीपाल सिंह

****

Contibution Of Jabalpur In The Quit India Movement

Dr. Madhumita Bhattacharya *

Intoduction - The Quit India movement is an important awakening against British imperialism launched by Gandhi ji on 8th August 1942. Like the various states in India, in the Mahakoshal region the district of Jabalpur bubbled with excitement and became an active participant in the Freedom struggle of our country .

The role of Jabalpur in the growth of our Freedom Movement has been of great importance. Our city has bravely faced the atrocities of the British in the various movements especially since 1920 and even before.

With the resignation of the Congress ministry in 1939 the people of Jabalpur under the leadership of D.P.mishra refused to support Britains'war efforts since there was tremendous grain scarcity by june 1942. Hence D.P.Mishra. Seth Govind Das . Beohar Rajendra Singh and Kunjilal Dubey accused the government for the mismanagement of grain supply[1] .

During the first week of august 1942 congressmen celebrated Tilak jayanti and determined the revival of our national movement. As soon as Gandhi ji launched the quit India movement the people in Jabalpur determined to paralyse the British administration by means of complete hartals and were ready to – "do or die." [2]

As a precautionary measure the British govt. arrested D.P..Mishra and Seth Govind Das on their return journey from Bombay. In order to curb the national spirit of the city in the early hours of 9th Aug. 1942, without any prior warrant Bhawni Prasad Tiwari who was the president of the town congress was arrested . The others who were put under arrest were Kunjilal Dubey, Laxman Singh Chauhan, Har singh Das Agarwal, Narmada Prasad Mishra, Ganesh pratap Nayak , Gyan chand Jain, Godan Rao , Premchand Jain , Badrinath Gupta , Vasant kumar mishra, Lakshmichand Samya, Ganesh Pratap Shrivastava , Ram Gopal Panse , Sharda Prasad Soni , Bhanu Sullere , chedilal Agrawal , Prabhawati Saraf and Indira Tiwari . [3]

The people under the leadership of Beohar Rajendra singh marched to the city Kotwali as a protest against further arrests and offered satyagraha. About 10000 people assembled in the historic ground of tilak bhoomi [4] and resolved to meet there every evening evening for a week and indulge in hartals .

The British dispersed the mob by tear gas and firing and also flogged and tortured the patriots This made the people more violent and they indulged in anti British slogans and destruction of govt. property.[5] Telephone wires nad electric poles were thrown away. Important documents were destroyed in an office at Niwarganj. Bonfire of foreign clothes and picketing of liquor shops was carried out.

Then the movement gained momentum on 12th August when about 150 students[6] of varius schools and colleges joined the movement . An overwhelming crowd marched through omti to reach the collectorate. At each chowk the number of people multiplied. The police was posted all around to control them .The district magistrate Devi Baksha singh Gaur[7] ordered firing. As a result a fifteen year old Gulab Singh was badly wounded who succumbed to his injuries in Victoria hospital. Thus 14th Aug. was a sad day for the people yet the patriots were able to carry their banner of Inqlaab till Ghamandi chowk .

The British resorted to severe repressive measures to provoke the people . the leaders were sent to the jails. Their houses were searched and even innocent people like teachers and factory wrkers were all arrested.[8] e.g. Vasudev Navalekar and Narayan Prasad Gupta were arrested in the office of the municipality committee. Two teachers Shankar lal Shukla and Raghuvar Prasad Upadhyay also faced the same fate .

Yet there were a few lucky patriots like Satyendra Prasad Mishra, Sitaram Jadhav, Hiralaljain, Motilal Jain and Sawaimal Jain who some how saved themselves from being arrested and stayed underground to carry on the national movement . Satyendra Prasad Mishra escaped to Bombay and managed to get some dynamite sticks which were used for making explosives and bombs[9] which were crude country made bombs and contained steel ball bearings with sharp bullets kept with glass pieces in cigarette containers. They were brought in use to dismantle railway bridges and other British property.

One such bomb was thrown on the balcony of the city kotwali but luckily the explosion merely blew the lid of the tin and caused no damage. In another incident two bombs exploded in a cinema house which caused injury to an anglo Indian employee of the Gun carriage factory. Thakur Niranjan Singh was entrusted to carry 300 dynamites to various places . Shyam Sunder Mushran and Thakur Rudra Pratyap Singh carried dynamites to Gotegaon.

The political consciousness and the economic strength of the people helped a lot to carry on the mass movement . Both rich and poor contributed whatever they could for the

* Professor (History) Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P) INDIA

movement . The most distinguished personality who provided financial help to the people was D.P. Mishra who handed over a letter of authority to Niranjan Singh to use the funds of the p.c.c. which were deposited in a Gujarati firm. [10]
The other prominent financial contributors were Mool Shankar bhai, Seth Heerji Govind ji and Dulichand bhai. The Annapurna committee [11] formed under Ramchandra shah also helped the people. Besides this Ishwar Singh Parihar, Bhagwat Prasad Vyas , Radharam Dubey and Pramod kumar Agnihotri also provided monetary help.

Thus the British had a tough time to bend the strength of the people in Jabalpur . hence their only weapon was mass arrests. Seth Govind Das , Bhawani Prasad Tiwari, Hukum chand Jain , Laxman Singh Chauhan and Sawaimal Jain were arrested. Most of the other prominent men were arrested . Satyendra Prasad Mishra[12] and Niranjan singh remained undergraound for quite some time and kept alive the movement .

The impact of the movement was felt not only in Jabalpur but also in the nearby places like Patan, Majhouli, Katangi,Kundam,Kymore,Sleemnabad , Beoharibund and Piparia. In all these places the movement was organized mainly by the students. They carried out public meetings nad demonstrated against the British government . There was boycott of classes in schools and collages and hartal was observed in offices and factories. In kymore labour unrest caused hartal in the Asbestos cement factory . In Mandla the police fired on a procession which killed Udai singh Jain on the spot. In Garha, Panagar and Barela the villagers carried on destruction of railways, post offices nad telegraph wires. [13]

In order to gain the support of the villagers the govt. tried to distribute grain and other things at a low price but failed to gain their support and sent them to jail in large numbers.

The mal administratoin of the jail authorities and the flogging and other torture could not minimise the national spirit of the people. In fact it only enhanced their courage to "do or die" protests and spontaneous demonstratons took place . So swift was the wave of the movement that the British were scared to release certain leaders like D.P.Mishra , Ravi Shankar Shukla Seth Govind Das , Thakur Laxman Singh and Beohar Rajendra Singh who were carried away elsewhere from Jabalpur jail. [14] In short , the law of the jungle prevailed everywhere[15] yet the movement continued .
Conclusively we can say that the contribution and impact of the quit India movement in Jablapur was great indeed . The movement saw the emergence of youth leadership. In the town , tehsil and villages the people organized themselves and local leaders sprang up to carry up the quit India movement . Their contribution will remain in golden letters forever .

References -

1. N.A.I. – HPD File N.18/6/42
2. Mitra : The Indian Annual register vo1.II1942-P.232.
3. Govind Sahay:1942 ka vidroh
4. D.P.Mishra : Living an Era vo1.I.
5. Swatantra Sangram Aur Jabalpur Nagar ,p-65.
6. Secret File of Jabalpur District cllectorate.
7. Jabalpur the Past Revisited p.105.
8. Ibid.
9. NAI HPD File N.18/11/42
10. D.P.Mishra : Living an Era, vo1.I..
11. Govind Sahay:1942 ka vidroh
12. NAI HPD File N.18/11/42
13. Swatantra Sangram Aur Jabalpur Nagar ,p-65
14. D.P.Mishra : History of Freedom movement in Madhya Pradesh

****

दमोह जिले का भौगोलिक इतिहास

डॉ. सुनिता शुक्ला *

शोध सारांश – दमोह जिले का भौगोलिक इतिहास अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। दमोह जिले का अधिकांश भाग पहाड़ी एवं जंगली है। सुनार एवं बैरमा जिले की प्रमुख नदियाँ है। दमोह जिले के प्रमुख शहर दमोह,हटा एवं हिंडोरिया है। हटा जिले का प्रमुख बाजार है। दमोह जिले में 60 से अधिक हिंदू जातियाँ रहती है। सर्वाधिक कुर्मी जाति के लोग है, दमोह जिले की जलवायु सामान्य है। शीतऋतु में ठंड अधिक रहती है। ग्रीष्म ऋतु में गर्मी अधिक होती है। दमोह में व्यापार सड़क एवं रेल दोनो माध्यमों से होता है।

शब्द कुंजी – दमनकपुर, राज्य सर्वेक्षण, परगना,खेतिहर, राजस्व विभाग

प्रस्तावना – दमोह जिले का नाम दमोह मुख्यालय नगर पर आधारित है। परम्परा के अनुसार शहर का नाम नरवर के राजा नल, जिनका नाम सिर्फ लोक कथाओं में ही मिलता है।[1] की रानी दमयंती पर आधारित है। स्थानीय विश्वास यह भी है कि इस शहर की स्थापना दमयंती ने ही की थी। दमोह नगर के दक्षिण-पूर्व में लगभग 32 किलोमीटर दूर स्थित चॉदी चौपड़ा (प्राचीन घाटी) में 15वीं शताब्दी का एक शिलालेख मिला है इस शिलालेख में दमनकपुर नामक नगर का उल्लेख मिलता है। रायबहादुर हीरालाल का विचार है कि यही दमोह नगर है, क्योंकि (दमूह) का अर्थ निवासगृहों का समूह होता है।

भौगोलिक इतिहास – दमोह जिला जबलपुर-संभाग के उत्तरी हिस्से में 23 9' व 24 47' अक्षांश, तथा 79 3' व 79 57' देशांतर पर स्थित है। जिले की सीमाएँ उत्तर व उत्तर-पश्चिम में छतरपुर से, पश्चिम में सागर से, दक्षिण मे नरसिंहपुर व जलबपुर से, तथा पूर्व में जबलपुर व पन्ना से मिलती है।[2] उत्तर से दक्षिण तक दमोह जिले की अधिकतम लम्बाई 90 मील है, तथा पूर्व से पश्चिम तक इसकी औसत चौड़ाई लगभग 50 मील है, मध्मभाग में यह सबसे ज्यादा चौड़ा है, तथा दक्षिणी छोर पर सबसे कम संकरा है। 3 राज्य-सर्वेक्षण के अनुसार जिले का क्षेत्रफल 7273 वर्ग किलोमीटर है। केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन, सांख्यिकी विभाग, भारत सरकार के अनुसार 1 जनवरी, 1966 की स्थिति में जिले का क्षेत्रफल 7321 वर्ग किलोमीटर है।[4]

1. **प्रमुख शहर** – जिले के प्रमुख शहर दमोह, हटा व हिंडोरिया हैं। कम महत्वपूर्ण शहर नरसिंहगढ़ पथरिया, पटेरा व मड़ियाडोह है। इनमें से हटा सर्वाधिक समृद्ध है। यहाँ सर्वाधिक धनी आबादी रहती है। वास्तव में हटा सभी विदेशी वस्तुओं के लिये जिले का बाजार है। हिंडोरिया में पीतल व धातु के बर्तनों का निर्माण होता है। मडियाडोह ऊनी कपड़ो के बनाने तथा पथरिया व नरसिंहगढ़ अनाज-मंडियों के लिए प्रसिद्ध है।[5] परंतु उपर्युक्त शहर वर्तमान दृष्टि से मात्र कस्बे है।

2. **तहसीलें** – सार्वजनिक राजस्व व प्रशासनिक दृष्टि से जिला दो तहसीलों अथवा उपसंभागों-दमोह व हटा-में बॅटा हुआ था, जिनमें से प्रत्येक तहसील पुन: परगनों में बँटी थी। दमोह तहसील में दमोह, नरसिंहगढ़, पथरिया, तेजगढ़ व मानगढ़ परगने तथा हटा तहसील में हटा, बतियागढ, पटेरा, मड़ियाडोह, फतेहपुर व कोटा परगने शामिल थे ।[6] पहले परगनों की संख्या और अधिक थी, परंतु सन् 1855 में कई परगने समाप्त कर दिये गये। 1869 में जिले की सीमा में पहला महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया । जबलपुर के सिंग्रामपुर परगने सहित 123 ग्राम दमोह में अंतरित किये गये। उसके पश्चात् 1901 में 24.1वर्ग किलोमीटर का शासकीय-वन दमोह से नरसिंहपुर जिले को दे दिया गया। 7 इसी प्रकार 1951 तक दमोह की सीमा में छोटे-छोटे परिवर्तन किये जाते रहे।

3. **पर्वत व नदियॉ** – सामान्यतया जिले के दक्षिणी व पूर्वी भाग पहाड़ी व जंगली हैं, जबकि शेष भाग विभिन्न उपज वाले खुले मैदान हैं। बीच-बीच में फुटकर पहाड़ियाँ व निचली श्रेणियॉ हैं, तथा मध्यभाग सबसे अच्छा है। दक्षिण की ओर विन्ध्याचल की फुटकर पहाड़ियाँ हैं, जो कि ऊँचाई व दृश्यों के लिए उल्लेखनीय नहीं हैं। पूर्वी सीमा पर कुछ दूर तक भांडेर की पर्वत श्रेणियाँ है, जो कई स्थानों पर पर्याप्त ऊँची हैं। पश्चिमी सीमा पर विन्ध्याचल की पहाड़ियाँ काफी दूर तक फैली हैं, और कई स्थानों पर कई समतल मैदानों पर खुलती हैं। उत्तर-पूर्व की ओर भोंडला पहाड़ियों की नीची श्रेणी है, जो कि पूर्व की ओर फैली हुई है और भांडेर की श्रेणियों में मिल जाती है। जिले के पश्चिम में सागर जिले के समतल का हिस्सा मिल जाता है।[8]

जिले की प्रमुख नदियाँ- सुनार व बैरमा - दक्षिण से उत्तर पूरे जिले से होकर बहती हैं, तथा उनमें व्यास, कोपरा, गुरैया व अन्य छोटी नदियों का पानी आकर मिलता है। उत्तरी छोर की सीमा पर सुनार पूर्व की ओर मुड़ती है, और बेरमा से जुड़ जाती है, तथा जिले में थोड़ा आगे निकलकर बुंदेलखंड की केन नदी में मिल जाती है। ये सम्मिलित नदियॉ फिर बहकर यमुना में मिल जाती हैं।[9]

4. **जंगल** – जिले के मुख्यतया उत्तर व दक्षिण में तथा मध्य में कुछ बिखरे भागों में 792 वर्गमील क्षेत्र में सरकारी वन हैं। ये सामान्यतया मूल्यवान हैं। सागौन व साज या तो बिखरे हुए अथवा कुछ सीमा तक समूहों में पाये जाते हैं, तथा 3 फुट की गोलाई से अधिक वाले ज्यादा संख्या में नहीं पाये जाते। लाख कीड़े से प्राप्त रंग सर्वाधिक महत्वपूर्ण छोटा उत्पादन है तथा इसकी खेती लगातार बढ़ रही है। 1903-04 में सकल वन-राजस्व 60,000 रू. था, जिसमें से आधा चारागाहों व चारा की घास से वसूल किया जाता था। 10 सन् 1863 में दमोह में वन-मण्डल का गठन किया गया तथा लाइसेंस पद्धति प्रारंभ की गयी। 1932 में आरक्षित वनों में परिवर्तन किया गया। उमराहों-जमुनिया आरक्षित-वन, सागर वन-मण्डल से मिला दिये गये। तारादेही,

* प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

सिंग्रामपुर तथा तेन्दूखेड़ा रेंजो को जबलपुर वन-मण्डल में मिला दिया गया। दिनांक 06 अप्रैल, 1956 को दमोह जिले के समस्त वन नवनिर्मित दमोह वन-मण्डल में अंतरित कर दिये गये। बड़े-बड़े खेतिहर किस्म के वन-विभाग को तथा शेष राजस्व-विभाग को दिये गये।[11]

5. जनसंख्या – दमोह जिले में 1866 में जनगणना प्रारंभ हुई। जनसंख्या के ऑकड़े निम्नानुसार है :

सारणी क्रमांक-1

1866 की जनगणनानुसार दमोह जिले की जनसंख्या के ऑकड़े

वर्ष	जनसंख्या
1866	2,62,641
1881	3,12,957,
1891	3,25,613
1901	2,85,326
1911	3,34,123
1921	2,88,054
1931	3,06,556
1841	3,43,211
1951	3,57,463
1961	4,38,343

उपर्युक्त सारणी में दमोह जिले की जनसंख्या का उल्लेख मिलता है। 1866 से लेकर 1961 तक जनसंख्या में आये उतार-चढ़ाव के स्पष्ट संकेत दृष्टिगत होते हैं। वर्ष 1901 तथा 1921 में जनसंख्या के घटने के संकेत मिलते हैं। दमोह में सन 1900 में भयानक अकाल पड़ा था तथा सन् 1918 में इन्फ्लुएंजा महामारी से बहुत संख्या में लोगो की मृत्यु हुई। 1920 में वर्षा की कमी से रबी की फसल को बहुत क्षति पहुँची तथा अकाल की स्थितियॉ निर्मित हुई। संभवतया इन्हीं कारणों से 1901 तथा 1921 में जनसंख्या के घटने के संकेत मिलते हैं। जिले में हिन्दू अधिकांश संख्या में हैं। मुसलमानों की संख्या मात्र 3 है और वे मुख्यत: कपास धुनने वाले जुलाहे आदि निम्न श्रेणी के हैं। यहाँ कुर्मी जाति के लोग अच्छे कृषक एवं लोधी अच्छे सैनिक माने जाते हैं। हिन्दुओं की 60 से अधिक जातियॉ यहॉ पर रहती हैं। सर्वाधिक कुर्मी लोग हैं, उसके बाद लोधी, चमार, गोंड, ब्राह्मण अहीर आदि आते हैं। अनुसूचित जातियों में चमार, बसोड, कोरी अधिक संख्या में हैं।[13]

सारणी क्रमांक-2 की जनगणना में दमोह एवं हटा तहसीलों के क्षेत्र, शहरों, गॉवों तथा पढ़ने-लिखने योग्य व्यक्तियों की संख्याओं पर प्रकाश डाला गया है –

सारणी क्रमांक - 2 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

इस जनगणना से स्पष्ट है कि दमोह जिले की दमोह तहसील, हटा तहसील से क्षेत्र में बड़ी है। इसलिए स्वाभाविक रूप से दमोह तहसील में गाँवों की संख्या, जनसंख्या एवं साक्षर व्यक्यिों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है। यह तहसील हटा तहसील से प्रत्येक दृष्टि से अधिक प्रगतिशील रही है। इसका प्रभाव वर्तमान समय में भी दृष्टिगत होता है।

सन् 1931 के पूर्व दमोह का क्षेत्रीय गठन वही था, जो वर्तमान में है। 1931 से 1956 तक दमोह का जिले के रूप में पृथक अस्तित्व नहीं था। इसे सागर जिले में मिला दिया गया था। दमोह में दो उपसंभाग या तहसीले थी- (1) दमोह उपसम्भाग व (2) हटा उपसम्भाग। उपसम्भागों व तहसीलों की सीमाएँ एक ही थी। 1962-1963 में संचालक, भू-अभिलेख, मध्यप्रदेश द्वारा जिले का पुनरीक्षित क्षेत्रफल 2015 वर्गमील बताया गया।

6. सड़कें एवं आवागमन के साधन – बंदोबस्त रिपोर्ट, 1866 के अनुसार जिले से होकर जाने वाली प्रमुख सड़कें निम्नलिखित थीं –

1. जिले की प्रमुख सड़क सागर-जबलपुर सड़क थी, जो कि दमोह से होकर गुजरती थी।
2. दूसरी महत्वपूर्ण सड़क झुकेही से दमोह को मिर्जापुर सड़क पर जोड़ती थी।
3. एक और सड़क हटा से होकर दमोह से नागौद की ओर जाती थी। इसके अतिरिक्त दो और प्रमुख सड़कें हैं। एक जंगल में तेजगढ़ से होकर नर्मदा घाटी की ओर तथा दूसरी सागर जिले की रेहली से जबलपुर में पाटन तक थी। यह सड़क दमोह में काफी छोटी थी। शेष आवागमन पगडंडियों के माध्यम से होता था।[15]

सन् 1895 में दमोह से होकर गुजरने वाली सागर-कटनी रेलवे लाइन के खुल जाने से जिले का व्यापार दमोह स्टेशन पर केन्द्रित हो गया। 1904 में जिले से रेलवे द्वारा लगभग 5 लाख मन का कुल निर्यात हुआ, जिसका मूल्य 18 लाख रूपये था तथा 1.76 लाख मन का आयात हुआ, जिसका मूल्य 14 लाख रूपये था।[16]

7 जलवायु –

जलवायु शीत ऋतु में ठंडी होती है तथा ग्रीष्म ऋतु में सामान्य होती है। दमोह शहर ग्रीष्म महीनों में चट्टानी पहाड़ियों के कारण कुछ अधिक गर्म रहता है। हटा तहसील के उत्तरी-पूर्वी भागों में बसंत ऋतु में प्राय: ओले गिरते हैं। तेज कोहरों से गेहूँ की अच्छी फसल पूर्णत: नष्ट होने की संभावना बनी रहती है।[17]

दमोह तहसील में औसत वार्षिक वर्षा 51 इंच है, तथा हटा में कई इंच कम है। वर्षा सामान्यतया उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर बढ़ती है। जुलाई तथा अगस्त सर्वाधिक वर्षा के महीने हैं। जिले में 1865 में वर्षा औसतन 55.7 इंच हुई, 1866 में 37.8 इंच, 1867 में 45.5 इंच, 1868 में 21 इंच, 1873 में 43.90 इंच, 1877 में 26 इंच तथा 1897 में 34 इंच थी। 1877, 1878, 1879, 1880 एवं 1899 में इस जिले की औसत वर्षा 31 इंच थी, तथापि फसलें बहुत अच्छी नहीं हुई। 1884-85 में अधिकतम वर्षा 78 इंच हुई। 1900 के पहले 33 वर्षों की अवधि में दमोह जिले की औसत वर्षा 22 इंच थी।[18] 1901 से 1950 तथा 50 वर्षों की अवधि में न्यूनतम वार्षिक वर्षा सन 1913 में हुई थी तथा सर्वाधिक वर्षा 1926 में हुई।

निष्कर्ष- दमोह जिले की सीमाएँ छतरपुर, सागर, नरसिंहपुर, जबलपुर व पन्ना से मिलती है। यह पहाड़ी क्षेत्र है इसलिए यहाँ ग्रीष्म ऋतु मे अधिक गर्मी और शीतऋतु में अधिक ठंड पड़ती है। यहाँ कई प्रसिद्ध नदियॉ है जिसमें सुनार व बैरमा प्रमुख है। व्यापार सड़क मार्ग से हाता है परंतु रेलवे लाइन खुल जाने से व्यापार रेलमार्ग कर केन्द्रित हो गया।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हीरालाल, रायबहादुर-दमोह दीपक, दमोह, 1919, पृ-85
2. रसेल, ए.एम.-सिलेक्शन्स फार्म द रिकार्ड्स ऑफ गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, फॉरेन डिपार्टमेंट, नं.-4, रिपोर्ट ऑफ द लैंड रेवेन्यू सेटलमेन्ट ऑफ द दमोह डिस्ट्रिक्ट, जबलपुर डिवीजन, 1866, पृ.-19
3. रसेल, ए.एम.-रिपोर्ट ऑफ द लैंड रेवेन्यू सेटलमेंट ऑफ द दमोह डिस्ट्रिक्ट, जबलपुर डिवीजन, 1866, पृ.-19
4. सेंसस ऑफ इंडिया, 1961 वाल्यूम-आठ, दिल्ली, पृ-47
5. कनिंघम, ए.-आर्कियालॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया रिपोर्ट्स, 1863-65, कलकत्ता, वाल्यूम-9, पृ.-48

6. उपर्युक्त, पृ.–48
7. सेंसस ऑफ इंडिया, 1961 वाल्यूम–आठ, दिल्ली, पृ.48
8. रसेल, ए.एम.–रिपोर्ट ऑफ द लैंड रेवेन्यू सेटलमेंट ऑफ द दमोह डिस्ट्रिक्ट, जबलपुर डिवीजन, 1866, पृ.–21
9. उपर्युक्त, पृ.–21
10. हंटर, डब्ल्यू.डब्ल्यू. द्वारा संपादित–द इंपीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया, वाल्यूम–11, एडिनबर्ग, 1908, पृ.–140
11. श्रीवास्तव, प्रेमनारायण द्वारा संपादित–मध्यप्रदेश जिला गजेटियर, दमोह जिला, भोपाल, 1980, पृ. –22
12. दमोह डिस्ट्रिक्ट सेंसस हैन्डबुक, दिल्ली, 1961, पृ.–50
13. ग्रांट, चार्ल्स द्वारा संपादित–द गजेरियर ऑफ सेंट्रल प्रॉविन्सेस ऑफ इंडिया, 1984, पृ.–179
14. हंटर, डब्ल्यू.डब्ल्यू. द्वारा संपादित–द इंपीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया, वाल्यूम–11 एडिनबर्ग, 1908, पृ.–137
15. रसेल, ए.एम.–रिपोर्ट ऑफ द लैंड रेवेन्यू, सेटलमेंट ऑफ द दमोह डिस्ट्रिक्ट, जबलपुर डिवीजन, 1866, पृ.–22
16. ट्रेंच, सी.जी. चेनविक्स–फाइनल रिपोर्ट ऑफ द लैंड रेवेन्यू सेटलमेंट ऑफ द दमोह डिस्ट्रिक्ट–1907–14, पृ.–10
17. हंटर, डब्ल्यू.डब्ल्यू. द्वारा संपादित–द इंपीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया, वाल्यूम–11 एडिनबर्ग, 1908, पृ.–135
18. रसेल, ए.एम.–दमोह सेटलमेंट रिपोर्ट, 1866, पृ.–27

सारणी क्रमांक – 2

1901 की जनगणना के अनुसार दमोह जिले में पढ़े–लिखे व्यक्तियों की संख्या

तहसील	वर्ग मीलों में क्षेत्र	शहरों की संख्या	गॉवों की संख्या	जनसंख्या	पढ़ने–लिखने योग्य व्यक्तियों की संख्या
दमोह	1797	1	692	1,83,316	7103
हटा	1019	–	424	1,02,010	3956
जिला योग	2816	1	1116	2,85,326	11,059

****

शैव धर्म का उद्भव और उत्कर्ष

डॉ. जगमोहन सिंह पूषाम *

शोध सारांश – विश्व के प्राचीनतम धर्मो में से हिन्दू धर्म का सर्वोच्च स्थान रहा है। हिन्दू धर्म के नियमों व सिद्धान्तों से भारतीय समाज ही नहीं वरन् सम्पूर्ण संसार में धार्मिक साहिष्णुता ,भातृत्व और सद्भावना की स्थापना की जा सकती है। भारत की धार्मिक व सांस्कृतिक स्वरूप भी अतिप्राचीन है। पुराणों में अनेकानेक देवी देवताओं का वर्णन व महात्म्य स्थापित है। पंचदेवों में विष्णु, शिव , शक्ति ,गणेश और सूर्य वैदिक देवता है। बाद में पुराणों में त्रिदेव ब्रम्हा ,विष्णु ,महेश शक्तिशाली रूप में स्थापित हो गये। इस शोध आलेख में शैव धर्म का उद्भव और उत्कर्ष के साथ उनकी मान्यताओं ,परम्पराओं ,आस्था और विश्वास के विभिन्न स्वरूपों का उल्लेख किया गया है।

प्रस्तावना – अनादि काल से भारत एक अलग सांस्कृतिक ईकाई के रूप में विकसित हुआ है। यहाँ विकसित सभी धार्मिक मत –सम्प्रदायों के तीर्थ (धार्मिक स्थल) संपूर्ण देश में अवस्थित है। शैव मत के अनुयायियों के लिए द्वादश ज्योतिर्लिंग का विशेष महत्व है। ये सम्पूर्ण भारत वर्ष में फैले होने के कारण राष्ट्र की एकात्मकता के भी प्रतीक हैं। शिव महापुराण में शिव की महिमा का विस्तृत वर्णन हैं।

धार्मिक व सांस्कृतिक पृष्ठभूमि – शिव से सम्बन्धित धर्म को शैव धर्म कहा गया तथा इस धर्म के भक्तों और अनुयायियों को शैव।शैव धर्मावलंबियों के प्रधान इष्टदेव भगवान शिव हैं। यह उत्तरवैदिक कालीन नाम है। विष्णु की तरह उनके अवतारों की कल्पना नहीं की गई न ही उनका विकास अवतरावाद के आधार पर हुआ ,बल्कि उनका विकास 'रूद्र ' से 'शिवम्' के रूप में हुआ। शिव की प्राचीनता प्रागैतिहासिक है। नवपाषाण युग की अनेक जातियों में भूमि की उर्वरता के लिए लिंग –पूजा की जाती थी। गुडिमल्लम और भीटा से ऐसे लिंग प्राप्त हुए हैं जिन पर मनुष्य की आकृति में देवता अंकित हैं। कुछ लोगों ने उनकी प्राचीनता की खोज सैधव सभ्यता में की और यह कहा कि वहाँ से प्राप्त मुहरों पर श्रृंगधारी मानवाकार बैठे हुए देवता पाशुपत शिव हैं और उनका प्रतीक लिंग भी चित्रित है जिनके चारों ओर शेर ,हाथी आदि पशु बैठे हैं। शिव का एक दूसरा चित्र ताम्रपट पर मिला है जिसमें वे यात्री के रूप में दर्शित हैं तथा उनके सम्मुख दो सर्प हैं और उनके गले में सर्प की माला है। सिंधु सभ्यता के अवशेषों में छोटे –मोटे अनेक लिंग मिले हैं।

ऋग्वेद में शिव के लिए 'रूद्र' नाम का व्यवहार हुआ है,जो अपनी कठोरता और रूद्रता के लिए ख्यात हैं। वे अपनी भयंकर और विनाशक शक्ति से मनुष्य और पशु दोनों को विनष्ट कर देते हैं। उनकी क्रुद्ध और प्रलयकारी शक्ति से महामारियाँ फैल जाती तथा घर के घर उजड़ जाते हैं। अत: उनकी विध्वंसकारी शक्ति से बचने के लिए ऋग्वैदिक आर्यो ने उनकी स्तुति और वन्दना प्रारम्भ की ,जिससे वे प्रसन्न रहें और अपनी विनाशक शक्ति से मनुष्य को कष्ट न दें। ऋग्वेद के विवरण के अनुसार उनके द्वारा फेंके गये बाण तीव्र रूप से स्वर्ग और पृथ्वी पर गिरते हैं।[1] वे अपने अस्त्र से मनुष्य और गाय को हत्त करते हैं।[2] अत: ऋषियों ने उनकी प्रार्थना की कि वे अपने आयुधों को दूर रखें तथा द्विपदों और चतुष्पदों की रक्षा करें। [3] इस प्रार्थना द्वारा रूद्र के विनाश से लोग बच जाते थे।फलस्वरूप वे उन्हें पशुपति अथवा पशुओं का रक्षक कहते थे।ऋग्वेद से विदित होता है कि उनकी उपाधि 'पशुप'थी।[4] रूष्ट होने पर वे महामारियाँ फैला देते थे ,अत: उनसे बचने के लिए लोग उनकी पूजा करते तथा आशा करते थे कि लोगों की विभिन्न रोगों से मुक्ति मिलेगी। रूद्र के पास सहस्त्रों औषधियाँ थी,[5] जिनके कारण रोगों से छुटकारा पाना सरल था।

उत्तर वैदिक काल में रूद्र का विकास अधिक तीव्र गति से हुआ। उन्हें शतरूद्रिय और शिवातुन: (मंगलमय) कहा गया और साथ ही पर्वत पर शयन करने के कारण उन्हें 'गिरीश' और 'गिरित्र' नाम से अभिहित किया गया।[6] उन्हें पशुओं का स्वामी कहा गया,[7] जो 'पशुपति' (पशूनाम् पति :) के रूप में उनका विशिष्ट नाम हो गया। धीरे –धीरे रूद्र की रूप में भी उनका स्थान बनता गया। 'कपर्दिन'(जिनकी ज्वालाएँ कपर्दो की तरह थीं) की संज्ञा देकर उन्हें अग्नि से अभिन्न माना गया। उनकी उग्रता जब शांत हो जाती थी तब उन्हें 'शम्भु',शंकर और 'शिव' नामों से अभिहित किया जाता था। चर्म धारण सम्भवत: निषाद आदि करने के कारण वे 'कृतिवासन:' के रूप में ख्यात थे। उन्हें शर्व –भव भी कहा गया। रूद्र से अनेक रूद्रों को उद्भूत माना गया था ,जो उनकी व्यापकता व्यंजित करता है। इसलिए इन रूद्रों को गणपति ,कर्मकार ,कुम्भकार ,रथकार,तक्षक और निषादों के पति (स्वामी) के रूप में स्वीकार किया गया।अथर्ववेद के विवरण से यह स्पष्ट होता है कि देवताओं ने महादेव (पशुपति ,शर्व,धनुर्धर भव ,रूद्र ,उग्र) को विभिन्न दिशाओं के वात्यों का स्वामी नियुक्त किया था।

समाज में रूद्र की महत्ता ,विशिष्टता और उत्कृष्टता बढ़ती गई। द्विपद और चतुष्पद के शासक के रूप में भी स्वीकार किया गया।उनका क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत था तथा इनका आयाम बहुत बड़ा था।अथर्ववेद [8] और शतपथ ब्राहाण[9] में उन्हें 'सहस्त्राक्ष' कहा गया था। निकटवर्ती और दूरवर्ती समस्त पदार्थ उन्हीं के थे, साथ ही वे समग्र धनुर्धरों में श्रेष्ठ थे। उनका आघात सभी देवताओं और मनुष्यों को आहत कर सकता था। अत: उनके द्वारा अपनी रक्षा के लिए उनकी आराधना की जाती थी। रूद्र सर्वत्र था। वह 'भूतपति' और 'पशुपति' था।[10] पशुपति के रूप में उसके अधीन पॉच प्रकार के पशु थे –गौ ,अश्व ,मनुष्य, अजा और भेड। उनकी आराधना करते हुए कहा गया कि वे विनाश, विष और अग्नि से रक्षा करें।[11] अथर्ववेद में उन्हें भव,स्वर्ग और पृथ्वी का ईश

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

कहा गया तथा भव,शर्व और रूद्र (पशुपति) के बाश को 'सदाशिव' बनने के लिए कामना व्यक्त की गई।[12] उनकी उपस्थिति आकाश,पृथ्वी अन्तरिक्ष और दिशाओं में ,सर्वत्र मानी गई थी । वे 'भव' के रूप में पूर्वी प्रदेश के अन्तर्वर्ती स्थान में ,'शर्व ' के रूप में दक्षिण में ,'पशुपति' के रूप में पश्चिम में ,'उग्र' के रूप में उत्तर में, 'रूद्र' के रूप में भूतल में , 'महादेव' के रूप में ऊपर और 'ईशान' के रूप में अन्तरिक्ष में व्याप्त थे।[13] अत:सम्पूर्ण सृष्टि में उनका विस्तार था तथा समस्त जगत् उनके निर्देश से संचालित था। ब्राहाण ग्रन्थ में उन्हें उषा का पुत्र बताया गया है।

प्रजापति द्धारा रखे गए उनके आठ नामों में से एक नाम 'अशांति' (वज्र) भी था।[14] उनके आठ नामों में से रूद्र ,शर्व,उग्र और अशनि ये चार नाम विध्वंसकारी और विनाशकारी थे तथा चार नाम,भव, पशुपति, महादेव और ईशान,कल्याणकारी , यद्यपि समस्त देवगण उनकी रूद्रता से भयत्रस्त थे।[15] सूत्र ग्रंथों में भी रूद्र की अपनी अलग विशिष्टता है तथा उनके विवरण से यह प्रमाणित होता है कि उनका अनार्य तत्वों पर प्रभाव था। उनको प्रसन्न करने के लिए पशुबलि की व्यवस्था की गई थी जो ग्राम की सीमा के बाहर आयोजित की जाती थी तथा अवशिष्ट ग्राम में नहीं लायी जाती थी।[16] मार्ग को पार करते समय ,चतुष्पथ पर पहुंचते समय ,नदी पार करते समय ,नाव पर आरूढ़ होते समय,पर्वत ,श्मशान और गोशाल जैसे स्थानों के मध्य से जाते समय अपने सुरक्षार्थ रूद्र की उपासना की जाती [17] तथा मन्त्र का जप किया जाता था।[18] स्पष्ट है ,रूद्र एक विशिष्ट देवता के रूप में विकसित हो रहे थे, जिनकी आराधना समाज में निरन्तर की जाती थी। श्वेताश्वतर ,अथर्वशिरस् जैसे उपनिषदों में शिव के दर्शन और ज्ञान – तत्व की मीमांसा की गई है तथा उनका सम्बन्ध ईश्वर ,जीव और प्रकृति –तत्वों से स्थापित किया गया है। तैतिरीय संहिता में उनकी एकता शिव से स्थापित की गई है।[19] उन्हें सर्वोच्च देव का पद प्राप्त था।

इस युग तक रूद्र –शिव की प्रतिष्ठा बढ़ गई थी ,किन्तु उनकी पत्नी का कोई उल्लेख नहीं मिलता। केन उपनिषद् में उमा का नाम अवश्य मिलता है ,किन्तु वह रूद्र की पत्नी नहीं है ,वह हिमवान की पुत्री 'हैमवती' है। श्वेताश्वतर ऋषि भक्ति के वशीभूत होकर रूद्र की शरण में गये थे। महाभारत में शिव का उल्लेख सर्वोच्च और शक्तिशाली देवता के रूप में हुआ ,जिनसे पाशुपत अस्त्र प्राप्त करने के लिए अर्जुन को हिमालय जाना पड़ा था। वहाँ उन्होंने किरात के वेश में रह रहे शिव की वास्तविकता को समझे बिना उनसे युद्ध किया , किन्तु वे परास्त होकर भूमि पर पड़ गए। इसके बाद उन्होंने मृत्तिका की वेदी बनाकर शिव की आराधना की और देखा कि जो पुष्प उन्होंने अर्पित किया था वह किरात के सिर पर रखा हुआ है। तब उन्होंने शिव का पहचानकर अपने को उनके चरणों में शरणागत किया। भगवान् शिव ने प्रसन्न होकर अर्जुन को पाशुपत अस्त्र प्रदान किया।[20]

महाभारत के ही सौप्तिक पर्व में वितृत है कि शिव की कृपा से अश्वथामा को एक खड्ग मिला था जिससे उन्होंने पाण्डवपुत्रों का वध कर डाला था। पुत्र –प्राप्ति के लिए कृष्ण ने स्वयं शिव की आराधना की थी,तदनंतर भगवान् शिव ने अपनी पत्नी उमा के साथ प्रकट होकर कृष्ण को मनोवांछित वर प्रदान किया था।[21] लिंग पूजा का जो उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है उसका शैव धर्म से सम्बद्ध होना अत्यन्त विवादग्रस्त है। ऋग्वेद में शिश्न –पूजकों को घृणा की दृष्टि से देखा गया है।[22] पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि तत्कालीन समाज में इसका प्रचलन था ,चाहे वह अनार्यो के ही समाज में क्यों न रहा हो। किन्तु सायण ने शब्दोत्पत्ति करते हुए भाष्य किया है कि 'शिश्नदेव' का अर्थ होता है वे व्यक्ति जो शिश्न से क्रीड़ा करें।[23] 'दूसरे शब्दों में, ऐसे लोगों को अब्रहाचारी कहा जा सकता है। ऐसी स्थिति में 'शिश्नदेव' लिंग पूजा का परिचायक नहीं। लिंगोपासना का संकेत महाभारत के अनुशासन पर्व में मिलता है , जो सम्भवत: अनार्य प्रभाव के कारण था। पाणिनि पर भाष्य करते हुए पतंजलि ने शिव की मूर्ति बनाकर पूजा करने की बात कही है। उसने शिश्न–पूजा को कोई भी संकेत नहीं दिया है। शक शासक मोग की मुद्राओं पर त्रिशुलधारी शिव अंकित है।

पल्हव नरेश गुण्डफर्न के कुछ सिक्कों पर त्रिशूला और जटाधारी शिव का चित्र उत्कीर्ण है। कुशाण शासक विम कदाफिसस के सिक्कों के पृष्ठ भाग पर नन्दी और त्रिशुलग्राही, चर्मधारण किए हुए शिव की आकृति उत्कीर्ण है ,लिंग की कोई आकृति नहीं मिलती। हुविष्क की मुद्राओं पर शिवलिंग अंकित है। गुप्त काल में शैव धर्म का उत्कर्ष तीव्र गति से हुआ। गुप्त –सम्राटों के वैष्णव धर्मावलम्बी होने के बाद भी उनकी धर्म –सहिष्णुता की भावना से शैव धर्म का समाज में यथोचित प्रसार हुआ। चन्द्रगुप्त द्धितीय विक्रमादित्य का मंत्री वीरसेन शैव धर्मावलम्बी था। कुमारगुप्त प्रथम के मंत्री पृथ्वीसेन ने शिव–मन्दिर को दान प्रदान किया था ,जिसका उल्लेख करमदण्डा–अभिलेख में हुआ है। स्कन्दगुप्त का अधीनस्थ सामन्त महाराज हस्तिन शिवोपासक था।स्कन्दगुप्त के सिक्के उसकी शैव धर्म के प्रति आस्था व्यक्त करते हैं। वस्तुत: शैव धर्म के इस प्रकार का प्रारंभ शुंग–सातवाहन –काल से हुआ जो गुप्त–काल में चरम परिणति पर पहुंचा। उस युग में अनेकानेक शैव मन्दिरों के निर्माण के साथ शिव की महिमा से सम्बन्धित उत्कृष्ट साहित्य की भी रचना हुई।

साहित्यिक रचना के क्षेत्र में कालिदास का शीर्षस्थ स्थान है , जिन्होंने 'कुमार – संभव' नामक महाकाव्य की रचना करके शैव धर्म की प्रतिष्ठा में महत्वपूर्ण योग प्रदान किया। 'कुमार संभव' में शिव के चरित्र, महिमा और गुणों का वर्णन है। इस कृति के अतिरिक्त महाकवि की अन्य कृतियों में शिव के विभिन्न स्वरूपों, मतों और सिद्धातों का उल्लेख है। महेश्वर, ईश, ईश्वर,परमेश्वर ,अष्टमूर्ति ,वृषमध्वज ,शूलभूत ,पशुपति त्र्यंबक, त्रिनेत्र, स्थाणु , अयुग्मनेत्र ,नीलकण्ठ,नीललोहित ,शितिकण्ठ ,चण्डेश्वर , विश्वेश्वर, शंभु, हर , गिरीश ,महाकाल , भूतेश्वर ,शिव ,शंकर ,पिनाकी आदि नामों से शिव का उल्लेख हुआ है। कालिदास के साहित्य में गोकर्ण के शिव ,काशी के विश्वनाथ और उज्जैन के महाकाल– ज्योतिलिंग का संकेत मिलता है। वे जगत् श्रृष्टा के रूप में पूजित थे तथा उन्हें ही सृष्टि भी कहा गया। अष्टमूर्ति के आठ स्पष्ट रूप थे रूद्र ,भव ,शर्व ,ईशन ,पशुपति ,भीम, उग्र और महादेव। अभिज्ञानशाकुंतलम् में शिव के अष्टरूप की इस प्रकार व्याख्या की गई है – जल ,अग्नि ,सूर्य,चन्द्र ,आकाश,पृथ्वी और वायु। यह माना गया कि ब्रहा जगत् के श्रृष्टा हैं ,विष्णु पालक और शिव संहारक। कालिदास द्धारा शाकुन्तलम् का आरम्भ और अन्त शिव की स्तुति से किया गया है। पुराणों में उनकी अनुपम महिमा निरूपित की गई है।उन्हें देवों में श्रेष्ठ महादेव कहा गया है।[24]

स्कन्द पुराण में पशुपति ,सर्वज्ञ ,ईश्वर, सब तत्वों के मूल तत्व तथा सनातन भगवान् रूद्र ने कहा है कि सृष्टिकर्ता ब्रहा से भी पहले मैं ही अकेला ईश्वर था ,वर्तमान में भी मैं ही ईश्वर हूँ और भविष्य में भी मैं ही एकमात्र ईश्वर रहूँगा। मेरे अतिरिक्त कोई दूसरा ईश्वर नहीं है।[25] उनकी इस प्रतिष्ठा और महानता का कारण यह था कि उन्होंने अपने ऐश्वर्य से देवताओं को, शक्ति से असुरों को ,ज्ञान से मुनियों (ऋषियों) को तथा योग से प्राणियों को पराजित किया था।[26] पुराणों में उनको त्र्यंबक,भव,शर्व,महादेव, ईशान, शूलपाणि, शंकर, शूली, त्रिशूलीधारी, पिनाकी, नीललोहित , नीलग्रीव,

शितिकण्ठ , सहत्राक्ष, वृषभध्वज ,पशुपति अतिभैरव आदि विभिन्न नामों से अभिहित किया गया है । पुराणों में शिश्न-पूजा (लिंग-पूजा) का भी उल्लेख है । एक बार जब ब्रहा और विष्णु में श्रेष्ठता का विवाद चल रहा था तब उन्होंने दीप्तिमान् अव्यक्त लिंग देखा।[27] किन्तु लिंग पूजा का स्पष्ट वर्णन मत्स्य पुराण में हुआ है ,जिसके अनुसार त्रिपुर के दग्ध होने के समय वाणासुर ने शिवलिंग को सिर पर रखकर शिव की पूजा की थी।[28] मथुरा के एक स्तम्भ - लेख से विदित होता है कि उपमितेश्वर और कपिलेश्वर नामक शैव आचार्यो के समान में शिवलिंगों का स्थापन किया गया था ।[29] पाशुपत संप्रदाय का गुप्त-काल में अत्यधिक विकास हुआ । यद्यपि इस संप्रदाय के अतिरिक्त वीर, शैव , प्रत्यभिज्ञ आदि कई सम्प्रदाय थे , तथापि पाशुपत मत के मानने वाले लोग तत्कालीन समाज में अधिक हुए ।

इस सम्प्रदाय के सिद्धान्त के तीन अंग हैं(1) पति (स्वामी), (2) व्यक्ति ,आत्मा या 'पश' और (3) पाश (बन्धन)। इनके अतिरिक्त चार पाद है :-(1)विद्या या ज्ञान ,(2) क्रिया अथवा कर्म ,(3) योग (ध्यान) और (4) चर्या अथवा आचार । पशुपति के रूप में भगवान् शिव की उपासना समाज में प्रचलित थी । पाशुपत अस्त्र की प्राप्ति के लिए अर्जुन की कठिन तपस्या का उल्लेख कालिदास ने भी किया है।[30] अर्धनारीश्वर के रूप में भी शिव की कल्पना की गई । शिव और पार्वती की संयुक्त मूर्तियाँ गुप्त-युग में और उसके परवर्ती युग में विशेष रूप से कोरी गई । इसी संयोग का वर्णन कालिदास ने 'कुमारसंभव' में अत्यन्त यत्नपूर्वक किया है । शिव और पार्वती का परस्पर इतना तादात्म्य हुआ कि दोनों की सन्निहित मूर्ति 'अर्धनारीश्वर' के रूप में समाज में चल पड़ी जिसके अन्तर्गत पुरूष और नारी को एक ही शरीर के भाग के रूप में स्वीकार किया गया तथा यह अभिव्यक्ति किया गया कि स्त्री और पुरूष एक दूसरे के पूरक हैं । फलत: शिव और पार्वती -युक्त 'अर्द्धांगिंनी'की मूर्ति इसी कल्पना पर आधारित थी ,जिसमें अर्धांगं रूप में शिव बायीं ओर और अर्द्धांगिनी रूप में पार्वती दाई ओर दर्शित हैं ।

वैशाली की एक मुहर भी अर्धनारीश्वर की मूर्ति रूपायित की गई है, जो अत्यन्त सजीव और अभिराम है।कुर्किहार से प्राप्त अष्टधातु की मूर्ति इसी प्रकार सुन्दर और आकर्षक है । कालिदास स्वयं समन्वयवादी विचार थे । उनके वैष्णव धर्म का प्रतीक ग्रंथ 'रघुवंश' है जिसमें राम के वैभव और ऐश्वर्ययुक्त चरित्र का रूपांकन है ,किन्तु ग्रंथ का प्रारम्भ शिव की स्तुति से किया गया है ,जो महाकवि के शैव होने का परिचायक है। कालिदास शिव के श्रेष्ठ उपासक थे ,उन्होंने शक्ति के पुरूष से विलग होने और फिर पहचानी जाकर एक होने का ,'प्रत्यभिज्ञा' वर्णन का पूर्वरूप ,अपने ग्रंथ 'शाकुन्तलम्' में विवृत किया है । हरिहर के रूप में शिव को विष्णु के साथ दर्शित किया गया, जिसने 'द्धिदेव' की कल्पना को मुखर किया । वैष्णव और शैव धर्म के समन्वय का यह ज्वलन्त प्रमाण था ,जिसकी कल्पना महाकवि कालिदास ने अपने ग्रंथों में की थी ।

उत्तरप्राचीन काल में शैव धर्म का विभिन्न सम्प्रदायों के रूप में विकास हुआ ।[31] शैव,कालानन या कारूक ,पाशुपति-कुलशील और कापालिक जैसे सम्प्रदायों के लोग समाज में व्याप्त हो गये थे । कभी -कभी शासक भी शैव धर्मानुयायी होते थे ।गौड़-नरेश शशांक दृढ़ शैवमतावलम्बी था । यहीं नहीं , प्रारम्भ में कन्नौज-नरेश सम्राट हर्ष भी शिवोपासक था। [32] उस समय भारत में शैव धर्म का अत्यधिक प्रभाव था ।श्वानच्वांग के अनुसार वाराणसी शैव धर्म का प्रधान केन्द्र था ,जहाँ एक सौ शिव -मन्दिर थे।[33] तत्कालीन अभिलेख इस बात के प्रमाण हैं कि शिव का स्तवन ओम् नम: शिवाय के साथ प्रारम्भ होता था ।[34] देवाधिदेव महादेव की अत्यन्त भावभीनी वन्दना और स्तुति की जाती थी , जिसमें उनकी ऐश्वर्य -गाथा होती थी ।[35]

कलचुरि-अभिलेख में शिव को परम ब्रहा देव और जगद्गुरू कहा गया है, जिसकी सेवा में ब्रहा और अनेकानेक देव लगे रहते थे।[36]इसी तरह भेड़ाघाट अभिलेख में शिव को 'कल्याणिताम् ' कहते हुए भाल पर शशि को धारण करने वाला कहा गया है ।[37] एक अन्य कलचुरि - अभिलेख में शर्व (शिव)की अत्यन्त मोहक प्रशस्ति की गयी है ।[38] उदयपुर-प्रशस्ति में शम्भु (शिव) को 'भुजंगमाल' से युक्त और 'गंगाबुसंसिक्त' अभिव्यंजित किया गया है । [39] तत्कालीन युग के अभिलेखों में शिव के अनेक नाम मिलते हैं,जिसमें केदारेश्वर ,रामेश्वर ,सोमनाथ, रूद्र ,भवानीपति,व्योमकेश ,शिव , महादेव, उमापति ,पशुपति, योगस्वामी ,लोलार्क ,विन्देश्वर ,नीलकण्ठ , धूर्जटि,अर्धनारीश्वर ,सदाशिव ,परममाहेश्वर आदि -आदि प्रसिद्ध है । कलचुरी ,परमार, प्रतिहार ,सेन ,चन्देल , चेदि , गहड़वाल आदि राजपूत राजवंश के शासकों ने समय -समय पर शिव की अभ्यर्थना की थी । पाल शासक नारायणपाल ने बौद्ध होते हुए भी ,एक सहत्र शिव -मन्दिरों का निर्माण करवाया था। [40] खजुराहों में उदयन द्धारा एक मनोरम शिव -मन्दिर की स्थापना की गयी थी । [41] रतनपुर -अभिलेख में उल्लिखित है कि कुमरकोट में दो शिव -मन्दिरों का निर्माण हुआ था । [42] मल्हार -प्रस्तर -अभिलेख से विदित होता है कि 919 ई. में केंदार शिव का मन्दिर बना था ।

चेदि अभिलेखों में भी अनेक शिव -मन्दिरों के निर्माण का उल्लेख है । प्रतिहार शासकों के वर्णन में भी शिव -मन्दिर के बनने के उल्लेख हैं । ग्वालियर-अभिलेख से ज्ञात होता है कि सिद्धेश्वर महादेव के नाम से उसने शिव -मन्दिर निर्मित कराया था ।[43] गुजरात के कतिपय चालुक्य शासक भी शिव-भक्त थे। भीम प्रथम शिवोपासक था । उसने सोमनाथ का प्रस्तर का मंदिर निर्मित करवाया था ,जो कालान्तर में महमूद गजनवी द्धारा तोड़ दिया गया था । तत्पश्चात् कुमारपाल ने उसका पुनर्निर्माण करवाया था । सोमनाथ के मंदिर का उल्लेख अलबीरूनी ने भी किया है,जो अपने समय में अत्यन्त प्रसिद्ध और अर्थसम्पन्न मंदिर था । वह लिखता है कि सोमनाथ के पूजन के लिए नित्य कश्मीर से पुष्प और गंगा से जल आता था ।[44] सेन शासकों की मुहरों पर दस हाथ वाले सदाशिव की आकृति उभाड़ी गई है ।अर्धनारीश्वर की भी मूर्ति मिलती है,किन्तु बहुत कम । वैसे ,प्रतिहार अभिलेख में अर्धनारीश मूर्ति का उल्लेख हुआ है ।[45] सेन- अभिलेख में अर्धनारीश्वर की मूर्ति नृत्य करते हुए उल्लिखित की गई है।[46] इनके अतिरिक्त विभिन्न रूपोंवाली शिव की मूर्तियॉ भारत के अनेक भागों से प्राप्त हुई है । शैव मठों का भी उल्लेख विभिन्न अभिलेखों में मिलता है ,जहाँ शैव धर्मानुयायी योगी के रूप में रहा करते थे । मठों के व्यय के लिए राजाओं से दान प्राप्त हुआ करते थे । सन्यासियों की सुविधा के लिए मठ के पास तालाब और उद्यान भी बना करते थे तथा उन मठों के व्यय के लिए अनेकानेक गाँव दान में दिये जाते थे ।[47] कलचुरि -शासक रत्नदेव तृतीय के मन्त्री ने 1181 ई. में भगवान् शिव की दक्षिण दिशा में एक मठ का निर्माण करवाया था ।[48] सोमेश्वर के उदयपुर -अभिलेख में वर्णन है कि कापालिकों (शैव सम्प्रदाय की एक शाखा) के निवास के लिए मठ का निर्माण कराया गया था । पूर्वमध्य युग में राजस्थान में ऐसे अनेक शैव मठ थे, जिनकी आर्थिक सहायता स्थायी रूप में की जाती थी ।[49] इस प्रकार उत्तर भारत के विभिन्न स्थानों पर शैव मठ थे , जहाँ शैव योगी रहकर साधना किया करते थे ।

निष्कर्ष -भारतीय धर्म का राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रहा है । धर्म सभ्यता और सांस्कृतिक विकास के साथ मानव समाज में धार्मिक भावना जागृत करता है । धर्म भारतीय संस्कृति एवं देश की मौलिक एकता की

भावना को एक सूत्र में पिरो दिया हैं।शैव धर्मावलंबियों के प्रधान इष्ट शिव हैं। ऋग्वेद में शिव के लिए 'रूद्र ' नाम का व्यवहार हुआ है। उत्तरवैदिक काल में 'रूद्र ' का विकास तेजी से हुआ और समाज में रूद्र की महत्ता, विशिष्टता और उत्कृष्टता बढ़ती गई। महाभारत काल में शिव का उल्लेख सर्वोच्च और शक्तिशाली देवता के रूप में हुआ हैं। पुराणों में उनकी अनुपम महिमा निरूपित की गई है। उन्हें देवों में श्रेष्ठ ' महादेव ' कहा गया है। इस प्रकार शैव धर्म का उत्कर्ष और विकास हुआ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ऋग्वेद 7.46.3
2. वही 1.114.10.आरे तो गोधूनंमुत पुरूषधनं .....।
3. वही 1.114.1
4. वही, 1.114.9
5. पहीख 7.46.3.
6. तै.सं. 4.5.1.1,
7. वा.सं. 16.1 पशूनां पतये नमः।
8 अथर्ववेद .11.27,
9 शतपथ ब्राहाण 9.1.1.6,
10 अर्थववेद 6.93.2.11.2.1.1
11. वही ,11.2.6 ,
12. वही, 11.6.9.
13. वही , 15.5.1 त्र 7
14 श.बा.6.1.37,
15. श.बा.9.1.1.1
16. वही ,आ.गृ.सू. 4.9
17. पा.गृ.सू.3.15
18. हि.गृ.सू.1.5.16.
19. तैतित्तीय संहिता 4.5.1
20. महाभारत ,वनपर्थ 38-40
21. वही ,अनुशासन पर्व ,14
22. मंकडानेल, हिस्ट्री अव संस्कृत लिटरेचर , पृ. 155
23. ऋग्वेद 7.21.5.10.99.3.शिश्नेन दीव्यंति क्रीर्डान्त इति शिश्नदेवा अब्रहाार्चा इतर्थ :
24. वायु पुराण 4.41. ,देवेपु महान् देवो महादेवस्तत: महादेवस्तत: स्मृत : ।
25. स्कन्द पुराण 1.2.7.8.
26. वायु पुराण ,70.61.62
27. मत्स्य पुराण ,60.4
28. मत्स्य पुराण,188.6.1
29. इपि.ई.21.9
30. विक्रमोवंशी ,1.1
31. पाठक ,हिस्ट्री अव शैव कल्ट्स इन नार्दन इंडिया ,पृ.3
32. बॉसखेड़ा ताम्रपत्र ,परममाहेश्वरी माहेश्वर इव परमभट्टारक महाराजाधिराज श्री हर्ष : ।
33. बील , 2पृ.44-45
34. इपि.ई.21.पृ.48
35. वहीं पृ.44.
36. वहीं 2.पृ.18
37. वही .पृ.10
38. वही 21.पृ.149
39. वहीं पृ. 233
40. इंडि. ऐ.15 पृ.306
41. आर्केयोलाजिकल सर्वे अब इंडिया 2.1
42. इपि.ई.27.268-69
43. वही. 18पृ. 96
44. ग्यारहवीं सदी का भारत ,पृ.183-84
45. इपि.ई.19 पृ.175
46. वहीं .14 पृ. 159
47. वही ,31 पृ.138 .21पृ. 161.2 पृ.8 -11
48. वही 21 पृ.155
49. वही 3 पृ. 264

****

मुगल काल में बादशाह के विशेषाधिकार

प्रो. आकाश ताहिर *

प्रस्तावना – अपने अधिकार-क्षेत्र में बादशाह का अभिनय करना प्रत्येक सूबेदार की महत्वाकांक्षा थी। इसके सबसे बड़े अपराधी चार बड़े सूबेदार अथवा सीमान्त प्रदेशों के वाइसराय थे, इंग्लैंड के जागीरदारों के मार्चर अर्ल के सदृश दूसरे सूबों के सूबेदारों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली एवं प्रतिष्ठित थे। 1608 ई. से लेकर 1613 ई. तक बंगाल के गवर्नर ईस्लामखां चिश्ती के समय में यह दोष अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच चुका था। यह अत्यन्त अहंकारी एवं स्वेच्छाचारी व्यक्ति था। इसलिए जहांगीर ने अपने शासनकाल के छठवें वर्ष में कुछ प्रथाओं को बन्द करने के लिए एक आदेश प्रपत्र निकालना आवश्यक समझा। वाइसरायों (सूबेदारों) द्वारा इन प्रथाओं का अपनाया जाना बादशाह के विशेषाधिकारों का अपहरण घोषित किया गया।[1]

इन दोनों शासनकालों के सरकारी दस्तावेजों के आधार पर हमें 16 ऐसी बातें ज्ञात होती है जो कि सम्राटों के लिए विशेष रूप से सुरक्षित तथा प्रजा के लिए चाहे वह कितने ही उच्च पद पर क्यों न हो, निषिद्ध थी:

1. प्रात:काल प्रासाद के छज्जे से अपनी प्रजा को झरोखा दर्शन देना। इसे 'दर्शन' कहते थे। यह संस्कृत भाषा का शब्द है और इसका अर्थ है 'किसी मूर्ति अथवा यति का देखना'। सम्राट अकबर ने इस प्रथा का आरम्भ किया था। जैसा कि उसके दरबारी इतिहासज्ञ अबुल फजल ने लिखा है-
   'बादशाह सलामत साधारणतया चौबीस घंटे में दो बार दर्शन देते थे जबकि सभी वर्ग के लोग उसकी मुखाकृति के प्रकाश से अपने नेत्रों और हृदय को तृप्त कर सकते थे। सर्वप्रथम प्रात: काल की नमाज पढ़ने के पश्चात्, गदाधरों द्वारा बिना किसी अड़चन के, सभी वर्गों के लोगों के लिए, शामियाने के बाहर से वह दृष्टिगोचर होते थे।'[2]
2. चौकी तथा चौकी की तस्लीम अर्थात् अमीरों से अश्वारोहियों द्वारा राजमहल का पहरा दिलवाना तथा उस स्थान का रीत्यानुसार अभिवादन करवाना। अकबर ने इस प्रथा को चलाया था।[3]
3. प्रजा का कोई भी व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति से अपने समक्ष उसके हाथों अथवा ललाट से भूमि स्पर्श या तस्लीम तथा कोरनिश नहीं करवा सकता था।[4]
   तस्लीम अथवा दिल्ली के दरबार में प्रचलित सलाम करने का ढंग अकबर द्वारा प्रचलित किया गया था। तस्लीम में दाहिने हाथ को जमीन पर रखकर धीरे-धीरे, जब तक व्यक्ति सीधा खड़ा न हो जाय, उसे उपर उठाया जाता था और अपने मस्तक पर लगे हुए मुकुट पर रखना पड़ता था। इसका अभिप्राय यह होता था कि वह अपने आप को बादशाह को अर्पण करने के लिए तैयार है। अकबर का यह कथन है कि एक बार उसने अपने पिता को संयोगवश इसी ढंग से सलाम किया जिसका फल यह हुआ कि हुमायूं इससे इतना प्रसन्न हुआ कि उसने राजदरबार में इसी ढंग से सलाम करने की प्रणाली को अपनाने का आदेश दिया।[5]
4. कोई भी सूबेदार शाही दरबार की भांति नियमित रूप से अपने दरबार में उपस्थित होने के लिए गायकों एवं संगीतज्ञों को बाध्य नहीं कर सकता था। इस सम्बन्ध में अकबर द्वारा अपनायी गयी प्रथा का इस प्रकार वर्णन किया गया है:
   'सूर्योदय के लगभग तीन घंटे पूर्व सभी जाति के संगीतज्ञ एवं गायक दीवाने खास में सम्राट के सम्मुख उपस्थित होते थे। वे गीतों एवं धार्मिक छन्दों द्वारा श्रोताओं का मनोरंजन करते थे। जब सवेरा होने में केवल चार घड़ी शेष रह जाती थी, तो बादशाह सलामत अपने अन्त:पुर में चले जाते थे।
   'जब कभी भी बादशाह सलामत जनदरबार करते थे तो पुरूष और स्त्री गायक अपने प्रदर्शन की आज्ञा की प्रतीक्षा में रहते थे।[6]
   'दरबार के संगीतज्ञों की सप्ताह के प्रत्येक दिन के लिए सात टोलियां बना दी गयी थी। बादशाह सलामत का आदेश पाने पर वे अपने संगीत का प्रदर्शन आरम्भ कर देते थे।'[7]
5. यात्रा के अवसर पर प्रस्थान करते समय नक्कारे का बजाना। मनुची ने इस सम्बन्ध में शाही प्रथा का वर्णन इस प्रकार किया है:
   'जब वह (औरंगजेब) तख्तेरवां पर चढ़ता था और अपने खेमों से निकलता था तो युद्ध के सभी बाजे बजाये जाते थे।'[8]
   जब बादशाह दीवाने-खास में अपने सिंहासन पर बैठता था तो सभी लोगों को दरबार आरम्भ होने की सूचना देने के लिए 'दमदमा' बजाया जाता था।[9]
6. जब एक सूबेदार किसी को घोड़ा अथवा हाथी भेंट करता था तो वह उससे उसकी पीठ पर अंकुश लगाम रखवाकर अपने को प्रणाम नहीं करवा सकता था। यह केवल उसी समय किया जाता था जबकि सम्राट ही दाता होता था।
7. कोई भी सूबेदार अपने अधिकारियों को कोई भी उपाधि नहीं दे सकता था। उपाधि देने के शाही अधिकार की इतनी ईर्ष्या के साथ रक्षा की जाती थी कि अधीनस्थ राजकुमारों को भी अपनी प्रजा को किसी भी प्रकार की उपाधि प्रदान करने की आज्ञा नहीं थी। शाहजहां के शासनकाल में बीजापुर के मुहम्मद आदिलशाह से युद्ध करने का यही कारण था। उसने अपने निजी प्रधानमन्त्री के पद का सृजन कर दिल्ली के शहंशाह की धृष्टतापूर्वक बराबरी करने का दावा किया था। किन्तु बीजापुर से क्षमा याचना एवं अधीनता का पत्र मिलने पर यह युद्ध रोक दिया गया था।

* विभागाध्यक्ष (इतिहास) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

8. किसी भी अमीर को अपनी सैनिक गाड़ी के साथ किसी भी शाही अधिकारी को पैदल चलाने की आज्ञा नहीं थी। टैवर्नियर का कथन है कि–

   'जब बादशाह अपनी पालकी में बैठकर मस्जिद को जाता था तो उसके पुत्रों में से एक घोड़े पर सवार होकर तथा दूसरे राजकुमार और परिवार के अधिकारी पैदल उसके पीछे–पीछे चलते थे। शिकार से लौटने के पश्चात वह एक पालकी का प्रयोग करता था और उस समय भी उसी ढंग से वही रक्षक होते थे जैसा कि उसके मस्जिद जाने के समय हुआ करते थे।'[10]
9. शाही अधिकारियों को सम्बोधित पत्रों पर वायसरायों को अपनी मुहर को न लगाकर केवल अपने हस्ताक्षर करने की आज्ञा थी। पत्रों तथा दानलेखों अथवा नियुक्ति–पत्रों पर मुहर और पंजा लगाना केवल सम्राट का अधिकार था। कोई भी अधिकारी, चाहे वह कितने ही ऊंचे पद पर क्यों न हो, दूसरे अधिकारी को लिखे गये अपने पत्रों पर उनका प्रयोग नहीं कर सकता था। क्योंकि वे सब के सब सम्राट के समान रूप से अधीनस्थ होने के कारण समान श्रेणी के थे।
10. कोई भी वायसराय किसी भी अपराधी को अन्धा करने अथवा उसके नाक–कान काटने का दण्ड नहीं दे सकता था।

    चोरी तथा अन्य निश्चित अपराधों के लिए अंग–भंग का दण्ड वैधानिक था। यदि हत्या किये गये व्यक्ति के सम्बन्धी उसके रक्त–मूल्य को स्वीकार न कर हत्यारे के जीवन को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होते थे तो हत्या के लिए मृत्यु दण्ड ही दिया जाता था। कुरान के द्वारा किसी व्यक्ति की आंखें निकलवा देने अथवा उसकी नाक और कान कटवा लेने जैसे दण्ड निषिद्ध थे । किन्तु बादशाह कभी –कभी क्रोधावेश में अपने राजनीतिक शत्रुओं तथा प्रतिद्वन्दियों की आंखें निकलवा लेता था और साधारण अपराधियों के नाक और कान कटवा लेता था। फिर भी ये दण्ड न्यायिक न थे और प्रजा को इस प्रकार के अवैधानिक शक्ति के प्रयोग के विरूद्ध रोकना पड़ता था।
11. कोई भी सूबेदार किसी भी व्यक्ति को बलपूर्वक मुसलमान नहीं बना सकता था। इसमें कोई भी सन्देह नहीं कि युद्धबन्दी प्राय: अपनी इच्छा के विरूद्ध मुसलमान बनाये जाते थे। सम्राट के अनुरोध से इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेने पर कभी–कभी मृत्यु–दण्ड अथवा आजीवन कारावास प्राप्त व्यक्ति अपने जीवन और अपनी स्वतन्त्रता या विवादग्रस्त उत्तराधिकार के प्रश्न पर अपने स्वत्व का दावा करने वाले व्यक्ति अपने अधिकार को प्राप्त कर सकते थे। उससे निम्न श्रेणी के व्यक्ति को यह अधिकार प्राप्त न था।
12. हाथियों के युद्ध के लिए आदेश देना। यह दिल्ली के सम्राटों का अति ईर्ष्या के साथ सुरक्षित विशेषाधिकार था। अकबर के बाद के बहुत से सम्राट इस राजकीय मनोरंजन के बड़े ही शौकीन थे। उनके पुत्रों को यह रूचि पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिली थी। शाहआलम के सरहिन्द से अभियान के समय हस्तयुद्ध कराने की प्रबल इच्छा को रोकने में शाहआलम की असमर्थता और तत्पश्चात दोनों जानवरों के बीच हुए युद्ध को आकस्मिक घटना बताकर अपने पिता के क्रोध को शान्त करने का उसका यत्न एक मनोरंजन उदाहरण प्रस्तुत करता है।[11]
13. बर्नियर का कथन है कि शेर का शिकार भी एक विचित्र राजकीय मनोरंजन था 'क्योंकि विशेष आज्ञा के अतिरिक्त केवल बादशाह और शाहजादे ही ऐसे व्यक्ति थे जो इस खेल में सम्मिलित होते थे।' इसमें गधा शिकार फंसाने के लिए चारे का कार्य करता था। एक जालीदार घेरे के भीतर शेर घिरा हुआ रहता था जिसे सम्राट हाथी की पीठ पर चढ़कर मारता था।
14. कार्यालय अथवा दरबार के समय प्रजा के किसी भी व्यक्ति को कमरे की फर्श पर बिछी हुई दरी से अधिक उंचे किसी स्थान पर नहीं बैठना चाहिए। 1695 ई. के लगभग जब औरंगजेब को संवाद–लेखकों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि बंगाल का गवर्नर, इब्राहीमखां, अत्यंत वैभव और दर्प के कारण एक चारपाई पर बैठकर दरबार करता है और काजी तथा दूसरे धर्माधिकारी फर्श पर नम्रता के साथ बैठते हैं तो उसने तुरन्त ही गवर्नर के पास एक बड़ा पत्र भेजा और उससे कहा कि यदि वह किसी बीमारी के कारण भूमि पर बैठने में असमर्थ है तो उसे अपने चिकित्सकों को अपने को शीघ्र रोगमुक्त करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।[12]
15. जुमे की नमाज के लिए केवल सम्राट ही पालकी में बैठकर जामा मस्जिद को जा सकता था। औरंगजेब के शासनकाल के अन्तिम दिनों में गुजरात के वायसराय इब्राहीमखां की पालकी में बैठकर जामा मस्जिद जाने के विरूद्ध शिकायत की गयी थी। यद्यपि शाहजादे भी सम्राट की विशेष आज्ञा के बिना ऐसा नहीं कर सकते थे। औरंगजेब ने इस सूबेदार को पत्र लिखा कि तुम ऐसा कार्य क्यों करते हो जिससे संवाददाताओं को तुम्हारे विरूद्ध शिकायत करने का अवसर मिलता है।[13]
16. शरीर को सुवर्ण से तोलना भी राजकीय विशेषाधिकारों में से एक था, यद्यपि सम्राट ने कभी–कभी अपने प्रिय पुत्र को भी ऐसा करने की आज्ञा दे दी थी।[14]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. तुजुके जहांगीरी, पृ.100, बहरिस्तां, पृ. 103, इकबालनामा, पृ. 56, मीराते अहमदी, जिल्द 1, पृ. 190.
2. अहकामे आलमगीरी, अनुच्छेद 15.
3. आइने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 156.
4. आइने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 256.
5. आइने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 158.
6. आइने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 156–157.
7. स्टोरिया डु मोगोर, जिल्द, 2, पृ. 69.
8. आइने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 157.
9. टैवर्नियर, ट्रेवल्स इन इण्डिया, जिल्द 1, पृ. 390,392.
10. आइने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 52 तथा 263.
11. टैवर्नियर, ट्रेवल्स इन इण्डिया, जिल्द 1, पृ. 106.
12. हमीदुद्दीन कृत अहकाम, अनुच्छेद 64.
13. हमीदुद्दीन कृत अहकाम, अनुच्छेद 65.
14. अब्दुलहमीद कृत पादशाहनामा, जिल्द 2, पृ. 377,तुजुके जहांगीरी, पृ. 163.

****

प्रशासन का लोक कल्याणकारी स्वरुप - एक ऐतिहासिक अध्ययन

डॉ. बिंदिया महोबिया *

शोध सारांश – दीर्घ स्वाधीनता आंदोलन व अनगिनत शाहदतो के पश्चात् भारत ने स्वयं की स्थिति को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से लोकतांत्रिक शासन प्रणाली को स्थापित किया। इस प्रणाली ने भारत के नागरिको को स्वयं अपने देश के विकास की राह चुनने का अधिकार प्रदान किया। सदियो से पीड़ित शोषित देश में नवचेतना का संचार करने व देश के चहुमंखी सर्वांगीण विकास के लिए एक ऐसी प्रशासनिक प्रणाली या तंत्र की आवश्यकता थी, जो लोक कल्याण की भावना से कार्य करें। अत: हमारे संविधान निर्माताओं ने संविधान की प्रस्तावना में ही स्पष्ट कर दिया कि भारत का विकास जनकल्याण पर ही आधारित होगा।

प्रस्तावना – लोक कल्याण भारत के लिये कोई नई परिकल्पना या नवीन विचार नहीं था। गांधी जी ने स्वाधीनता से पूर्व जिस राम राज्य की कल्पना भारत में की थी वास्तव में उनका आशय एक ऐसे राज से था जिसमें लोककल्याण की भावना प्रबल हो। वस्तुत: भारत में लोक कल्याण की भावना की जड़े प्राचीन समय से ही दृष्टिगत है।शासन का स्वरूप चाहे राजतंत्र, गणतंत्र, सैनिक व धार्मिक किसी भी प्रकार का रहा हो, अधिकांश शक्तिशाली शासकों में जन कल्याण को नगण्य नहीं माना व अपने प्रशासन को लोक कल्याण पर केंद्रित किया। प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय इतिहास के तीनो काल, प्राचीन मध्य एवं आधुनिक काल के संदर्भ में प्रशासन में विद्यमान लोककल्याणकारी तत्वों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

प्राचीन काल के संदर्भ में – हडप्पा संस्कृति से संबद्ध विभिन्न स्थलों पर एक जैसी नगर निर्माण योजना, एक ही तरह की लिपि, मापतौल की सुनियोजित विधि, मुहरो के चलन से प्रतीत होता है कि हडप्पा युगीन समस्त नगर एक प्रशासनिक सूत्र में बंधे हुऐ थे। पाश्चात्य विद्वान हंटर ने अनुमान व्यक्त किया है कि सिंधुघाटी की प्रशासनिक व्यवस्था जनतांत्रिक पद्धति पर आधृत थी। मैके ने भी यहां प्रतिनिधि शासक के शासन की बात की। नगर निर्माण योजना, नगरो की स्वच्छता, मापतौल, व्यापार वाणिज्य की उचित सुविधा स्पष्टता नगरों में नगरपालिका जैसे संस्था की ओर संकेत करती है।

पूर्व वैदिक काल में आर्यो का राजनैतिक संगठन व प्रशासनिक व्यवस्था शिशु अवस्था में थी। यद्यपि शासन का प्रधान राजा था। उसका चुनाव, पद का वंशानुगत नहीं होना, जनतांत्रिक संस्थाओं सभा, समिति विदय द्वारा राजा की निरंकुशता पर नियंत्रण, शासन के जनतांत्रिक स्वरूप को स्पष्ट करता है। उत्तर वैदिक काल में राजा के अधिकारों व शक्ति में वृद्धि हुई परंतु व्यवहार में पूर्वानुसार उसके अधिकारी पर अंकुश विद्यमान थे। अथर्ववेद के कुछ सूक्तों से पता चलता है कि राजा जनता की भक्ति और समर्थन प्राप्त करने के लिये सदैव लालयित रहते थे।

छठी शताब्दी से चौथी शताब्दी ई.पू. के मध्य भारत में सोलह महाजनपदों का उदय महत्वपूर्ण घटना थी। कबिलाई राज्यों की जगह क्षेत्रीय राज्य स्थापित करने की प्रवृत्ति का जन्म हुआ। अधिकांश महाजनपद राजतंत्रीय व्यवस्था द्वारा प्रशासित थे, किंतु कुछ राज्यों में गणतंत्रीय शासन व्यवस्था विद्यमान थी। जनता द्वारा राजा का चुनाव, उसे पद से बदलने का अधिकार, न्यायिक सुरक्षा व व्यक्तिगत स्वतंत्रता की कोई राजा अवहेलना नहीं करता था। अत: स्पष्ट रूप से लोकहित को राज्य का कर्तव्य माना गया। 16 महाजनपदों में सर्वाधिक विकसित राज्य के रूप में मगध राज्य स्थापित हुआ। जिसमें क्रमश: तर्यक वंश, शिशुनामवंश, और नंद वंश के राजाओं ने शासन किया।

मगध साम्राज्य की महत्ता केन्द्र वास्तविक संस्थापक तर्यक वंश के राजा बिम्बिसार ने विस्तारवादी नीति का अनुसरण किया। साथ ही वह एक कुशल शासक भी था। उसने अपने साम्राज्य में एक संगठित व सुदृढ़ शासन व्यवस्था की नींव डाली। वह स्वयं शासन की विविध समस्याओं में व्यक्तिगत रूचि लेता था। महावग्ग जातक में कहा गया कि उसकी राजसभा में 80 हजार ग्रामों के प्रतिनिधि भाग लेते थे। नंद राजाओं के समय में मगध राजनैतिक दृष्टि से अत्यंत शक्तिशाली तथा आर्थिक दृष्टि से अत्यंत समृद्धशाली साम्राज्य बन गया था। लेकिन इसी वंश के अंतिम शासक धननंद से राज्य की प्रजा घृणा करती थी। उसने अपने शासनकाल में जनमत की ओर उपेक्षा की तथा अपने समय के प्रतिष्ठित आचार्य चाणक्य को अपमानित किया। जिसके परिणामस्वरूप चाणक्य व चंद्रगुप्त मौर्य ने नंद वंश का अंतकर विशाल मौर्य साम्राज्य स्थापित किया।

मौर्य शासकों ने न सिर्फ एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की बल्कि इसे स्थायित्व प्रदान करने के लिये सुदृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था भी कायम की। मौर्य साम्राज्य के संस्थापक चंद्रगुप्त यद्यपि एक निरंकुश शासक था तथापि उसके प्रशासन का मुख्य उद्देश्य इसे लोकहितकारी बनाना था। इस उद्देश्य से उसने अनेक उपाय किये। यातायात की सुविधा के लिये विशाल राजमार्गो का निर्माण किया गया। पष्चिमी भारत में सिंचाई की सुविधा के लिये चंद्रगुप्त के सुराख प्रांत के राज्यपाल पुष्पगुप्त वैश्य ने सुदर्शन नामक इतिहास प्रसिद्ध झील का निर्माण करवाया था। इससे नहरे निकालकर सिंचाई की जाती थी। अशोक के समय में उसके राज्यपाल तुशास्प ने इसकी उपयोगिता बढ़ाने हेतू झील से पानी के निकास के लिये मार्ग बनवाये। इसके अतिरिक्त नागरिकों के स्वास्थ्य एवं शिक्षा के लिये अनेक औषधालयों तथा विद्यालयों की स्थापना राज्य की ओर से करवायी। चंद्रगुप्त मौर्य की सरकार के विषय में धारणा पितृपरक थी। स्वयं निरंकुश होते हुये भी व्यवहार में वह धर्म, लोकचार तथा न्याय के अनुसार ही शासन करता था। चंद्रगुप्त मौर्य का शासन

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, जिला छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

आदर्श अर्थशास्त्र की इन पंक्तियों में स्पष्टत: प्रकट होता है – प्रजा के सुख में राजा का सुख निहित है, प्रजा के हित में उसका हित है। अपना प्रिय करने में राजा का हित नहीं होता बल्कि जो प्रजा के लिये हो, उसे करने में राजा का हित होता है। इस प्रकार चंद्रगुप्त मौर्य की शासन व्यवस्था ने एक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को चरितार्थ किया।

इसी तरह सिद्धांत निरंकुश एवं सर्वशक्ति संपन्न होते हुये भी अशोक भी एक प्रजा वत्सल सम्राट था। अपने छठे शिलालेख में अशोक अपनी इस भावना को व्यक्त करते हुये कहता है – सर्वलोकहित मेरा कर्तव्य है, ऐसा मेरा मत है, सर्वलोकहित से बढ़कर दूसरा काम नहीं है। मैं जो कुछ भी पराक्रम करता हूँ वह इसलिए कि भूतों के ऋण से मुक्त हो जाऊ मैं उनको इस लोक में सुखी बनाऊ और वे दूसरे लोक में स्वर्ग प्राप्त कर सके। उल्लेखनीय है अशोक राजा के प्रति प्रजा ऋण की बात करता है जो केवल प्रजा की भलाई करके ही चुकाया जा सकता है। यह कल्पना सर्वथा नवीन एवं मौलिक थी। उसने अपने प्रथम शिलालेख में (प्रजा) सभी मनुष्यों को अपनी संतान कहा ।उसने अपने साम्राज्य में प्रतिवेदक नियुक्त किये और उन्हें आदेश दिया कि वह किसी भी समय उसे प्रजा के कार्य की सूचना दे। क्योंकि मैं सर्वत्र जनता का कार्य करता हूँ। शिरनार लेख से पता चलता है कि अशोक ने अपने साम्राज्य के प्रत्येक भाग में मनुष्यों तथा पशुओं के लिये अलग-अलग चिकित्सालयों की स्थापना करवायी। जो औषधियाँ देश में प्राप्त नहीं थी उन्हें बाहर से मंगवाकर आरोपित करवाया गया।

इस प्रकार मौर्य शासक जनहित के प्रति अत्यंत प्रबुद्ध थे। यही कारण है कि इतने विशाल साम्राज्य में ये सम्राट जीवन पर्यन्त शांति व सुव्यवस्था बनाये रखने में सफल हुये तथा प्रजा के प्रिय पात्र बने रहे।

मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् गुप्त राजाओं ने राजनैतिक एकता स्थापित कर पुन: एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की। प्रतिभावान गुप्त नरेशों ने जिस शासन व्यवस्था का निर्माण किया वह न केवल प्राचीन अपितु आधुनिक युग के लिये भी आदर्श की वस्तु कही जा सकती है। यह व्यवस्था प्रत्येक दृष्टि से उदार एवं लोकोपकारी थी। संपूर्ण गुप्त साम्राज्य में भौतिक एवं नैतिक समृद्धि का वातावरण था। शांति एवं व्यवस्था का राज्य था जहां आवागमन पूर्णतया सुरक्षित था। फाहियान जैसे चीनी यात्री को भी इस संबंध में किसी प्रकार की शिकायत का अवसर नहीं मिला। वह गुप्त शासन की उच्च शब्दों में प्रशंसा करता है। गुप्त नरेशों ने प्राचीन भारतीय दण्ड व्यवस्था के कड़े नियमों को उदार तथा मृदु बना दिया और मृत्युदण्ड को पूर्णतया समाप्त कर दिया। इसके बाद भी अपराध नहीं होते थे। स्कंदगुप्तकालीन जूनागढ़ अभिलेख से पता चलता है कि उस समय कोई भी व्यक्ति दु:खी, दरिद्र, व्यसनी, लोभी अथवा पीड़ित नहीं था।

सम्राट निरंतर अपनी प्रजा के जन जीवन को सुखी एवं सुविधापूर्वक बनाने के लिये चिन्तित रहते थे। गुप्त शासन के अनेक तत्व आधुनिक प्रजातंत्रात्मक शासन में भी देखे जा सकते है। ऐसी उत्कृष्ट शासन व्यवस्था इतिहास के अन्य किसी युग में दिखाई नहीं देती।

गुप्तों के पतन के पश्चात् सातवीं शताब्दी में उत्तरी भारत का एक शक्तिशाली सम्राट हर्षवर्द्धन हुआ जिसने पुन: उत्तर भारत में राजनीतिक एकता स्थापित करने का प्रयास किया। उसके प्रशासन का उद्देश्य लोकहित था। चीनी यात्री ह्वेनसांग इसकी प्रशंसा करते हुये लिखता है कि सरकारी मांगे कम थी। परिवारों के पंजीकरण की न तो आवश्यकता थी और न जबरदस्ती बेगार ही लिये जाते थे। कर बहुत हल्के हो, प्रशासन ईमानदार था सभी लोग आपस में मिलकर रहते थे। सम्राट जनहित के कार्यों में पूरी रूचि लेता था। उसने आवागमन की सुविधा हेतू सड़को का निर्माण उनकी सुरक्षा व्यवस्था, सैत्यों, बिहारी, मंदिरो तथा सरायों का निर्माण करवाया। शिक्षा साहित्य के विकास के लिये विद्धानों को दान दिये उन्हें पुरूस्कृत किया। शिक्षा संस्थाओं, ब्राम्हणों, गरीबों को दान दिये गये। नालंदा विश्वविद्यालय भी उसके दान से लाभान्वित हुआ।

प्रशासन में लोककल्याणकारी तत्व – मध्यकालीन भारतीय इतिहास के संदर्भ में – ग्यारहवी, बारहवी शताब्दी में तुर्को की भारत विजय में अंतत: तेरहवी शती के आरंभ (1206 ई.) में भारत में तुर्की राज्य या दिल्ली सल्तनत की स्थापना का मार्ग प्रशस्त कर दिया। सल्तनतकालीन शासको ने यद्यपि निरंकुश राजसत्ता स्थापित की। तथापि शासन को स्थायित्व प्रदान करने के लिये जनहित के महत्व को भी स्वीकार किया। बलबन (1266-87) ने अपनी सत्ता एवं प्रभाव को कायम करने के लिये आतंकवाद का सहारा लिया, अपने विरोधियों को निर्दयतापूर्वक कुचल दिया परंतु जनता के प्रति उसने उदार दृष्टिकोण अपनाया उसे जनहित और उचित न्याय को राजा का प्रमुख कर्तव्य माना।

इल्बरी तुर्को के पश्चात् दिल्ली मे खिलजी साम्राज्य की स्थापना हुई। खिलजी वंश के शासको में अलाउद्दीन खिलजी (1296-1316 ई) सबसे महान शासक था। उसने अपनी कुशलता एवं दृढइच्छाशक्ति से सल्तनत की आधारशिला मजबूत की। उसने सल्तनत को ठोस प्रशासनिक व्यवस्था प्रदान की। वह दिल्ली का पहला सुल्तान था जिसने आर्थिक सुधारों में रूचि ली। उसकी बाजार एवं मुख्य नियंत्रण नीति इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। यद्यपि इसका सर्वाधिक लाभ सैनिक वर्ग को प्राप्त हुआ।

तुगलक वंश के फिरोज तुगलक (1351-1388 ई.) के कार्यो को भी जनहित से प्रेरित माना जाता है। दलायु प्रवृत्ति का होने के कारण उसने जनकल्याण के लिये अनेक कार्य किये। बेरोजगारों को रोजगार देने के लिये दिल्ली में एक रोजगार दफ्तर खुलवाया जिसमें उनका पंजीकरण किया जाता था। दासों की देखभाल के लिये एक अलग विभाग खोला गया। दीवान-ए-खैरात विभाग की स्थापना कर अनाथों, विधवाओं, और गरीबों के भरण पोषण एवं उनकी देखभाल का कार्य किया। रोगियों की चिकित्सा के लिये दिल्ली में 'दार-उल-शफा' अथवा खैराती दवाखाना खोला गया।

लोदी वंश (1451-1526 ई) के शासक सिकंदर लोदी को भी प्रजा वत्सल शासक माना जाता है। उसने निष्पक्ष एवं शीघ्र न्याय की व्यवस्था की। राज्य की ओर से गरीब जनता के लिये भोजन बांटा जाता था, वृत्तियां बांटी गई, कुछ सामाजिक, कुप्रथाओं जैसे बहराईच के जुलूसों, स्त्रियों के मकबरे पर जाने तथा शीतला की पूजा पर प्रतिबंध लगा दिया।

पानीपत के प्रथम युद्ध (1526 ई.) में विजय होकर बाबर ने भारत में मुगल सत्ता की स्थापना की, बाबर द्वारा स्थापित साम्राज्य को अकबर (1556-1605 ई.) ने स्थायित्व प्रदान किया। अपने व्यापक राष्ट्रीय दृष्टिकोण तथा समन्वित संस्कृति के प्रयास के कारण अकबर को एक महान सम्राट के रूप में जाना जाता है। औरंगजेब की छोड़कर शेष मुगल सम्राटों की धार्मिक, राजपूत राजस्व तथा सांस्कृतिक नीतियाँ उनकी दिनचर्या तथा दान धर्म के व्यापक कार्यो को देखते हुये मुगल राज्य को कल्याणकारी शासन कहा गया है। गरीब, लाचार व्यक्तियों के लिये मुगल सम्राटो ने सूरत, अहमदाबाद, बुरहानपुर तथा अन्य स्थानों पर मुफ्त भोजन हेतू लंगर खाना खोले। गरीबों और विधवाओं को नगद धन दान देने शिक्षण संस्थाओं और विद्धानों के लिये दिये जाने वाले अनुदानों के भी पर्याप्त उदाहरण है। कृषि की उन्नति, किसानों के लाभ तथा उत्पादन में वृद्धि के लिये मुगल सम्राट काफी

सक्रिय थे। अधिकतर मुगल सम्राट न्याय के प्रति जागरूक थे। आम लोगों की शिकायत पर राज्य के अधिकारियों को दण्डित किये जाने के भी उदाहरण है।

मुगल सम्राटों ने अपनी सांस्कृतिक और प्रशासनिक उपलब्धियों द्वारा साम्राज्य को रचनात्मक दिशा, स्थायित्व एवं गौरव प्रदान किया। स्थापत्य कला (भवन निर्माण) संगीत, चित्रकला, भाषा साहित्य के क्षेत्रों में मुगलों ने जो गौरवशाली योगदान दिया वह आज भी भारत की सांस्कृतिक धरोहर है।

इस आधार पर सीमित अर्थों में अवश्य मुगल राज्य को कल्याणकारी राज्य कहा जा सकता है।

लोककल्याणकारी तत्व - आधुनिक काल के संदर्भ में - 1757 ई द से 1857 ई. के मध्य ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में एक प्रशासनिक ढांचे का विकास कर लिया था। क्लाईव, हेस्टिंग्स, कार्नवालिस, बेंटिक और डलहौजी के प्रयासों के फलस्वरूप कंपनी का प्रशासन सुसंगठित हो चुका था। उनका प्रशासन मुख्यत: नागरिक सेवा, सेना और पुलिस बल पर आधृत था। कंपनी ने कानून व्यवस्था बनाये रखने पर विशेष बल दिया जिससे कि उसका व्यापार अबाध गति से चलता रहे और भारत में अंग्रेजी सत्ता का प्रभाव भी बना रहे। 1857ई. की क्रांति के पश्चात् प्रशासनिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये। रूढ़िवादी विचारधारा वाले अंग्रेज भारत में कम से कम परिवर्तन लाना चाहते थे लेकिन नये दृष्टिकोण वाले 'यरेडिकल्स' विकसित मानवतावादी और विवेकशील चिंतन को भारतीय स्थिति पर लागू करने का प्रयत्न किया। धीरे-धीरे अंग्रेज अधिकारियों को यह बात समझ में आने लगी कि भारत के आधुनिकीकरण के बिना ब्रिटिश हितों की सुरक्षा पूरी तरह से नहीं हो सकती इसलिये बैंटिक और डलहौजी ने शिक्षा एवं संचार तथा परिवहन के साधनों के विकास के साथ-साथ समाज की रूढ़िवादिता को भी हटाने का प्रयास किया। इस दृष्टि से कुल गवर्नर जनरल के कार्यों को उल्लेखित किया जा सकता है।

वॉरेन हेस्टिंग्स (1722-85ई.) में बंगाल में शांति सुव्यवस्था हेतु छापामार सन्यासियों के दल का दमन किया। प्रत्येक जिले में एक पुलिस अधिकारी नियुक्त किया। सार्वजनिक हित में विवाह पर लगाये जाने वाले कर को समाप्त करवा दिया। दास बनाने के लिये बच्चों को चुराने की प्रथा पर पाबंदी लगा दी। लार्ड विलियम बेंटिक (1928-35) का अधिकांश समय भारत में सुधारवादी कार्यों में व्यतीत हुआ। प्रशासन, लगान, पुलिस, न्याय, आर्थिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार किये गये। सर्वाधिक महत्वपूर्ण सती प्रथा की समाप्ति, बाल वध निषेध, नरबलिप्रथा का अंत, दागी का दमन, दास प्रथा का अंत उल्लेखनीय है। जनहित के लिये बेंटिक ने सिंचाई हेतू नहरे बनवाई, सड़कों की मरम्मत, नवीन सिक्के चलवाये आदि।

लार्ड रिवन (1880-84) ने वास्तविक रूप से भारतीयों को अंग्रेजों के समान स्तर पर लाने का प्रयास किया व शैक्षणिक, आर्थिक सुधार किय। स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं का विकास कर उसने भारतीयों को राजनीतिक एवं प्रशासनिक शिक्षा दी। न्याय क्षेत्र में व्याप्त भेदभाव को दूर करने के लिये इल्बर्ट बिल पास कराने का असफल प्रयास किया। जनहित में प्रथम फैक्ट्री कानून (1881 ई) उल्लेखनीय है।

लार्ड कर्जन (1899-1905) ने यद्यपि साम्राज्यवादी भावनाओं से प्रेरित होकर अनेक सुधार किये फिर भी इसका प्रचार या परोक्ष लाभ भारत को प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र में उद्योग धंधो व यातायात के साधनों का तीव्रता से विकास, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का आरंभ, प्राचीन स्मारकों की सुरक्षा का अधिनियम 1900 ई. का पंजाब भूमि हस्तांतरण अधिनियम महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष - अंतत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि स्वाधीनता के पश्चात् भारत ने लोक कल्याण अथवा लोकहित को सर्वोपरि मानकर ही लोकतांत्रिक गणतंत्रीय शासन प्रणाली को अपनाया। स्वाधीनता से वर्तमान तक भारतीय नागरिकों के हितों को अनेक प्रशासनिक, राजनीतिक उतार चढ़ाव के बावजूद सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है। और जिन भी राजनीतिक दलों अथवा सरकारों ने इसे गौण समझा जनता ने अपने अधिकार का प्रयोग कर उन्हें स्मरण करा दिया कि भारत के शासन के संदर्भ में लोकहित सदैव उच्च स्थान पर होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. के. सी. श्रीवास्तव - प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति।
2. राधाकृष्ण चौधरी - प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास
3. टीच योर सैल्फ हिस्ट्री-कमलेष्वर प्रसाद, भारत का इतिहास (आदिकाल से 1206 ई.)
4. कमलेश्वर प्रसाद - भारत का इतिहास (1206- 1536 ए.डी.)
5. कमलेश्वर प्रसाद - भारत का इतिहास (1536 ए.डी. से 1757 ए.डी.)
6. डॉ. बालकृष्ण पंजाबी - भारत का इतिहास (1206-1761)
7. विद्याधर महाजन - आधुनिक भारत का इतिहास (1707 से आज तक)
8. कमलेश्वर प्रसाद - भारत का इतिहास (1757-1950 ए.डी.)
9. बी.के. श्रीवास्तव - इतिहास (1858-1919 ई.) (1920-1950 ई.)
10. यशपाल एवं ग्रीवर - आधुनिक भारत का इतिहास

****

गोंड जनजाति एवं धार्मिक परंपराएँ (छिन्दवाड़ा जिले के विशेष संदर्भ में)

धनाराम उइके *

शोध सारांश – गोंड जनजाति भारत की प्रमुख जनजाति है। गोंड जनजाति का निवास मुख्यत: मध्यप्रदेश में सबसे अधिक है। मध्यप्रदेश के अलावा महाराष्ट्र, आंधप्रदेश, बिहार, उड़ीसा, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, गुजरात, उत्तरप्रदेश में पायी जाती है। मध्यप्रदेश के विंध्य पर्वत श्रृंखला, सतपुड़ा क्षेत्र तथा नर्मदा नदी के किनारे के घने जंगलों व पहाड़ों में इनके प्रमुख निवास क्षेत्र हैं। इसी तरह छिन्दवाड़ा जिला भी एक जनजातीय बहुल जिला है। जिले के 11 विकासखण्डों में से बिछुआ, तामिया, हर्रई, जुन्नारदेव चार विकासखण्ड आदिवासी वर्ग के हैं। छिन्दवाड़ा की कुल जनसंख्या 1,849,283 में से 6,41,421 जनजातियों की है जो कि जिला की कुल जनसंख्या का 34.68 प्रतिशत है। जिले की तीन सबसे बड़ी जनजातियों में गोंड़ (5,30,485), मवासी (66,420) एवं भारिया, भूमिया आदि (20,890) शामिल है। [1]

जनजातीय जनजीवन प्रकृति पर आश्रित होता है। इसलिए प्रकृति से उसका रिश्ता हमेशा प्रगाढ़ रहा है। प्रकृति के सारे उत्पादन, जैसे – वृक्ष, पशु, पक्षी, सर्प, केकड़े आदि जीव–जन्तु उसके गोत्र देवता है। गोड़ जनजाति का धार्मिक विश्वास भी प्रकृति से उत्पन्न है। उनके देवता मुख्यत: प्रकृति से संबंधित हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जीवन पथ पर चलते हुए गोंड़ जनजाति ने आवश्कतानुसार देवी–देवताओं को गढ़ा एवं स्वयं को सुरक्षित महसूस किया। गोंड़ जनजाति में प्रकृतिवाद के साथ–साथ बहुदेवतावाद भी देखने को मिलता है।

शब्द कुंजी– जनजाति, बहुदेववाद, प्रकृतिवाद, देवखलना, परम्परा ।

प्रस्तावना – गोंड जनजाति भारत की प्रमुख जनजाति है। गोंड जनजाति का निवास मुख्यत: मध्यप्रदेश में सबसे अधिक है। मध्यप्रदेश के अलावा महाराष्ट्र, आंधप्रदेश, बिहार, उड़ीसा, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, गुजरात, उत्तरप्रदेश में पायी जाती है। मध्यप्रदेशके विंध्य पर्वत श्रृंखला, सतपुड़ा क्षेत्र तथा नर्मदा नदी के किनारे के घने जंगलों व पहाड़ों में इनके प्रमुख निवास क्षेत्र हैं। इसी तरह छिन्दवाड़ा जिला भी एक जनजातीय बहुल जिला है। जिले के 11 विकासखण्डों में से बिछुआ, तामिया, हर्रई, जुन्नारदेव चार विकासखण्ड आदिवासी वर्ग के हैं। छिन्दवाड़ा की कुल जनसंख्या 1,849,283 में से 6,41,421 जनजातियों की है जो कि जिला की कुल जनसंख्या का 34.68 प्रतिशत है। जिले की तीन सबसे बड़ी जनजातियों में गोंड़ (5,30,485), मवासी (66,420) एवं भारिया, भूमिया आदि (20,890) शामिल है। [1]

जनजातीय जनजीवन प्रकृति पर आश्रित होता है। इसलिए प्रकृति से उसका रिश्ता हमेशा प्रगाढ़ रहा है। प्रकृति के सारे उत्पादन, जैसे – वृक्ष, पशु, पक्षी, सर्प, केकड़े आदि जीव–जन्तु उसके गोत्र देवता है। गोड़ जनजाति का धार्मिक विश्वास भी प्रकृति से उत्पन्न है। उनके देवता मुख्यत: प्रकृति से संबंधित हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जीवन पथ पर चलते हुए गोंड़ जनजाति ने आवश्यकतानुसार देवी–देवताओं को गढ़ा एवं स्वयं को सुरक्षित महसूस किया। गोंड़ जनजाति में प्रकृतिवाद के साथ–साथ बहुदेवतावाद भी देखने को मिलता है।

परिभाषिक शब्दावली – जनजाति, बहुदेववाद, प्रकृतिवाद, देवखलना, परम्परा ।

शोध पत्र का उद्देश्य – गोंड़ जनजाति उन प्रमुख जनजातियों में से एक है जो अपनी सांस्कृतिक परंपराओं को लेकर सजग है। विकास पथ पर अग्रसर होते हुए भी अपनी संस्कृति को सहेज कर रखा है और समक्ष आने वाली चुनौतियों को स्वीकार किया हैं। गोंड़ जनजाति के धर्म को लेकर बात उठी तो बहुतेरे लोग इन्हें हिन्दु धर्मावलम्बी मानते हैं। पादरी फुक्स ने भी उन्हें हिन्दु सिद्ध करने की कोशिश की है। डॉ. बेरियर एलविन ने भी एक स्थान पर लिखा है कि –'भारतीय महाद्वीप में बसने वाले परिवार में अरण्यवासी जातियों का धर्म–हिन्दु धर्म ही है। स्वयं हिन्दु धर्म में भी ऐसे बहुत से तत्व हैं, जिन्हें विज्ञानवादी प्रेतवादी कहेंगे। इस लिए जनगणना में आदिवासी जातियों को आरम्भ से ही हिन्दु लिखाना चाहिए था ।'

राजनीतिक जागरूकता के कारण छिन्दवाड़ा जिला एवं आसपास के जिलों में एक आन्दोलन चला जिसमें गोंड़ जनजाति का धर्म'हिन्दु धर्म' न मानकर'गोंड़ी धर्म'मानने के लिए प्रेरित किया गया। हिन्दुओं के अभिवादन 'राम–राम' नमस्कार आदि को न मानकर गोंड़ आपस में मिलते समय 'जय सेवा' अभिवादन का प्रयोग करेंगे। गोंड़ जनजाति की यह प्रतिक्रिया सामान्य है अथवा पर–संस्कृतिकरण फलस्वरूप आर्य संस्कृति का जनजातीय संस्कृति पर श्रेष्ठता के दबाब का परिणाम है। गोंड़ जनजाति से संबंधित कोई धार्मिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं, धार्मिक परम्पराएँ पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित हुई हैं। इस क्रम में अनेक देवी–देवता का अर्विभाव हुआ है या जोड़े भी गये हैं और समय के साथ विलुप्त हुए हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र में गोंड़ जनजाति की धार्मिक परम्परा का अध्ययन, उनके विभिन्न देवी–देवताओं की उत्पत्ति, दैनिक जीवन में महत्ता, बहुदेववाद एवं हिन्दु देवी–देवताओं को अपनाए जाने का अध्ययन किया गया है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र मूलत: द्वितीयक स्त्रोतों का अध्ययन कर विश्लेषण पर आधारित है। साथ ही क्षेत्र का भ्रमण कर देवी–देवताओं की जानकारी संकलित की गई है। शोध को पुष्ट करने हेतु साक्षात्कार विधि का भी सहारा लिया गया है।

गोंड़ जनजाति की धार्मिक मान्यताएँ – हर समाज की अपनी–अपनी मान्यतायें होती है। किसी की निंदा करना या किसी पर अपनी विचार धारा लादना ठीक नहीं। सबकी मान्यताओं का आदर करना चाहिये। गोड़ों के देवधामी को 'मिथ्या विश्वास' कहकर एक लहजा में तिरस्कृत नहीं करना

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) शासकीय पेंचव्हेली स्नातकोत्तर महाविद्यालय, परासिया, जिला छिन्दवाड़ा(म.प्र.) भारत

चाहिये। उनके देवधामी ने अनादिकाल से लाखों गोंड़ो को विपत्ति में सम्बल दिया है, सम्पत्ति में आनंद दिया है, चिंता से मुक्ति दी है, मृत्यु के समय सान्त्वना दी है।

गोंड़ देवता दो प्रकार के होते है। कुछ दयालु, कुछ कर्कश। दयालु देवताओं की आराधना में शुक्रिया अदा करना यथेष्ट होता है। कर्कश देवताओं की आराधना में अनिष्ट का भय रहता है। कर्कश देवताओं के प्रति भक्ति नहीं रहती। भय रहता है। कर्कश देवधामियों का वही रूप माना जाता है जो रूद्र शब्द से जाना जाता है। उनको चाहे भयंकर देवता कहें, चाले रूलाने वाले देवता कहें, भय की प्रधानता तो है ही। भय भी एक प्रकार की भक्ति है। भय के कारण ही मनुष्य खराब कृत्य से तथा अनीति से बचता रहता है। अच्छे लोग अपने को धर्म भीरू कहने में गौरव का अनुभव करते है। कर्कश देवताओं को शान्त रखने के लिये बलिदान की कुर्बानी की आवश्यकता होती है। गोंड़ो की परम्परा के अनुसार बलिदान के साथ शराब भी आवश्यक है।

प्रकृतिवाद – गोंड़ जनजाति प्रकृति का अपार शाक्तियों की पूजक हैं – चाँद, सूरज, धरती, बादल, बिजली, नदी, झरने, पहाड़, जंगल तथा फसलों का पूजन बड़ी आस्था से करते हैं।[2] उनका दैनिक जीवन इन्हीं के साथ–साथ चलता है। वे प्रकृति के हर अंगों में देवी या आसुरी शक्ति मानकर उनको देवता मानकर उन पर विश्वास करने लगते हैं।

बहुदेवतावाद – गोंड़ एक ईश्वर को मानते हैं, तथा उस एक ईश्वर के छोटे–मोटे पदाधिकारियों को भी देवता के रूप में मानते हैं। इस प्रकार उसका बहुदेवतावाद बनता है। गोंड़ों का मुख्य देवता बड़ादेव या महादेव है। उनके दूत या सहयोगी या मातहत हैं, जिनको उनकी योग्यतानुसार कार्य सौंपे गये हैं। ये अनुचर देवता लोग अपना अलग–अलग रूप रखते हैं वे समाज को आने वाली विपत्तियों का संकेत देते हैं तथा उचित पूजा प्राप्त करके विपत्तियों को मान लेते हैं। उनकी सब उपलब्धियों और सब हानियाँ प्रकृति की अनुकूलता और प्रतिकूलता पर निर्भर रहती है। पादरी फुक्स ने गोंड़ों के और भूमियों के द्वारा पूजे जाने वाले देवताओं का वर्णन करके उनका बहुदेवतावाद स्थापित किया है।राम भरोस अग्रवाल[3] ने गोंड़ देवताओं को दो भागों में बांटा है। एक भाग वह जिसे सब गोंड़ मानते हैं। जैसे बड़ादेव, ठाकुरदेव, निंगादेव, नारायणदेव दूसरा भाग वह जिनको खास कुटुम्ब वाले ही मानते हैं। अन्य गोंड़ों के लिए उनका पूजना आवष्यक नहीं।

गोंड़ जनजाति के देवी–देवता –

गोंड़ जनजाति में किसी विशेष धर्म की अवधारणा नहीं है और न ही ईश्वर के अस्तित्व के बारे में मान्यता स्पष्ट है, परन्तु वे प्रबल आस्तिक होते है और अपने पारम्परिक देवी–देवताओं पर अटूट आस्था रखते है। कभी–कभी इसी अनुक्रम में मनगढ़ंत देवी–देवताओं का सृजन भी कर लेते हैं। MR. Tawney ने 1881 प्रोविसियल सेंसस रिपोर्ट में गोंड़ जनजाति के धर्म को इस प्रकार उद्धत किया है –

"The Worship of the Gonds may be summarised as being that of the gods presiding over the village destinies, the supposed powers of evil, the spirits of their fathers, and the weapons and creatures of the chase. The village gods are nearly all common property of the Gonds and low Hindus, and Gererally consist of one or more stones placed at convenient distance from the village, under the shade of some appropriate tree. In almost every house there is a ready reference set of gods in bulk Chhota Deo, and individually sometimes going by the same names as those worshipped and special occasions at the Deo-Khalla, or God's threshing floor (fo which there are from 10 to 20 in the district, and sometimes bearing special names, such as Dhan Thankur, Dhan Gopal, Sakrai, Dulha Deo, etc. According to the taste and fancy of the worshippers." [4]

गोंड जरा भी भय की स्थिति में नाना प्रकार के देवी–देवताओं का विधिवत पूजन करते हैं। प्रकृतिवादी एवं अंधविश्वास व परम्परा में विश्वास करने के कारण इनके देवी–देवता अलग–अलग गाँव और घरों में संख्यात्मक रूप से परिवर्तित होते रहते हैं।MR. Tawney का विवरण इस विषय में उल्लेखनीय है – "These house hold gods have a tendency to increase, as special occasions necessitate the addition of a new god, and once he is in throned in the house he never seems to leave it of his own accord. Thus is a man is killed by a cobra, the latter become a household god, and is worshipped for many generations. Hense the number and names of the domestic gods vary from village to village, and often from house to house and these is no saying what set of gosds may be expected to be in and dwelling. If a set of gods does not work satisfactory, they are also, some or all of them, discarded, and a new lot introduced" [5]

गोंड़ों के देव स्थल को 'देवखल्ला' कहा जाता है जहाँ पर विभिन्न देवताओं को रखा जाता है। उनका पुरोहित नियमित रूप से उनका पूजन करता है। ये देवता बाँधकर साज वृक्ष की डाल पर लटका दिए जाते हैं। पोलो नामक देवता बोरें में बंद रहता हैं। देवखल्ला के दवेता–समूह को ही 'बड़ा–देव' कहते हैं। देवखल्ला के विषय में MR. Tawneyने विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार है – "The Bhumkas or Gond Priests also seem some what of ghowing the gods at the Deo-Khalla, or regular worshipping place, which has a preiest always attached The gods there are generally tied up in grass and fixel in the fork of the saj tree, or buried in some recess in the forest, except palo, who is put in a bag to prevent his getting wet, and chawar, who is a chows tail …… The Deo-Khalla gods are generally all of iron, and those at Mujhawr were all spear shaped, except Ghangra who is of bell-metal, and in from like the bells ordinarily put round the neeks fo bullocks…….. Woman may not worship at the Deo- Khalla, and six gods worshippers only worship at a Deo-Khalla with 6 gods, and seven-god men at one with 7 gods. The collection of gods at a Deo-Khalla is called Bara Deo or the great God, and when a Gond swears by Bara Deo, he swears by all the Gond Gods of his sect. The most constant gods at a Deo-Khalla are probably :- (1) Pharsi pen, the battle axe god; (2) Matiya, the great god of mischief; (3) Ghangra, the bell god; (4) Salle; (5) palo, the representative of animals; and (6) chawar, the cow's tail, which last is probably worshipped as a pleasing reminiscence of feasts on deceased bullocks." [6]

गोंड जनजाति में अनेक देवी–देवता हैं जिनकी पूजा की जाती हैं। ये देवी–देवता ग्राम रक्षा परिवार की सुरक्षा, स्वास्थ, समृद्धि हेतु समय–समय पर पूजे जाते हैं। इनका संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत है –

बड़ा देव – यह शिव का प्रतिरूप है। बड़ा देव को श्वेत वस्त्रों और सफेद दाढ़ी से अलंकृत एक सौम्य तथा दिव्य पुरूष के रूप में पहचाना जाता है। बड़ा देव सी सृष्टि और संहार का देवता है। लिंगों रायलिंगों और बारापेन आदि बड़ा देव के ही प्रतिरूप हैं।

ठाकुर देव – गोण्ड वंश के कुल देवताओं की आराधना के क्रम में, श्वेत वस्त्रधारी, सौम्य पुरूष ठाकुर देव प्रमुख है। ये ग्राम रक्षक हैं। इनकी पूजा दैवीय आपदाओं या बीमारी से मुक्ति हेतु तथा सफलता की कामना से की

जाती हैं। ठाकुर देव का स्थान गाँव के बाहर पत्थर या मिट्टी के चबुतरों पर किसी छायादार वृक्ष के नीचे रहता है। पहचान के लिए उस पेड़ पर सफेद झण्डा लगाया जाता हैं।

ठाकुर देव प्रतिमा स्वरूप में एक घोड़े पर विराजमान पाये जाते हैं। इनके तीन अंगरक्षकों में क्रमश: (1) नोन्हो अगवानी (2) मझलो अगवानी तथा (3) जेठो अगवानी होते हैं। इनकी पूजा ग्राम के पढ़ियार द्वारा की जाती है। चार-छ: ग्रामों का एक पढ़ियार होता हैं। किसी भी सफलता के लिए मनौती के अनुसार ठाकुर देव की पूजा निर्धारित होती है पूजा-विधान के अनुसार पहले नोन्हों अगवानी (स्वागत कर्ता) की, फिर मझलों अगवानी तथा जेठो अगवानी की क्रमश: स्तुति-आराधना के बाद ठाकुर देव की पूजा की जाती है।

गोत्र के अनुसार मुर्रो/भैंसे की बलि दी जाती है। बाले पढ़ियार ही तय करता है। मन्त्रोच्चारण के साथ-साथ हल्दी, कुमकुम, गुड़ घी आदि सामग्री अर्पित की जाती हैं। कण्डे की आग पर गुगल का धुआँ वातावरण को सात्विक बनाता है। दैवी आपदा से मुक्ति अथवा किसी कार्य की सफलता हेतु की गयी मनोकामना से ठाकुर देव की पूजा दीपावली के दूसरे दिन यानी दूज से कार्तिक पूर्णिमा तक कभी भी सम्पन्न करने का विधान है। पूजा में एक प्रतीक चिन्ह ढाल बनाया जाता है। ढाल मोरपंखों से विभिन्न रूपाकारों में बनायी जाती है। ढाल को पहले गंगादेवी के पास ले जाया जाता है। फिर उसे ठाकुर देव की परिक्रमा कर घर ले जाते हैं। ढाल को देव खरियान में रखा जाता है। मान्यता के अनुसार तीन से ग्यारह साल तक ढाल बाँधी जाती है। किसी कारण ढाल खण्डित हो जाए तो उसे खोलकर रखा जाता है। पूजा में समान गोत्र के लोग समूह में शामिल होते हैं। अलग-अलग स्थान पर ठाकुर देव की पूजा के अलग-अलग विधान प्रचलित हैं। [7]

नारायण देव – यह डेवढ़ी (दहलीज) का देव है। घर में आने वाली समस्त दैवी बाधाओं, भूत-प्रेत, बीमारी आदि से ये घर के प्राणियों की रक्षा करते हैं। सर्प आदि काटने पर लोग इसको पूजते हैं। इस देव को शूकर (पद्धी) बहुत ही प्रिय है प्राय: शूकर के बच्चे को बधिया करके उसकी पूँछ काट देते हैं। बांडा शूकर नारायण का और बधिया पूँछवाला सूर्य देवता का माना जाता है। उसे सुरजाल कहते हैं। शूकर न मिलने पर सफेद मुर्गे से काम चल जाता है। लोग देव के बदना (स्थान) में इनको चावल अर्पण करते हैं। यह पूजा मंगलवार या शानिवार को होती हैं।

नारायण की पूजा करने के पूर्व लोग नदी तट पर जाकर सूर्य का पूजन करते हैं। नारायन के पूजन में शूकर की बलि प्रधान है। जानवर के चारों पैर बाँधकर, घर की परछी के द्वार पर बड़ी-बड़ी बल्लियों से टाँगकर लाते हैं, और उन्हीं बल्लियों से लोग उस पर चढ़कर दबाते है। उस समय जानवर के मुँह में मूसल डालते हैं। इसी प्रकार जानवर को मारकर फिर उसका सिर कुल्हाडी से काटते है। उस मस्तक को रखकर उस पर फुलहरा बाँधते हैं। पास में चावल और दीपक रखते हैं। बाहर एक गड्ढा खोदकर उसे ढ़ँक देते है। घर का सयाना नहा-धोकर पूजन के लिए तैयार होते हैं। साथ में बरूआ और बरूइन नियत होते हैं। वे घर में पानी भरते हैं। भोज में ग्राम के प्राय: सभी आते हैं। जानवर की हड्डियाँ और फतलें एक गड्ढे में डालकर उसे मिट्टी से बराबर कर देते हैं। इस पूजा में छूतध्वात नहीं मानते- गोंड और पठारी एक साथ खाते-पीते हैं। इस समय चमार का पहुंचना अच्छा सगुन समझा जाता है। प्रति तीसरे वर्ष नरायण की पूजा होती है। सूर्य के बधियाँ या श्वेत मुर्गे को सूरजाल कहते हैं। नरायण देव के बधिया का लाडू (लाडुर) कहकर खाना देते हैं। [8]

दुल्हापेन (चूल्हे के पास का देव) – मृतक की क्रिया जब तक नहीं होती, जब तक भोजन तैयार होने पर प्रथम इस देव को अर्पण करते हैं, जिससे वह मृतक को किसी प्रकार का कष्ट न दे। संतान के हेतु लोग इस देव का पूजन करते हैं। [9]

मुरढ़की (रातमायी)– कुठिया के नीचे रहता है। उसका पूजन लोग एकांत में करते हैं। दोपहर के समय एक सुअर की पाठ (मादी) मारकर चढ़ाते है, और रात्रि भर में पूजकम लोग उसका माँस भूंजकर खा जाते है। हड्डियाँ आदि घर में ही गाड़ देते हैं।

बिगरहा – बिगरहा के पूजन में लोग बेगार में खेत जोत देते हैं। घर के आदमी कोई काम नहीं करते और उससे जो उपज होती है- उससे बिगरहा पेन की पूजा होती है माता-माता देवी का पूजन घर के आंगन में होता है। उसकी पूजा करानेवाले पंडा कहलाते हैं। पर जो घर में आकर आंगन में पूजा कराता है वे पंडा नहीं कहलाते। पंडा की कुटिया गांव के बाहर होती है। नियत समय पर रोगी को वहां ले जाते है और पंडा उसके लिये मनौती करता है। प्रत्येक को नारियल और कुछ नगद रकम देना पड़ता है। पंडा स्वयं दूसरे की चिलम नहीं पीता। उसके चेले बरूआ और बरूइन कहलाते हैं। चैत्र में माता के बदला में जवारा-कोते है। पंडा राम-राम नहीं कहता- वह सेवा कहता है। लोग एक बांस को रंगकर, उसके छोर में मोर के पंख बाँधकर समारोह के साठ उठाते हैं। साथ में सींग बजाते हुए ग्राम की मड़ई में पहुंचते हैं। और वहाँ मड़ई देवी की डांग गाड़कर पंडा पूजने के लिये बैठता है- समीप ही अन्य लोग। जो लोग पूजन नहीं करते, वे केवल परिक्रमा करते हुए चावल फेंकते हैं। इसी का नाम मड़ई-व्याहना है। ऐसा करने से एक वर्ष तक माता का प्रकोप नहीं होता और माता, हैजा आदि बीमारियों से लोगों की रक्षा होती है। देवी के नाम से बकरा या पाड़ा भी छोड़ते हैं।

खेरमाई – खेरमाई के साथ में कई देव रहते हैं। आषाढ़ और कुँआर में गोंड खेरमाई का पूजन करते हैं। पूजन में लोग मुर्गी के बच्चे और नारियल चढ़ाते है। आषाढ़ में प्रत्येक गोंड किसान हर तरह के बीज बनाते हैं। उकको बिदरी करना कहते हैं। इस पूजा में शराब चलती है। बिदरी कराने वाला दवार कहलाता है। दवार का कार्य प्राय: बैगा करता है। अनाज बोने के समय थोड़ा सा अनाज उसे प्रत्येक किसान देता है। जंगल के एक देवता का नाम पाट है - जिसके बिगड़ने से शेर का उत्पाद आरंभ होता है और उसका पूजन भी दवार करता हैं।

होलेराय – यह देवता पशुओं की रक्षा करता है। दीपावली के अवसर पर प्रत्येक गोंड पशु-वृद्धि के लिये होरेराय को पूजता है। मुर्गियाँ और नारियल खूब चढ़ाए जाते हैं। इसी समय भैंसासुर का भी पूजन होता हैं।

मरापेन – गुनिया बीमारी के अवसर पर इस देव का पूजन करता है।

बरियारपेन - (बूढ़ादेव) – गोंडों का यह बड़ा देव है। यह देवता मरे हुए गोंड़ों को पुरखों में मिलाता है। पर जो अकाल मृत्यु से मरते हैं, वे पुरखों में नहीं मिलते। (जो व्याघ्र, सर्प, हैजा, चेचक, अग्नि, वृक्ष से या पानी में डूबने से मरते हैं, उनकी मृत्यु अकाल कहलाती है।) उनके प्राण पत्थर में गाड़े जाते हैं। (गोंडों का विश्वास है कि ऐसे मृतक का प्राण पत्थर में रहते हैं।) सभी गोंड इस देवता को पूजते हैं। प्रत्येक वंश में इस देव का एक पुजारी होता है। पूजन के अवसर पर वह अपने वंशवालों को इसकी सूचना देता है, तब सभी घरवाले यथाशक्ति मुर्गी, बकरा और अन्न लेकर पहुँच जाते हैं। इस देवता का स्थान 'साज वृक्ष' होता हैं।

धमसेन देव – इनका चौरा बड़ा देव के पास रहता है, जिस पर खम्भा और उसमें ध्वज लगाया जाता है। यह बुद्धि व बल का देवता माना जाता है। वर्ष में एक बार इसका सामूहिक पूजन किया जाता है। नर्मदा नदी के उत्तर खण्ड में इस देव की विशेष मान्यता है। [10]

नागेश्वर देव – नाग या सर्प का पूजन सांप के कमीड़े का पूजन प्राय: नागपंचमी को किया जाता है।

खैर, खूँठ, मुठिया देव – चरवाह चरवाहिन का देव व गायों का रक्षक।[11]

गोंड लोग महादेव, नर्मदामाई, बंजारिन माई (वनदेवी), रातमाई या अंधेरी माई, (रात्रिदेवी जो भय से रक्षा करती है), शारदा माई (ममतामयी देवी), बूढ़ी माई (चेचक से रक्षा करती है), मरही माता (चेचक, प्लेग, हैजा तथा संक्रामक बीमारियों से रक्षा करती है) को भी पूजते हैं। खीलामुठिया नामक देवता प्रतिवर्ष पूजा जाता है। खलिहान के भी कई देवता होते हैं। गुनिया के देव वीर कहलाते हैं। धरतीमाता, सूर्यदेव का भी पूजन करते हैं।

इनके अलावा गोंड भैंरो देव, दूल्हा देव, बाघेश्वर देव, आंगादेव, बाघदेव, डुंगरदेव, जोगनी माई, कंकालिन माई और भीमा देव के प्रति आस्था व्यक्त करते हैं।

निष्कर्ष – संस्कृति परिवर्तन के इस दौर में लोक परम्पराओं का संरक्षण एक चुनौती है, क्योंकि विकास की मुख्य धारा में शामिल करते हुए किसी भी आदिम संस्कृति को तद्रूप क्षुण्ण रख पाना संभव ही नहीं है। गोंड़ जनजाति के अधिकांश देवता प्रकृति पूजा आधारित हैं। धन्य-धान की पूर्ति और प्राकृतिक प्रकोप से बचने के लिए देवता रूप में प्रकृति को देवता के रूप में पूजा जाता है। परन्तु वर्तमान समय में भौतिक उन्नति, चिकित्सा सुविधा उपलब्ध होने एवं शैक्षणिक स्तर में सुधार होने के कारण गोंड जनजाति में ही कई देवी-देवताओं को अंधविश्वास मानकर आस्था नहीं प्रकट की जा रही है। हांलाकि गोड़ों में धर्म ग्रंथ लिखने का प्रयत्न जारी है जिससे कि धार्मिक परम्परा को ठोस रूप प्रदान किया जा सके। इसी तरह कुछ शिक्षित गोंडों में अपनी जनजाति के प्रति सम्मान स्थापित करने के लिए अभियान भी चलाए गए हैं। 'बड़ादेव' की पूजा का प्रचार-प्रसार एवं अभिवादन के लिए 'जयसेवा' का प्रयोग किया जा रहा है। भारत एक बहु भाषा-भाषी एवं विविध संस्कृति वाला देश हैं अत: सभी सांस्कृतिक परम्पराओं का सम्मान होना चाहिए। गोंड जनजाति भारत की मूल निवासी है अत: उनको धार्मिक परम्पराओं, देवी-देवताओं के प्रति सम्मान होना चाहिए न कि उपहास उड़ाना चाहिए। शिक्षित गोंड़ों का भी प्रयास होना चाहिए कि अपने समाज में जागरूकता फैलाएँ, कुरीतियों का त्याग किया जाए। एवं मदिरापान संयमित रूप से किया जाए। सभ्य समाज में मदिरापान के कारण ही उपहास के पात्र बनते हैं। तमाम विकास एवं परिवर्तन के बाबजूद लोक संस्कृति का संरक्षण आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Source : Census of India 2001
2. सिंह, बी.पी. – आलेख, बुलेटिन, ट्रायबल रिसर्च इस्टीट्यूट म.प्र. 35, श्यामला हिल्स, भोपाल जनरवरी 03- जून 04 पृ. क्रं. 13
3. अग्रवाल, रामभरोस : गोंड जनजाति का सामाजिक अध्ययन, गोंड़ी पब्लिक ट्रस्ट मण्डला, संवत् 2062
4. रसेल, आर.वी. – सेंट्रल प्रोविंसेस डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, छिन्दवाड़ा जिला वाल्यूम I चंहम छवण 49ए 1997
5. वही पृ. क्रं. 49-50
6. रसेल, आर.बी. – सेंट्रल प्रॉविंसेस डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, छिन्दवाड़ा डिस्ट्रिक्ट, 1997, पृ. क्रं. 50-51
7. सिंह, बी.पी. – आलेख, बुलेटिन, ट्रायबल रिसर्च इस्टीट्यूट म.प्र. 35, श्यामला हिल्स, भोपाल जनरवरी 03- जून 04 पृ. क्रं. 14
8. शुक्ल, प्रयागदत्त- आरण्य की संस्कृति, विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन नागपुर, 1964, पृ. क्रं. 86-87
9. वही- पृ. क्रं. 87
10. सिंह, बी.पी. – आलेख, बुलेटिन, ट्रायबल रिसर्च इस्टीट्यूट म.प्र. 35, श्यामला हिल्स, भोपाल जनरवरी 03- जून 04 पृ. क्रं. 14
11. वही – पृ. क्रं. 14
12. गजेटियर ऑफ इण्डिया, जिला छिन्दवाड़ा, 1997
13. श्रीवास्तव, डॉ. ए.आर.एन. : जनजातीय भारत, म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी
14. उपाध्याय, विजय शंकर, शर्मा विजय प्रकाश – भारत की जनजातीय संस्कृति
15. तिवारी, डॉ. शिवकुमार : म.प्र. की जनजातीय संस्कृति, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2005.
16. दीक्षित, डॉ. ध्रुव कुमार : पातालकोट घाटी का भारिया जनजीवन, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2010.
17. त्रिपाठी, डॉ. एस.पी. : पातालकोट की त्रासदी, आदित्य पब्लिशर्स बीना, 1999.
18. अग्रवाल, रामभरोस : गोंड़ जनजाति का सामाजिक अध्ययन, गोंडी पब्लिक ट्रस्ट, मण्डला, म.प्र.समवत् 2062
19. शुक्ल, प्रयागदत्त : आरण्यकी संस्कृति, विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, नागपुर, 1964
20. बुलेटिन : संयुक्तांक – 41, जनवरी 03 – जून 04, आदिम जाति अनुसंधान एवं विकास संस्थान, भोपाल,

****

Implementation Of FRA And Its Implications In Madhya Pradesh

Dr. Prabhakar Mishra *

Introduction - Among all the states of India, centrally located Madhya Pradesh has the largest tribal population. As Madhya Pradesh is home to the largest number of Scheduled Tribes (STs) in India and is often called the tribal state of the country. With scattered phenomena of tribal presence, Tribal population shares the 21.09 percent of total population of the state which constitutes the 14.68 percent of total tribal population of the country. The most marginalized and vulnerable tribal populations are largely concentrated in and around the forest area of the state and dependent on forest resources for subsistence, income and employment. In the state all Tribal communities have distinct manners of lifestyles, languages and cultural traditions, livelihood and social customs of their own. Due to the limited access to the basic amenities and Geographical isolation, primitiveness, educationally and economically backwardness have detached the tribal population from the mainstream of their all-round development.

Aims and Objectives - The present study deals with the provisions and the implementation of the forest Rights Act, 2006. The purpose of the study is to investigate the shortcomings of the FRA and causes behind the improper implementation of the ACT and identify other bottlenecks at various stages of execution of FRA.

Methodology - To analys the implications and implementation process of the FRA (Forest Rights Act 2006) in Madhya Pradesh, secondary data related to the Act and claims of tribal claimants and other forest dwellers have been used in respect of their rights and disposal of applications. For the conceptual content analysis material has been used available at the various sites on internet.

In present study, Percentage and the comparison of data are the statistical techniques to clarify the facts pertaining to the data analysis. Status of legislation, procedural mechanism and the obstacles in the way of allotment of forests and other resources to the bona fide tribal claimants and other forest dwellers are the key issues for the discussion.

FRA : Provisions and Process - In pre independence period colonial administrative machinery was biased and prejudice, authoritarian and of exploitive nature with tribes. They identified forest dwellers and enlisted them primitive, hostile and criminal on a scheduled list. They interested to exploit and debar them from the mainstream of national development and quality life. After independence the scenario has changed and central as well as state governments adopted many special provisions and legislative regulations to provide adequate opportunities and resources for mainstreaming of these deprived sections of human society.

In view of the distribution of natural resources to mitigate the tribal problems regarding livelihood and maintenance of forest resources certain efforts have been made one of them is The Schedule Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act, 2006, popularly known as the Forests Rights Act (FRA). The genesis of FRA is related to the historical deprivation of rights of tribal people and other forest dependent communities. These communities were cultivating or occupying forest land and using forest produces since ages but had no legal right over the forest assets. This Act recognized and vests individual forest dwellers with forest rights to live in and cultivate forest land that was occupied before 13Dec, 2005. The Act also grants the community forest rights to forest dweller communities to protect, manage and regenerate the forests.

FRA aims at recognizing the rights of forest dwelling and other traditional forest dwellers on forests and forest lands. This recognition process has to follow the path of claim, enquiry and verification, and recording of the same in the appropriate record of rights so that the right become known to all and enforceable by the right holders. Through this recognition process eligible claimants will be benefitted and those who may attempt to use it for getting unauthorized benefits will not be admissible under the Act. The vesting of forest rights under this act , with respect to forest land will subject to the condition that the scheduled tribes or other traditional forest dwellers had occupied forest land before 13th December 2005.

Gram sabhas have been assigned an important role in the implementation of the provisions of the Act. The forest rights committee will examine the claims, look in to the evidence. After survey of the site and demarcation of forest land claim will be forwarded with its recommendations to gram sabha. The gram shabha would then approve/disapprove the claims and would forward them with their recommendations to the sub- divisional committee after that claim would be forwarded to be finalized by the district level committee.

* Assistant Professor (Geography) Govt. College, Mehidpur (M.P.) INDIA

FRA : Implementation in Madhya pradesh - Madhya Pradesh is the pioneer state to the implementation of the FRA. The state govt. has introduced a number of initiatives like the use of state level software monitoring system to speedy verification and disposal of claims and distribution of claim forms and other documents in gram sabhas. Apart from the other states of the country Madhya Pradesh has the pace of implementation of the Act. The status of implementation of the scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act, 2006 in Madhya Pradesh can be estimated by the disposal of received claims. In table no. 1 particulars are given regarding the received claims and the status of their disposal.

Table No. 1 (As on 31.01.2012)

S.No.	Particulars	No. of Claims	%age
1	Claims received	4,49,561	100
2	Titles distributed	1,55,542	34.59
3	Claims rejected	2,68,560	59.73
4	Claims disposed	4,24,102	94.33
5	Claims pending	25,459	05.66

According to the percentage shown in the above table represents the high rejection percent of the claims, while disposal of claims also shows the encouraging pace, only 05.66 percent claims are pending. In the implementation process of the Act 34.59 percent claimants could achieve their forest rights successfully which is the approximately one third of the total forest rights seekers. Higher percent of rejection of claims and lower percent of distribution of titles create a huge gap between the received claims and the distributed titles.

Table No. 2 (See the table)

Table No. 2 represents the latest status of the progress. After two years the percentage of rejected claims is still shows the lofty trend while distribution of titles represents the slight increase of 02.25% in comparison of year 2012. In year 2014 the work of claims disposal loses 01.53%.

FRA : Implications in Madhya pradesh - The issue of forest rights under the act has different perspectives at different levels i.e. forest dwellers, forest officials, entrepreneurs, policy makers, environmentalists and social workers etc. FRA has several issues to be discussed regarding the provisions of Act and implementation process. Some of them are mentioned as under-

1. Constitution of Gram Sabha has its own difficulties regarding various type of settlements as hamlet, panchayat, revenue village and the forest village.
2. Negligence of STs and women quota in constitution of FRC.
3. By passing the gram sabha in decision making and effective role of forest officials.
4. Illegal interfere of forest department in Rights Recognition.
5. High rate of rejection of claims at SDLC.
6. Illegal action by DLC in deciding rights.
7. Lack of communication and awareness about the provisions and procedure.

Suggestions - In view of the above mentioned points some measures are required to minimize the problems of better implementation of the Act.

1. Uniformity should be exercised to define or in the constitution of gram sabha.
2. STs and women quota shuld be utilized in constitution of FRC.
3. Negligence of gram sabha should be discouraged because it has the vital role of decision-making.
4. Illegal interfere of forest and other departments must be banned in Rights Recognition.
5. Rejection of claims should be minimized at all levels
6. In deciding rights recommendations of gram sabha should be given weightage by the DLC.

Conclusion - Madhya Pradesh is the pioneer state to the implementation of the FRA. The state govt. has introduced a number of initiatives like the use of state level software monitoring system to speedy verification and disposal of claims and distribution of claim forms in gram sabhas. But the negligence of gram sabha which has the vital role of decision-making, interference of forest department, unnecessary procedural mechanisms and awareness generation among the claimants are the hidden hurdles to achieve the real implementation of the FRA. To provide the claims of forest lands to the tribals according to the objectives of the FRA an honest efforts are needed at every step.

References -

1. http://www.in.undp.org
2. http://www.fra.org.in
3. http://www.foresraightsact.com
4. http://www.traibal.mp.gov.in

Table No. 2 (As on 31.01.2014)

S.No.	particulars		No. of Claims	%age
1	Claims received	Total	4,98,346	100
		Individual	4,80,551	100
		Community	17,795	100
2	Titles distributed	Total	1,83,608	36.84
		Individual	1,72,539	35.90
		Community	11,069	62.20
3	Claims rejected		2,78,887	55.96
		ST	-	40.90
		OTD	-	96.26
4	Claims disposed		4,62,495	92.80

कृषि में तकनीकी नव प्रवर्तन : मन्दसौर जिले के सिंचाई विकास के संदर्भ में स्थानिक तथा कालिक विश्लेषण

डॉ. अख्तर बानो *

प्रस्तावना – परिवर्तन प्रकृति का नियम है। कृषि में उन्नत तकनीक का उपयोग कर मनुष्य ने कृषि उत्पादन में वृद्धि की है। विकासशील क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि हो रही है। अत: कृषि में तकनीक नवप्रर्वतन आवश्यक है। कृषि में नवप्रर्वतन हेतु सिंचाई अत्यावश्यक है। सिंचाई के बिना उत्पादन विशेषकर रबी मौसम में नहीं बढ़ाया जा सकता है। मंदसौर जिले के निवासियों का प्रमुख व्यवसाय कृषि है। कुल कार्यशील जनसंख्या का 80 प्रतिशत भाग कृषि कार्य में लगा है। जिले में उन्नत कृषि हेतु सिंचाई के साधनों में वृद्धि अति महत्वपूर्ण है। मंदसौर जिले में सिंचाई के साधनों में निरंतर वृद्धि हुई है। किन्तु यह वृद्धि कृषि नवप्रर्वतन की दृष्टि से अपर्याप्त है। मंदसौर जिले में 1981 में कुल जनसंख्या 775089 थी, जो 2001 में बढ़कर 1183724 हो गई। इस बढ़ती जनसंख्या के साथ ही कृषि उत्पादन में वृद्धि आवश्यक है। यही कारण है कि प्रस्तुत शोध पत्र में कृषि में तकनीकी नवप्रवर्तन : मंदसौर जिले में सिंचाई विकास के संदर्भ में स्थानिक तथा कालिक विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – मंदसौर जिला मध्यप्रदेश के पश्चिम में स्थित है। (चित्र क्र. 1) इसमें पांच तहसीलें है। (तालिका क्र. 1.1) जिले का अक्षांशीय विस्तार 23^{o} 45 से 25^{o}.00 उत्तर तथा 74^{o}45 से 75^{o}55 पूर्व है। जिले का कुल क्षेत्रफल 5535 वर्ग कि.मी. है। जिले की जलवायु मानसूनी तथा मिट्टी काली है जो कृषि के लिये उपयुक्त है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र में मंदसौर जिले के सिंचाई के साधनों के तहसीलवार दो दशक के द्वितीयक आंकड़ों का उपयोग (वर्ष 1980-81 व 2000-2001) किया गया है। ये आंकड़े जिला सांख्यिकी पुस्तिका, मंदसौर तथा डिस्ट्रिक्ट सेंसस हेंडबुक 2001 से एकत्रित किये गये है। वर्ष 1980-81 में मंदसौर जिले में आठ तहसीलें थी किन्तु 1998 में नीमच जिला बन जाने के कारण वर्तमान में पांच तहसीलें है। अत: 1980-81 की पांच तहसीलों के आंकड़े ही उपयोग में लाए गए है। आंकड़ों के विश्लेषण हेतु साधारण तकनीक का उपयोग किया गया है तथा इनके आधार पर आरेख तथा मानचित्र बनाए गए है।

उद्देश्य – वर्ष 1980-81 तथा 2000-01 के अंतराल में सिंचाई के साधनों में वृद्धि को तहसीलवार दर्शाना तथा यह वृद्धि कृषि विकास हेतु अपर्याप्त होने के कारण इनमें वृद्धि कर कृषि तथा सिंचाई व्यवस्था का सुस्थिर विकास करना है ताकि मंदसौर जिला एक उन्नत कृषि प्रधान जिला बन सके। सिंचाई साधनों के विकास हेतु सुझाव देना भी अध्ययन का उद्देश्य है।

तालिका क्र. 1.1

मंदसौर जिला : क्षेत्रफल तथा जनसंख्या

क्र.	तहसील	भौगोलिक क्षेत्रफल (हैक्टे. में)	जनसंख्या	
			1981	2001
1.	भानपुरा	103918	86174	132722
2.	गरोठ	113669	145007	224325
3.	मल्हारगढ़	80605	124933	185079
4.	मंदसौर	126608	256114	396919
5.	सीतामऊ	127369	162861	244679
	मंदसौर जिला	552169	775089	1183724

स्त्रोत: जिला सांख्यिकी पुस्तिका, मन्दसौर 1980-2001

मंदसौर जिला मध्यप्रदेश के पश्चिम में स्थित होने के कारण यहां वर्षा कम होती है। वर्षा का औसत 75 से.मी. से कम है। अत: सिंचाई के साधनों में वृद्धि करना स्वाभाविक है। अध्ययन क्षेत्र में रबी मौसम में फसलों को दो या तीन बार सींचना आवश्यक होता है। क्षेत्र में सिंचाई के प्रमुख साधन कुंए, तालाब, नलकूप है। नहरों द्वारा सिंचाई की सुविधा बहुत कम है। (तालिका क्र. 1.2)

तालिका क्र. 1.2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखें)

कुओं द्वारा सिंचाई – अध्ययन क्षेत्र में कुंए सिंचाई का प्रमुख साधन है। विगत दो दशकों में आधार वर्ष की तुलना में कुओं की संख्या में दो गुना से अधिक वृद्धि हुई है। केवल गरोठ तथा मंदसौर तहसीलों में दो गुना से कुछ ही कम वृद्धि हुई है। मंदसौर जिले का धरातल कुंए बनाने के अनुकूल है। यहां का

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.) भारत

भूजल स्तर ऊंचा है। ट्यूबवेल की खुदाई के आधार पर कुओं की गहराई ऊपरी सहत से 15 मीटर है। जिले की मंदसौर तहसील में सर्वाधिक 27612 कुंए है, जिनसे सिंचाई होती है। सीतामऊ तहसील (22873 कुंए) का दूसरा स्थान है। कुओं की संख्या में वृद्धि का कारण यहां के कृषक प्रारम्भ से कुओं द्वारा सिंचाई करते आ रहे है। कुंए खोदना अन्य सिंचाई के साधनों की तुलना में यहां कम खर्चीला होता है। दूसरा कारण कुंए खोदने के लिये बैंकों द्वारा ऋण दिया जाता है। गरीब किसान स्वयं कुंए खोद लेते है और सिंचाई करते है। कुंए कच्चे तथा पक्के दोनों प्रकार के बनाए जाते है।

तालाब द्वारा सिंचाई – अध्ययन क्षेत्र में मल्हारगढ़ तहसील को छोड़कर सभी तहसीलों में वर्ष 1981 की तुलना में कई गुना वृद्धि हुई है। मंदसौर जिले में 1981 में केवल 22 तालाब थे जो 2001 में बढ़कर 553 हो गए। सर्वाधिक वृद्धि गरोठ तहसील में हुई। यहां आधार वर्ष में 6 तालाब थे जो 2001 में 365 तालाब बना लिये गये। सबसे कम तालाब मंदसौर तहसील में (28) है, किन्तु फिर भी तालाबों की संख्या में दो दशकों में चार गुना वृद्धि हुई है। सामान्यतया तालाब बनाने में व्यय कम आता है। किसान स्वयं तालाब बना लेते है। सीतामऊ तथा भानपुरा तहसीलों में क्रमश: तालाबों की संख्या 100 तथा 70 है। (तालिका क्र. 1.2)

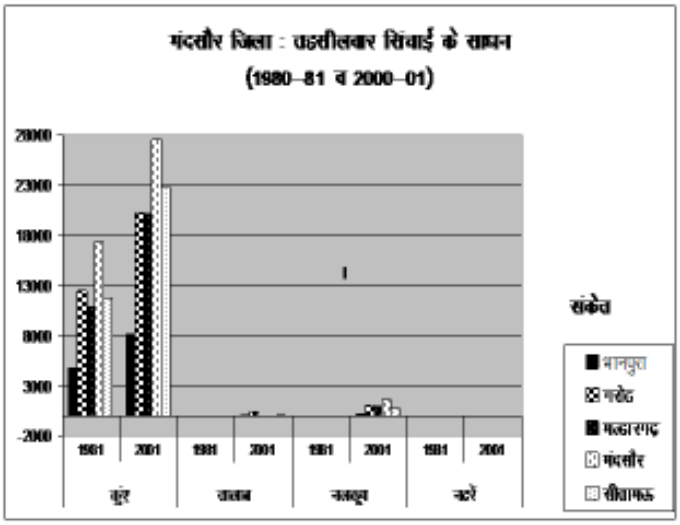

चित्र क्र. 2

नलकूप द्वारा सिंचाई – मंदसौर जिले में 1981 में नलकूप नहीं थे। वर्तमान वर्ष में जिले में कुल नलकूपों की संख्या 4589 है। सर्वाधिक नलकूप मंदसौर तहसील में (1643) गरोठ तहसील जिले में नलकूप की दृष्टि से (1046) दूसरा स्थान है। मल्हारगढ़, सीतामऊ तथा भानपुरा का स्थान नलकूपों की दृष्टि से क्रमश: तृतीय, चतुर्थ व पंचम है। वर्तमान समय में नलकूप सिंचाई का महत्वपूर्ण साधन बनते जा रहे है। इसका कारण नलकूप खोदने के लिये सरकार द्वारा ऋण दिया जाना है।

नहरें – मंदसौर जिले में गांधीसागर बांध के कारण केवल गरोठ तहसील में चार नहरें है, जिनसे सिंचाई होती है। अन्य तहसीलों में नहरें नहीं है। मंदसौर जिले में शिवना नदी गर्मी में सूख जाती है। अत: कोई भी सदावाहिनी नदी होने से नहरें नहीं बन पाई है। अब भानपुरा तहसील की भूमि में सिंचाई हेतु गांधीसागर बांध से नहर परियोजना शुरू होगी। इसका लाभ 45 गांवों को मिलेगा।

कुल सिंचित क्षेत्र – मंदसौर जिले में दो दशकों के अंतराल में कुल सिंचित क्षेत्र में आकर्षक वृद्धि नहीं हुई है। मंदसौर जिले में 1981 में कुल बोये गये क्षेत्र का सिंचित क्षेत्र 12.72 प्रतिशत था। जो वर्ष 2001 में केवल 13.40 प्रतिशत है। जिले की गरोठ तहसील में सर्वाधिक सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत (17.13) है। सिंचित क्षेत्र की दृष्टि से भानपुरा द्वितीय (15.85 प्रतिशत) स्थान पर है। कुल सिंचित क्षेत्र की दृष्टि से मल्हारगढ़ तहसील तीसरे स्थान पर (14.28 प्रतिशत) है। तीनों ही तहसीलों में दो दशकों के अंतराल में कुल सिंचित क्षेत्र के प्रतिशत में बहुत कम वृद्धि हुई है। अन्य दो तहसीलों मंदसौर और सीतामऊ में तो कुल सिंचित क्षेत्र के प्रतिशत क्रमश: 14.15 से 11.17 प्रतिशत और 11.80 प्रतिशत से 10.80 प्रतिशत रह गये। इसका कारण 2000–01 में वर्षा में भयंकर कमी का होना है। इसलिये यह पूर्णत: सत्य है कि भारतीय कृषि मानसून का जुआ है। वर्षा के जल के द्वारा ही भूमि का जलस्तर बढ़ता है। कुंए और तालाब जल से पूर्ण होते है और इन्हीं के द्वारा रबी मौसम में फसलें सींची जाती है। (तालिका क्र. 1.3)

तालिका क्र. 1.3

मंदसौर जिला: तहसीलवार समस्त सिंचाई के साधनों द्वारा कुल सिंचित क्षेत्र (प्रतिशत में) (कुल बोए गए क्षेत्र से प्रतिशत)

क्र	तहसील	1981	2001
1	भानपुरा	10.20	15.87
2	गरोठ	14.07	17.13
3	मल्हारगढ़	11.50	14.28
4	मंदसौर	14.15	11.17
5	सीतामऊ	11.80	10.80
	मंदसौर जिला	12.72	13.40

स्त्रोत: जिला सांख्यिकी पुस्तिका, मन्दसौर 1980–2001

भानपुरा तहसील में वन क्षेत्र अधिक है इस कारण वहां वर्षा भी अधिक होती है। गरोठ तहसील में नहरों द्वारा भी सिंचाई होती है। नहरों में पानी गांधीसागर से मिलता है। अत: गरोठ तहसील कुल सिंचित क्षेत्र की दृष्टि से मंदसौर जिले में प्रथम स्थान पर है। मल्हारगढ़ तहसील में नलकूप अधिक सफल नहीं है, क्योंकि यहां 300 फीट के पश्चात पानी नहीं मिलता है। ऐसा स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा जल प्रबंधन हेतु किये जा रहे कार्यों के माध्यम से ज्ञात हुआ है।

सिंचाई सुविधाओं के विकास के संदर्भ में निष्कर्ष तथा सुझाव – मंदसौर जिले के दो दशकों के अंतराल के सिंचाई विकास का अध्ययन करने से स्पष्ट है कि यहां की कृषि वर्षा पर निर्भर करती है। क्षेत्र में सिंचाई के साधनों में कुओं में लगभग दो गुनी तथा तालाबों में चार तहसीलों में चार गुना से लेकर 60 गुना तक वृद्धि हुई है। (तालिका क्र 1.3)

वर्ष 2001 में नलकूप एक अतिरिक्त सिंचाई के साधन के रूप में विकसित हुआ है। (तालिका क्र 1.2) गरोठ तहसील को छोड़कर जिले में नहरें नहीं है इसका कारण बांध का नहीं होना और जो नदी नाले है वे ग्रीष्म ऋतु में सूख जाते है।

मंदसौर जिले में आधार वर्ष 1981 की तुलना में वर्तमान वर्ष 2001 में सिंचाई के साधनों में वृद्धि तो हुई है। किन्तु यह वृद्धि कृषि में नवप्रर्वतन लाने हेतु अपर्याप्त है। इसका आधार मंदसौर जिले की तहसीलों का कुल सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत है। दो दशक के अंतराल में केवल तीन तहसीलों (भानपुरा, गरोठ, मल्हारगढ़) में तीन से छ: प्रतिशत की वृद्धि हुई है। मंदसौर तथा सीतामऊ कुल सिंचित क्षेत्र के प्रतिशत में आधार वर्ष की तुलना में एक से चार प्रतिशत की कमी हुई है। सम्पूर्ण जिले के कुल सिंचित क्षेत्र के प्रतिशत में भी नाम मात्र की वृद्धि हुई है।

तालिका क्र. 1.1 से स्पष्ट है कि जिले की सभी तहसीलों में जनसंख्या में दो दशकों में वृद्धि हुई है। अत: मंदसौर जिले में सिंचाई विकास हेतु निम्न सुझाव प्रस्तुत किये गये है :

मंदसौर जिले की सभी तहसीलों में कुओं की संख्या में वृद्धि करना चाहिये क्योंकि इन क्षेत्रों में कुंए आसानी से खोदे जा सकते है। इस हेतु सरकार को आर्थिक रूप से कमजोर किसानों को सस्ती दरों पर ऋण दिया जाना चाहिये। मंदसौर जिले में कुंए द्वारा सिंचाई सर्वाधिक सफल है। क्योंकि यहां काली चिपचिपी मिट्टी पाई जाती है। जिसमें नमी अधिक समय तक बनी रहती है। कुंए तथा तालाब बनाने का कार्य कृषक स्वयं भी कर सकते है। कृषकों को तालाबों का गहरीकरण करते रहना चाहिये ताकि तालाबों में वर्ष भर पानी भरा रहे और सिंचाई सुविधा उपलब्ध रहे। क्षेत्र के किसानों को चाहिये कि वे उनकी कृषि भूमि जो निम्न स्तर की है उसमें एक तालाब का निर्माण अवश्य करें।

ट्यूबवेल से सिंचाई करना क्षेत्र के लिये सराहनीय है किन्तु ट्यूबवेल से भूमि का जल स्तर नीचे चला जाता है। अत: जल संसाधनों का सुस्थिर विकास कर कृषि को उन्नत अवस्था में पहुंचाने हेतु मंदसौर जिले में कुंए तथा तालाब ही सिंचाई का महत्वपूर्ण साधन हो सकते है। इनसे भूमिगत जलस्तर भी बढ़ेगा। मल्हारगढ़ तहसील में ट्यूबवेल खनन अब असफल है इसका कारण यहां का जल स्तर ही है। अत: इस तहसील में चेक डेम तथा स्टॉप डेम बनाकर सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध कराई जा रही है।

जल संसाधनों के विकास हेतु किसानों को जागरूक करने की आवश्यकता है। इस हेतु स्वयंसेवी संस्थाओं को आगे आना पड़ेगा। जिले की बेकार पड़ी भूमि पर वृक्षारोपण होना चाहिये ताकि अवर्षा की स्थिति उत्पन्न न हो।

ग्रामों में वर्षा के जल को स्टॉप डेम, कन्टूर ट्रेंच और नाली बनाकर तालाब में पानी इकट्ठा किया जाना चाहिये ताकि सतही जल बहकर व्यर्थ न चला जाए और किसानों को वर्ष भर सिंचाई सुविधा आशानुरूप उपलब्ध हो सके और किसान कृषि के उन्नत तरीके अपनाकर मंदसौर जिले को एक उन्नत कृषि प्रधान जिला बना सके। इन सब कार्यों के लिये सरकार तथा जनता को मिलकर प्रयास करने होगें। अध्ययन क्षेत्र का 60 प्रतिशत कृषि भूमि सिंचित होना चाहिये तभी कृषि में नवप्रर्वतन पूरी तरह से सफल हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कौशिक , एस.डी (2007) : संसाधन और पर्यावरण, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ पृष्ठ 71
2. सिंह, सविन्द्र (2012) पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहबाद पृष्ठ 526
3. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, मंदसौर 1980 एवं 2001

तालिका क्र. 1.2
मंदसौर जिला : तहसीलवार सिंचाई के साधन
(1980-81 व 2000-01)

क्र.	तहसील	कुंए		तालाब		नलकूप		नहरें	
		1981	2001	1981	2001	1981	2001	1981	2001
1.	भानपुरा	4775	8174	5	70	00	181	-	-
2	गरोठ	12451	20361	6	365	00	1046	5	4
3.	मल्हारगढ़	10837	20219	1	-	00	992	-	-
4.	मंदसौर	17376	27612	7	28	00	1643	-	-
5.	सीतामऊ	11783	22873	3	100	00	727	-	-
	मंदसौर जिला	57222	99239	22	553	00	4589	5	4

स्त्रोत: जिला सांख्यिकी पुस्तिका, मन्दसौर 1980-2001

****

महिला सशक्तिकरण : दशा एवं दिशा

दीप्ति यादव * डॉ. एस.एस. बघेल * *

प्रस्तावना – भारतीय समाज शुरू से ही पुरूष प्रधान रहा है यहॉ महिलाओं को हमेशा से दूसरे दर्जे का माना जाता है पहले महिलाओ के पास अपने मन से कुछ करने की सख्त मनाही थी। परिवार और समाज के लिए वे एक आश्रित से ज्यादा कुछ नहीं समझी जाती थी। ऐसा माना जाता था कि उसे हर कदम पर पुरूष के सहारे की जरूरत पडेगी ही । लेकिन अब महिला उत्थान करे महत्व का विषय मानते हुए कई प्रयास किए जा रहे है और पिछले कुछ वर्षो में महिला सशक्तिकरण के कार्यो मे तेजी भी आई है इन्ही प्रयासो के कारण महिलाएँ खुद को अब दकियानूसी जंजीरो से मुक्त करने की हिम्मत करने लगी है। सरकार महिला उत्थान के लिए नई–नई योजनाएं बना रही है, कई एनजीओ भी महिलाओं के अधिकारो के लिए आवाज बुलंद करने लगे है। जिससे औरते बिना किसी सहारे के चुनौती का सामना कर सकने के लिए तैयार हो सकती है।

आज की महिलाओं का काम केवल घर गृहस्थी संभालने तक ही सीमित नहीं है, वे अपनी उपस्थिति हर क्षेत्र में दर्ज करा रही है। बिजनेस हो या परिवार महिलाओं ने साबित कर दिया है कि वे हर वह काम करके दिखा सकती है जो पुरूष समझते है कि वहॉ केवल उनका ही वर्चस्व है अधिकार है।

जैसे ही उन्हें शिक्षा मिली, उनकी समझ में वृद्धि हुई। खुद को आत्मनिर्भर बनाने की सोच और इच्छा उत्पन्न हुई। शिक्षा मिल जाने से महिलाओं ने अपने पर विश्वास करना सीखा और घर के बाहर की दुनिया को जीत लेने का सपना बुन लिया और किसी हद तक पूरा भी कर लिया।

लेकिन पुरूष अपने पुरूषत्व को कायम रख महिलाओं को हमेशा अपने से कम होने का अहसास दिलाता आया है वह कभी उसके सम्मान के साथ खिलवाड़ करता है तो कभी उस पर हाथ उठाता है। समय बदल जाने के बाद भी पुरूष आज भी महिलाओं को बराबरी का दर्जा देना पंसद नहीं करते,उनकी मानसिकता आज भी पहले जैसी ही है। वे विवाह के बाद उन्हें ऐसा लगता है कि अब अधिकारिक तौर पर उन्हें अपनी पत्नी के साथ मारपीट करने का लाइसेंस मिल गया है। शादी के बाद अगर बेटी हो गई तो वे सोचते है कि उसे शादी के बाद दूसरे घर जाना है तो उसे पढा लिखा कर खर्चा क्यों करना। लेकिन जब सरकार उन्हें लाडली लक्ष्मी जैसी योजनाओं का लालच देती है, तो वह उसे पढाने के लिए भी तैयार हो जाते है और हम यह समझने लगते है कि परिवारों की मानसिकता बदल रही है।

दुर्भाग्य की बात है नारी सशक्तिकरण की बातें और योजनाएं केवल शहरों तक ही सिमटकर रह गई है। एक और बड़े शहरों और मेट्रो सिटी में रहने वाली महिलाएं शिक्षित, आर्थिक रूप से स्वतंत्र, नई सोच वाली पर काम करने वाली महिलाएँ है, जो पुरूषो के अत्याचारों को किसी भी रूप में सहन नही करना चाहती। वही दूसरी तरफ गांवो में रहने वाली महिलाएँ है जो न तो अपने अधिकारों को जानती है और ना ही उन्हें अपनाती है वे अत्याचारो और सामाजिक बंधनो की इतनी आदि हो चुकी है कि अब उन्हें वहॉ से निकलने में डर लगता है। वे उसी को अपनी नियति समझकर बैठ गई है।

हम खुद को आधुनिक कहने लगे है, लेकिन सच यह है कि मॉर्डनाइजेशन सिर्फ हमारे पहनावे में आये लेकिन विचारों से हमारा समाज आज भी पिछडा हुआ है आज महिलाएँ एक कुशल गृहणी से लेकर एक सफल व्यावसायी की भूमिका बेहतर तरीके से निभा रही है नई पीढी की महिलाएँ तो स्वयं को पुरूषों से बेहतर साबित करने का एक भी मौका गंवाना नहीं चाहती लेकिन गांव और शहर की इस दूरी को मिटाना जरूरी है।

- **सार्वजनिक जीवन में भागीदारी की इच्छुक महिलाओं को किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है –**

वास्तव में कई तरह की चुनौतियॉ है ऐतिहासिक तौर पर महिलाओं का सार्वजनिक जीवन में ज्यादा प्रतिनिधित्व नहीं रहा है कई बार इसके विरूद्ध सांस्कृतिक रूझान भी उन्हें रोकता है इसके अलावा ऐसी चुनोतियॉ और बाधाएं हो सकती है जिनका सामना पुरूषो के मुकाबल महिलाओं को ज्यादा करना पडता है उदाहरण के तौर पर यदि हम राजनीतिक पदो के लिए महिलाओं के मुकाबले में आने के बारे में बात करें तो उन्हें कई तरह की चीजो पर विचार करना पड़ेगा । पहली बात है धन जुटाना, बहुत सी महिलाओं के लिए जो पुरूषों के बराबर धन नहीं कमाती या फिर उनकी कमाई का मुख्य स्त्रोत नहीं है तो उनके लिए ऐसा करना चुनौती पूर्ण हो सकता है एक और मुद्दा जो हम अकसर देखते है, वह आत्मविश्वास में कमी है।

- **हम उन लोगों का नजरिया कैसी बदल सकते है जो सार्वजनिक जीवन में महिलाओ की भागीदारी का विरोध करते है**

नजरिया बदलने के दो तरीके है। पहला तो यह पुरानी कहावत है कि एक चित्र हजारो शब्दों के बराबर होता है समाज में महिलाएँ लीडरशीप वाले पदों पर जितना ही दिखाई देगी तो उनका वहॉ होना उतना ही कम अजीब लगेगा। दूसरी चीज यह है कि हमे लोगों को इस बात के बारे में शिक्षित करने की जरूरत है कि सार्वजनिक जीवन में महिलाओं के लीडरशीप वाले पदो पर होने और उनके देश और समुदाय के लिए लाभ में आपसी नाता है सार्वजनिक जीवन में महिलाओं के लिए एक बड़ी चुनौती यह है कि उनको आकंलन पुरूषों की अपेक्षा अलग तरीको से किया जाता है।

- **सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए उनके सशक्तिकरण में गैर लाभकारी संगठनों की क्या भूमिका हो सकती है। –**

गैर सरकारी संगठन वाकई कारगर हो सकते है मुद्दों के प्रति समर्थन जुटाने, नेतृत्व विकास कार्यक्रम और महिलाओं को उनके अधिकारो के बारे में शिक्षित

* शोधार्थी, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत
* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

करने जैसी शैक्षिक पहल के कार्यक्रमों में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है मै नेटवर्किंग के महत्व पर भी बल देना चाहूगी। महिलाओं के सशक्तिकरण की सफल रणनीति बनाने के लिए आपको बहुत तरह के क्षेत्रो की महिलाओं के बीच गठजोड़ बनाना होगा – राजनीतिक दल या सरकार, गैर सरकारी संगठन, कारोबार, मीडिया आदि हर क्षेत्र का खास योगदान होता है और उसके सहयोगी भी। आईआरआई में विमेन्स डेमोक्रेसर नेटवर्क में हमारे कार्यक्रम की खास बात 13 देशों के चैप्टर थे। इन क्षेत्रो में महिलाओं के गठजोड़ ने एक साथ मिलकर सार्वजनिक पदो पर महिलाओं की संख्या बढाने के लिए काम कियां

- **आपके अनुभव के हिसाब से महिलाओं के सशक्तिकरण से किसी देश के सामाजिक आर्थिक विकास में क्या मदद मिलती है –**

दुनिया भर में यह साबित हुआ है कि नेतृत्वकारी पदों पर महिलाओं के होने से, मूल तौर पर सरकार निर्वाचित पदों पर महिलाएँ, आप देखेगें कि भ्रष्टाचार में कमी आती है, सकल घरेलू उत्पाद में बढोतरी होती है, असाक्षरता कम होती है और शिक्षा पर खर्च में वृद्धि होती है। सिर्फ महिलाओं के लिए उल्लेखनीय लाभ नहीं बल्कि पूरे समाज के लिए। हमने यह भी पाया है कि नेतृत्वकारी पदो पर ज्यादा महिलाओं के होने से शांति और सुरक्षा के पहलुओं पर सकारात्मक प्रभाव पडता है

- **महिलाओं के सशक्तिकरण में वे कानून या नियम कितने कारगर है जो लैंगिक समानता की बात करते है**

ये बहुत मददगार है और इन पर जितना बल दिया जाए कम है मैने अपने कॅरियर में देखा है कि उन महिलाओं के लिए कानून बहुत उपयोगी है जिनके पास उत्पीडन या दमन की स्थिति में कोई और चीज सहारे के लिए नहीं होती। इससे उन्हें कोई ऐसी चीज मिलती है जो दिखाई देती है। कोई ऐसी चीज जिसमें वे सिद्ध कर सके कि वे समाज में बराबर की सदस्य है और उन्हें समान अधिकार और अवसर मिलने चाहिए।

इन्टरनेशनल रिपब्लिकन इंस्टीट्यूट किस तरह से महिलाओं के सशक्तिकरण के काम में मदद करता है – आईआरआई गैर लाभकारी और निष्पक्ष संगठन है जिसकी स्थापना वर्ष 1983 में हुई। आईआरआई और उत्तरदायी सरकारी अधिकारियो की मदद के जरिये दुनियाभर में आजादी और लोकतंत्र को बढावा देना है। हमारे काम का एक अहम पहलू हाशिए पर मौजूद समूहों खासकर महिलाएं की राजनीतिक प्रक्रिया में भूमिका बढाना है। आईआरआई ने पिछले 30 सालों के दौरान दुनियाभर में महिलाओं को प्रशिक्षित करने का काम किया है वर्ष 2013 में इसने विमेन्स डेमोक्रेसी नेटवर्क संगठन की शुरूआत की जो राजनीति में, नेतृत्व वाले पदो पर, निर्वाचित सार्वजनिक पदों पर महिलाओं की मौजूदगी बढाने के लिए कार्यक्रम संचालित करता है। यह संगठन इस समय 61 देशों में सक्रिय है।

विद्यार्थी संगठनो में महिलाओं की ज्यादा भागीदारी सुनिश्चित करना कितना महत्वपूर्ण है जल्दी शुरूआत करने से किस तरह मदद मिलती है –

महिलाओं के सशक्तिकरण को बढ़ावा देने में विद्यार्थी संगठन एक महत्वपूर्ण जरिया है वे संरचनात्मक संगठनो में भागीदारी, अनुभव हासिल करने और नेतृत्व के पदो पर काम करने के शुरूआती अवसर उपलब्ध कराते है यह देखना दिलचस्प है कि अमेरिका जैसे बहुत से देशो में पुरूषों की अपेक्षा ज्यादा महिलाएँ डिग्री हासिल कर रही है, लेकिन विश्वविद्यालयो में विद्यार्थी संगठनो में एक तिहाई से भी कम महिला प्रेजिडेट है हमें महिलाओं को लगातार प्रोत्साहित करना है विशेषकर जब वे युवा हो, कि वे नेतृत्व के पदो पर काम करें यह शुरूआत करने के लिए बढिया जगह है।

हाल ही में हुए एक राष्ट्रीय स्तर के सर्वेक्षण में यह तथ्य सामने आया है कि दो के हिन्दी भाषी प्रदेशों में महिलाओं की ताकत पहले के मुकाबले काफी बढ़ी है इस सर्वेक्षण को देश की नामी संस्थाओं रीडरशीप स्टडीज काउन्सिल ऑफ इंडिया, मीडिया रिसर्च यूजर्स काउन्सिल तथा ऑडिट ब्यूरो ऑफ सर्कुलेशन ने प्रमाणित भी किया है अब तक के सबसे चर्चित और अहम् फैसले में ताजा सर्वेक्षण के माध्यम से यह साबित होता है कि महिलाओं के इस बढते वर्चस्व के पीछे पत्रिका समूह भूमिका है।

मध्यप्रदेश एवं राजस्थान में पत्रिका से जुडी महिला पाठको की संख्या में तेजी से वृद्धि का कारण भी पत्रिका के महिला सशक्तिकरण के लिए उठाए गए कदम और उनके हित में चलाई गई विभिन्न मुहिम ही है

निष्कर्ष – महिला सशक्तिकरण से महिला को बेहतर बनाया जा सकता है एक परामर्शक से उनके आत्मविश्वास को बढाने में मदद करेगा। वे अपनी सफलताओ और गलतीयों से सीखते हुए अपनो की मदद कर सकती है इसके अलावा यह ऐसा तरीका है जिससे आप अपने और दूसरे के नजरियो को व्यापक बनाने एवं कौशल को सीख सकते है और भारत की हर महिलाओं की सोच समस्या को बदल कर सफलताओ और उन्नति के ओर ले जा सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. धवन हरिमोहन, महिला सशक्तिकरण पृ.क्र. 82
2. आशा रानी, भारतीय नारी पृ क्रमांक 93
3. परमार वासु, भारतीय नारी की दशा व दिशा पृ क्रमांक 108

****

भारत की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में (10वीं ,11वीं, और 12 वीं) कृषि एवं ग्रामीण विकास

दीप्ति यादव * डॉ. एस. एस. बघेल * *

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र में भारत की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं एवं प्रथम पंचवर्षीय 1951-52 से दसवीं पंचवर्षीय, ग्यारहावीं पंचवर्षीय, बारहवीं पंचवर्षीय के अंतर्गत कृषि एवं ग्रामीण विकास विभाग पर भौगोलिक स्थिति व प्राकृतिक व मानवीय आर्थिक कारक के अध्ययन किया गया है।

भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है और गौमाता में ही उसका आधार है। वेदों में गौ माता के स्वरूप के एश्वर्य गौरवांवित किया है वेदकाल से ही गौमाता का पूजन श्रद्धा और भक्ति के साथ होता आ रहा है। महाभारत काल में तो श्री कृष्ण के समय गौपालन अपने चरम बिंदु पर था। पाण्डवो के सहदेव गौ पशु विशेषज्ञ थे। भारत में 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आधारित है अर्थव्यवस्था की रीढ हमारे यहां कृषी और गांवो का विकास हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को समृद्ध करने में अहम भूमिका निभाता है। भारतीय मानसून के बारे में मासडेन ने कहा है '**विश्व की समस्त प्रकार की जलवायु भारत में ही पाई जाती है।'**

भारत के कृषि प्रधान को प्राकृतिक व सांस्कृतिक कारको में भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि विकास व राष्ट्रीय वे भारतीय कृषक **'मानसून का जुआ'** कहा जाता है।

भारत में कृषि विकास एवं महत्व – कृषि भारतीय अर्थवयवस्था का एक मुख्य आधार है क्योंकि यह ग्रामीण आजीविका की सुरक्षा प्रणाली के आधार का निर्माण करती है। भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्र 328.7 मिलियन हेक्टेयर है जिसमें से 141 मिलियन हेक्टेयर पूरी तरह से कमाई क्षेत्र है जबकि 190 मिलियन हेक्टेयर सकल फसल क्षेत्र है। सकल सिंचित क्षेत्र 77 मिलियन हेक्टेयर है, जिसमें फसल क्षमता 135 प्रतिशत है।

कृषि क्षेत्र का योगदान देश के कुल आयामो में 11 प्रतिशत तथा सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में लगभग 18 प्रतिशत है। दसवीं व ग्यारहवीं तथा बारहवीं पंचवर्षीय योजना में वास्तविक निष्पादन इस संशोधित लक्ष्य व लगभग करीब रहा है ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों की खाद्य एवं पोषणिक सुरक्षा प्रदान करने व आय एवं सम्पदा का समान वितरण करने तथा गरीबी कम करने एवं जीवन स्तर में सुधार करने के लिए भी अत्यधिक महत्व है

पशुधन और मात्स्यिकी क्षेत्र व दोनों मिलकर कृषि और सम्बद्ध क्रियाकलापों दोनो के उत्पादन में मूल्य में लगभग 28 प्रतिशत योगदान करते है। भारत विश्व में दुग्ध का सबसे बडा उत्पादन देश बना हुआ है एक अनुमान के अनुसार सन् 2030 तक हमारे देश का दुग्ध उत्पादन सन् 2010 में दुग्ध उत्पादन से लगभग 3 गुना (240 मिलियन मेट्रिक टन) हो जायेगा। हमारे देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गांव में निवास करती है कृषि क्षेत्र में वृद्धि को गति देने के लिये भूमि गुणवत्ता, सिंचाई स्त्रोत,बीज,खाद्य कीट नियंत्रण एवं आपूर्ति श्रृंखला मूल्यांकन की आवश्यकता महत्वपूर्ण है।कृषि क्षेत्र में फल व सब्जी उत्पादन और दुग्ध उत्पादन किसान की आमदनी के मुख्य स्त्रोत है भारत विश्व में सब्जी उत्पादन में दुसरे स्थान पर है। जिसका सन् 2010 का सब्जी उत्पादन 140 मिलियन मैट्रिक टन है। भारत विश्व में सर्वाधिक दुग्ध उत्पादन देश में जिसका सन् 2010 में 120 मिलियन मैट्रिक टन दुग्ध उत्पादन रहा है। यह गरीब सीमांत व लघु कृषकों के लिये आय बढ़ाने हेतु अच्छा अवसर कम साक्षरता स्तर एवं तकनीकी ज्ञान की कमी इन कृषकों के लिये प्रभावी कृषि व विपणन व्यवस्था में बाधक बन रही है। ग्रामीण क्षेत्र में कृषक अपने पुराने ज्ञान व तकनीकी के आधार पर सब्जी उत्पादन एवं दुग्ध उत्पादन कर रहे है। ऐसे कार्यक्रमो की कमी है जो सब्जी उत्पादन व दुग्ध उत्पादन को लाभकारी बनाने के लिये वैज्ञानिक तकनीकी का प्रचार करें। इन दोनो क्षेत्रों में (सब्जी दुग्ध उत्पादन) विशेष का ग्रामीण उद्यमी महिलाओं को प्रतिशत व प्रेरित करने की आवश्यकता है जिससे लघु व्यवसाय को बढावा दिया जा सके।

कृषि भूगोल-कृषि विकास ऐतिहासिक संदर्भ – कृषि भूगोल की वृद्धि व विकास उतना ही पुराना है जितना भूगोल के अन्य ज्ञान की शाखाओं का विवरण। यूनानी, अरबी,चीनी व भारतीय भूगोल नेताओं ने विश्व में विभिन्न भागों के कृषि क्रियाकलापों व फसल रूपों की विभिन्नताओ कि संदर्भ दिए है।

' खोज के महान युग' के अन्वेषकों व आधुनिक भूगोल जन्मदाता'।

कृषि भूगोल का विकास कृषि भूगोल की पहली रचना आर्थर यंग की है जिससे महान स्मरणीय कृति ' इग्लैण्ड में पर्यावरण एवं फसल स्वरूप' 1770 में प्रकाशित की गई है। इस पुस्तक में यंग ने पर्यावरण के कृषि घटनाओं के मध्य सम्बंध स्थापित करने का प्रयास किया।

- हम्बोल्ट ने सन् 1807 में कृति का समय KOSMOS ने दक्षिणी अमेरिका व क्यूबा में भूमि उपयोग
- जोनसन 1926 में यूरोप का कृषि प्रादेशिकरण
- बेकर 1926 में उत्तरी अमेरिका 'कृषि प्रदेश'
- टेलर 1930 आस्ट्रेलिया कृषिप्रदेश
- विटिलस 1936 में विश्व को 13 प्रकार की कृषि प्रदेशो
- कोस्टोविकी विश्व में कृषि के प्रकारिकी
- मोहम्मद शफी भारत के उत्तरी पूर्वी उ.प्र. की भूमि उपयोग
- वानथ्यूनन में कृषि पेटी व कृषि सिद्धान्तों

* शोधार्थी, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत
* * प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

मिलर के अनुसार ' कृषि विकास उपलब्ध कृषि संसाधन भी विशाल क्षमता को गतिशीलता और वृद्धि प्रदान करता है।'

हिलमेन के अनुसार ' महाद्धीपों व देशो का कृषि सम्बंधी तुलनात्मक अध्ययन कृषि भूगोल सन् 1911 में वर्जित।

भारत में आर्थिक विकास एवं कृषि विकास योजनाएं – आर्थिक नियोजन भारत में प्रथम पंचवर्षीय योजना के पूर्व सन् 1934 में सर्वप्रथम सर.एम.विश्वेश्वरैया ने अपनी पुस्तक 'प्लाण्ट ईकोनामी आफ इण्डिया' में इस प्रकार की योजनाकी रूपरेखा रखी थी। जिसकी अवधि 10 वर्षो की थी। सन् 1938 में पण्डित जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय नियोजन समिति का गठन किया गया जिसने देश की आर्थिक समस्याओं को ध्यान में रखकर सरकार के समक्ष एक योजना प्रस्तुत की। सन् 1944 में 'बम्बई प्लान' नाम से योजना बनी जिसे बम्बई के 8 प्रमुख उद्योगपतियो ने मिलकर बनायी थी व जिसकी अवधि 15वर्षो की थी। तत्पश्चात् जनयोजना व गांधीवाद योजना भी प्रस्तुत की गई।

स्वंतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकार ने मार्च 1950 में प्रधानमंत्री की अध्यक्षता एक योजना आयोग का गठन किया जिससे देश के विकास की रणनीति तय करने का भार सौपा गया और आयोग की सिफारिशो के आधार पर भारत में प्रथम पंचवर्षीय योजना 1951-52 में लागू हुई।

- प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-1956)के समय द्धितीय विश्वयुद्ध के कारण उत्पन्न हुए खाद्य संकट से निपटने के लिए कृषि पर मुख्य बल दिया गया था। इस योजना का मुख्य उद्देश्य खाद्य उत्पादन बढाना था इस योजना को 'कृषि एवं सिचाई योजना' भी कहा जाता है।
- द्धितीय पंचवर्षीय योजना (1956-1961)प्रथम योजना की अपेक्षा ज्यादा व्यापक और उम्मीद से परिपूर्ण थी इस योजना का मुख्य उद्देश्य औद्योगिकरण और आर्थिक विकास के लिए औद्योगिक आधार विकसित करना था। इस योजना को औद्योगिक व परिवहनीय योजना कहा जाता है।
- तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-1966) तृतीय योजना सर्वाधिक असफल मानी जाती है इस योजना में कठिनाईयॉ आई जैसे देश में सुखा पड़ा, बाढ, पाकिस्तान के साथ युद्ध, चीन के साथ युद्ध इन संकटो के कारण योजना योजनान्तर्गत विकास लगभग ठप्प पड़ गए। सूखे ने कृषि उत्पादन को घटा दिया। कहर इलाके बाढ आना आदि इस योजना के समय खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य 10 करोड टन रखा गया था।
- चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-1974) तृतीय पंचवर्षीय योजना की असफलता के परिणामस्वरूप चौथी पंचवर्षीय योजना प्रारंभ नही हो सकी व पंचवर्षीय योजना की जगह वर्ष 1966-67 व 1968-69 तीन वार्षिक योजना ही क्रियान्वित की जा सकी।
- चौथी पंचवर्षीय योजना (1967-1974) इस योजना का मुख्य उद्देश्य था कि कृषि तथा औद्योगिक उत्पादन का स्तर उच्च कर तृतीय क्षेत्र में रोजगार के अधिकाधिक अवसरो का सृजन करना। योजना काल के प्रथम 2 वर्षो में मानसून असफल होने के कारण कृषि उत्पादन पर प्रभाव पड़ा जिससे कृषि उत्पादन का स्तर घट गया। इसके अलावा एक और प्रमुख समस्या बांग्लादेश समस्या थी। 1974 में आपतकाल की घोषणा की।
- पांचवी पंचवर्षीय योजना (1974-1980) योजना भी कृषि उत्पादन और बचाव में आत्मनिर्भरता पर जोर दिया। 1978 में नव निर्वाचन मोरारजी देसाई सरकार की योजना को अस्वीकार कर दिया। भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्रणाली पहली बार के पेष किया गया था और कई सड़को के लिए बढ़ती यातायात को समयोजित चौड़ी थे पर्यटन भी विस्तार टारगेट ग्रोथ 4.4 प्रतिशत है। तथा पंचवर्षीय योजना 1974-1980 पांचवी योजना की प्रगति संतोष जनक रही।
- छठी पंचवर्षीय योजना (1980-1985) 1 अप्रैल 1978 को प्रारंभ की गई थी यह योजना जब लागू की गई थी तब जनता पार्टी की सरकार थी एक दो वर्षो चल सकी। छठी पंचवर्षीय योजना 1 अप्रैल 1980 को नई कांग्रेस सरकार ने अनवरत योजना रूलिंग प्लान को नकारते हुए पुन स्थिर समय सीमा में छठी पंचवर्षीय योजना प्रारंभ की। योजनावधि में कृषि क्षेत्र में खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य 14 करोड़ 90 लाख टन बढाकर 15 करोड़ 40 लाख टन के रखी गयी। इस योजना में कृषि को (26 प्रतिशत) प्रमुखता दी गई थी। किन्तु सर्वोच्च प्राथमिकता ऊर्जा,विज्ञान एवं तकनीकी को दी गई थी। छठी पंचवर्षीय योजना की सफलता से उत्साहित भारतीय योजनाओं ने सातवीं पंचवर्षीय के प्रारूप में निर्धारण की कार्यवाही 1983 के माध्यम से शुरू कर दी थी आवश्यक सुझाव देने हेतु डॉ सुखामाय चक्रवर्ती तथा अन्य अर्थशास्त्रीय की एक कमेटी नियुक्ति की।
- सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-1990) कृषि क्षेत्र की उपलब्धियों का अध्ययन करने से इसमें उल्लेखनीय वृद्धि तो दिखाई देती है परन्तु योजना वे लक्ष्यो को पूरी तरह प्राप्त करने में सफलता नहीं मिल सकी।
- आठवी पंचवर्षीय योजना (1992-1997) इस योजना का उद्देश्य कृषि क्षेत्र की संवृद्धि एवं विविधकरण करना था ताकि खाद्यान्न में आत्म निर्भरता प्राप्त करने के साथ साथ निर्यात के लिए अधिशेष प्राप्त किया जा सके।
- नौवी पंचवर्षीय योजना (1997-2002) नौ वी पंचवर्षीय योजना का काल 1 अप्रैल 1997से 29 मार्च 2002 तक निर्धारित था। नौवी पंचवर्षीय योजना में पांच क्षेत्रो कृषि एवं पशुपालन, स्वास्थ्य, शिक्षा, महिला एवं बाल विकास तथा युवा मामलो और पेय जल एवं सफाई को विशेष कार्ययोजना में शामिल किया गया। इस योजना में कृषि एवं ग्रामीण विकास को प्राथमिकता की गई व 268300 करोड रूपयों का निवेश कृषि क्षेत्र में किया गया।
- दसवी पंचवर्षीय योजना (2002-2007) दसवी पंचवर्षीय योजना की शुरूआत लगभग एवं साल में विलम्ब के साथ 21 दिसम्बर 2002 को राष्ट्रीय विकास परिषद द्धारा अनुमोदन मिलने तथा बाद में केन्द्रीय मंत्रिमण्डल स्वीकृति प्रदान करने के साथ हुई इसकी अवधि 1 अप्रैल 2002 से 31 मार्च 2007 इस योजना में ग्राम विकास व कृषि पर 11.9 प्रतिशत व्यय करने का प्रावधान किया गया था इस योजना में जलप्रबंध पर विशेष बल दिया गया।दसवी पचवर्षीय अब तक की सफलता योजना रही है। अर्थव्यवस्था के तीनो प्रमुख क्षेत्रों कृषि उद्योग व सेवा में दसवी योजना में दौरान प्राप्त की गई वृद्धि दरे इनके लिए निर्धारित किए गए लक्ष्यो के काफी निकट रही है।
- ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012) वर्तमान में भारत में ग्यारहवी पंचवर्षीय योजना की समयावधि 1 अप्रैल 2007 से 31 मार्च 2012 तक के योजना आयोग द्धारा राज्य की पंचवर्षीय योजना का कुल बजट 71731.98 रोकड रूपये अनुमोदित किया गया है। या उदव्य 10 वीं योजना से 39900.23 करोड ज्यादा कृषि वृद्धि दर 3.5 उद्योग वृद्धि दर 8 प्रतिशत सेवावृद्धि दर 8.9 प्रतिशत घरेलू उत्पादन वृद्धि दर 7.4 प्रतिशत।

11 वी पंचवर्षीय योजना के अंतिम वर्ष के लिए मांग अनुमान

फसले	मांग मिलियन टन में
अनाज	224
ढाले	20
कुल खाद्यान्न	244
तिलहन	53/3
गन्ना	322
कपास	28.7 मिलियन बैल्स प्रति 170 किग्रा
जूट व मेस्टा	9.87 मिलियन बैल्स प्रति 180 किग्रा

- 12 वी पंचवर्षीय योजना (2012-2017) आयोग ने वर्ष 2012-17 तक चलने वाली 12 वीं पंचवर्षीय योजना में सालाना 10 फीसदी की आर्थिक विकास दर हासिल करने का लक्ष्य निर्धारित किया है वैश्विक आर्थिक संकट का अन्य भारतीय अर्थव्यवस्था पर भी पडा है इसी में चलते 11 पंचवर्षीय योजना में आर्थिक विकास दर की रफतार की 9 प्रतिशत से घटाकर 8.1 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया है। सितम्बर 2008 में शुरू हुए आर्थिक संकट का घटाकर 6.7 प्रतिशत हो गई थी।

वित्त वर्ष 2009-2010 में अर्थव्यवस्था में हुऐ सुधार से आर्थिक विकास 8.5 प्रतिशत तक होने को अनुमान लगाया है। 12 पंचवर्षीय योजना को लेकर हुए पहली बैठक के बाद योजना आयोग वे उपाध्यक्ष मोटेकसिंह आहलूवालिया ने संवाददाताओं से कहा कि प्रधानमंत्री मनमोहनसिंह ने हम 12 वीं पंचवर्षीय में 10 प्रतिशत की आर्थिक विकास दर हासिल करने ही बात रही है। **(सारणी देखें)**

सुझाव -

- भारतीय मानसून द्वारा वर्षा कालीन ग्रीष्म कालीन शीतकालीन, जलवायु व मौसम
- योजना आयोग - प्रथम पंचवर्षीय 12 वी पंचवर्षीय समीक्षा
- भारत जल संसाधन मंत्रालय द्वारा उत्तर भारत, पूर्वी भारत, पश्चिम भारत, दक्षिण भारत, के भौगोलिक स्थिति, समयसीमा कार्यो आदि के लिये मासिक व वार्षिक बैठक हो।
- भारत में प्राकृतिक आपदाएं बाढ के लिये राष्ट्रीय आय, उत्तरप्रदेश, उत्तराचल मानवीय, जम्मू कश्मीर, पूर्वी भारत एवं आय राज्यों
- भारत कृषि प्रधान देश है कृषि विकास के कृषि नवाचार
- भारत में कृषि विकास शिक्षा, जीवन बीमा, बैक के द्वारा जोग दुग्धपालन, सब्जी।

निष्कर्ष - उपरोक्त विश्लेषण से यह ज्ञात हो रहा है कि पंचवर्षीय योजनाओं में कुल व्यय की राशि में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि क्षेत्र में आवंटित व्यय 290 करोड रूपये था। जो कि कुल व्यय 1960 करोड़ 14.8 प्रतिशत था वही दसवी पंचवर्षीय योजना में 1525639 करोड़ का 11.9 प्रतिशत था यहॉ स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि कृषि के महत्व को जानते हुए भी इस क्षेत्र की तरफ विशेष रूप से भारतीय के अर्थव्यवस्था में कृषि विकास का महत्वपूर्ण स्थान है।

भारत की अर्थव्यवस्था का एक बडा हिस्सा भारत में योजना आयोग द्वारा विकसित कायन्वित और इसकी देखरेख में चलने वाली पंचवर्षीय योजनाओ पर आधारित है। प्रधानमंत्री ने योजना आयोग का पदेन अध्यक्ष पद के साथ आयोग मनोनीत उपाध्यक्ष भी होता है जिसका ओहदा एक केबिनट मंत्री के बराबर होता है। भारत के प्रथम पंचवर्षीय योजना 1951 से 12 वीं पंचवर्षीय योजना 2012-2017 तक पंचवर्षीय योजना पर आधारित कृषि विकास एवं भारतीय मानसून, बाढ, सूखा प्राकृति आपदाउएं मानवीय आपदाएं आदि भौगोलिक स्थिति को प्रभावित करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थशास्त्र - डॉ. जे.बी. साहित्य भवन, आगर
2. कृषि अर्थशास्त्र - जयप्रकाश मिश्र, साहित्य भवन
3. भारतीय अर्थव्यवस्था विकास एवं आयोजन विश्व प्रकाशन अंसारी रोड नई दिल्ली
4. यूनिफाईड अर्थशास्त्र माइक्रो अर्थशास्त्र भोपाल
5. कृषि भगोल डॉ. माजिद हुसैन जयपुर
6. पशुपालन समय की मांग प्रकाशन हैड इन हैण्ड नीदर लैण्ड से फायनेन्सीएटिग्स डॉ कल्पना शंकर
7. योजना आयोग भारत सरकार नई दिल्ली

****

संगीत

डॉ. श्रीपाद् आरोणकर *

शोध सारांश – संत कबीर की रचनाओं में संगीत तत्वों का अध्ययन हमारा मुख्य प्रयोजन है। कबीर साहब की रचनाओं में संगीत एवं योग का सम्बन्ध सहज ही परिलक्षित होता है

''तुम जोनि जानौ गीत है,
यहु निज ब्रह्म विचार''

कबीर साहब ने गीत को महत्व दिया है परंतु इसके माध्यम से अध्यात्म व ब्रह्म का विचार ही उनका साधन है। नाम स्मरण भजन ईश्वर की गुण गाथा यह सभी सांगीतिक साधन कबीर दास जी के लिए उपास्य तह पहुंचने के साधन मात्र है।

शब्द कुंजी – संत कबीर के गेय पद इसमें निहित संगीत तत्व भारतीय संगीत, कबीर सम्तव, वीणा वाद्य यंत्र, नृत्य, राग बसंत, फाग, आनंद, मस्ती।

प्रस्तावना – 'संत कबीर दास जी के गेय पदों में निहित संगीत तत्व' संत कबीर सन्तकाव्य परम्परा के प्रखर उपदेशक है। संत ने साखी, रमैनी एवं सबद के माध्यम से सामाजिक चेतना का जागरण किया है। उन्होंने सामाजिक आडंबर, कुरीतियाँ एवं अंधविश्वासों से जनसामान्य को दूर रहने की सलाह दी है एवं मानव में बसी आत्म रूपी परमेश्वर को ही प्राप्त करने का आह्वान, अपनी रचनाओं के माध्यम से किया है।

संत कबीर की रचनाओं से कुछ चुने हुए पदों के माध्यम से संगीत पक्ष का अवलोकन हमारा प्रयोजन है। संत कबीर के आदि ग्रंथों एवं सम्पादित ग्रंथावलियों के संग्रह से प्राप्त रचनाओं में रागों के अनुसार वर्गीकरण पाया जाता है तथापि कबीर साहब की रचनाओं में संगीत पक्ष सहज हो उभरकर सामने आता है। साहब की रचनाओं में संगीत के परिभाषित शब्द एवं उसका योग से एवं अध्यात्म से संबंध सहज ही परिलक्षित होता है। यही अवधारणा उनके संगीतज्ञ एवं संगीत के प्रति समर्पण को स्वीकार करने के लिए पर्याप्त आधार प्रदान करती है। कुछ उदाहरणों से इसे समझा जा सकता है।

'तुम जीनि जानौ गीत है, यहु निज ब्रह्म विचार' कबीर साहब ने गीत को महत्व दिया है। परंतु यह भी स्पष्ट किया है कि वे गीतों के माध्यम से ब्रह्मा का विचार रख रहे है। नाम स्मरण, भजन, ईश्वर की गुण गाथा यह सभी सांगीतिक साधन कबीरदास जी के लिए उपास्य तक पहुँचने के साधन मात्र है।

1. गुण गोविन्द के गाई मुखि अमृत गुण गाई।
2. तू हरषि हरषि गुण गाई।

जैसे प्रयोग संगीत पक्ष को समझने में सहायता प्रदान करते हैं। संगीत को प्रेम, भक्ति, आनंद, करूणा के द्वारा व्यक्त करने का कबीर साहब का अनूठा संकल्प है जो हमें उनकी अध्ययन हेतु ली गई रचनाओं में प्राप्त होता है।

भक्ति मार्ग में भजन एक सरस माध्यम है जो हमें हरि से साक्षात्कार करवा सकता है।

'निरमल निरमल राम गुण गावै सो भगता मेरे मनि भावै'

भारतीय संगीत शास्त्रों में संगीत का योग विधा से घनिष्ठ संबंध है। नाद दानों विधाओं में अधिपति है। आहद् या साकार नाद की साधना संगीत में की जाती है, नहीं अनहद् नाद का संबंध योगियों की कुण्डलिनी जागरण से है।

संगीत के विद्वान हृदय के अनाहद् चक्र से मंद्र, कण्ठ के विशुद्ध चक्र से मध्यम तथा मुध्दी के सहसार चक्र से चार सप्तको की उत्पत्ति मानते है। संभवत: स्वरों की उत्पत्ति में यह मन प्रामाणिक एवं तर्क सम्मत प्रतीत होता है।

कबीर साहब – तात्कालिक सांगीतिक परिस्थितियाँ – कबीर साहब के रचना काल का अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि उस समय भक्ति आंदोलन प्रारंभ हो चुका था। तमिल नायनारों एवं अलवार भक्तों की संगीत रचनाओं का प्रचार प्रसार हो रहा था। मराठी तथा कन्नड़ भाषाओं में गेय पद लिखे जा रहे थे। त्रयदेव के 'गीत गोविन्द' से प्रेरणा प्राप्त कर विद्यापति एवं चण्डीदास ने भी गेय पदावलियों की रचना की थी। भक्त कवियों का संगीत से अगाध प्रेम था कुछ संतों के चित्र भी हमें वाद्यों के साथ ही प्राप्त होते है तथा नामदेव, हरिदास आदि।

कबीर के पूर्ववर्ती एवं परवर्ती संत कवियों में कर्नाटक प्रांत के वीर, शैव एवं हरिदास, महाराष्ट्र के वार करी बंगाल के सहजिया, उड़ीसा के पंचसाखा, असम के महा पुरूशिया, गुजरात के नरसी, राजस्थान की मीराबाई, पंजाब के नानक, हरिदास स्वामी, सूरदास जी उत्तरप्रान्त से सभी गायक एवं भक्त परम्परा से है। कीर्तन एवं भजनों को पर्याप्त प्रचारित किया गया।

उपर्युक्त सांगीतिक वातावरण के कारण कबीर साहब की रचनाओं में सांगीतिक प्रवृत्ति सहज ही अनुमेय है।

कबीर साहब जहां आहद् नाद के महत्व को स्वीकार करते हैं, वहीं अनहद् नाद को भी ईश्वरीय सत्ता व चेतन को प्राप्त करने का आधार बताते हैं। संगीत और योग विधा को अविभाज्य अंग बताते हुए उन्होंने भक्ति की निर्गुण धारा को प्रवाहित किया है। सांगीतिक पक्ष के उद्घाटन के लिए सबद और रमैनी में संकलित पदों का सहारा लिया जा सकता है। इन पदों में शास्त्रीय पक्ष और आध्यात्म जितना प्रभावी है उतना ही लोक पक्ष और सांस्कृतिक। इन सभी तथ्यों का समन्वय करते हुए कबीर अपने चरण साध्य तक पहुँचते हैं।

पद क्रमांक 1

जन्त्री जन्त्र अनूपम बाजै, वाके अष्ट गगन मुख गाजे,
तू ही बाजे तू ही गाजे, तू ही लिए कर डोले,
एक शब्द मों राग छत्तीसों अनहद बानी बोले,

* सहायक प्राध्यापक (संगीत) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

मुख कैं नाल श्रवण कैं तुम्बा सद्गुरू साज बनाया,
जिभ्या के तार नाषिका चरई, माया का मोम लगाया,
गगन मण्डल में भया उजियारा, उल्टा फेर लगाया,
कहहिं कबीर जन भये विवेकी, जिन जन्त्री सो मन लाया।

प्रस्तुत पद में संगीत तत्वों का स्थान – उपर्युक्त प्रस्तुत पद में संगीत की आराध्या माँ सरस्वती के प्रिय वाद्य वीणा एवं उसे अंगों का मानव शरीर से तादात्म्य स्थापित किया है। वीणा की झंकार आठवें शिखर तक गुंजित है अर्थात् तार सप्तक के संबंध में कबीरदास जी ने संकेत किया है।

- वीणा वाद्य के अवयवों का सूक्ष्म वर्णन कबीर साहब के संगीतज्ञ होने का प्रमाण होते हैं।
- छ: राग छत्तीस रागिनियाँ – यह संगीत राग रागिनी पद्धति से लिया गया है। मध्यकालीन संगीत में प्रबंध एवं वीणा वादन का प्रचार था। अत: राग रागिनी पद्धति की पदों में चर्चा कबीर साहब के प्रति गहन अध्ययन की परिचायक है।
- कबीर साहब का उद्देश्य संगीत के प्रचार प्रसार से नहीं था अपितु संगीत को उन्होंने साध्य तक पहुँचने का साधन मात्र माना है। अत: उनका आग्रह है कि वीणा यंत्र के कार्य में न रमवर वीणा वादक यंत्री चेतन में मन को लीन करता है।

पद क्रमांक 2

जहाँ खेलत बसंत रितुराज,
जहाँ अनहत बाजा बजै बात,
चहुँ दिसि ज्योति की बहै धार,
बिरला जन कोई उतरै पार,
कोटि कृष्ण जहाँ जोड़े हाथ,
कोटि विष्णु जहें नावै माथ,
कोटिन ब्रह्मा पढ़ै पुरान,
कोटि महेष धरै जहँ ध्यान,
कोटि सरस्वती जहें धार राग,
कोटि इन्द्र जहँ गगन लाग,
सुर गंधर्व मुनि गनै न जाए,
जहँ साहब प्रगटे आय आय,
पुष्पवास रस रहो गंभीर।

संगीत तत्व –

राग बसंत – सांगीतिक ग्रंथों में राम बसंत का वर्णन आनंद, उल्लास एवं प्रकृति के यौवन से लिया गया है। बसंत राग उत्सवों का राग है।

फाग – फाग यह फागुन मास में गाया जाने वाला लोकगीत है। परम पुरूष नित्य जीवन प्रिया के साथ फाग का संगीत में संबंध अद्वैत रूप में पाया जाता है।

संत कबीर ने पुन: अनहद नाद ज्योति पुंज के माध्यम से संगीत एवं योग की अभंग व्यवस्था के माध्यम से सर्वशक्तिमान आत्माराम को रिझाने का मार्ग बतलाया है।

पद क्रमांक 3

नाचु रे मन मत्त होय,
प्रेम को राग बजाया रैन दिन शब्द सुनै सब कोई,
राहू केतू नवग्रह नाचै, लोक नाचे हंस रोई,
छापा तिलक लगाई बांस चढ़ हो रहा जग से न्यारा
सहस कला कर मन मेरो नाचै रीझो सिरजन हारा।

संगीत पक्ष – संगीत विद्या में नृत्य का पर्याप्त स्थान है। नृत्य का संबंध नटराज एवं गंधर्व लोक की अप्सराओं से है।

- आनंद प्राप्ति एवं भावों के द्वारा ध्यान हेतु नृत्य करने का आह्वान कबीर ने किया है।
- मस्ती में नाचकर परमानंद की अवस्था प्राप्त करने का मंत्र कबीर ने नृत्य के माध्यम से दिया है।

उपसंहार एवं समापन

संत कबीरदास जी का संगीत पक्ष –

- संत कबीरदास जी ने पदों में संकेत दिये हैं कि उनकी रचनाएँ गाई गयी हैं, पश्चात् उनका लेखन हुआ है।
- कबीरदास जी ने नाद को महत्व दिया है आह्द नाद को संगीत के पारिभाषिक शब्द के रूप में तथा अनहद नाद को निराकार, निर्गुण एवं योगियों के नाद के रूप में प्रस्तुत किया है।
- सत्यम् शिवम् सुन्दम् की अवधारणा संत कबीर के पदों में भाव व्यंजना, अभिव्यक्ति, लयात्मकता के माध्यम से प्राप्त होती है।
- राग रागिनी पद्धति की चर्चा मध्यकालीन संगीत के अध्ययन में सहायक है। प्रबंध एवं वीणावादन की ओर कबीर साहब का सूक्ष्म निरीक्षण आपके संगीत पक्ष को उजागर करता है।
- छ: राग और छत्तीस रागिनियों की चर्चा, ऋतुराज बसंत का उल्लेख, लोक संगीत की विधा, फाग का वर्णन, कबीरदास जी के संगीत पक्ष को जानने के लिए पर्याप्त है।
- पदों में छंदों की टेक एवं अंतरा का चित्रण वर्तमान बंदिशों के सदृश है। वर्तमान गायन में स्थाई अंतरा संचारी आभोग का पालन नहीं होता अपितु स्थाई अंतरा ही बंदिश निर्माण हेतु पर्याप्त है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'कबीर' अली सरदार जाफरी राजकमल दिल्ली।
2. 'संत काव्य' आचार्य परशुराम चतुर्वेदी प्रकाशन काशी।
3. 'बीजक' अभिलाष दास साहेब, पारख प्रकाशन इलाहाबाद।
4. पत्र-पत्रिकाएँ।

****

संगीत में मल्हार एवं वर्षा चौमासा

डॉ. बी. वर्षा *

शोध सारांश – मनुष्य की सफलताओं एवं असफलताओं का आंकलन उसके ऐतिहासिक परिदृश्य में दिखाई देता है। मानव जाति, उसकी सभ्यता तथा संस्कृति का उद्‌भव एवं विकास किस प्रकार हुआ, इस सम्बन्ध में भले ही विद्धानों में मतभेद हों, किन्तु प्रगति तथा विकास के पथ पर अग्रसर होना, यह मानव जाति का स्वाभाविक गुण है। अपनी कल्पना तथा बुद्धि से किसी भी रचना का निर्माण करना यह उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति, कल्पना तथा सृजनात्मकता पर अवलम्बित होती है और इसी प्रतिभा के आधार पर मानव ने अपनी सभ्यता और संस्कृति को विकसित किया, जिसके परिणामस्वरूप आज हम मानव जाति को प्रगतिशील, उच्च तथा सभ्य स्थिति में पाते हैं।

प्रस्तावना – प्राय: सृजनात्मकता को साहित्य तथा विभिन्न कलाओं के साथ जोड़कर देखा जाता है, किन्तु वास्तविक रूप से सृजनशीलता का सम्बन्ध जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों से है। किसी भी समाज एवं संस्कृति की कलायें ही सृजनशीलता का मूल आधार होती है। सृष्टि के कण-कण में व्याप्त संगीत भी हृदय के भावों को प्रकट करने का एक सशक्त कलापूर्ण माध्यम है। संगीत, एक ललितकला है इसलिये इसमें मधुरता एवं नवीनता का समन्वय देखा जा सकता है और यही कलाओं का धर्म भी है। नूतन आविष्कारों को अंगीकार करने के बाद भी संगीत ने अपनी परम्परा को भंग नहीं किया है और यही कारण है कि प्राचीन काल से आज तक संगीत की विभिन्न कड़ियाँ एक-दूसरे से दृढ़ता से जुड़ी हुई है। संगीत वह विधा है जिसका कोई अंत नहीं है। यह आनंद प्रदान करने वाली कला है, जिससे मनुष्य के साथ-साथ समस्त पर्यावरण भी परमानंद से जुड़ जाता है। यह जीवन को संयमित रखने वाली कला है। अत: ब्रह्माण्ड की प्रत्येक चल वस्तु में संगीत का अस्तित्व दिखाई देता है।

संगीत प्रस्तुति के मूलत: तीन उपकरण माने जाते हैं – स्वर, लय तथा काव्य। भावाभिव्यक्ति में संगीत के द्वारा करूण, श्रृंगार, वीर, वात्सल्य आदि रसों की निष्पत्ति स्वाभाविक रूप से होती हुई दिखाई देती है। शब्दों के उतार-चढ़ाव, स्वर तथा लय के माध्यम से सहज ही भावों को व्यक्त करते हैं।

भारतीय संगीत की परम्परा बहुत ही सृदृढ़ एवं समृद्धशाली रही है। संगीत की विभिन्न शाखाओं अर्थात् शास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, फिल्म संगीत, लोक संगीत आदि में सृष्टि की लगभग सभी चीजों का उल्लेख दिखाई देता है। चाहे वह ऋतुऐं हों, पर्व हों, तीज-त्यौहार हों अथवा राधा-कृष्ण की लीलायें हों। भारतीय शास्त्रीय संगीत में ऋतुओं पर कई बंदिशों का निर्माण किया गया है, खासकर वर्षा ऋतु। वर्षा, जिसे पर्यायवाची रूप से हम बरखा या पावस ऋतु भी कहते हैं, मन को आनंदित एवं प्रफुल्लित करने वाली ऋतु है। वर्षा ऋतु को बरखा चौमासा भी कहा जाता है, क्योंकि लगभग जून माह से सितम्बर माह तक यह मौसम रहता है। बारिश के ये चार माह, जिसमें त्यौहारों, पर्वों तथा शिवप्रिय श्रावण मास एवं विघ्नहर्ता गजानन के आगमन का भाद्रपद मास भी शामिल है, चौमासा के अंतर्गत आते हैं। जब पृथ्वी जेठ की तपती गर्मी के थपेड़ों से क्लांत होकर बारिश की बूँदों से अपने आप को तृप्त महसूस करती है और जब इंद्रदेवता अपना भरपूर स्नेह धरती माता पर लुटाते हैं, तो ऐसा प्रतीत होता है मानो समस्त पर्यावरण प्रफुल्लित होकर वर्षा ऋतु का स्वागत कर रहा हो।

वर्षा ऋतु पर कई बंदिशें, कई फिल्मी गीत रचे गये जो काफी लोकप्रिय भी हुए। शास्त्रीय संगीत में पावस ऋतु के लिये मल्हार राग को प्रधानता दी जाती है, अर्थात् वर्षा ऋतु की बंदिशें अक्सर मल्हार के विभिन्न रागों में दिखाई देती है। इन बंदिशों के परिचय से पहले मल्हार का अर्थ जानना आवश्यक है। मल्हार का अर्थ होता है – मल-हार अर्थात् मैल धोने वाला या मल का हरण करने वाला। जिस प्रकार वर्षा ऋतु के आगमन से पृथ्वी का सारा मैल तथा कीचड़ साफ हो जाता है और समस्त वातावरण सजीव हो उठता है, ठीक उसीप्रकार एक संगीत साधक भी अपने मन के मैल को धोकर मन को शुद्ध, स्वच्छ, राग-द्वेष से मुक्त कर एक सफल साधक बन सकता है। मेघ अर्थात् बादल को भी मल्हार की संज्ञा दी जाती है। मल्हार तथा उसके प्रकारों की विशेषता यह है कि ये राग वर्षा ऋतु में कभी भी गाये जा सकते हैं। इसलिये इन्हें मौसमी राग भी कहा जाता है। मल्हार राग की बंदिशों में विशेष रूप से बादल, बिजली, चातक, मोर, पपीहा, कोयल, दादुर आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

वर्षा ऋतु के वर्णन से ओत-प्रोत मल्हार रागों की बंदिशें कुछ इस प्रकार हैं –

1. **मियां मल्हार** – यह एक लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध मल्हार राग है। कहा जाता है कि मियां तानसेन के द्वारा इस राग की रचना की गई। इसलिये इस राग के साथ मियां शब्द जुड़कर मल्हार राग का नाम मियां मल्हार हुआ। इस राग की उत्पत्ति काफी थाट से मानी जाती है और इस राग में मल्हार एवं कानड़ा का मिश्रण होता है।

बंदिश –

जा जा रे पपीहरा, अब तू काहे पी-पी शोर मचाये
पिया बिन तरपत मो बिरहन को काहे अधिक जरावे
उड़ जा, उड़ जा रे पपीहरा

इसी राग की एक बहुत प्रसिद्ध रचना है जिसमें वर्षा ऋतु का बखान इस प्रकार किया गया है –

बोल रे पपीहरा, पपीहरा, अब घन गरजे, अब घन गरजे
उन उन कर आई बदरिया, बरसन लागी सदा रंगीले
मोहम्मद शा, दामिनी सी कौंध-चौंध मोरा जियरा लरजे

2. **गौड़ मल्हार** – यह भी मल्हार का एक प्रसिद्ध प्रकार है, जिसकी उत्पत्ति काफी थाट से ही मानी जाती है। इसमें गौड़ तथा मल्हार का सम्मिश्रण दिखाई देता है। बरखा ऋतु की बंदिश है –

* सहायक प्राध्यापक (गायन) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

बंदिश –

आये गरजत आये बदरवा, बरसन लागे चहूं ओर
बोलन लागे पपीहा मोर
दामिनी दमकत, जियरा धरकत, घन गरजे घनघोर कर शोर
बोलन लागे पपीहा मोर

इसी राग में सावन पर आधारित रचना है –

झुक आई बदरिया सावन की, सावन की मनभावन की
सावन में उमगे जोबनवां, छांडि चले परदेस सजनवा
सुधी न रही घर आवन की

3. मेघ मल्हार – मल्हार और सारंग इन दो रागों के मिश्रण से बना यह राग भी काफी थाट के अंतर्गत आता है। यह गम्भीर प्रकृति का राग है और इस राग का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है। इस राग की प्रस्तुत बंदिश में बादलों का वर्णन इस प्रकार है –

बंदिश –

बरसे मेहा घनन–घनन, पवन चलत सनन–सनन
पायल बाजे झनन–झनन, कैसे जावुं में पिया के भवन

4. सूर मल्हार – मल्हार का एक और प्रसिद्ध प्रकार सूर मल्हार है। कहा जाता है कि शहंशाह अकबर के दरबार में रामदास नामक एक गायक थे तथा उनके पुत्र, जिनका नाम सूरदास था, ने इस राग को प्रचारित किया। इस राग में सारंग, मल्हार, सोरठ तथा देस का संयोग दिखाई पड़ता है।

बंदिश –

बादरवा बरसन को आये, नन्ही नन्ही बूंदन
गरज गरज अब चहुँ ओर ते बिजुरी चमकत
कुंवर श्याम नहीं आये सजनी, कौन सौतन सन नेहा लगाये
एक घड़ी पल छिन कलना परत अब

मल्हार राग के परम्परागत रागों में ही नहीं वरन् आधुनिक एवं अप्रचलित मल्हार के प्रकारों में भी वर्षा ऋतु का वर्णन सृजनकार करते चले आ रहे हैं। जैसे मल्हार का एक अप्रचलित प्रकार है – अरूण मल्हार।

5. अरूण मल्हार – मल्हार का यह प्रकार बहुत कम सुनाई पड़ता है। इसमें अलग–अलग रागों का मिश्रण – गौड़, बिलावल तथा तिलंग का अंश दिखाई देता है। इसमें पावस ऋतु का वर्णन इसप्रकार किया गया है –

बंदिश –

बरखा न भावे उन बिन री
शीतल पवन लागे दहन
दामिनी दमक मुरला बोलन

वैसे मल्हार के अनेक प्रकार हैं और उन सभी रागों की बंदिशों में वर्षा ऋतु का बखूबी वर्णन दिखाई देता है। ऐसा नहीं है कि केवल मल्हार या उसके प्रकारों में ही इस ऋतु की रचनायें की जाती हों अन्य कई रागों में भी इस ऋतु से सम्बन्धित रचनायें दिखाई देती है।

संगीत की अलग–अलग शाखाओं अर्थात् शास्त्रीय संगीत के साथ–साथ उपशास्त्रीय संगीत जैसे टप्पा, ठुमरी, दादरा एवं फिल्म संगीत में भी बरखा ऋतु के गीत सुने जा सकते हैं। फिल्म संगीत, जो कि संगीत की बहुत ही समृद्ध एवं लोकप्रिय धारा है, में वर्षा ऋतु से ओत–प्रोत कई गीतों का फिल्मांकन एवं गीतों का सृजन किया गया है। यही नहीं इस ऋतु पर आधारित कई फिल्मों के नाम रखने की परम्परा भी हमें फिल्मों में दिखाई देती है। जब से फिल्मों में आवाज का प्रयोग होना प्रारंभ हुआ, तब से समाज में फिल्मों की लोकप्रियता का ग्राफ भी बढ़ने लगा। सामाजिक मुद्दों के साथ–साथ फिल्मों में त्यौहार, व्रत, मौसम आदि विषयों पर भी गाने बनाने का चलन प्रारंभ हुआ। कई मशहूर गीत वर्षा ऋतु पर लिखे गये, जिसमें कुछ प्रमुख गीत हैं – बरखारानी, जरा जम कर बरसोय, बरसात में तुमसे मिले हम सजन, हमसे मिले तुम बरसात में , सावन आये या न आये, जिया जब झूमे सावन है , कहां से आये बदरा, घुलता जाय कजरा , नैनों में बदरा छाये, बिजुरी सी चमके हाय , घिर आए मेघ, परबत पर बिजुरिया चमके , सावन का महीना पवन करे सोर अथवा जारे जारे बादरा जा रे कारे बादरा, मोरी अटरिया न शोर मचा , रिमझिम के तराने लेके आई बरसात के साथ ही गुड्डी फिल्म का का लोकप्रिय गीत बोल रे पपीहरा, पपीहरा और फिल्म मंजिल का मशहूर गीत रिमझिम गिरे सावन, सुलग–सुलग जाय मन को कौन भूल सकता है। ये गीत तो मात्र कुछ उदाहरण हैं, ऐसे न जाने कितने ही गीत हमारी फिल्म संगीत में इस बरखा रानी पर रचे गए हैं। ये सिलसिला थमा नहीं है, आधुनिक दौर में भी पावस ऋतु गीतकारों की पसंद बनी हुई है तभी तो बरस जा ऐ बादल बरस जा , बरसो रे मेघा मेघा, बरसो रे मेघा या कभी जो बादल बरसे, मैं देखूं तुझे जी भर के जैसे गीत रचने का चलन जारी है। बरखा, सावन, बरसात, पानी, बारिश की ऋतु के इन शब्दों का समावेश कई फिल्मी नामों के लिये भी किया गया है– उदाहरण के तौर पर कुछ नाम लिये जा सकते हैं जैसे – बरसात, सावन भादौ, बरसात की एक रात, सावन की घटा, आया सावन झूम के, बादल, मौसम आदि।

भारत में फिल्म संगीत शास्त्रीय संगीत के साथ–साथ लोक संगीत की भी समृद्ध परम्परा विद्यमान है। लोक संगीत, जिसका अपना एक अलग व्यापक एवं स्वतंत्र अस्तित्व है तथा यह लोक जनरंजन के माध्यम से नित नये सृजन से जनमानस को तृप्त करता चला आ रहा है। सरलता, स्वाभाविकता, सादगी ये लोक संगीत की विशेषता है। लोक गीत अधिकतर लोकधुनों पर आधारित होते हैं तथा ये जीवन का जीवंत चित्र प्रस्तुत करते हैं। लोक संगीत भी वर्षा ऋतु के मनमोहक अंदाज से जुदा नहीं है, हालांकि पूर्ण रूप से लोकसंगीत एवं वर्षा ऋतु का वर्णन करना यहां असंभव है, क्योंकि लोकसंगीत का अपना एक विस्तृत क्षेत्र है, किन्तु संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि लोकसंगीत के गीतों में भी वर्षा चौमासा अपनी उपस्थिति दर्ज कराता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि हमारा भारतवर्ष जहां सांस्कृतिक एकता के रूप में प्रख्यात है वहीं हमारा संगीत भी अपनी सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण बनाये रखने में अपनी महती भूमिका निभा रहा है और यही कारण है कि हम संगीत के माध्यम से अपनी परम्पराओं, ऋतुओं, पर्वों, त्यौहारों तथा हमारी सांस्कृतिक विशेषताओं से पूरी दुनिया को अवगत कराने में सफल रहे हैं। पूरे विश्व में भारतीय संस्कृति का परचम इसी प्रकार लहराता रहे, इस हेतु हम सभी को सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शाह जयसुखलाल – मल्हार के प्रकार – पी. अनंत इंजीनियरिंग वर्क्स, बम्बई
2. राग पंकज – धुनों की यात्रा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली (2006)
3. मो. शरीफ – मध्यप्रदेश का लोकसंगीत, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, (2004)
4. जौहरी सीमा – सांगीतिक निबंधमाला, पीयूष प्रकाशन, दिल्ली (2001)
5. संगीत कला विहार – संगीत मासिक पत्रिका (जून 2010)
6. संगीत कला विहार – संगीत मासिक पत्रिका (जनवरी 2011)
7. संगीत कला विहार – संगीत मासिक पत्रिका (नवम्बर 2013)
8. संगीत कला विहार – संगीत मासिक पत्रिका (अगस्त 2014)
9. पं. भातखण्डे, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग–4, संगीत कार्यालय, हाथरस (2000)

Study Of Awareness About RTI And Media

Dr. Mamta Barman *

Abstract - India is a democracy RTI is a most important key element of a democratic government. It includes people's participation, the resolution of conflict equality and justice. The Indian Constitution recognizes can protect people from discrimination and ill-treatment. Laws, government programmes, schemes play an important role to help disadvantaged communities and provide greater opportunity for public welfare.People can demand and know the developmental programmes and public services and also raise questions about their non-functioning for the benefit of all citizens.

In a democracy a balanced media report plays a very important role in providing news and discussing events taking place in the country and the world. Media is the plural form of the word 'medium' and it describes the various ways through which we communicate in society. TV. Radio newspapers, magazine, internet; phone call are a form of media that reaches millions of people, or the masses, across the country and the world and thus they are called mass media. It has enabled us to think of ourselves as members of a larger global world. Most of the times due to the lack of primary and complete facts the correspondent writes limbed, exaggerated, false and preconceived news. The RTI is providing this opportunity to procure all the facts. It has given birth to new and a very powerful source of information. The journalist and the media should start to utilize it with full effect. This will certainly change the horizon of journalism. This study is an attempt to see the awareness among 200 urban and rural graduate students about Media, RTI and its proper use. Significant difference was found between urban-rural graduate students regarding the awareness about RTI and media.

Introduction - As citizens of a democracy, the media has a very important role to play in our lives because it is through the media that we hear about issues related to the working of the government. A balanced report is one that discusses all points of view of a particular story and then leaves it to the readers to make up their minds. Writing a balanced report, depends on the media being independent: An independent media means that no one should control and influence its coverage of news. An independent media is important in democracy. Information provided by media should be reliable and not biased

The reality is that media is far from independent because of censorship. Despite the absence of censorship by the government, most newspapers still fail to provide a balanced story. Business houses also control the media. It is important for us to be aware that the factual information that a news report provides is often not complete and can be one-sided. Media sets the agenda.[1]

The press council on March 2001, had stated that the Right to information legislation as very vital for the media. The objective of the study is to examine the awareness of young graduates about RTI, media and its proper use. It was hypothesized that there will be no significant difference among urban-rural student's awareness about RTI.

Method - The sample was selected from Narsinghpur (M.P.) 200 urban and rural graduate students participated.

Table

Sample

Groups	N	Mean	SD	CR-Value
Rural	110	29.20	10.50	3.48
Urban	90	33.80	8.10	

Minimum value of 0.05 level = 1.96
0.01 level = 2.58

Awareness was studied with the help of self-structured RTI Awareness Inventory. The mean values was carried out to compare the awareness, then (critical ratio) CR-value was calculated to see whether there was any significant difference between the group means of urban and rural graduate students with regard to their awareness about RTI & Media.

Result and Discussion - Mean scores clearly indicate that rural students have less awareness than urban students. They are less concerned with its proper use. To verify the hypothesis CR value was calculated. Obtained value of CR is 3.48 which is more than the minimum value for significance at 0.01 level as such there is significant difference between the group means of urban and rural graduate students. It can be inferred from the above result that there is difference in awareness among graduate students. Hypothesis is rejected here. Results reveal that it is necessary for every citizen, should know what is happening in their society.

The RTI becomes a constitutional right, being an aspect of the right to free speech and expression which includes the right to receive and collect information. An Act is needed to provide a statutory framework for this right. This law will lay down the procedure for translating this right into reality.

In this Age of information its value as a critical factor in socio-cultural, economic and political development is being increasingly felt. In a fast developing country like India, availability of information needs to be assured in the fastest and simplest form possible. This is important because every developmental process depends on the availability of information. The RTI should also be extended in respect of companies, NGOs and international agencies whose activities are of a public nature and have a direct bearing on public interest. It will encourage journalists and society at large to be more questioning about the state of affairs and will be powerful tool to check the unmitigated goings-on in the public realm and will also promoter accountability. Through this legislation, transparency in public, professional and personal sphere can be achieved.

References -1. Agrawal, K. RTI and Communication, Delhi
2. मध्यप्रदेश माध्यम।

* **Asst.Prof. (Psychology) Govt. P.G. College, Narsingpur (M.P.) INDIA**

क्रीड़ा कौशल विकास: मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

सुधा शाक्य *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध आलेख खिलाड़ियों में क्रीड़ा कौशल विकास किस प्रकार किया जाए इसका मनोवैज्ञानिक पक्ष क्या है ? के उद्देश्य को स्पष्ट करता है। खिलाड़ियों की खेल के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है, और अपने उत्कृष्ट प्रदर्शन से ही वह 'सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी' बनता है। उसके इस कौशल में प्रवीणता लाने के लिए उसके प्रशिक्षक एवं खेल मनोवैज्ञानिक की विशेष भूमिका रहती है जो अपने प्रशिक्षण एवं परामर्श से उसे हीरे की तरह तराशता है, और एक सामान्य खिलाड़ी सफलता की बुलंदियों को छूकर देश का सम्मान विश्व में बढ़ाता है, इसके लिए उसे शारीरिक एवं मानसिक रुप से तैयार करने के लिए मनोवैज्ञानिक एवं परामर्शदाता कई सकारात्मक गुणों को विकसित कर निराशा , भय, असफलता की आशंका, द्वेष आदि से मुक्त कर एक स्वस्थ्य तथा सफल खिलाड़ी बनाता है।

प्रस्तावना – हर व्यक्ति खेल खेलना चाहता है क्योंकि यह उनकी प्रवृति है, आंतरिक इच्छा है। इससे मिलने वाले आनंद के लिए व्यक्ति खेलता है, इसे एक प्रकार का मनोरंजन और ऐच्छिक क्रिया भी कहा जा सकता है। खेल के द्धारा व्यक्ति में आनंद उत्साह और सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है, और यही उसकी शक्ति बन जाती है। स्टर्न के अनुसार 'खेल एक ऐच्छिक! आत्मनियंत्रित क्रिया है' जबकि वेलेन्टाइन के अनुसार 'खेल कार्य में एक प्रकार का मनोरंजन है।' मनोवैज्ञानिकों ने खेल को कई और अर्थो में स्पष्ट किया है। थामसन के अनुसार 'खेल कुछ मूल प्रवृतिजन्य क्रियाओं को रोकने की प्रवृत्ति है।'

टी.पी. नन के अनुसार 'खेल रचनात्मक क्रियाओं की व्यापक अभिव्यक्ति है।' जर्मनी दार्शनिक शिलर ने खेल को मनुष्य में बची अतिरिक्त शक्ति की अभिव्यक्ति का सशक्त साधन बताया है। जान डयूई भी व्यक्ति की क्रियाशीलता को सर्वोपरि मानते हैं। मनुष्य जितना अधिक गतिक क्रियाओं को करेगा उतना ही उसका विकास संभव है।

नियोजित खेलों में प्रतिस्पर्धियों को खिलाड़ी कहा जाता है। सिंगर (1972) के अनुसार खिलाड़ी वह व्यक्ति जो नियोजित खेल-कूद में, प्रशिक्षक के दिशा-निर्देश में भाग लेता है। प्रशिक्षण में मनोविज्ञान के उपयोग का उद्देश्य है, खेल-कूद में क्षमता की विकास की रणनीति निर्धारण में उपलब्ध तथ्यों का पूरा-पूरा उपयोग, अधिक सीख सकने के लिए आवश्यक वातावरण के निर्माण की योजना, स्तरीय खिलाड़ियों के व्यक्तित्व के गुण दोष का सही आकलन, जीविकोपार्जन के लिए दिशानिर्देश तथा सलाह जटिल मानसिक समस्याओं के लिए मानसिक रोग चिकित्सा की उपलब्धि आदि। किसी खिलाड़ी के प्रशिक्षक का अर्थ है कि मानसिक तथा शारीरिक ऊर्जा का प्रयोग उपयुक्त कार्यो में, समय में समुचित रुप में कर सके सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन के लिए।

खिलाड़ियों के अपेक्षित व्यक्तित्व गुण – कैटेल (1965) ने व्यक्तित्व की व्याख्या करते हुए कहा है कि 'किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व इस बात की ओर इंगित करता है कि किसी दी हुई परिस्थिति में वह क्या करेगा'? खिलाड़ी के शीलगुण सामान्यत: अपरिवर्तनीय होते हैं, तथा मोटे तौर पर उसमें व्यवहार का निर्धारण करते हैं। ओगिलभाई और टुटको (1972) ने अध्ययन में पाया कि यद्यपि प्रत्येक खिलाड़ी किसी न किसी दूसरे खिलाड़ी में शीलगुण से समानता रखता है, फिर भी वह मानसिक रुप से अद्धितीय है तथा उसे इस अद्धितीय मानसिकता के आधार पर ही समझा जाना चाहिए, न कि उसके साझेदारी वाले शीलगुणों के आधार पर।

मल्होत्रा (1980) ने अध्ययन में पाया कि प्रतियोगी खेलों में उस खेल का कौशल एवं प्रविधि खिलाड़ियों के निष्पादन का महत्वपूर्ण कारक है, परंतु मनोवैज्ञानिक कारक जैसे अभिप्रेरणा एवं इच्छा शक्ति जीतने के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है। पेजर एवं ब्राउन (1978) के अध्ययन में पाया कि खिलाड़ियों में जीत की इच्छा एवं निष्पादन के मध्य सार्थक संबंध होता है। खिलाड़ी में सफलता के लिए उसमें संज्ञानात्मक दक्षता तथा गत्यात्मक दक्षता के मध्य सामन्जस्य होना जरुरी है, साथ ही स्मरणशक्ति का तीव्र होना प्रशिक्षक एवं खिलाड़ी के बीच सौहाद्रपूर्ण संबंध, आत्मअनुशासित करने की प्रविधि, प्रतियोगिता के मनोवैज्ञानिक प्रभाव की समझ आदि ऐसे कारक हैं जो आत्म विश्वास को बढ़ाते हैं, और सफल एवं विजयी प्रदर्शन के लिए प्रेरित करते हैं।

ओलिग भाई व जोहान्सगार्ड (1967) में उच्चस्तरीय प्रदर्शन वाले दल के खिलाड़ियों में बहिर्मुख प्रतिभा, संतुलित संवेग, विश्वनसनीयता, उच्च कोटि का विवेक, दूसरों पर विश्वास कर सकने की क्षमता, उच्च स्तर की संयम, तथा सामान्य से भी कम चिन्ता जैसे शीलगुण पाए। प्रोफेसर पुनी के मतानुसार खिलाड़ी में तत्परता, शक्ति, सहनशीलता, लचीलापन, सही लक्ष्य संधान, धैर्य, दृढ़ता, आत्म नियंत्रण, कृत संकल्पता, समय की समझ, संवेदना एकरुपता, बोध के तल पर क्षमाशीलता तथा तनाव से मुक्ति पाने की योग्यता अवश्य होनी चाहिए। इन्ही सभी गुणों का समुचित विकास ही खिलाड़ी को सामान्य से उच्च स्तरीय बना देता है, और इन्हीं गुणों के कारण कोई खिलाड़ी "सर्वकालीन सर्वश्रेष्ठ" कहा जाता है। तनाव को सहने की क्षमता बढ़ाने का अभ्यास कर उत्पन्न तनाव का सहजता से सामना कर उत्कृष्ट प्रदर्शन कर सकता है।

कौशल विकास में प्रशिक्षक एवं मनोवैज्ञानिक की भूमिका –कौशल विकास हेतु जब प्रशिक्षक और प्रशिक्षार्थी दोनों के विचार एक जैसे हो तभी लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। प्रशिक्षक को सौहार्दपूर्ण एवं घनिष्ठता के वातावरण में दिशा निर्देशों का प्रशिक्षण पा रहे खिलाड़ियों को खेल की समझ विकसित करना अति आवश्यक है। टेनिस के खिलाड़ी जिम कूरियर ने सफल एवं उत्कृष्ट प्रदर्शन के उपरांत बताया कि उन्होंने खेल मनोविज्ञान विशेषज्ञ सह प्रशिक्षक फ्लोरिज के डॉ. जिम जौहर से नियमित परामर्श और

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

प्रशिक्षक लिया था, जिससे खेल की गुणवत्ता और प्रदर्शन में आश्चर्यजनक परिवर्तन एवं सुधार हुआ। खेल में प्रवीणता, सद्भाव, अन्तर्दृष्टि, दूरदृष्टि एंव निष्पक्षता जैसे गुण, प्रशिक्षक में होना ही चाहिए। सिंगर (1972) के अनुसार प्रशिक्षक को खिलाड़ी के तल की भविष्यवाणी, दल का चुनाव, प्रतिस्पर्द्धा के दौरान खिलाड़ी को बदलना जैसी समस्याओं का त्वरित समाधान अपनी बुद्धि, विवेक एवं समझ से करना चाहिए। खेल मनोवैज्ञानिक खिलाड़ियों की प्रतिभा का सही आकलन करता है, साथ ही व्यक्तित्व के विभिन्न आयाओं एवं समस्याओं की सही पहचान करने, प्रशिक्षण व्यवहार का आकलन, खिलाड़ियों की उत्प्रेरणा की विवेचना, प्रतिस्पर्द्धात्मक खेलों में चिन्ता स्तर का परीक्षण, खिलाड़ियों में आक्रमकता की जांच तथा खिलाड़ियों के प्रदर्शन को उत्कृष्ट करने हेतु विभिन्न परीक्षणों जैसे टी.ए.टी., चिन्ता परीक्षण, अभिप्रेरणा परीक्षण, आक्रमकता परीक्षण आदि का उपयोग करता है, तथा उचित मार्गदर्शन एवं परामर्श के द्वारा उनकी प्रवीणता एवं कौशल का विकास करता है।

प्रतिस्पर्द्धात्मक खेलों की मनोवैज्ञानिक तैयारी – खेल की मनोवैज्ञानिक तैयारी का अर्थ है खिलाड़ियों को यदि प्रतिस्पर्द्धात्मक खेलों में अपना उत्कृष्ट प्रदर्शन करना है तथा अपने कौशल को परिलक्षित करता है, तो उसे अपने आप को शारीरिक रुप के साथ ही मानसिक रुप से तैयार करना भी आवश्यक हैं ऐसा करने के लिए सर्वप्रथम उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए स्वयं में प्रेरणा को जागृत करना होगा, और एक बार यदि वह प्रेरित हो गया तो उसके लक्ष्य संधान की इच्छा में स्वयं तीव्रता आ जाएगी। कभी-कभी खिलाड़ी उच्च स्तर की शारीरिक क्षमता और योग्यता रखते हुए भी सिर्फ प्रेरणा के अभाव में अपने अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता। सिंगर (1972) के अनुसार " यदि नैतिक स्तर पर सही ढंग खेलने तथा सफलता की इच्छा तीव्र और अदम्य हो तो प्रतियोगिताओं में कई अनछुए शिखर जीते जा सकते हैं।''

इन स्थितियों में " पुरुस्कार सही लक्ष्य निर्धारण '' तथा " कुछ पाने की तीव्र आकांक्षा '' बहुत अधिक सहायक होते हैं। प्रशिक्षक का यह उत्तरदायित्व होता है कि वह खिलाड़ियों के प्रेरणा के स्तर का निर्धारण कई लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सदैव प्रेरित करता रहे। खेल का अभ्यास भी लक्ष्य प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। इस दौरान उसे उन कमजोरियों तथा त्रुटियों का भी आभास होता है, जो वह खेल के दौरान करता है। थार्नडाइक का विचार है कि सही संचालन की बारम्बारता तथा सही संचालन के लिए खास समझ भी व्यक्ति के लक्ष्य प्राप्ति में सहायक होती है।

खेल में एकाग्रता भी खिलाड़ी अभ्यास से प्राप्त कर सकते हैं। एकाग्रता की योग्यता जितनी अधिक होगी खिलाड़ी में आत्म विश्वास और आत्म नियंत्रण का स्तर भी उतना ही उच्च होगा। फेरर हौभब्रामेला (1970) मानते हैं कि किसी खिलाड़ी के प्रतिस्पर्धा में भाग लेने से पहले उसे मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण देना आवश्यक कर दिया जाना चाहिए। उपयुक्त मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण से खिलाड़ियों में मानसिक संतुलन, निराशाओं का प्रतिरोध करने की क्षमता में वृद्धि, आत्म संयम, नई परिस्थिति से सामंजस्य स्थापित करने की सामर्थ्य में वृद्धि, आत्म विश्वास में वृद्धि आदि होती है, जिससे वह प्रतिस्पर्द्धात्मक खेलों में अपने कौशल का सफल प्रदर्शन कर निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करता है। बॉब नाईट (1976) की मान्यता थी कि किसी खिलाड़ी की मानसिक क्षमता उसकी शारीरिक क्षमता से कम से कम चार गुना अधिक महत्वपूर्ण है, अत: जब खिलाड़ी मानसिक रुप से प्रतियोगी खेलों के लिए स्वयं तैयार कर लेगा तो जीत सुनिश्चित है, तथा वह आत्म विश्वास की कमी, चिन्ता, निराशा, असफलता का भय आदि सभी नकारात्मक गुणों से मुक्त होकर उत्कृष्ट प्रदर्शन कर सकेगा।

सुझाव –

1. खिलाड़ियों के अपने शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को उच्च बनाए रखने के लिए प्रयासरत रहना चाहिए।
2. अपनी योग्यता और क्षमता के अनुरुप लक्ष्यों का निर्धारण करना।
3. स्वयं में सकारात्मक गुणों जैसे आत्म विश्वास कर्तव्य निष्ठा, देश प्रेम, ईमानदारी, कर्तव्यपरायणता, आत्मअनुशासन, आत्मसंयम, प्रवीणता, आशावादी दृष्टिकोण, उच्च बौद्धिक क्षमता, एकाग्रता, उच्च अभिप्रेरणा आदि सकारात्मक गुणों को स्व्यं में विकसित करना।
4. क्रोध, निराशा, चिन्ता, असफलता का भय, छल शिथिलता, हीन भावना, घृणा, बदले की भावना, द्वेष आदि नकारात्मक गुणों से स्वयं को मुक्त रखना।
5. विद्यालयो एवं महाविद्यालयो में खेल प्रशिक्षक एवं परामर्शदाता की नियुक्ति की जाए।
6. समय-समय पर प्रशिक्षक एवं खेल मनोवैज्ञानिक तथा परामर्शदाता से परामर्श प्राप्त करते रहना।
7. महाविद्यालयों में पदस्थ क्रीडा अधिकारी खेल/आहार/योग/ की जानकारी विद्यार्थियों को दें।
8. समय सारणी में भी क्रीडा गतिविधियों के लिये अतिरिक्त कक्षाएं लगाना।
9. क्रीडा प्रतिभा बैंक, क्षमतावान खिलाड़ियों से विशेष कोचिंग की व्यवस्था करवाना।
10. अध्ययन के साथ-साथ खेल प्रतियोगिताओं में भाग लेने विद्यार्थियों को प्रेरित करना।
11. महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय के सेमीनार, कार्यशाला, सिंपोजियम, व्याख्यान, प्रदर्शनी आदि का आयोजन करना।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि खिलाड़ियों में कौशल विकास हेतु कई अपेक्षित गुणों के साथ-साथ प्रशिक्षक और खेल मनोवैज्ञानिक की महत्वपूर्ण भूमिका है, उचित परामर्श, दृढ़ इच्छाशक्ति, तत्परता, कर्तव्यनिष्ठा आदि गुणों के आधार पर खिलाड़ी उत्कृष्ट प्रदर्शन एवं प्रवीणता हासिल कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अस्थाना, मधु एवं वर्मा, किरन बाला-व्यक्तित्व मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।
2. बोस एवं मुकजी आर.- क्रीड़ा मनोविज्ञान विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. जायसवाल, सीताराम-व्यक्तित्व का मनोविज्ञान विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
4. मिश्र, ब्रजकुमार-मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन, प्रा.लिमि. नई दिल्ली।
5. पांडे, योगेन्द्र शिक्षा एवं खेल मनोविज्ञान, अमृत प्रकाशन नागपुर (महाराष्ट्र)
6. Shrivastava, S. & Pachari Pawan- Research Link Jarnal, Indor P.No.108.112
7. सिकरवार, एस.के.-आलेख, गुणवत्ता एवं वेस्ट प्रेक्टिसेस में पाठ्यक्रम के पहलू या दृष्टिकोण का महत्व-नवीन शोध संसार (इंटरनेशनल जर्नल)-2013
8. उच्च शिक्षा विभाग-उच्च शिक्षा में गुणवत्ता प्रबंधन, गुणवत्ता वर्ष 2011-12
9. Uberaj, N.K. - Professional Compentency in Higher Education. University of Delhi.

भारतीय मानवाकृतियों का अद्भुत सौंदर्यीकरण- 'अजंता'

डॉ. यतीन्द्र महोबे *

प्रस्तावना – बौद्ध कला की महान थाती का समृद्ध केन्द्र 'अजंता' है, जिसमें मानवाकृतियों का भावपूर्ण अंकन एवं विकास दिखाई पड़ता है। कलाकारों ने मानवाकृतियों के अंकन में काफी सर्तकता बरती है। तकनीकि एवं भावनात्मक दृष्टि से मानवाकृतियाँ इतनी उच्च कोटि की बनाई गई हैं कि देखने वाला हर व्यक्ति कलाकारों के हस्तकौशल की प्रशंसा किये बिना नहीं रहता। इन भावनात्मक मानवाकृतियों को चित्रित करने के पीछे कलाकारों की धार्मिक, आस्था जुड़ी हुई है। यदि कलाकारों को आस्था ने न जोड़ा होता तो इन पर शताब्दियों तक अनवरत् काम न हुआ होता।

इन मानवाकृतियों में शैलीगत परिवर्तन दिखाई देता है, चूंकि काल शताब्दियों तक फैला था। इसलिए इन मानवाकृतियों के सौंदर्य बोध के स्तर में उतार-चढ़ाव दृष्टिगोचर होता है, इन सबके बावजूद भी ये मानवाकृतियाँ कलात्मक दृष्टि से उच्चकोटि की हैं। भारतीय चित्रकला में मानवाकृतियों का सर्वोन्नमुख विकास अंजता के भित्ती चित्रों में परिलक्षित हुआ है, वहाँ का सौंदर्य दर्शकों का मन मोह लेता है। अजंता में कुल '29 गुफायें हैं। जिनमें मूल रूप से 16 गुफाओं में चित्र बनाये गये हैं। अजंता के ये चित्र जीवंत प्रतीत होते हैं। पहली और दूसरी गुफाओं के आस-पास बनी मानवाकृतियाँ अत्यंत दक्ष आचार्यों द्वारा बनाई प्रतीत होती हैं। इन मानवाकृतियों के रंग विन्यास, मुख मुद्रा, भाव-भंगिमा आदि तत्वों को बड़ी सुंदरता से चित्रित किया गया है ये मानवाकृतियाँ दर्शक की सौंदर्यानुभूति पर स्थाई प्रभाव अंकित करती हैं। अजंता की ये मानवाकृतियाँ पाश्चात्य चित्रकला की मानवाकृतियों की तरह रूप प्रधान न होकर, भाव प्रधान है।

अजंता के अधिकांश चित्र मध्य और उत्तर मध्यकाल के हैं, जब अजंता की चित्रकला अपने शिखर पर थी। कुछ कलाकृति में मानवाकृतियों को उभारने के लिए रेखाओं में लयात्मकता का समावेश दिखाई देता है। जिसका अर्थ वातावरण और आकृति के स्थान के अनुसार बदलता जाता है। 'कलाकार ने इच्छित प्रभाव देने के लिए, कूची पर दवाब देकर रेखा पतली या मोटी बनाई है, मोटी, चौंड़ी तथा गहरी रेखाएं अपने आप में चना-विन्यास बन जाती है, यहाँ तक कि रेखाओं के रंग में भी विभिन्न आभायें आ जाती हैं।' जो अजंता के मानवाकृतियों में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

मानवाकृति के रूप में बुद्ध की छवि –

'जब बुद्ध को चित्रित करने की बारी आई, तो शायद कलाकार की बुद्धि चकरा गई होगी। उसे ऐसे व्यक्ति को चित्रित करना था जो उसकी पहुँच और चित्रण से ही बाहर था। उसने समस्या का हल ऐसे निकाला कि अमूर्त बुद्ध की कल्पना को मूर्ति-विज्ञान और मूर्ति-भित्ति शास्त्र में निर्धारित विवरणों के आधार पर प्रस्तुत किया जाये। इसी का परिणाम है कि बुद्ध की आकृति को या तो अक्सर दोहराय गये रूपों या फिर एक आदर्श छवि को व्यक्त करने वाले सामान्य रूपों में पाते हैं। महान बुद्ध का प्राकट्य धर्म चक्र, ध्यान, अभय अथवा भू-स्पर्श की स्थितियों में होता है, और इन भावपूर्ण स्थितियों को विभिन्न मुद्राओं अर्थात हाथों की भंगिमाओं के माध्यम से व्यक्त किया गया है। उसे जब कूची के काम तक सीमित किया गया, तब उसने बुद्ध को मूर्तिवत् आकार दिया-सौम्य और गतिशील।'

अजंता के चित्रों के सभी पात्रों की मुख मुद्रा से ही यह अनुमान हो जाता है कि वह किस रस को व्यक्त करता है, जैसे-गुफा क्रं. 01 में बुद्ध के चेहरे में असीम शांति है। पद्म पाणि बोधिसत्व का एक व्यक्ति चित्र है जो कि सातवीं शताब्दि के पूर्वाद्ध में बना। यह चित्र अद्धितीय है, चित्रकार ने उनके चेहरे पर गहन चिंतन के भावों को भर दिया है, ऐसा लगता है, मानों वे ऊँचाई से दुखी, पीड़ित मानव को देख रहे हैं, और उनके कष्टों को कैसे दूर किया जाये, इस गहन चिंतन में डूबे हुए हैं। आंतरिक और मानसिक भावों को व्यक्त करने में चित्रकार प्रवीण था। अंजता के कुछ चित्रों में मानवाकृतियों को इतना, अधिक भाव-भंगिमा से पूर्ण दर्शाया गया है कि चित्रित स्त्री-पुरूषों की मानसिक दशा का प्रत्यक्ष दिग्दर्शन होता है वे कैमरे से खींची हुई फोटो के समान सही अनुकृति नहीं है, किन्तु निर्जीव प्रतीत नहीं होती। उनके मुख को देखने से ऐसा प्रतीत होता है, जैसे उनमें रक्त प्रवाहित हो रहा है, उनके चेहरे पर अलग-अलग भाव देखने मिलता है।

एक अन्य चित्र जिसमें यशोधरा और उनका पुत्र राहुल, बुद्ध से मिलते हैं, ऐसे दृश्य में आमतौर पर एक भावुकता से भरी नाटकीयता आ सकती थी, कि इतने वर्षों बाद पति अपनी पत्नी से मिल रहा है। सन्यास की पुष्टि करने वाले प्रसिद्ध दृश्य जिसमें बुद्ध भिक्षापात्र लिये खड़े हैं, पत्नी एक मात्र पुत्र राहुल को आगे बढ़ाकर उनका स्वागत कर रही है। वह अपने गृह स्वामी और अब जगत के भी स्वामी को दुहरे रूप में स्वीकारती है। यहाँ मानवाकृतियों की संरचना को दो पिरामिड की तरह से दिखाया गया है, जिनमें से एक पिरामिड की आकृति बड़ी है और दूसरी की छोटी। बड़ी आकृति पृथ्वी की ओर आगे झूकती हुई है, और छोटी आकृति ऊपर की ओर देखती है, तथा द्वार पर खड़े महात्मा के पास पहुँचने के लिए व्याकुल है। ये दो परस्पर विपरीत आकृतियाँ गेरू वस्त्र की चमक को बढ़ाकर दिखाने के लिए गहरी उदासीन पृष्ठभूमि में चित्रित की गई है, इस चमक में ऐसी दीप्ति है कि चारों तरफ प्रकाश फैल जाता है।

इन चट्टानी दीवारों पर आचार-विचार के माध्यम से निर्माण प्राप्त कराने वाली जातक-कथायें गुथी पड़ी हैं। इन कथाओं के मुख्य चरित्र बोधिसत्व है। जो गौतम बुद्ध के पुनर्जन्म की घटनाओं को विभिन्न चरित्रों के माध्यम से व्यक्त करते हैं। इन चरित्रों में 'अनासक्त महानता की छाप उभारने का अपूर्व कौशल इन चित्रों में हैं। वे भव्य तो हैं लेकिन उनमें दिखावा नहीं है, उनमें वह सब कुछ है जिनसे मानवीय गुण उभरते हैं। लेकिन उसकी अधिकता भी है। बड़ी-बड़ी मानवाकृतियाँ राजसी पोषाक, भारी मुकट, प्रचुर आभूषण, उन्हें

* सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

अन्य चित्रों की तुलना में अधिक प्रभावशाली बनाते हैं।

अजंता की गुफाओं में चित्रित नारी आकृतियाँ-

अजंता के समस्त चित्रों में मानवाकृतियों की भरमार दिखाई पड़ती है, लेकिन इन मानवाकृतियों में पुरूष आकृति की तुलना में नारी आकृतियाँ संख्या में अधिक बनाई गई हैं। अजंता में जहाँ पुरूषों को घुड़सवारी करने, उपदेश सुनने तथा उपदेश देने आदि में व्यस्त दिखाया गया है। वहीं नारी आकृतियाँ आकर्षक हैं और विस्मय, दुख तथा अन्य भावनाओं को प्रदर्शित करती नजर आती हैं। अजंता के समूह दृश्यों में नारी आकृतियाँ पृष्ठ भूमि में दिखाई देती हैं और वह पूरे दृश्य को गरिमामयी बना रही हैं।

'कला के इस चित्र-विचित्र उद्यान में कलाकारों का सौंदर्य केन्द्र स्त्री है, लगता है, वातावरण में सजावट और शोभा उत्पन्न करने के लिए उन्हें स्त्री से अधिक उपयुक्त और कोई भी साधन नहीं मिल सका। सौंदर्य बोध की साधना में उन्होंने नारी आकृतियों का प्रसूनों की तरह उपयोग किया है। राजा हो या युवराज, तथागत बूद्ध हो या भिक्षु, सामंत हो या सामान्य जन सभी के इर्द-गिर्द स्त्री पंक्ति पुष्पहार की भाँति पसरी पड़ी है। आलेखित चित्रों में कहीं वे राजप्रसाद को सुशोभित कर रही हैं, कहीं मार्गदर्शक बन कर चौराहों पर खड़ी हैं, कहीं नगरवासियों के घरों की खिड़कियों में उनके मुखकमल जड़े हुए हैं, कहीं वे भिक्षुओ को उपदेश दे रही हैं, कहीं वे आकाश मार्ग से गमन करती हुई प्रसाद में प्रविष्ट हो रही हैं, कहीं वे जल देवता बनकर नाविकों का मन मोहित करने के लिए मेघ संचय कर रही हैं, और कहीं वे अपने विशुद्ध मानवीय स्वरूप में आनंद-प्रमोद और उल्लास से समय वातावरण को प्रफुल्लित कर रही हैं।'

गुफा सं. 01 में एक बड़े चित्र-फलक का एक अंश जिसमें 'अनावृत' अप्सराओं का एक उदाहरण हैं। कलाकार ने विषय पर बल देने के लिए बारीक से बारीक विवरणों को चित्रित करने के लिए हर संभव प्रयास किये हैं। कांतिमय रंगत वाली, गहनों से लदी एक हष्ट-पुष्ट सेविका मालकिन की देखभाल कर रही है, एक बीमार राजकुमारी पलंग पर लेटी दिखाई गई है। वहीं एक सेविका हाथों में घड़ा लिये जंगले के सहारे झुकी हुई है। घड़े के बाहरी हिस्से को घेरती गोल रेखायें, देह, मस्तक और वक्ष को रेखांकित करती अन्य सभी गोलाकार रेखायें गहरी और अधोमुखी है। सेविका की चिंतित आँखे आशीर्वाद बरसाती लगती है। अजंता में हम भारतीय नारी की शास्त्रीय धारणा के कई रूप पाते हैं। इन नारी मानवाकृतियों में गोलाकार रेखाओं ने गजब ढ़ाया है। शारीरिक गोलाई हर सांचे में ढलती जाती है - पुष्ट स्तन से लेकर फड़फड़ाते होंठ तक, गोल पुतलियों से लेकर कान कुंडल तक, नाक से लेकर चित्र में प्रभाव बढ़ाने के लिए उसकी पूरी देह पर बनाई गई गोल चित्तियों तक अजंता की मानवाकृतियाँ भले ही वह पुरूष की हो अथवा महिला की, कलाकारों ने उनको बनाने में अपनी निपुणता का परिचय दिया है। इन नारी आकृतियों में अंकित आँखों और होंठों के नमूने वास्तविक जीवन के ही हैं। भावाभिव्यक्ति के अनुरूप उनकी हस्त मुद्रायें तथा हाथों की अंगुलियाँ, कमल की पंखुरियों सी प्रतीत होती हैं। ये भावनात्मक एवं संवेदनशील अंगुलियाँ मानो कलाकार अभिव्यक्ति को व्यक्त करती दिखाई पड़ती हैं। दूसरा मुख्य जोर कलाकारों ने शरीर के ऊपरी अंगों को बनाने में किया है। गर्दन, वक्ष, कमर के साथ नितंब, शरीर के निचले अंगों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट एवं बारीक है। विशेष रूप में नारी आकृतियों के स्तन का आकार काफी बड़ा और संवेदनशीलता से भरपूर बनाया गया है। ये नारी आकृतियाँ कमर की तुलना में अविश्वसनीय प्रतीत होती हैं।

अजंता के भित्ति चित्रों में अंकित इन मानवाकृतियों का अवलोकन करने पर अनेक स्थानों पर अंतर देखने मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि एक ही चित्र को बनाने में कई कलाकारों ने साथ-साथ काम किया होगा।

अजंता चित्रित नारी आकृतियों में एक विशेष बात यह देखने मिलती है कि चित्रित नारी-आकृतियों में कमर से ऊपर के सभी अंगों को बड़ी सावधानी पूर्वक एवं संवेदनशीलता से भरपूर बनाया है, लेकिन कमर से नीचे के अंगों में वो बात नजर नहीं आती। ऐसा प्रतीत होता है कि इन नारी आकृतियों में टांगों का चित्रण कलाकार ने बड़ी जल्दबाजी में किया होगा। लेकिन इन मानवाकृतियों को कलाकार ने भावाभिव्यक्ति एवं संवेदनाओं में इस कदर डूबो दिया है कि इन छोटी-मोटी गलतियों पर ध्यान केन्द्रित नहीं होता। 'अजंता गुफा में हम नारी के जिस सौंदर्य का दर्शन करते हैं उसकी दैहिक संरचना के मानदण्ड थे- वर्तुलाकार पुष्ट उरोज, क्षीण मध्य भाग तथा विस्तृत नितम्ब।

बौने की आकृति- कलाकार ने बौने के रूप (मानवाकृति) में कल्पना एवं प्रकृति का इतना सुंदर सामंजस्य बिठाया है कि देखते ही बनता है। एक चित्र में बौने को फूलों के बीच बेल के सहारे बैठा दिखा गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह किसी फलों से सजे हुए झूले पर बैठा हो। वह उस रंग-बिरंगे सुंदर फूलों एवं पत्तियों के बीच उनका एक हिस्सा दिखाई देता है। उसका दाँया हाथ भी फूलों में डूबा हुआ है, उसकी धोती का आखिरी सिरा तो फूलदार ही चित्रित किया गया है। जिससे वह प्राकृतिक दुनिया के करीब नजर आता है। यहाँ पर यह लघु प्राणी सजावटी बेल-बूटों में खूबसूरती से घुल-मिल गया है, और साथ ही प्रकृति में रहने की सच्ची प्रसन्नता को व्यक्त करता है।

अजंता की इन मानवाकृतियों को बनाने में कलाकार ने अपनी दक्षता का परिचय दिया है। उस समय इन मानवाकृतियों को बनाने का मुख्य उद्देश्य अनुयायी को प्रेरणा देना था। इन मानवाकृतियों के सहारे जिन कथाओं एवं कहानियों को अंकित किया गया वह धर्म के लिए समर्पित थी। उस समय कलाकार की रचना प्रक्रिया का मूल मंत्र था- 'कला की रचना महज कला के लिए मत करो,

बल्कि उसे धर्म के लिए समर्पित कर दो।'

अजंता के भित्ति चित्रों में अंकित आकृतियों का निर्माण करने में कलाकार ने सीमित रंगों का प्रयोग किया है। रंग अधिकांशत: भूरे हैं तथा उनमें विभिन्न रंगतों का प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं आकृति को सुंदर बनाने के लिए हरे, लाल, पीले एवं नीले रंगों का भी प्रयोग किया है। कलाकार ने पूरी तत्परता के साथ विभिन्न रंगतों का प्रयोग कर मानवाकृतियों में त्रि-आयामी प्रभाव की झलक दिखाई है, जो अपने आप में स्मरणीय एवं रोचक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ए. घोष - अजंता का वैभव, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, वर्ष 1994
2. डॉ. रतनकुमार जैन - अजंता ऐलोरा, विश्व भारती प्रकाशन नागपुर, वर्ष 2004
3. डॉ. कमलेश दत्ता पाण्डे - भारतीय चित्रकला में नारी रूप विन्यास, ए.के.बुक कारपोरेशन नई दिल्ली, वर्ष 1992

अजन्ता गुफा 10
अजन्ता गुफा 2 (हरित मंडप)
अजन्ता गुफा 2 (बायाँ मंडप)
अजन्ता गुफा 1
अजन्ता गुफा 1
एलोरा (कैलास गुफा)
पूर्वी भारतीय शैली
पश्चिमी भारतीय शैली
पूर्वी भारतीय शैली
अजन्ता गुफा 16
पश्चिमी भारतीय शैली
पश्चिमी भारतीय शैली

सामाजिक विकृतियों को दूर करने में धर्म की भूमिका

डॉ. पुष्पा कपूर *

शोध सारांश – 'आज भौतिकता की चकाचौंध में पड़कर मानव, समाज में अनेक बुराईयों को जन्म दे रहा है। वैचारिक एवं नैतिक धरातल पर वह इतना गिर रहा है कि मानवता ही कलंकित होने लगी है। सर्वत्र छल–प्रपंच, रिश्तों में बिखराव, अनुशासनहीनता परिलक्षित हो रही है।'

प्रस्तावना – आज समाज में व्याप्त विकृति यों में नशा, चोरी, दुष्कर्म, हिंसा, आत्महत्या का जहर चहुंओर फैल रहा है । ऐसे में आत्म–अनुशासन का पाठ पढ़ाना आवश्यक हो गया है। इसके लिए जिस नैतिक आचरण की आवश्कता है, वह धर्म में निहित आचार पद्धति के संस्कारों द्धारा संभव है, जिसमें दीन–दुखी की सेवा करना ईश्वर का साक्षात्कार करने के समकक्ष माना गया है । अतिथि का सत्कार, चारित्रिक दृढ़ता, स्त्री जाति का सम्मान, परोपकार, न्याय को आचार में स्थान दिया गया है । धर्म, मनुष्य को उसके कर्तव्यों से परिचित कराने के साथ–साथ उसका पालन करने की प्रेरणा देता है ।

समाज में बढ़ते अपराध – आधुनिकता को हासिल करने के नाम पर चारों ओर बनावटीपन फैल रहा है। बाल–अपराध, युवा अपराध, दिशाहीनता को दर्शाते हैं। पारिवारिक विघटन मानव में तनाव, कुण्ठा को जन्म देता है, जो उसे धीरे–धीरे अपराध की दुनिया में धकेलता है।

परिवार, जो कि समाज की प्रथम इकाई है, आज वहाँ भी रिश्ते सुरक्षित नहीं रह पा रहे हैं। बढ़ते यौन अपराधों का ग्राफ बता रहा है कि सगे–सम्बन्धियों के बीच भी पवित्र रिश्ते कई बार तार–तार हो रहे हैं। इस परिस्थिति के लिए जिम्मेदार है – अनुशासनहीनता, संस्कारों का अभाव। संस्कार प्रदान करने में धर्म की महती भूमिका रही है।

धर्म से जीवन में समरसता – 'ऋग्वेद में वर्णित 'ऋत' शब्द का अर्थ है – नैतिक व्यवस्था।'[1] संसार में एक नैतिक व्यवस्था का कायम होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। धर्म मनुष्य में क्रियाशक्ति को बढ़ाता है। संसार में जो विविधता है, उसे धर्म एकता के सूत्र में बाँधता है। धर्म से मनुष्य की पाशविक प्रवृत्तियाँ दैवीय प्रवृत्तियों में रूपान्तरित होती है। धर्म मनुष्य को पाप, अपराध से बचाता है। यहाँ वह मनुष्य को परलोक का भय भी दिखाता है, जिससे मनुष्य अदृश्य शक्ति से भयभीत होकर शुभ कर्मों की ओर प्रेरित होता है।

'धर्म एक स्वतंत्र अनुभूति है। धर्म का सम्बन्ध आन्तरिक जीवन से है।'[2] मनुष्य यदि आन्तरिक रूप से पवित्र होगा तो उसका बाह्य आचरण भी पवित्र होगा। इस दिशा में धर्म सार्थक प्रयास करते हुए मनुष्य को इन्द्रिय संयम की शिक्षा देता है। मानव के मानसिक कष्टों और सामाजिक स्थिति में पिछड़े हुए मनुष्यों को धर्म, एकता की राह दिखाता है। धर्म संस्कारों एवं संस्कृति का वाहक है। धर्म ही आने वाली पीढ़ियों को संस्कारित करता है। महापुरूषों के प्रति श्रद्धा, आदर्शों के प्रति सम्मान, धर्म ही सिखाता है। धर्म शांति और करूणा का पाठ पढ़ाता है। मानव के साथ–साथ अन्य जीवों के प्रति भी करूणा और न्याय की भावना जगाता है।

बौद्ध धर्म जीवमात्र के प्रति दया, करूणा का संदेश देता है, तो जैन धर्म जीवमात्र के प्रति अहिंसा का संदेश देता है। इन सभी धर्मों में आचरण की पवित्रता हेतु पंच महाव्रत बताए गए हैं, जो सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह के नाम से जाने जाते हैं। समाज में मानव सम्बन्धों का सम्यक व्यवहार बनाए रखने हेतु सत्य का आदर्श होना आवश्यक है। सत्य से चरित्र में दृढ़ता आती है। समाज में सभी प्राणियों के जीवन की रक्षा तभी हो सकती है, जब अहिंसा को अपनाया जाए।

मन, वचन और कर्म से अहिंसा का पालन करने पर ही अभय जीवन सम्भव है। धर्म मानव के आन्तरिक जीवन का रूपान्तरण कर उसमें परोपकार की भावना को बढ़ाता है। बिना दिए हुए किसी की चीज़ ग्रहण न करना, न ही मन में उसे लेने का विचार लाना, क्योंकि यह चोरी है। अत: अस्तेय का पालन करना आवश्यक है। ब्रह्मचर्य का पालन करना सामाजिक नैतिकता को कायम रखने हेतु अत्यन्त आवश्यक है। इंद्रियों पर संयम बनाए रखना, आवश्यकता से अधिक धन या अन्य चीजों का संग्रह न करना, अपरिग्रह है।

समाज को शोषण मुक्त बनाये रखने हेतु धर्म पर विश्वास कायम करते हुए मानवीय मूल्यों की रक्षा करना आज के समय की जरूरत है। प्राणीमात्र के प्रति करूणा, सहनशीलता, दया, न्याय, परोपकार, क्षमा का भाव, आपसी सौहार्द्र कायम रख सकता है। धर्म मानव के चारित्रिक विकास के साथ–साथ बौद्धिक विकास में भी सहायक है। शुभ, विकारहीन प्रवृत्तियाँ ही विकास की दिशा तय कर सकती है।

'नैतिकता के लिए धर्म आवश्यक है।'[3] समाज में नैतिकता बनाए रखने हेतु धर्म की भूमिका महत्वपूर्ण है, क्योंकि मनुष्य में विनम्रता, पवित्रता और इच्छाओं को संयत रखने की कला धर्म सिखाता है। धर्म मनुष्य को कर्तव्य पालन सिखाता है, तथा शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करता है। वह यह भी बताता है कि अशुभ कर्मों का फल अशुभ ही होता है। वह मनुष्य को अपने कर्मों के प्रति उत्तरदायी बनाता है, जिससे वह समाज में सन्मार्ग पर चल सके।

गाँधी के धर्म की आधारशिला भी नैतिकता ही है। नैतिकता के विकास के लिए आध्यात्मिक चेतना आवश्यक है। 'धर्म के लिए नैतिक मूल्य आवश्यक है।'[4]

इस प्रकार जब धर्म आचरण में आता है, तो उसमें नैतिकता का समावेश होना चाहिए। गाँधीजी के अनुसार, 'जब हम नैतिक आधार छोड़ देते हैं, तब हम लोग धार्मिक नहीं रह जाते क्योंकि नैतिकता से अलग धर्म नाम की कोई चीज़ नहीं है।'[5] धर्म की नैतिकता, सामाजिक एकता को बनाए रखने का सूत्र है। धर्म मानव सेवा के लक्ष्य को पारलौकिक आदर्श से जोड़ता है। जैसे मानव की सेवा करना स्वयं ईश्वर से जुड़ना है। डॉ. राधाकृष्णन् धर्म को मानव जीवन के लिए आवश्यक बताते हुए कहते हैं, 'धर्म मानव प्रकृति का एक आभ्यन्तर तत्व है।'[6]

धर्म मानव को बुरी प्रवृत्तियों से दूर कर आचरण के साथ–साथ वैचारिक परिवर्तन पर भी बल देता है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी अपने मानवतावादी धर्म में मनुष्य को केन्द्रबिन्दु माना है। भगवतगीता में धर्म को कर्त्तव्य के अर्थ में लिया गया है। 'महाभारत के पर्व 162/7 में सत्य के 13 स्वरूपों का वर्णन है और मनसा, वाचा, कर्मणा, अहिंसा, सदिच्छा एवं दान श्रेष्ठ पुरूषों के शाश्वत–धर्म कहे गए हैं।'[7]

निष्कर्ष – इस प्रकार धर्म सद्गुणों की ओर प्रेरित करता है। गाँधीजी कहते हैं, 'मानव–सेवा व असहायों की सेवा करना ही धर्म है, क्योंकि ईश्वर हमारे सामने असहायों और दुखियों के रूप में प्रकट होता है।'[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. धर्म दर्शन का सर्वेक्षण – डॉ. दुर्गादत्ता पाण्डेय पृष्ठ 02
2. धर्म दर्शन की रूपरेखा – डॉ. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा पृष्ठ 39
3. धर्म दर्शन की रूपरेखा – डॉ. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा पृष्ठ 45
4. महात्मा गाँधी का धर्मदर्शन – विजय श्रीचन्द्र, पृष्ठ 64
5. महात्मा गाँधी का धर्मदर्शन – विजय श्रीचन्द्र, पृष्ठ 86
6. हमारी संस्कृति – डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, पृष्ठ 06
7. धर्मशास्त्र का इतिहास – अर्जुन चौबे–कश्यप, (प्रथम भाग), पृष्ठ 103
8. महात्मा गाँधी का धर्मदर्शन – विजय श्रीचन्द्र, पृष्ठ 63

* प्राध्यापक (दर्शनशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

आधुनिक हिन्दी कहानी के बदलते स्वरूप : विशेष संदर्भ, प्रेमचंद व जैनेन्द्र की कहानी

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – हिंदी की पहली कहानी से संबंधित विवाद की रूढ़ चर्चा अथवा कथ्य व शिल्प की दृष्टि से साहित्यिक मूल्य से रहित आरंभिक कहानियों का जिक्र आधुनिक हिंदी कहानियों के अध्ययन प्रसंग में विशेष संगत प्रतीत नहीं होता इसमें संदेह नहीं कि प्रसाद प्रेमचंद युग के कहानी साहित्य ने निर्माण की दिशा में एक ऐतिहासिक भूमिका का निर्वाह किया था, फिर भी यथार्थ और मनोविज्ञान के पुष्ट धरातल पर समसामायिक जीवन संदर्भ और भाव बोध की अभिव्यक्ति का प्रयास प्रेमचंदोत्तर काल में ही फलीभूत हो सका । हिन्दी की पहली कहानी से संबंधित विवाद की रूढ़ चर्चा अथवा कथ्य व शिल्प की दृष्टि से साहित्यिक मूल्य से रहित आरंभिक कहानियों का जिक्र आधुनिक हिंदी कहानियों के अध्ययन प्रसंग मे विशेष संगत प्रतीत नहीं होता कहानियों की रचना करने वाले आधुनिक कहानीकारों ने उर्दू व अंग्रेजी के अनेक शब्दों का निर्बाध प्रयोग कहानियों में किया। निर्मल वर्मा, ऊषा, प्रियंवदा व रामकुमार आदि ने विदेशी पृष्ठ भूमि पर कहानियों की रचना की तथा अंग्रेजी की अप्रचलित भाववाची संज्ञाओं, विशेषणों व क्रियाओं को कहानी में स्वच्छंद रूप मे प्रयुक्त किया। मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी आदि ने भी उर्दू व अंग्रेजी के शब्दों को बड़े परिमाण में अपनी कहानियों में स्थान दिया है। आज के आधुनिक कहानीकारों में आम आदमी की भाषा से जुड़ने की आकुलता का आभास मिलता है। यही कारण है कि इनके शब्द प्रयोग जन भाषा से अनुप्राणित है। काव्यात्मक शब्द प्रयोगों का निषेध उनमें दिखाई देता है। हिन्दी कथा साहित्य को जैनेन्द्र की देन महत्वपूर्ण है प्रेमचन्द्र के बाद उन्होंने ही हिंन्दी उपन्यास को विशेष व्यक्तित्व प्रदान करने वाले प्रेमचंद परंपरा के वे अंतिम कथाकार थे। इस प्रकार आधुनिक हिन्दी कहानी हिन्दी साहित्य का अनमोल खजाना उस खजाने को सहेज कर रखना आज के साहित्यकारों का परम दायित्व है। आज के आधुनिक कहानीकारों में आम आदमी की भाषा से जुड़ने की आकुलता का आभास मिलता है। यही कारण है कि इनके शब्द प्रयोग जन भाषा से अनुप्राणित है। काव्यात्मक शब्द प्रयोगों का निषेध उनमें दिखाई देता है। चलतू शब्दों का उन्होंने बेधड़क प्रयोग किया है। कहीं–कहीं शब्दों में आक्रोश के तेवर भी दिखाई देते हैं। **शब्द कुंजी –** आधुनिक हिन्दी कहानी, मनोरंजन, मनोविज्ञान, आम आदमी

प्रस्तावना – हिंदी की पहली कहानी से संबंधित विवाद की रूढ़ चर्चा अथवा कथ्य व शिल्प की दृष्टि से साहित्यिक मूल्य से रहित आरंभिक कहानियों का जिक्र आधुनिक हिंदी कहानियों के अध्ययन प्रसंग मे विशेष संगत प्रतीत नहीं होता इसमें संदेह नही कि प्रसाद प्रेमचंद युग के कहानी साहित्य ने निर्माण की दिशा में एक ऐतिहासिक भूमिका का निर्वाह किया था, फिर भी यथार्थ और मनोविज्ञान के पुष्ट धरातल पर समसामयिक जीवन संदर्भ और भाव बोध की अभिव्यक्ति का प्रयास प्रेमचंदोत्तर काल में ही फलीभूत हो सका। प्रेमचंदोत्तर कालखंड में फ्रायड, एडलर युग और कार्ल मार्क्स की चिंतनधारा से प्रभावित कहानीकारों ने जीवन व जगत के यथार्थ तथा चरित्रों के अन्तर्संबध व बहिसंघर्षो को अभिव्यक्ति दी। कालांतर में स्वातंत्र्योत्तर कालखंड के तथा कथित नई कहानी के कहानीकारों ने सार्त्र कामू काफ्का की अस्तित्वादी विचारधारा से प्रभावित होकर आंचलिक नगरीय व महानगरीय परिवेश मे संक्रांति, कुंठा, ऊब, व्यर्थता और अकेलेपन के भाव–बोध को अभिव्यंजित किया। आधुनिक हिंदी कहानी की इस विकास यात्रा का भाषिक स्तर पर विशेषत: शब्द प्रयोग की दृष्टि से परीक्षण करते समय प्रसाद व प्रेमचंद युग के योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। स्थूल रूप से इस युग में शब्द विन्यास की दो परम्पराएं स्पष्ट परिलक्षित होती है – शब्द प्रयोग की जनवादी परम्परा और शब्द प्रयोग की अभिजात्य परम्परा। प्रेमचंद संस्थान के गुलेरी, कौशिक, सुदर्शन, ज्वालादत्त शर्मा आदि कहानीकार शब्द प्रयोग की जनवादी धारा के प्रति समर्पित थे। इन कहानीकारों ने प्राय: सुबोध सरल भाषा को माध्यम बनाया। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो कहा जा सकता है कि इनकी भाषा तद्भव शब्द प्रधान थी तथा इसमे अरबी–फारसी एवं अंग्रेजी के शब्दो के प्रयोग के प्रति संकोच नही था। इन कहानीकारों का शब्द चयन पात्रानुकूल, भावानुकूल, विषयानुकूल तथा परिवेशोचित हैं। लोक प्रचलित मुहावरों व कहावतो का विपुल प्रयोग भी इनमें प्राप्त होता है। दूसरी ओर प्रसाद संस्थान के राम कृष्णदास, गोविंद वल्लभ पंत, चंडीप्रसाद, हृदयेष आदि कहानीकार आते हैं जिनकी कथा भी भाषा में अभिजात्य हैं और जो समृद्धशाली संस्कृत भाषा की तत्सम शब्दावली से युक्त तथा आंग्ल–मुगल प्रभाव से प्राय: मुक्त है। प्रसाद संस्थान के इन कहानीकारों की कहानियों में अनेक कोमलकांत अमूर्त शब्दों का विनियोग प्राप्त होता हैं। वास्तव मे प्रसाद प्रेमचंद कालखण्ड शब्द संस्कार के इस विभिन्नता के कारण उस कालखंड के कहानीकारों की रचनात्मक ही है। प्रसाद संस्थान के कहानीकार प्राय: ऐतिहासिक, अनुभूतिप्रवण, प्रेममूलक या काव्यात्मक व दार्शनिक हैं। इसके विपरीत प्रेमचंद संस्थान के कहानीकारों ने प्राय: सामयिक समस्याओं के ग्रामीण कथानकों पर कहानियों की रचना की अत: उनकी कहानियों में लोक प्रचलित भाषा में शब्दों का प्रयोग सहज ही प्राप्त होता है।

भाषा के गुणात्मक स्तर पर विचार करने से प्रसाद प्रेमचंद युग के कहानीकारों में उपमानो व रूपकों के प्रयोग की शाब्दिक प्रवृत्ति उद्घाटित होती है। इस कालखंड के अधिकांश कहानीकारों में धैर्य की दीवार, आनंद की लहरें, विपत्ति की घटाएं, दासता की बेड़ी कर्तव्य की तुला, पाप का समुद्र, आशा का सूर्य, मित्रता रूपी वृक्ष, क्रोध रूपी अग्नि जैसे शब्द प्रयोग विपुल परिमाण में उपलब्ध होते हैं। यह प्रवृत्ति एक रूढ़ि के समान प्रयुक्त है तथा इसे इस कालखण्ड के शब्द विन्यास का वैशिष्ट्य माना जा सकता है। कहानी की भाषा क्योंकि जीवन में समानांतर गतिशील होती रहती है अत:

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

लोक भाषा से उसका पार्थक्य चिरिजीवी नहीं होता। यही कारण है कि प्रसाद संस्थान की शब्द प्रयोग की अभिजात्य परम्परा उतना विकास प्राप्त नहीं कर सकी जितना प्रेमचंद की शब्द परम्परा ने प्राप्त किया। प्रसाद की भाषा काव्योचित भाषा थी अत: वह गद्य-गीतों, भावप्रवण शब्द चित्रों व कतिपय कहानियों तक ही सीमित रह गई तथा प्रेमचंद की जनभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त करती गई। प्रेमचंदोत्तर कहानीकारों मे जैनेन्द्र कुमार ऐसे पहले कहानीकार थे जिन्होंने कथा- भाषा को अपने निजी संस्कार प्रदान किए। उन्होंने भावोचित शब्द-चयन पर विशेष ध्यान दिया और इस प्रकार कथा भाषा को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया। ध्वनि के परिवर्तन युक्तशब्द, पुनरूक्त, शब्द, प्रतिध्वन्यात्मक शब्द और देशज शब्दों का उन्होंने विपुल समीचीन प्रयोग किया।

प्रेमचंदोत्तर कहानीकारों में अज्ञेय का भी निजी वैशिष्ट्य है। उनकी आरंभिक कहानियों मे कहीं-कहीं शब्द प्रयोग का अभिजात्य व सायास पांडित्य भी है जो क्लिष्ट व दुर्लभ प्रतीत होता है पर परवर्ती कहानियों मे वे इस प्रभाव से मुक्त हो गए हैं। अभिनव शब्दों के प्रयोग और शब्दों के परि भास्कार या 'फिनिशिंग' की दृष्टि से अज्ञेय की कहानियां विशेष रूप से पठनीय हैं। ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रकृत प्रयोग भी उनकी कहानियों की विशेषता है। इलाचंद जोशी की कहानियों मे संस्कृत शब्दों का प्रयोगाधिक्य है तथा उद से प्रेमचंदोत्तर कहानीकारों के ष्शब्द प्रयोग विशेष महत्व रखते हैं। सांकेतिक और प्रतीकात्मक शब्दों का प्रयोग जो स्वातंत्र्योत्तर कहानियों में प्राप्त होता वह इसी कालखंड में आरंभ हो चुका था। विभिन्न देशी-विदेशी भाषा और बोलियों के शब्दों के प्रयोग का आरंभ भी प्रेमचंदोत्तर कालखंड की विशेषता है। शाब्दिक वैशिष्ट्य भी अपना पृथक अस्तित्व रखता है। कतिपय आचंलिक कथाकारों ने आंचलिक भाषा के नए रूप रंग इस कालखंड में प्रस्तुत किए। फणीश्वरनाथ रेणू ने पूर्वी मैथिली, शिव प्रसाद सिंह ने बनारसी भोजपुरी और लक्ष्मीनारायण लाल ने भोजपुरी अवधी आदि बोलियों के अनेक शब्दों से हिंदी पाठकों को परिचित कराया। राजेन्द्र अवस्थी, शैलेश मटियानी मार्कण्डेय आदि ने भी अंचल विशेष के देशज शब्दों का प्रयोग किया।

विदेशी, नगरीय व महानगरीय परिवेश पर कहानियों की रचना करने वाले आधुनिक कहानीकारों ने उर्दू व अंग्रेजी के अनेक शब्दों का निर्बाध प्रयोग कहानियों में किया। निर्मल वर्मा, ऊषा, प्रियंवदा व रामकुमार आदि ने विदेशी पृष्ठ भूमि पर कहानियों की रचना की तथा अंग्रेजी की अप्रचलित भाववाची संज्ञाओं, विशेषणों व क्रियाओं को कहानी में स्वच्छंद रूप में प्रयुक्त किया। मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी आदि ने भी उर्दू व अंग्रेजी के शब्दों को बड़े परिमाण में अपनी कहानियों में स्थान दिया है। वास्तव में अंग्रेजी व उर्दू शब्दों का इतना प्रयोग पूर्ववर्ती कहानियों में कभी नहीं हुआ था। गुणात्मक शब्द-प्रयोग की दृष्टि से विचार करें तो स्पष्ट दिखाई देगा कि स्वातंत्र्योत्तर कहानी में संकेतों व प्रतीकों की बाढ़ सी आ गई है। प्राय: सभी स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों ने प्रतीकात्मक व सांकेतिक शब्दों का प्रयोग किया। वस्तुत: जो स्थान पूर्ववर्ती कहानियों में क्रियाओं और रूपकों का था वही स्थान स्वातंत्र्योत्तर कहानी प्रतीकों ने ग्रहण किया। प्रतीक शब्दों व संकेत शब्दों के प्रयोग ने हिन्दी भाषा की अभिव्यंजना शक्ति को तीक्ष्ण किया तथा भाषा की सम्पन्नता में योगदान दिया। कथाकार निर्मल वर्मा ने गुणात्मक दृष्टि से अनेक मौलिक आलंकारिक शब्दों को प्रयुक्त किया। उनकी कहानियों मे शब्द बिम्ब भी प्राप्त होते हैं। डॉ. नामवर सिंह के अनुसार उनकी भाषा ऐसी संगीतात्मक भाषा है जो शब्दातीत स्थितियों को भी व्यक्त कर सकने का सामर्थ्य रखती है। भाषा के प्रयोगात्मक स्तर पर भी स्वातंत्र्योत्तर कहानी में अनेक प्रयोगधर्मी शब्द प्राप्त होते हैं। नरेश मेहता ने अन्य प्रयोगधर्मी शब्दों मे अतिरिक्त प्रवेशते, सहनते, सम्पन्नते, प्रवाहेगी, स्वीकारना जैसे अनेक संश्लेष्णात्मक शब्द प्रयोग किए। नरेश मेहता के शब्द संस्कार प्रयोगात्मक दृष्टि से अपना विशेष स्थान रखते हैं। शिव प्रसाद सिंह ने रंगो के नामों के लिए प्रत्यय लगाकर अनेक सुंदर विशेषणों की रचना की है। जैसे-बादामी आंखे, चम्पई उंगलियां, सिंदूरी प्रकाश, ललछौहीं हथेली, मोरपंखी साड़ी, दूधिया वक्ष, मोतिया आभा, सुरमई रोशनी, तांबिया लाली, गुरूई बादल, लीन कुंतल, फिरोजी होंठ आदि। सन साठ के बाद के तथाकथित 'अकहानी' के कहानीकारों ने प्रतीकों, संकेतों व सम्मोहनात्मक भावाकुलता से आक्रांत काव्यात्मक शब्दों का निषेध कर रूखड़ और अनगढ़ शब्दों के प्रयोग को विशेष स्थान दिया। यद्यपि अपशब्दों के स्वच्छंद प्रयोग की शुरूआत कृष्णा सोबती ने यारों के यार और मित्रो मरजानी नामक कहानियों में कर दी थी

अत: एक प्रवृत्ति के रूप में इनका प्रयोग साठोत्तरी कहानियों में ही प्राप्त होता है। काशीनाथ सिंह, दूधनाथ सिंह, ज्ञान रंजन, रवीन्द्र कालिया, ममता कालिया, महेन्द्र मेल्ता आदि की अनेक रचनाओं अपशब्दो अश्लील शब्दों का प्रयोग सहज ही मिल जाता है। अंग्रेजी-उर्दू के शब्दों के साथ-साथ देशज शब्दों का प्रयोग भी इन कहानीकारों में प्राप्त होता है। कहीं-कहीं कठिन संस्कृत शब्दों के साथ साथ कठिन उर्दू के शब्दों का असंगत प्रयोग भी इन कहानीकारों ने किया है। आज की हिंदी कहानी समांतर आंदोलन और प्रगतिशील आंदोलन के दो खेमो में विभक्त हो गई है पर शब्द प्रयोग के स्तर पर इन कहानियों में एक साम्य दिखाई देता है।

प्रेमचन्द और जैनेन्द्र कुमार की कहानियां मानव, समाज और देश से जुड़ी कहानियां हैं। प्रेमचन्द ने हिन्दी कथा साहित्य को मनोरंजन के स्तर से उठाकर जीवन के साथ सार्थक रूप में जोड़ने का काम किया। प्रेमचंद के पूर्व हिन्दी कथा-साहित्य की कोई मान्य परम्परा नहीं थी उसमें या तो अजीबो गरीब घटनाओं के द्वारा कुतूहल और चमत्कार की सृष्टि रहती थी अथवा आर्यसमाज और अन्य अंदोलनो से प्रभावित समाज सुधारों का प्रचार ही उसकी उपलब्धि थी, वह जीवन की सही अभिव्यक्ति का साधन नहीं बन पाया था। प्रेमचंद ने पहली बार हिंदी कथा साहित्य में चारो ओर फैले हुए जीवन और उसकी सामायिक समस्याओं पराधीनता, जमीदारों पूजींपतियो और सरकारी कर्मचारियों द्वारा किसानो के शोषण, निर्धनता, अशिक्षा अंधविश्वास दहेज की कुप्रथा ,घर और समाज में नारी की स्थति वेश्याओं की जिंदगी वृद्ध, विवाह, विधवा समस्या, साम्प्रदायिक वैमनस्य, अस्पृश्यता, मध्यम वर्ग की कुंठाएँ आदि को कथा साहित्य में स्थान दिया। प्रेमचंद ने एक एक कर इन समस्याओं और जीवन के विभिन्न पहलुओं को अपने उपन्यासो और कहानियों मे स्थान दिया। प्रेमचद के कथा साहित्य मे धीरे- धीरे जीवन की समस्याओ और आदर्शवादी सामाधानो का महत्व कम होता गया और जीवनधारा की ताजगी तथा यथार्थता क्रमश: प्रमुख तथा व्यापक होती गई। अपने अंतिम उपन्यास गोदान मे विभिन्न वर्गो के व्यक्तियों की सामान्य जिंदगी को उसकी सम्पूर्ण मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया है। विशेष बात यह है कि सामान्य जिंदगी के ये चित्रण मनोवैज्ञानिक स्थितियों से संकलित है जिनकी पृष्ठभूमि मे जीवन का गहरा और व्यापक अनुभव तथा तीव्र संवेदना विद्यमान है। शिल्प और भाषा की दृष्टि से भी प्रेमचंद ने हिंदी कथा साहित्य को विशिष्ट स्तर प्रदान किया है चित्रमय विषय के अनुरूप शिल्प का अन्वेषण और प्रयोग हिंदी मे पहली बार प्रेमचंद ने ही किया। उनके द्वारा

प्रस्तुत किये गये दृश्य अत्यंत सजीव गतिमान और नाटकीय है। उनके कथा साहित्य की भाषा सरल और बोलचाल की है पर भाषा की इस सरलता को निर्जीवता और एक रसता का पर्याय नहीं समझा जाना चाहिये। भाषा के सटीक सार्थक और व्यंजना पूर्ण प्रयोग में वे अपने समकालीन ही नहीं बाद के कथाकारों को भी पीछे छोड़ जाते है।हिन्दी कथा साहित्य मे प्रेमचंद और उनके युग की परंपरा को आगे बढ़ाने और उसको नई दिशा देने का सफल प्रयास कथाकार जैनेन्द्र कुमार ने किया। वे प्रेमचंद के समकालीन ही नहीं उनके प्रिय पात्र भी थे। उनके उपन्यास परख सुनीता और त्यागपत्र तथा कहानी संग्रह फांसी को देखकर प्रेमचंद ने लिखा था तुम गोर्की को चाहते हो। हिदुस्तान में कोई गोर्की है या हो सकता है तो वह जैनेन्द्र हैं। जैनेन्द्र कुमार ने अपने कथा साहित्य मे समकालीन सामाजिक समस्याओ जिसके प्रेमचंद सर्वश्रेष्ठ लेखक थे। अलग लीक पर चलने का प्रयास किया उन्होंने व्यापक सामाजिक जीवन को अपने उपन्यासो को विषय न बनाकर व्यक्ति मानस की शंकाओ उलझनो और गुत्थियों का चित्रण किया।

जैनेन्द्र ने हिन्दी कथा साहित्य को सामाजिक यथार्थ ही नहीं मनोवैज्ञानिक यथार्थ के क्षेत्र में प्रवेश करने की राह सुझाई। उन्हे हिन्दी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासो का पुरस्कर्ता माना जा सकता है। जैनेन्द्र कुमार की पहली रचना परख 1929 से लेकर अंतिम रचना तक का कथा साहित्य कई अर्थो मे उससे हटकर है क्योंकि जैनेन्द्र की लेखकीय उत्तेजकता मनुष्य के विविध रूपो उसके भावात्मक ओर चिंतन परक अंतद्वंदो, मानसिक जीवन विषयक जिज्ञासाओ तथा मानव की ज्ञानेच्छा को व्याकुल करने वाली समस्याओ में रही है। जैनेन्द्र ने अपने कथा साहित्य मे मनुष्य की अंतर्यात्रा को महत्व दिया है वे मनुष्य की मानसिक शक्ति की गहनता ओर मूढता पर विश्वास करते थे उनके लिए सारे बाह्य परिवर्तन उथले क्षणिक ओर बालू की भित्ति की तरह अस्थाई थे जो मनुष्य के मन की शक्ति पर खड़े नहीं होते है जैनेन्द ने अपने कथा साहित्य में आस्तिकता नास्तिकता बुद्धि बनाम भावना अर्तप्रेरणा बनाम तर्क मनुष्य के मन की मूलभूत विशेषता सत् असत् राजनीति और उसका आधार हिंसा अहिसां प्रेम और वासना पर घर और बाहर पति और पत्नी प्रेमी और प्रेयसी सतीत्व, शरीर पवित्रता पाप कृषि बनाम उद्योग इत्यादि प्रश्नो के माध्यम से हिन्दी जगत के जागरूक मानस को झकझोरा और बेचैन किया। जैनेन्द्र की दस भागों में प्रकाशित कहानियों और परख से लेकर अनाम स्वामी तक के उपन्यासो में देखा जाये तो प्रेमचन्द की परम्परा किसी न किसी रूप मे मिल जाती है गहरे मानवीय मन को छूते हुये भारतीय मानसिकता को टोहते हुए भी जैनेन्द्र सामाजिकी जीवन के यथार्थ से हमेशा जुड़े रहे है परिवार समाज और व्यक्ति की समस्याओ से वे जूझते भी रहे है प्रेमचन्द की तरह चितंन जैनेन्द्र के लिए सत्य को तलाशने का साधन था पर वह सत्य आत्मिक पहचान में ही नहीं सामाजिक प्रसंगो में भी है जिसे वे बराबर तलाशते रहे है उनका चित्रांकन करते रहे। भावात्मक ओर मनोवैज्ञानिक उथल पुथल को महत्व देते हुये भी वे समाज के प्रत्यक्ष ठोस और तार्किश्रित आकस्मिकता को अपने पात्रो में खोजते रहे। इस तरह से वे प्रेमचंद की परम्परा कथाकार होकर भी नई दिशा की पहचान और तलाश में लगे रहे इसीलिये वे हिंदी कथा साहित्य को नई दिशा ओर नए आयाम दे सके जैनेन्द्र ने हिन्दी कथा को नए शिल्प और नई भाषा से समृद्ध किया है। प्रेमचंद को दृश्यात्मक ओर परिदृश्यात्मक पद्धति को मिश्रित रूप से अपनाया है पर सिलसिलेवार कहानी कहने की जरूरत जितनी प्रेमचंद समझते थे उतनी जैनेन्द्र ने नहीं समझी। कथ्य के अनुरूप जैनेद्र की भाषा मे नवीनता है सादगी उनकी भाषा की भी विशेषता है पर वह प्रेमचंद की भाषा से भिन्न है। प्रेमचंद की भाषा खुद से या बहुत हुआ तो किसी आत्मीय से चुपचाप की जाने वाली बातचीत की भाषा है इसलिये सरल होने पर भी आंतरिक मनोभावो को व्यक्त करने की उसमें अद्भुद क्षमता है इस दृष्टि से वे प्रेमचंद से अलग दिखलाई पड़ते है।

निष्कर्ष – यह है कि आज के आधुनिक कहानीकारों में आम आदमी की भाषा से जुड़ने की आकुलता का आभास मिलता है। यही कारण है कि इनके शब्द प्रयोग जन भाषा से अनुप्राणित है। काव्यात्मक शब्द प्रयोगों का निषेध उनमें दिखाई देता है। चलतू शब्दों का उन्होंने बेधड़क प्रयोग किया है। कहीं-कहीं शब्दों में आक्रोश के तेवर भी दिखाई देते हैं। जीतेन्द्र भाटिया, सुदर्शन नारंग, अशोक अग्रवाल, प्रभु जोशी, स्वयं प्रकाश, विश्वेश्वर, विजयकांत, इब्राहिमशरीफ, मृणाल पांडेय अन्यान्य कहानीकारों की भाषा इस दृष्टि से देखी जा सकती है। हिन्दी कथा साहित्य को जैनेन्द्र की देन महत्वपूर्ण है प्रेमचन्द्र के बाद उन्होने ही हिंन्दी उपन्यास को विशेष व्यक्तित्व प्रदान करने वाले प्रेमचंद परंपरा के वे अंतिम कथाकार थे। इस प्रकार आधुनिक हिन्दी कहानी हिन्दी साहित्य का अनमोल खजाना उस खजाने को सहेज कर रखना आज के साहित्यकारों का परम दायित्व है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अक्षर शिल्पी, सितंबर 2010, सृजनात्मक अभिव्यक्ति की प्रमुख पत्रिका, महाराणा प्रताप नगर भोपाल म.प्र.पृष्ठ 15,18, 38
2. साहित्य अमृत, साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक, फरवरी 2010, आसफ अली रोड नई दिल्ली। पृष्ठ 08,25
3. नया ज्ञानोदय, अगस्त 2011, भारतीय ज्ञानपीठ लोदी रोड नई दिल्ली। पृष्ठ 41
4. डॉ.विलास गुप्त- हिन्दी प्रचारक संस्थान, बनारस आधुनिक हिन्दी साहित्य को अहिन्दी लेखकों का योगदान। । पृष्ठ 16, 25
5. डॉ.बालभद्र तिवारी- आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका, तक्षशिला प्रकाशन नई दिल्ली। पृष्ठ 28
6. वाक पत्रिका वर्ष 2009, अंक 5, दरियगंज नई दिल्ली पृष्ठ 10,11
7. अक्षरा, साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका, जनवरी 2009 हिन्दी भवन भोपाल पृष्ठ 14,35
8. नई दुनिया समाचार पत्र इन्दौर 8 अक्टूबर 2007 पृष्ठ 10।
9. स्वंय का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

****

जबलपुर के पत्रकार और पत्रकारिता : जन-संवेदना, जन-मानस की अभिव्यक्ति का 'मिशन'

डॉ. लक्ष्मीकान्त चंदेला *

शोधा सांराश – स्वतंत्रता के पूर्व पत्रकार और पत्राकारिता का मुख्य उद्देश्य देश की स्वाधीनता के लिए जन-जागरण करना था, जन-मानस को संगठित और आंदोलित करना था किन्तु स्वातंत्र्योत्तर पत्रकार और पत्राकारिता का मुख्य उद्देश्य जन-जीवन को चहुँमुखी विकास करना था क्योंकि देश बस आजाद ही हुआ था। जबलपुर के पत्रकार और पत्रकारिता ने इसे अपना दायित्व-बोध व कर्तव्य-बोध समझ कृत संकल्पित हुआ सचमुच इन्हीं पत्राकार और पत्राकारिता के माध्यम से देश में नव-निर्माण व नये युग का पदार्पण हुआ है। बेशक भीतरी और बाहरी समस्याओं को झेलते हुए भारत को निरन्तर आगे बढ़ने के लिए जबलपुर के पत्रकार और पत्राकारिता ने मिशन के रुप में कार्य किया।

प्रस्तावना – पत्रकारिता हर युग में जन-भावनाओं की संवाहक रही है तथा राष्ट्र सेवा के लिए योद्धा की भाँति अपनी महती भूमिका निभाई है। सीमा में सैनिक एक मिशन के तहत क्रूर आक्रांताओं के छक्के छुड़ाते हैं ठीक उसी तरह पत्रकारिता भी विदेशी आक्रांताओं पर प्रहार किया। जबलपुर के पत्रकार और पत्रकारिता दोनों ने प्रहरी की भाँति देश-वासियों को राष्ट्र-प्रेम की अलख जगाये और देश के सामाजिक, आर्थिक, वैचारिक विकास के देश-वासियों को नव-संदेश दिया। समय की हर छोटी-बड़ी घटना को जनता के सामने पूरी ईमानदारी से लेकर आये। सचमुच देश समोन्न विकास के लिए प्रवृत्त हुआ, जिसके परिणाम भी सकारात्मक आये।

पत्रकारिता हर युग में जन-मानस को आंदोलित करती आयी है। भारत में पत्रकारिता का अभ्युदय वाक् संप्रेषण की प्रक्रिया के साथ ही प्रारंभ होने का आभास होता है। यदि स्वतंत्रता के पूर्व की बात करें तो पत्रकार एवं पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य जन-जागरण करना था, जन-मानस को आंदोलित करना तथा उन्हें चेतना प्रवण बनाना था। बात और भी प्रासंगिक हो जाती है जब बच्चन सिंह कहते हैं कि- 'आजादी पाने के जो हथियार इस देश की जनता के हाथ में थे, उनमें एक पत्रकारिता भी थी और पत्रकार वही बनता था जो स्वतंत्रता आंदोलन में शिरकत करना चाहता था।'[1] परन्तु स्वातंत्र्योत्तर पत्रकारिता का उद्देश्य जन-जीवन का चहुँमुखी विकास करना है क्योंकि हमारा देश बस आजाद ही हुआ था।

स्वातंत्र्योत्तर पत्रकार एवं पत्रकारिता का बुनियादी अर्थ लोक-जीवन को आत्मगौरव की प्राप्ति है। जबलपुर क्षेत्र की पत्रकारिता ऐसे ही समय की सशक्त हस्ताक्षर है जब देश में विकास की मुख्य समस्या थी, तब जबलपुर के पत्रकार और पत्रकारिता जनोन्मुख आयाम दिये हैं। प्रसंग स्वरूप 'पुरुषोत्तम दास मोदी' का यह कथन बेहद प्रासंगिक हो जाता है, वे कहते हैं कि- पत्रकारिता अब न तो सिर्फ कर्म विधा रह गई है, न तो साध्य तक पहुँचने का साधन और न ही मानवीय यथार्थ की अभिव्यक्ति का माध्यम। उसके कदम विश्वविद्यालयों के हाथों में पहुँच गये और वह अब विज्ञान का रूप ग्रहण करने लगी है- कला विज्ञान का रूप।'[2]

जबलपुर की पत्रकारिता के इतिहास में हुकुमचंद नारद का अपना विशेष स्थान है। ऐसे समर्पित पत्रकार-चिंतक के योगदान को जबलपुर क्षेत्र की विरासत ही कह सकते हैं। पत्रकार, साहित्यकार कैलाश नारद स्वयं जबलपुर के पत्रकारों के योगदान को इस प्रकार रेखांकित करते हैं- 'ये बरसों पहले की बात है और अब हमारे पूज्य पिता हुकुमचंद जी नारद नहीं हैं। तीस साल पहले जब मैं सिर्फ दस वर्ष का था, शीत से लबरेज कुहासा ओढ़े नवम्बर की एक सर्द रात उन्होंने दम तोड़ दिया। वे अपने अखबार के लिए आलेख तैयार कर रहे थे- लेकिन कागज पर रेंगते अक्षरों के जंगल में डूबते-डूबते वे मौत के ही बीहड़ में खो गए- स्तब्ध और निस्पंद। अखबारों की अपनी ही दुनिया में वे ताजिंदगी खामोश डूबे रहे।'[3]

स्वतंत्रता के पश्चात् जबलपुर के पत्रकार और उसकी पत्रिका जब भी उगली है आग ही उगली है। ऐसी आग जैसी स्वतंत्रता के पूर्व गौरांगशाही पर 'शुभचिंतक' प्रहार करती थी और आजादी के ठीक बाद 'प्रहरी' देश की व्यवस्था पर। जितनी निर्भयता से जबलपुर के पत्रकारों ने हिन्दी की मठाधीशीय परम्परा को देश और समाज के समक्ष प्रस्तुत करते थे। यह 'प्रहरी' पत्रिका के इस अंश से स्पष्ट हो जायेगा और पत्रकारों के जज्बे का पता भी चल जायेगा- 'साहित्यिक संदर्भों में 'प्रहरी' अत्यंत निषेध और स्वाधीन था और हिन्दी में चली आ रही मठाधीश परम्परा पर उसने बड़ी ही निदारुणता और निर्भयता से प्रहार किये हैं।'[4]

जबलपुर के पत्रकारों में नवभारत के जबलपुर संस्करण 1950 के संपादक 'पंडित कालिका प्रसाद दीक्षित सुकुमार' का विशिष्टि योगदान है। उन्हीं के संपादकीय एवं विशेष प्रयासों से 'प्रत्येक रविवार को रविवारीय परिशिष्ट भी प्रकाशित होती है जिसमें कहानी, गजल, कविताएँ, व्यंग्य, वार्ता आदि प्रकाशित होती थी।'[5] ऐसे ही 'नई दुनिया' 5 जनवरी 1947 के संस्थापक 'कृष्ण चंद मुद्र' और 'श्रीकांत व्यास' के प्रयत्नों से रायपुर और जबलपुर से प्रकाशित हुआ था। इसने भी कविता, कहानी को प्रकाशित कर जन-मानस की संवेदनाओं को नयी दिशा दी है। 1956 ई. में जबलपुर से प्रकाशित युग-धर्म के संस्थापक 'भगवती प्रसाद वाजपेयी' की पत्रकारिता ने भी समय को माँजते हुए जन-मानस के अंत:संबंधों को विशद् रूप में रेखांकित किया है। 1956 से प्रकाशित देश-बंधु के संस्थापक 'मायाराम सुरजन' जन-मानस की बीहड़-सी जिन्दगी और उसके बुनियादी समस्याओं को जन-जन तक पहुँचाया है तथा सामाजिक व मानवीय स्थिति का बड़े सहज रूप में आम-आदमी के समक्ष प्रस्तुत किया है। जबलपुर अंचल के ऐसे अनेक दीर्घजीवी पत्रकार और उनकी पत्रकारिता है जो आम आदमी और देश

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्वशासी स्नाातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

के विकास की आवाज बनी। जन-जीवन की उम्मीदों की मशाल जलाए रखी, देश की रीढ़ कहलाए।

अर्जुन तिवारी 'सन् 1948 से 1974 ई. तक की अवधि को नव-निर्माण काल की संज्ञा से अभिहित किया गया है।'[6] इस समय के पत्रकार और पत्रकारिता ने जन-मन की टूटी जड़ता को दूर कर राष्ट्र के नव-निर्माण को गौरव प्राप्त किया है। नव भारत, नई दुनिया, देश-बंधु, रविवारीय आदि का विशिष्ट योगदान है। 1947 के बाद 'मध्यप्रदेश से जयभारत, नया जमाना, नई दुनिया, मंगल प्रभात, नव-प्रभात, आजाद हिंद, स्वंतत्र भारत, अपना राज, हित चिंतक, देश-बंधु,, नव-भारत, नवीन दुनिया'[7] आदि पत्रों ने राष्ट्र को नव-निर्माण की नयी दिशा दी तथा नवनवोन्मेशालिनी प्रतिभा द्वारा विकास के नये आयाम को अलोकित किया।

पत्रकारिता जगत् में जबलपुर के पत्रकारों और पत्रकारिता की छवि बिलकुल साफ-सुथरी है क्योंकि उन्होंने जनता की संवेदनाओं को समझा और फिर मानव धर्म की स्थापना को अपना धर्म समझा। इस अंचल के पत्रकारों ने पत्रकारिता के पेशे को केवल जीवन निर्वाह का पेशा न मानकर जीवन अस्तित्व के बुनियादी बदलाव को समर्पित किया है। तभी तो जबलपुर क्षेत्र की पत्रकारिता संस्कारधानी की विरासत बन गयी है।

इससे तो यह स्पष्ट हो जाता है कि स्वतंत्रता के पश्चात् भी जबलपुर के पत्रकारों की पत्रकारिता ने जन-मानस की बदस्तूर जीवन स्थिति को अभिव्यक्ति प्रदान की है। इतना ही नहीं स्वातंत्र्योत्तर जबलपुर के पत्रकार और पत्रकारिता ने मानवीय अंत:संबंधों के रेशे-रेशे को उजागर किया है। जबलपुर के पत्रकारों का यह सिलसिला आज भी जारी है। सिलसिला तो यह भी जारी है- मानव-अस्तित्व और मानव-संबंधों को तलाशने का। आज तो बहुत कुछ अनदेखा, अनहुआ रह गया है को सामने लाने के लिए आदमी के अंदर के संसार को खोलकर रख देना चाहते हैं। यही संवेदना तो है जो आदमी के भीतरी और बाहरी दुनिया को बहुत दूर तक प्रभावित किया है। निश्चित ही कई तरह के संकट होने के बावजूद जबलपुर के पत्रकार और पत्रकारिता ने जन-मानस की संवेदनाओं को अभिव्यक्ति देने की कोई कसर नहीं छोड़ी है। तभी तो कहा जाता है- 'पत्रकारिता एक पेशे के रूप में जीविकोपार्जन का साधन होते हुए भी 'मिशन' है।'[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सिंह, बच्चन : हिन्दी पत्रकारिता के नये आयाम, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृ. 14
2. सिंह, बच्चन : हिन्दी पत्रकारिता के नये आयाम, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृ.-हलफनामा से
3. नारद, कैलाश : मध्यप्रदेश में हिन्दी पत्रकारिता एक शताब्दी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृ- भूमिका से
4. नारद, कैलाश : मध्यप्रदेश में हिन्दी पत्रकारिता एक शताब्दी, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृ-150
5. पंत, एन.सी. : पत्रकारिता का इतिहास, तक्षशिला प्रकाशन, अंसारी रोड दरियागंज नई दिल्ली, पृ. 150
6. सिंह, बच्चन : हिन्दी पत्रकारिता के नये आयाम, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, पृ. 18
7. सिंह, अर्जुन : हिन्दी पत्रकारिता का वृहद इतिहास, वाणी प्रकाशन, 21ए दरियागंज नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण, 1997, पृष्ठ 348.
8. सिंह, बच्चन : हिन्दी पत्रकारिता के नये आयाम, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी – पृष्ठ 18

****

संघर्ष और मानव – मूल्य

डॉ. टीकमणि पटवारी *

शोध सारांश – मानव-मूल्य के विघटित होने तथा जीवन संघर्ष का मुख्य कारण विचारधारा में असामनता है। वैसे भी दुनिया की प्रत्येक विचारधारा के जन्म में सामाजिक संघर्ष, जातीय दंभ, आर्थिक संकट और जनता की आपसी लड़ाई की मुख्यता होती है तथा वर्तमान में भाषा और क्षेत्रवाद भी इसको हवा पानी देते हैं। संघर्ष का रूप परिवर्तित होने पर इनके मूल में भी परिवर्तन होता है, यदि साहित्य में संवेदनाओं का चित्रण है तो सामाजिक संघर्ष भी चित्रित होगा, संघर्ष चाहे आर्थिक, राजनैतिक या पारिवारिक हो, वर्तमान परिस्थिति का संघर्ष है। फलत: संघर्ष का कारण कुछ भी हो मूल्यों का अपघटन अवष्यंभावी हो जाता है।

प्रस्तावना – ''जिंदगी की मौन काली भट्टियों में
कैद, जलता आग का तूफान,
और ऊपर चिमनियों से
लहराता, तनता बिखरता
गूँजता हर रात ध्वनियों का धुआँ।'

सचमुच विजयदेवनारायण साही की कविता 'संवाद तुमसे' की ये काव्य पंक्तियाँ जिंदगी की सही शुरूआत का आइना है। जिसमें आदमी हर स्तर पर संघर्ष करता है, जिंदगी की काली भट्टी जिसमें तपना और गलना संघर्ष का पर्याय है। यही बिलखते, तड़पते, कुलबुलाते, अदने से आदमी की जिंदगी है। जीवन में संघर्ष का दौर एकांगी, एकपक्षीय और एक स्तरीय नहीं होता बल्कि हर मोड़-पड़ाव पर जीवन की चुनौतियों से सामना करता है, संघर्ष करता है, क्रांति की मशाल लिए आगे बढ़ता, इसी से जीवन व सामाजिक परिवर्तन भी होता है। आधुनिक समीक्षक डॉ. बलदेवंशी की मान्यता हैं- ''संघर्ष और क्रांति द्वारा अमूल परिवर्तन कर समाज विशेष को पुन: जीवन की गत्यात्मक प्रकृति से जोड़ने उसकी अपनी विशिष्ट प्रकृति लय एवं अस्मिता की एकात्मतता अर्जित करने की रीतियाँ ''[1] है।

वास्तव में जीवन संघर्ष मुक्ति प्रसंग का पर्याय है। चीजों की तरह बिकता-पिसता आज का आदमी खुद जिंदगी के मायने भूल गया है। ऐसे में साहित्य मानव-मूल्य और निहितार्थ संघर्ष की व्यापकता को चित्रित करता है। हिन्दी के जाने-माने समकालीन कवि 'मंगलेश डबराल' की कविता में आदमी के टुकड़ों में विभक्त हो जाने और जिंदगी के संघर्षशील होने की सच्चाई को व्यक्त किया है-

''जीवन की एक आवाज
जो अनेक आवाजों में सुनाई देती है।''[2]

वैसे भी दुनिया की प्रत्येक विचारधारा का जन्म सामाजिक संघर्ष, जातीय दंभ, आर्थिक संकट और जनता की आपसी लड़ाई की मुख्यता होती है तथा वर्तमान में भाषा और क्षेत्रवाद भी इसमें शामिल हैं। जीवन को अनेक आवाजों में, अनेक स्तरों में सुनना जीवन संघर्ष की, मानव मूल्य व मानव अस्मिता की संघर्षशील होने की सच्चाई है। आज मानव की समस्याएँ पुरानी हों अथवा नवीन उसे कई स्तरों पर भोग रहा है। मजदूर, श्रमिक, दलित, आदिवासी, स्त्री व किसानों की समस्याएँ सनातन हैं। इन वर्गों की भूमि समस्या, आर्थिक अभाव ग्रस्तता, अशिक्षा, यांत्रिकता से उत्पन्न अनास्था की स्थिति, विषम परिस्थितियों से जूझते आम जन की पीड़ा, लाचारी , आत्म-प्रवंचना और जिजीविषा की स्थिति, संघर्ष तो सर्वत्र विद्यमान हैं। पूर्व में परम्परानुगत मान-मूल्यों, परम्पराओं, विश्वासों और आदर्श के प्रति विद्रोह का जो स्वर प्रच्छन्न और दबा हुआ था वह वर्तमान में आकर उन्मुक्त हो गया, व्यवस्था के प्रति विद्रोह, संघर्ष का रूप धारण करने लगा। परिवर्तित सामाजिक-राजनीतिक परिस्थियों, बौद्धिक जीवन दृष्टि और विचार-दर्शनों ने मानव जीवन को गहनतम रूप में प्रभावित किया है, नवीन वैचारिकता के आलोक में समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन परिलक्षित होने लगे हैं। परिणाम स्वरूप संक्रमण के इस समय में नवीन-मूल्यों में भी संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हुई। विभूतिनारायण राय मानव संघर्ष की विष-बेल के कारणों पर विचार करते हुए कहते हैं- ''इन सौ बरसों में भारतीय समाज में स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया, साम्प्रदायिकता की विष-बेल को फूलते-फलते देखा, देश का विभाजन झेला, शहरीकरण की ऊँची दौड़ में शरीक हुआ ... अपने को पूरी तरह उदारीकरण और खुली अर्थव्यवस्था के भरोसे छोड़ दिया।''[3] जीवन के बदल जाने, जीवन-मूल्यों के विघटित होने का एक कारण यह भी है जिससे संघर्ष करना अनिवार्य हो गया है।

संघर्ष दो प्रकार से जन्म लेते हैं- एक सकारात्मक, दूसरा नकारात्मक। जीवन मूल्यों की स्थापना के लिए, लोक मंगल, लोक रंजन, लोक-कल्याण के लिए जो प्रयत्न किये जाते हैं वे उन्नयन और उत्कर्ष की ओर ले जाते हैं, सामाजिक सुव्यवस्था, सुनियोजन हेतु ये प्रयत्न सकारात्मक श्रेणी में आते हैं, योग और यज्ञ भारतीय संस्कृति के विशिष्ट जीवन-मूल्य हैं। इन साधनों के माध्यम से वैयक्तिक, पारिवारिक और सामाजिक परिष्करण की व्यवस्था की जाती है। नकारात्मक मूल्यों की विवेचना में यह स्पष्ट होता है कि जब समाज और राजनैतिक व्यवस्था के प्रति वैचारिक आक्रोष उत्पन्न होता है उस स्थिति में हिंसात्मक तरीके से अपनी वैचारिक स्थापना और अस्मिता की सुरक्षा के लिए संघर्ष करने पड़ते हैं।

गाँधी जी कहते थे- 'अच्छे लक्ष्य के लिए साधन भी अच्छे होना चाहिए' तात्पर्य यह है कि सार्वभौमिक कल्याण की दृष्टि से दो वर्ग बन जाते हैं। एक अहिंसात्मक रूप से, दूसरा हिंसात्मक रूप से, विष्व की श्रेष्ठतम मनीषा इस बात के लिए आग्रह करती है कि उत्तम साध्य के लिए हम सभी को अहिंसात्मक मार्ग ही अपनाना चाहिए। ये ठीक है कि गाँधी जी ने अहिंसा और सत्य के मार्ग से चलकर अपने लक्ष्य का पृष्ठ पोषण किया है किन्तु क्या राजनैतिक

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

सत्ता में हिंसा के माध्यम से उस अहिंसक मार्ग को कुचलने का कम प्रयास नहीं किया? इससे यह स्पष्ट होता है समाज में हिंसा और अहिंसा दो ही पथ हैं, सही संघर्ष के कारण बनते हैं, कोई भी समाज या जाति हो अपनी अस्मिता और जीवन यापन की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संघर्ष करना ही पड़ता है, जब विघटनकारी शक्तियाँ प्रबल हो जाती है उस काल में समाज में संघर्ष की मात्रा तीव्र हो जाती है। समाज का यह निम्न स्तरीय जीवन-यापन अधोगामी वृत्तियों का ही द्योतक है। सहारा के तुरंग, थार के बंजारे अथवा मध्य अफ्रीका के आदि मानव या भारतीय समाज के दलित आदिवासी अपने जीवनयापन के लिए अथक परिश्रम करने के उपरांत भी जीवन की सामान्य सुविधाएँ एकत्रित नहीं कर पाते, इस मन और आर्थिक विपन्नता का परिणाम यह होता है कि हिंसात्मक वृत्तियाँ प्रबल होकर संघर्ष की ओर उन्मुख हो जाती है। जीने की यह प्रबल इच्छा मानव को अधोगामी पथ की ओर, अग्रेषित कर देती है इस स्थिति का आकलन अथवा मूल्यांकन चिंतनशील समाज का प्रबुद्ध वर्ग भले ही अधोगामी वृत्ति के शब्द से इस समाज या वर्ग को व्यक्त कर सकता है पर यही तो यथार्थ है, यही अनुभूतिजन्य सत्य है जो संघर्ष के लिए उत्प्रेरित करता है। तब साहित्यकार की यह चिंता लाजिमी है और कवि कर्म की अनिवार्यता हो जाती है। बलदेव वंषी कहते है सारांश यह है- ''कविताएँ एक प्रकार की मानव विरोधी राजनीति के विरुद्ध है। वे उस शाश्वत् आपात् काल और ऐतिहासिक, शोषण, अन्याय और असानता के विरुद्ध लिखी जा रही हैं।''[4] फलत: संघर्ष का कारण कुछ भी हो मूल्यों का अपघटन अवश्यंभावी हो जाता है।

धर्म,अर्थ,काम, मोक्ष, सत्य, शिव, सुंदर, योग और यज्ञ आदि शाश्वत् मूल्य हैं। इन मूल्यों की स्थापना और संरक्षण उस स्थिति में ही संभव हो सकते हैं जब समाज में आर्थिक विषमता न हो, वर्ग-भेदे न हो, वैचारिक समन्वय हो, उर्ध्वगामी मनोवृत्तियों का संचरण हो रहा हो। सामाजिक विघटन उत्पीड़न शोषण की दशा में ये मूल्य अपने स्तर को खो देते हैं और पाश्विक वृत्तियों के प्रबल प्रवाह में सामाजिक संरचना में पतन होने लगता है।

आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, आध्यात्मिक किसी भी आयाम में समष्टि और व्यष्टि प्रयत्नशील होकर उस अवस्था में संघर्ष अनिवार्यत: अपनी स्थिति बनाए रखेगा, विकास के सोपानों को चढ़ने के लिए प्रयत्न अनिवार्य है, जीवन मूल्यों को केन्द्र में रखकर कोई समाज यदि प्रयत्नशील होता है तो निश्चित् रूप से समझ लेना चाहिए वह समाज उत्तम कोटि का है। उत्थान, अभ्युदय, उत्कर्ष के लिए प्रयत्नशील समाज ही श्रेष्ठ समझा जाता है। इस स्थिति में भी संघर्ष अर्थात् प्रयत्न अनिवार्य मानसिक उत्प्रेरणा है, संघर्ष को मैं गतिज ऊर्जा समझती हूँ जो रचना और विघटन दोनों में काम करती है मूल्यों की स्थापना में और विघटन में जो शक्तियाँ काम करती हैं मैं उसे संघर्ष कहती हूँ। हमारे जीवन की ऊर्जा उसी ओर अग्रेशित होती है जिस ओर ध्येय और प्रेय बनते रहेंगे, हम जैसा सोचते हैं, चिंतन करते हैं, उसी ओर गति होती है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हमें जीवन के उन शाश्वत् मूल्यों को खोजना होगा जो अस्तित्व बोध करायें और जीवन को एक संतुल्य प्रदान करें।

इस अंधानुकरण के फलस्वरूप भारतीय जीवन में भौतिक जगत् के प्रति गहन आकर्षण पैदा हो गया है, इसलिए नयी सूक्तियों, नये मुहावरे, नयी मान्यताओं ने जन्म ले लिया है। ''संघर्ष ही जीवन है'', ''यदि विकास करना है तो संघर्ष करना पड़ेगा'', ''जिंदगी हर कदम एक नयी जंग है'', ''गति ही जीवन है''। स्थूल व संस्करण के साथ के साथ हमने इसे विकास की संज्ञा दी है, सूक्ष्म में विघटन की। जीवन का प्रथम संघर्ष जीवकोपार्जन हेतु है, आर्थिक रूप से विपन्न व्यक्ति पेट की ज्वाला को शांत करने के लिए जूठन खाने के लिए मजबूर होता है, रोटी कपड़ा और मकान की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु श्रम और बुद्धि के सम्मिलित प्रयास से आजीविका के साधन जुटाता है, इनकी पूर्ति पश्चात् जीवन के अन्य आयामों की ओर मुड़ता है, मूल्यों हेतु संघर्षरत होता है। शांति जोशी की मूल्य संबंधी धारणा इस तथ्य को स्पष्ट करती है- 'मूल्य उस सत्य को कह सकते हैं, जिसके लिये व्यक्ति या समाज जीवित रहता है और जिसके लिए आवश्यकता पड़ने पर वह संघर्ष करने, दु:ख सहने तथा मृत्यु को स्वीकार करने के लिए भी तत्पर होता है।
मूल्यों की स्थापना, निर्वहन हेतु व्यक्ति प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अस्तित्व बनाये रखने के लिए संघर्षशील रहता है, स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु किये गये संघर्ष में उदात्त मूल्यों के आधार पर ही संग्राम लड़ा गया, सत्य, अहिंसा, त्याग, सेवा, समर्पण, देश-भक्ति, साम्प्रदायिक सौहार्द्र, एकता के बल पर स्वतंत्रता प्राप्ति की गई। सामाजिक, सांस्कृतिक विकास के लिए जब व्यक्ति संघर्ष करता है तब मूल्य स्वाभाविक रूप से आरोहित होते हैं किन्तु जब स्वार्थी मनोवृत्ति के वशीभूत हो अर्थोपार्जन हेतु संघर्षरत् होता है तब मूल्य स्वत: विघटित होते हैं।

संघर्ष हर परिवर्तन का मूल है। साहित्य में संघर्ष का विषद अंकन इसलिए हुआ है क्योंकि परिवर्तित व विघटित मूल्यों को मानव सापेक्ष केवल क्रांति और संघर्ष से ही संभव हो जाए तब यह अनिवार्य कवि वाणी में प्रस्फुटित होती है। कथाकार कमलेश्वर भी कह आये हैं कि 'समय सापेक्ष समांतर साहित्य ही आदमी की बाहरी और भीतरी लड़ाई को जोड़ता है, जीने की शर्तो के लिए लड़ी जाने वाली टुकड़ा-टुकड़ा लड़ाइयों को, जीने की अपेक्षाओं को आधारभूत और मूल संघर्ष में बदलता है। कवि अरुण कमल संघर्ष की चेतना को जीवन में नवीनता का परिचायक मानते हैं-

''यह वो समय है जब
शेष हो चुका है पुराना
और नया आने को शेष है।''[5]

उपर्युक्त पंक्तियों से यह स्पष्ट है कि कवि को पूरी उम्मीद है कि मानव-मूल्य संरक्षित होने ही वाला है। सारा संसार जब संघर्ष के दौर से गुजर रहा हो तब इन कविताओं और साहित्य में मानव-मूल्यों की स्थापना का संकेत अवष्य देती है। समकालीन कवयित्री मधु वर्मा कहती हैं- 'हो सके तो इन हवाओं के रुख बदल डालो/ जिसमें सांस लेने से दम घुटता है/प्रज्ञाएँ दूषित हो जाती हैं।'

निष्कर्षत: संघर्ष एक मानसिक प्रक्रिया है जो यथास्थिति के विरोध में बनती चलती है। यह सच है कि संघर्ष की चेतना सभी के मन में एक साथ नहीं उपजती परन्तु जब मानव-मूल्य विघटित होते हैं तो हर मन में संघर्ष, क्रांति की वैचारिक सुगबुगाहट प्रारंभ हो जाती है। संघर्ष चाहे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक या पारिवारिक कोई भी हो, वर्तमान परिस्थिति का संघर्ष होता है। अंत में संघर्ष बदलने की एक कोशिश है- जीवन को, मानव को, युग व परिवेश को, सोच को।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. देवेन्द्र इस्सर , नरेन्द्र मोहन : संघर्ष, परिवर्तन और साहित्य, कृष्णा ब्रदर्स महात्मागांधी मार्ग, अजमेर, प्र. सं. 1982, पृ. 116
2. मंगलेश डबराल : आवाज भी एक जगह है, वाणी प्रकाशन, 21ए दरियागंज नई दिल्ली-110002, प्र.सं. 2000, पृ. 13
3. विभूतिनाराण राय : कथा साहित्य के सौ बरस, शिल्पायन, 10295, लेन नं. 1, वेस्ट गोरखपुर पार्क शाहदरा, दिल्ली-110032, पृ. संपादकीय से।
4. देवेन्द्र इस्सर , नरेन्द्र मोहन : संघर्ष, परिवर्तन और साहित्य, कृष्णा ब्रदर्स महात्मागांधी मार्ग, अजमेर, प्र. सं. 1982, पृ. 122
5. प्रसन्न ओझा : आवेग-56, अंक फरवरी-अप्रैल 1989, पृ. 23

नवजागरण कालीन नारी चिंतन और प्रेमचन्द के उपन्यास साहित्य में नारी विमर्श

डॉ. इन्दु हुड्डा *

शोध सारांश – आज विश्व साहित्य के परिदृश्य पर नारी विमर्श अत्यन्त तीव्र गति से लोगों के समक्ष उपस्थित हुआ है। ''नारीवादी विमर्श'', ''स्त्री-मुक्ति'', ''नारी-चेतना'', ''नारी जाग्रती'' जैसे अनेक शब्दों में लपेटकर नारी संबंधी चिंतन समय-समय पर साहित्यकारों के अध्ययन का विषय रहा है। कभी स्त्री अस्मिता शीर्षक द्धारा लेखकों ने स्त्री के अधिकारों की मांग की है तो कभी नारी सशक्तिकरण द्धारा स्त्री के लम्बे शोषण इतिहास को साहित्यकारों ने अपनी पुस्तकों में सूचीबद्ध किया है। विभिन्न-विभिन्न शीर्षकों द्धारा कहीं नारी कर्त्तव्यों की बात कही जाती है। तो कहीं स्त्री अधिकारों की चर्चा की जाती है, तो कहीं स्त्री को पुरुषों के समान खड़ा कर उसे सम्मान प्रदान करने का प्रयास किया जाता है, तो कहीं आदिकाल से वर्तमान काल तक के स्त्री के देवी, दासी, भोग्या आदि रूपों पर प्रकाश डाला जाता है।

प्रस्तावना – आज भले ही विभिन्न शीर्षकों द्धारा लोग विश्व साहित्य पटल पर नारीवादी विमर्श से परिचित हो रहे हो परन्तु नारी केन्द्रित सामाजिक विकास की प्रक्रिया का प्रारंभ भारत में उन्नीसवीं सदी से माना जाता है। औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया ने भारतीय नवजागरण का निर्माण किया। पश्चिम की औद्योगिक क्रांति और उसके फलस्वरूप सामंती व्यवस्था के साथ निरंतर संघर्ष करते हुए पूंजीवादी समाज की स्थापना का सीधा प्रभाव भारत जैसे उपनिवेशों पर पड़ना स्वाभाविक था।

18वीं शताब्दी के आते-आते नारी का रूप '**यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता**'[1] से

'सखा जाया कृपण हि दुहिता,
ज्योतिर्दिु पुंज परमे ज्योमम्।'[2]

जैसी दलितों की स्थिति में पहुँच गया था। ब्रिटिश काल में नारी ने अपनी प्राचीन पहचान पुन: पाने के लिए संघर्ष किया। 19वीं शताब्दी में नवजागरण के प्रारंभिक वर्षो में अंग्रेजी शिक्षा तथा पाश्चात्य सभ्यता-संस्कृति के सम्पर्क में आने वाले राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, बहराम जी मलबारी, महादेव गोविन्द रानाडे, धोड़ो केशव कर्वे, पंडिता रमाबाई, ज्योतिराव फुले, दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानंद जैसे प्रबुद्ध भारतीयों ने नारी मुक्ति, नारी चेतना को एक नई आवाज, नई दिशा प्रदान की। इन महात्माओं के प्रयासों के फलस्वरूप ही भारतीय समाज में नारी अपनी जाग्रति के साथ नये रूप में अवतरित हुई।

1920-1939 युग के आधार युग-निर्माता महात्मा गांधी ने नारी समाज की नई दृष्टि से व्याख्या कर स्त्री विमर्श को एक नवीन दृष्टिकोण प्रदान किया। इस महान् आत्मा ने महिलाओं में जाग्रति का ऐसा मंत्र फूंका कि घर की चार दीवारी में छिपी-दुबकी स्त्री ने भारत माता को विदेशी शासकों के रक्तरंजित पंजों से मुक्त करवाने में अपनी शक्ति और सामर्थ्य का परिचय देते हुए अपना सर्वस्व यहाँ तक कि प्राणों तक का उत्सर्ग कर दिया था।

समकालीन स्थितियों का प्रभाव साहित्य में सदा परिलक्षित होता है। साहित्यकारों ने अपने परिवेश और अपनी संवेदना के अनुसार नारी के विविध रूपों का चित्रण किया है। प्रेमचन्द हिन्दी कथा साहित्य में नारी विमर्श को आवाज देने वाले पहले कथाकार थे। इन्होंने अपने कथा साहित्य में स्त्री का सशक्त व्यक्तित्व पाठकों के सामने रखा 'जिसमें संपूर्ण पृथ्वी की आधी जनसंख्या शोषण से मुक्ति पाने तथा अपने गौरव को वापस पाने के लिए संघर्षशील है।'[3]

प्रेमचन्द ने नारी को दानवी, दासी, देवी सभी रूपों से अलग मानवीय गुणों से युक्त पुरुष की सहयोगिनी के रूप में प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया। गांधी जी भी कहते थे कि स्त्री पुरुष की गुलाम नहीं है, वह पुरुष की अर्द्धांगिनी है, सहगामिनी है। उसे मित्र समझने के बजाय अपने को स्वामी समझता है। शासक मानता है यह पुरुष का अन्याय है। गांधी जी स्त्री और पुरुषों के समानाधिकार के पक्षपाती थे। [4] गांधीवादी विचारधारा के हिमायती प्रेमचन्द ने नारी की करुणाजनक स्थिति को आधार बनाया और अपने उपन्यासों में नारी समस्याओं का चित्रण किया।

सेवासदन, गबन, निर्मला, गोदान आदि उपन्यासों में प्रेमचन्द ने नारी की समस्यात्मक स्थिति के साथ-साथ नारी संघर्ष, नारी चेतना, नारी सशक्तिकरण को आवाज दी। प्रेमचन्द के धनिया, झुनिया, सोना, सुखदा, नोहरी और मुन्नी आदि नारी पात्र जहाँ एक ओर विसंगतियों, गलत समझौतों और रूढ़िवादिता के विरूद्ध आवाज उठाते हैं वहीं दूसरी ओर उनमें आत्मसम्मान की ललक भी भरपूर दिखाई देती है। कहना गलत न होगा कि ''स्त्री विमर्श एक शाब्दिक बहस या शुद्ध वैचारिकता मात्र न होकर नारी-अस्मिता के प्रश्न-उत्तारों की टकराहट से उत्पन्न आवाज है, जिसमें घर और बाहर हर क्षेत्र में स्त्री की निर्णयकारी भूमिका और पुरुष समाज में समान अवसर व अधिकार प्राप्त करने का मुद्दा प्रमुख है।''[5] 'गबन' में वकील साहब की पत्नी रत्न विधवाओं के सम्पत्ति संबंधित कानून के प्रति विद्रोहात्मक स्वर व्यक्त करती हुई कहती हैं कि ''जो स्त्री पति के जीवित होने पर उसकी कमाई से एक-एक पैसा बचाती है उसी पत्नी को पति की मृत्यु के बाद उसकी कौड़ी पर भी अधिकार नहीं। यह अन्याय नहीं तो क्या है?''[6] प्रेमचन्द ने गांधी जी के विचार को अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए 'गबन' की रतन और जालपा और 'कर्मभूमि' की सुखदा द्धारा पर्दे का विरोध दिखलाया है। आप दोनों के अनुसार नारी का वास्तविक पर्दा उसका नैतिक आचरण है इस तरह प्रेमचन्द ने नारी जाग्रति को तार्किकता प्रदान की।

प्रेमचन्द का 'निर्मला' उपन्यास यद्यपि दहेज प्रथा, अनमेल विवाह व इनसे उत्पन्न अनेक समस्याओं को पाठकों के सम्मुख रखता है। 'निर्मला' उपन्यास में निर्मला को परम्परागत नारी के रूप में चित्रित किया गया है। जो अपना संपूर्ण जीवन खुद दु:ख सहते और दूसरों को सुख प्रदान करते हुए काटती है। उपन्यास के अंत में 'निर्मला' जैसी परम्परागत नारी के शब्दों में भी स्वयं भुगते हुए अनमेल विवाह के दुष्परिणामों के फलस्वरूप विद्रोहात्मक स्वर की अनुगूंज सुनाई पड़ती है। वह अपनी पुत्री के संदर्भ में अपनी ननद

* शोधार्थी (हिन्दी विभाग) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

रूक्मिणी से कहती है– 'चाहे क़ारी रखियेगा चाहे विष देकर मार डालियेगा, पर कुपात्र के गले न मढियेगा।'[7] इसी तरह उपन्यास की अन्य स्त्री सुधा भी एक शिक्षित स्त्री है और समाज में घटित होने वाली गलत घटनाओं के प्रति सचेत है। सुधा के प्रयासों के फलस्वरूप ही उसके देवर का विवाह निर्मला की छोटी बहन से बिना दहेज के सम्पन्न हो सका। इस तरह कहना गलत न होगा कि प्रेमचन्द के नारीवादी विमर्श को आवाज देने वाले उनके स्त्री पात्र जीवंत और सक्रिय हैं।

'सेवासदन' उपन्यास में प्रेमचन्द ने वेश्या समस्या के उत्पन्न होने के प्रमुख कारणों दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, स्त्रियों की आर्थिक पराधीनता और पुरुषों द्वारा स्त्रियों की इच्छाओं व भावनाओं को उचित आदर न देना बताया है। दहेज के अभाव में हुए अनमेल विवाह के कारण सुमन को सदैव अपने पति की गलतफहमी और संदेह का शिकार होना पड़ता है। सगर्वा और स्वाभिमानिनी सुमन अपने ऊपर होने वाले मिथ्यारोपण को सहन नहीं कर पाती और घर छोड़कर चली जाती है। अंतत: परिस्थितियाँ उसे दालमंडी के कोठे तक पहुँचा देती है परन्तु वह कहीं भी अपने कर्त्तव्यों को नहीं भूलती अपनी मर्यादा को नहीं छोड़ती। वह दालमंडी के कोठे पर बैठकर भी कोई ऐसा काम नहीं करती जिससे उसकी मर्यादा भंग हो। वह अन्य वेश्याओं की तरह नाचती, गाती, किसी को रिझाती नहीं दिखती।

'प्रेमाश्रम', 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि' प्रेमचन्द के राजनैतिक उपन्यास है जिसमें उन्होंने ब्रिटिश अधिकारियों के यथार्थ क्रिया–कलापों तथा गांधी जी के राष्ट्रीय आंदोलन के चित्र को उकेरा है। ('प्रेमाश्रम' में श्रद्धा अपने पति प्रेमाशंकर द्वारा किसानों की सहायता किए जाने पर अपने गहने व कुछ रूपए प्रेमाशंकर के पास भिजवाती है।)

'कर्मभूमि' के सभी पात्र गांधी जी के सविनय अवज्ञा आंदोलन की पृष्ठभूमि में रचे बसे नजर आते हैं। सुखदा, नैना, सकीना, सलोनी, मुन्नी पठनिन जैसे नारी पात्र अपनी मर्यादा, इज्जत के लिए जागरूक तो है ही साथ अपनी पराधीनता के साथ राष्ट्र को भी पराधीनता से मुक्त कराना चाहते हैं। सुखदा पराधीनता से दुखी है और इस संबंध में अमर से कहती है। 'मैं भी जानती हूँ कि हम लोग पराधीन हैं। पराधीनता मुझे भी उतनी ही अखरती है जितनी तुम्हें। हमारे पांवों में तो दोहरी बेड़ियाँ हैं। समाज की अलग, सरकार की अलग।'[8] मुन्नी अपनी इज्जत बिगाड़ने वाले गौरे सैनिकों से उनकी हत्या करके प्रतिशोध लेती हैं। 'कर्मभूमि' में परम्परागत हिन्दू नारी के पतिव्रता रूप को खण्डित करने वाली सुखदा विद्रोह व नारीजागरण की सक्रिय प्रतिमा है। सुखदा पति के कुपात्र निकलने पर भी उसे ही अपना सर्वस्व समझने की बात का विरोध करती हुई कहती है कि 'उन्होंने मेरे साथ विश्वासघात किया। मैं किसी मर्द के साथ भाग जाऊँ तो वह मुझे मनाने जाएंगे? वह शायद मेरी गर्दन काट दें।'[9] इसी प्रकार के विचार 'प्रतिज्ञा' में सुमित्रा ने भी व्यक्त किए हैं। 'स्त्री पुरुष के पैरों की जूती के सिवा और है ही क्या? पुरुष चाहे जैसा हो, चोर हो, ठग हो, शराबी हो, स्त्री का धर्म है उसके चरण धो धोकर पीये।'[10] इस प्रकार प्रेमचन्द के नारी पात्र गलत परम्पराओं को सहते नहीं हैं बल्कि अपना विरोध प्रकट करते हैं।

प्रेमचन्द का 'गोदान' किसानों की दुर्गति पर लिखा गया महाकाव्य है। परन्तु 'गोदान' का नाम सुनते या पढ़ते ही मस्तिष्क पटल पर धनिया जैसा सशक्त चरित्र उभर आता है। 'गोदान' के संदर्भ में यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि 'सेवासदन', 'प्रतिज्ञा', 'गबन' तथा 'निर्मला' आदि उपन्यासों में उन्होंने नारी की समस्याओं को अधिक मुखरित किया है, किन्तु उनका 'गोदान' नारी सशक्तिकरण, दलित विद्रोह, युवा रूपान्तरण का भविष्यवादी घोषणा–पत्र बन जाता है।'[11] इस कृति में धनिया, झुनिया, सोना, सिलिया, मीनाक्षी सभी क्रांतिकारी महिलाएँ हैं परन्तु धनिया के चरित्र में आत्मगौरव, न्यायभाव, स्वाधीनता आदि वीरोचित गुणों का विलक्षण समन्वय है। धनिया निर्धन और निरक्षर अवश्य है पर वह कहीं अन्याय के विरूद्ध दबती नहीं है। धनिया अपने पति होरी द्वारा जमींदार की खुशामद किए जाने पर विद्रोह कर उठती है और कहती है कि हमने जमींदार के खेत जोते हैं तो वह अपना लगान ही तो लेगा। उसकी खुशामद क्यों करें? उसके तलवे क्यों सहलायें? हीरा द्वारा गाय को जहर दिए जाने पर होरी दरोगा द्वारा हीरा के घर की तलाशी लेना अपना अपमान समझता है और इसी अपमान से बचने के लिए वह दरोगा को पैसे देना चाहता है तो धनिया नागिन की तरह फूंफकार कर कहती है 'रूपये कहाँ लिए जा रहा है। बता, भला चाहता है तो सब रूपये में लौटा दे, नहीं कहें देती हूँ, घर के प्रानी रात–दिन मरे और दाने–दाने को तरसे। लत्ता भी पहनने को मयस्सर न होवे अंजुली भर रूपये लेकर चला है इज्जत बचाने।..... वाह रे! तेरी इज्जत।'[12]

धनिया सही बात को लेकर किसी से नहीं डरती फिर चाहे उसके सामने दरोगा हो या पंचायत। दरोगा द्वारा धनिया पर ही गाय मारने का मिथ्यारोप लगाने पर वह दरोगा को न्याय का पाठ पढ़ाते हुए कहती है। 'देख लिया तुम्हारा न्याय और तुम्हारी अकल की दौड़। गरीबों का गला काटना दूसरी बात है। दूध का दूध पानी का पानी करना दूसरी बात है।'[13] धनिया एक परिश्रमी नारी है, उसे अपने परिश्रम पर पूर्ण भरोसा है। 'बिरादरी में रहकर हमारी मुक्ति न हो जायेगी। अब भी अपने पसीने की कमाई खाते है, तब भी अपने पसीने की कमाई खायेंगे।'[14] इस तरह की बातें एक जागरूक महिला ही कर सकती है। इस प्रकार 'प्रेमचन्द ने धनिया के बहाने स्त्री शक्ति को बार–बार रेखांकित किया है।'[15] धनिया यद्यपि उपन्यास में परम्परागत स्त्री के रूप में चित्रित हुई है परन्तु अपने विद्रोही व सशक्त व्यक्तित्व के द्वारा नारी विमर्श, नारी चिंतन को अग्नि समान प्रखर वाणी दी है।

इसमें कोई दो राय नहीं है कि मानव प्रगति का आधार नारी ही है। अपने जीवन को उसने कभी अपने लिए नहीं जिया, वरन अपनी भावना, अपनी ममता दूसरों के लिए लुटाती रही। परन्तु प्रश्न यह उठता है कि आज के पुरुष प्रधान समाज में नारी की क्या स्थिति है? आजादी के पश्चात् भी क्या वह स्वतंत्र हो पाई है? न जाने कितने जुल्म, उत्पीड़न, हिंसा को वह सहती जा रही है। अनेक कानूनों के बावजूद भी वह स्वयं को असुरक्षित महसूस कर रही है। ऐसे में मानवीयता, साहस, निड़रता, जागरूकता, विद्रोह और प्रतिरोध के स्वरों की अनुगूंज से पूर्ण उनके नारी पात्र मनुष्य होने का अहसास कराते हैं तथा संभावनाओं के क्षितिज को छूते हुए व मुक्ति के विमर्शों को रचते हुए आज की नारी चेतना को जाग्रत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. देशपाण्डे, सुलोचना श्रीहरि, भारतीय समाज में कार्यशील महिलाएँ, पृ.सं.–3
2. देसाई, नीरा, भारतीय समाज में नारी, पृ.सं.–8
3. हिन्दुस्तानी, जुलाई–सितम्बर, 2011, पृ.सं.–39
4. श्रीवास्तव, मीनाक्षी, साहित्य में नारी चिंतन, पृ.सं.–35
5. हिन्दुस्तानी, अक्टूबर–दिसम्बर, 2011, पृ.सं.–64
6. श्रीवास्तव, मीनाक्षी, साहित्य में नारी चिंतन, पृ.सं.–35
7. प्रेमचन्द, निर्मला, पृ.सं.–143
8. प्रेमचन्द, कर्मभूमि पृ.सं.–25
9. श्रीवास्तव, मीनाक्षी, साहित्य में नारी चिंतन, पृ.सं.–199
10. वही,
11. वर्तमान साहित्य, जुलाई, 2005, पृ.सं.–65
12. प्रेमचन्द, गोदान, पृ.सं.–99
13. वही
14. वही, पृ.सं.–118
15. वर्तमान साहित्य, जुलाई, 2005, पृ.सं.–70

महिलाओं पर होने वाले अत्याचार एवं उनके निवारण का विवेचनात्मक अध्ययन

डॉ. पी. एस. परमार * डॉ. मनोज कनेरिया **

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के प्रारंभ काल से महिला को माता के रूप में माना गया है एवं महिला और पुरूष को एक–दूसरे का पूरक भी माना गया है। महिलाओं के बिना किसी भी परिवार की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। लेकिन महिलायें पुरूषों की तुलना में आज भी निम्न श्रेणी का जीवन यापन करती है।

महिलाओं को विकास के पथ पर जाने हेतु एवं ओर अधिक जागरूक बनाने के लिये भारतीय संविधान में विशेष प्रावधान रखे गये हैं। महिलाओं की उन्नति के लिये शिक्षा, स्वास्थ्य एवं पोषण, आर्थिक स्वतंत्रता, कानूनों के सम्बन्ध में जागरूकता इत्यादि को विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से जोड़कर उनको अपने अधिकार प्रदान करवाना आदि आयामों के माध्यम से महिलाओं को नैतिक एवं सामाजिक रूप से अधिक शक्तिशाली बनाने के लिये सरकार द्वारा अनेक योजनायें बनायी गयी ताकि देश के विकास में महिलायें पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल सके। इसके लिये महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने एवं उनके प्रति किये जाने वाले भेदभाव और अत्याचारों के निवारण की जानकारी दी जा रही है।

वर्तमान में महिलाओं के विरूद्ध होने वाले मुख्य भेदभाव एवं अत्याचारों को निम्न प्रकार सूचीबद्ध किया जा सकता है–

1. बाल विवाह करना।
2. महिलाओं का मानसिक एवं शारीरिक शोषण करना।
3. डराना/धमकाना/परेशान करना
4. छेड़छाड़ करना।
5. वैश्यावृत्ति करवाना।
6. कन्या भ्रूण हत्या करना।
7. बलात्कार करना।
8. दहेज के लिए प्रताड़ित करना।
9. विधवाओं का तिरस्कार करना।
10. महिलाओं की शिक्षा में भेदभाव करना।
11. महिलाओं के स्वास्थ्य एवं चिकित्सा में भेदभाव करना।
12. महिलाओं को मनोरंजन का साधन मानना इत्यादि अनेक तरह महिला जन्म से लेकर मृत्यु तक भेदभाव की प्रताड़ना सहन करती है।

महिलाओं के साथ होने वाले अपराधों के लिये संवैधानिक अधिकार– हमारा संविधान भारत के सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक न्याय प्रदान करने की मंशा की घोषणा करता है। हमारे देश में सभी कानून हमारे संविधान द्वारा अधिकृत होते हैं।

हम यहाँ नागरिकों के मूल–अधिकारों की बात करेंगे। ये अधिकार बहुत ही व्यापक है और छ: श्रेणियों में बाँटे गये है–

1. समानता का अधिकार
2. स्वतंत्रता का अधिकार
3. शोषण के विरोध का अधिकार
4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार
5. शिक्षा और संस्कृति का अधिकार
6. संवैधानिक संरक्षण का अधिकार

हमारे देश का संविधान महिलाओं के लिये निम्न तरीकों से विशिष्ट मंशा रखता है –

- संविधान महिलाओं और पुरूषों में लैंगिक भेदभाव मिटाने की मंशा रखता है।
- संविधान इस बात को तूल देता है कि महिलाओं को पारम्परिक रूप से प्रताड़ित किया गया है तथा हीन समझा गया है। इस अन्याय को समाप्त करने के लिये।
- संविधान, सरकार को, महिलाओं के हित में विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति देता है।
- संविधान निहित रूप से यह उम्मीद रखता है कि सरकार सभी कमजोर वर्गों, जिसमें महिलाएँ शामिल है, की स्थिति सुधारने के लिये विशेष प्रयत्न करेगी।
- मूल संवैधानिक अधिकारों में समानता के अधिकार का महिलाओं के लिये विशेष महत्व है। समानता के अधिकार के अनुसार महिलाओं को पुरूषों के साथ –
- सार्वजनिक नौकरियों में समान अधिकार हैं।
- समान वेतन का अधिकार है।

यदि किसी नागरिक के मूल अधिकारों की अवहेलना हो तो वे कानून की मदद ले सकते है। इस तरह के केस हाईकोर्ट (उच्च न्यायालय) अथवा सुप्रीम कोर्ट (उच्चत्तम न्यायालय) में दायर किये जा सकते हैं।

कामकाजी महिलाओं के अधिकार – हर महिला कहीं न कहीं काम करती है। वह घर का काम तो करती ही है, अकसर वह पैसा कमाने के लिये घर के बाहर भी काम करती है। काम करने वाली महिलाओं को मालूम होना चाहिये कि उनके मूल अधिकार भारत के संविधान में दिये गये हैं, जिन्हें काम में लाने के लिये सरकार ने अलग–अलग कानून बनाकर तय किये हैं जो इस प्रकार है–

- काम करने वाली हर महिला या पुरूष को काम करने के लिये वेतन या मजदूरी मिलनी चाहिये।
- यह वेतन या तनख्वाह कम से कम उतनी होना चाहिये, जितनी सरकार ने तय की हो। यानि न्यूनतम मजदूरी मिलना चाहिये। बराबर के काम के

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (विधि)शासकीय विधि महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.) भारत

लिये बराबर पैसा मिलना चाहिये। यानि एक ही काम के लिये या एक जैसे काम के लिये, महिला को पुरूष के बराबर पैसे मिलने चाहिये, कम नहीं।

- महिलाओं को गर्भावस्था व प्रसूति से सम्बन्धित कुछ खास अधिकार दिये गये हैं।
- मध्यप्रदेश की महिला नीति के तहत जारी आदेश के अनुसार अब कोई भी महिला मुफ्त कानूनी सहायता प्राप्त कर सकती है। चाहे उसकी आयु और आय कितनी भी हो।

मध्यप्रदेश की महिला नीति – महिलाओं के समग्र और सार्थक विकास के लिये मध्यप्रदेश सरकार ने अभी तक बहु-आयामीय महिला नीति बनाकर इसे लागू किया। मध्यप्रदेश की महिला नीति का उद्देश्य नारी जीवन का अस्तित्व और उसकी सुरक्षा सुनिश्चत करना है। समाज में महिलाओं की सहभागिता बढ़ाकर उन्हें पूर्ण सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाना है।

मध्यप्रदेश सरकार ने व्यापक रणनीति तैयार कर भूमि, सम्पत्ति और सामूहिक संसाधनों पर महिलाओं का नियत्रंण बढ़ाने के कारगर उपाय किये हैं। सामाजिक क्षेत्रों में इनकी भागीदारी सुनिश्चित कर अनेक क्षेत्रों में सरकार द्वारा महिलाओं के लिये रोजगार के अवसर इस प्रकार जुटाए गए हैं-

- पंचायती राज संस्थाओं और सरकारी कर्मचारियों को महिला हितैषी बनाने के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया है।
- गाँव की हैण्ड पम्प स्थापना समितियों में सम्बन्धित गाँव/वार्ड की महिला प्रतिनिधि को शामिल किया गया है।
- महिलाओं की स्थिति को अलग दर्शाने की दृष्टि से पुरूषों और महिलाओं के आंकड़े अलग-अलग इकट्ठे करने और प्रदर्शित करने की व्यवस्था लागू की गई है।
- कृषि उपज विपणन समितियों/संस्थाओं में महिलाओं की संख्या एक तिहाई -रखने का प्रावधान किया गया है।
- शहरी स्वशासी संस्थाओं में भी एक तिहाई महिला सदस्य होना सुनिश्चित किया गया है।

महिलाओं के लिये रोजगार सम्बन्धी प्रावधान –

- महिलाओं के लिये सरकारी नौकरियों में 33 प्रतिशत स्थान आरक्षित किये गये हैं।
- सरकारी नौकरियों में आने के लिये अधिकतम आयु सीमा में दस साल की छूट दी गई है।
- पुलिस बल में भी उप पुलिस अधीक्षक और उप निरीक्षकों के तीस और आरक्षकों के दस प्रतिशत पद महिलाओं से भरे जाने का प्रावधान किया गया है।
- तेन्दु पत्ता संग्रहण में फण्ड मुन्शियों के 50 प्रतिशत स्थान महिलाओं के लिये आरक्षित किये गये हैं।
- तेन्दु पत्ता संग्रह के काम में लगे लोगों के कार्ड में पति-पत्नी दोनों का नाम डालने तथा हर दो में से एक भुगतान महिलाओं को करने का फैसला किया गया है।
- छोटे-छोटे काम धन्धों में लगी महिलाओं को सरलता से ऋण दिलाने के लिये प्रत्येक जिले में महिला नागरिक सहकारी बैंकों के गठन का काम किया गया है। वर्तमान में महिला बैंक संचालित करने का प्रावधान भी किया गया है।
- असंगठित क्षेत्र में महिलाओं को पुरूष के बराबर मजदूरी दिलाने के लिये सघन निगरानी व्यवस्था लागू की गई है।
- इवाकरा योजना अब प्रदेश की सभी 51 जिलों में लागू। 16,068 इवाकरा महिला समूह गठित किये गये। जिनमें 95 हजार महिलाएँ सदस्य हैं।
- कृषि उपज विपणन समितियाँ/संस्थाओं में महिलाओं की संख्या बढ़ाकर एक तिहाई करने के लिये मध्यप्रदेश कृषि उपज मण्डी अधिनियम में संशोधन किया गया है।
- वन सुरक्षा और वन विकास समितियों में हर परिवार की एक महिला और एक पुरूष की भागीदारी अनिवार्य की गई है।
- विस्थापित परिवारों को पुनर्वासित करते समय अब परिवार की बालिग लड़कियों को स्वतंत्र इकाई माना जावेगा और उन्हें बालिक लड़कों के समान अलग जमीन दी जावेगी।
- रिवर बेंड और टैंक बेंड की नीलामी में महिलाओं के समूहों को प्राथमिकता दी जावेगी।

महिलाओं के लिए न्याय व्यवस्था :-

- महिलाओं को मुफ्त कानूनी सहायता उपलब्ध करवाना, आय का बंधन समाप्त करना, उत्पीड़न के मामलों में महिला जजों द्वारा सुनवाई का प्रावधान करना।
- पारिवारिक विवादों को निपटाने के लिये 9 अतिरिक्त जिला न्यायाधीशों के न्यायालय स्थापित करना।
- प्रदेश के सभी महिला थानों में पारिवारिक सलाह केन्द्रों की स्थापना। पुलिस मुख्यालय में राज्य स्तरीय प्रकोष्ठ स्थापित। जिलों में स्वैच्छिक संस्थाओं की सहभागिता से परिवार सलाह केन्द्रों की स्थापना की जा रही है।
- अब सरकारी वकीलों के पैनल में महिला वकील को शामिल करना अनिवार्य किया गया है।
- जमीन जायदाद के नामान्तरण के समय पुत्र के अलावा पुत्रियों को भी सूचना-पत्र तामील करवाना आवश्यक किया गया है।
- सरकारी जमीन के पट्टे अब पति-पत्नी के संयुक्त नाम से करने का प्रावधान किया गया है।
- महिलाओं को उनके कानूनी अधिकारों की जानकारी देने के लिए महिला जागृति शिविरों की क्रमबद्ध शृंखला बनाई गई है।
- किसी क्षेत्र की 50 प्रतिशत महिलाओं की मांग पर वहाँ से शराब दुकान बंद करवाने/हटाने का प्रावधान लागू किया गया है।
- महिलाओं की दीन-हीन छवि के विरूद्ध उनकी सशक्त और सकारात्मक छवि को सामने लाने के लिये पाठ्य पुस्तकों में आवश्यक संशोधन किया गया है।
- महिलाओं को भी पुरूषों के बराबर मजदूरी दिलाने की व्यवस्था लागू की गई है।
- महिलाओं के विरूद्ध अपराध में सजा प्राप्त व्यक्ति को सरकारी नौकरी नहीं मिलेगी। अगर किसी व्यक्ति के खिलाफ कोर्ट में ऐसा मामला चल रहा हो तो फैसले में निर्दोष साबित होने पर ही सरकारी नौकरी मिलेगी ऐसा प्रावधान किया गया है।
- बालिका भ्रूण का गर्भपात रोकने के लिये लिंग विभेद व लिंग पूर्व चयन (विनिमय) अधिनियम प्रावधानों का कड़ाई से पालन अनिवार्य किया गया है।

माँ और बच्चे की देखभाल – प्रदेश में 488 आई.सी.डी.एस. परियोजना स्वीकृत। इनमें से 182 आदिवासी, 277 ग्रामीण और 29 शहरी क्षेत्रों के

लिए। प्रदेश के सभी459 विकासखण्ड में आई सी.डी.एस. योजना में शामिल।

वर्तमान में संचालित 428 आई.सी.डी.एस. परियोजनाओं में 38.73 लाख हितग्राहियों को प्रतिदिन पोषण आहार का प्रावधान किया गया है।

मध्यप्रदेश में बाल संजीवनी और सुरक्षित मातृत्व कार्यक्रम लागू किया गया है। 79 हजार गाँवों में 31 हजार परम्परागत दाईयों को प्रशिक्षण। अभी 30 हजार दाईयों का प्रशिक्षण का प्रावधान किया गया है।

राष्ट्रीय मातृत्व कल्याण योजना के अन्तर्गत गरीब परिवार की महिलाओं को प्रसव के 12 से 8 हफ्ते पहले 1500 रूपये एक मुश्त देने की योजना लागू की गई है।

कल-कारखाने और कार्यस्थलों पर महिला श्रमिकों के छोटे बच्चों की देखभाल के लिये शिशुघर बनाना अनिवार्य एवं महिला श्रमिकों के लिये भोजन व्यवस्था एवं शौचालय के निर्माण की भी व्यवस्था सुनिश्चित की गई है।

महिलाओं के लिए म. प्र. शासन द्वारा चलाई जाने वाली योजनाएँ - निराश्रित पेंशन के लिए 50 वर्ष से अधिक आयु की विधवा, परित्यात्का, बेसहारा महिलाएँ पात्र घोषित। 50 वर्ष से अधिक आयु की पात्र महिला को 150 रूपये मासिक पेंशन की सहायता दी जाती है इनके अतिरिक्त -

1. जननी सुरक्षा योजना
2. लाड़ली लक्ष्मी योजना
3. गाँव की बेटी योजना
4. कन्यादान योजना
5. सर्व शिक्षा योजना
6. विवेकानन्द केरियर मार्गदर्शन योजना

अपने अधिकारों को पाने के लिये महिलाएँ निम्नलिखित अधिकारियों एवं जन प्रतिनिधियों से सम्पर्क कर सकती है-

- अपने क्षेत्र के सांसद, एवं अपने क्षेत्र के विधायक से सम्पर्क कर सकती है।
- समीप के पुलिस थाना एवं जनप्रतिनिधि से सम्पर्क कर सकती है।
- जिलाधीश एवं पुलिस अधीक्षक से सम्पर्क कर सकती है।
- महिला बाल विकास अधिकारी से सम्पर्क कर सकती है।
- जिला विधिक सहायता कक्ष से सम्पर्क कर सकती है।
- राजीव गाँधी प्राथमिक शिक्षा मिशन की महिला समन्वयक से सम्पर्क कर सकती है।
- स्थानीय कॉलेज में समाजशास्त्र के प्राध्यापक या अन्य महिला प्राध्यापक से सम्पर्क कर सकती है।
- म.प्र. राज्य महिला आयोग से सम्पर्क कर सकती है।
- अशासकीय संस्थाओं से भी सम्पर्क किया जा सकता है।

हर्ष का विषय कि महिलाओं तथा समाज के अन्य कमजोर वर्ग के उत्थान और समाज में उन्हें बराबरी का स्थान दिलाने के लिये मध्यप्रदेश सरकार पिछले अनेक वर्षों से प्रयासरत् है हमें इस दिशा में अनेक सफलतायें भी मिली है।

वर्तमान में समाज के प्रत्येक क्षेत्र में महिलायें अपनी सक्रिय भूमिका पूरी कुशलता व दक्षता से निभा रही है। आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें सतत् रूप से उचित व अनुकूल अवसर प्राप्त होता रहें।

सरकार और समाज पर समान रूप से महिलाओं को अत्याचार से मुक्त कराने की जवाबदारी है वर्तमान में प्रगतिशील समाज में महिलाओं के अत्याचार से मुक्त कराने के लिये विभिन्न कानूनी तथा संवैधानिक प्रावधान किये गये है। जो समाज की उन्नति के लिये पर्याप्त है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत का संविधान
2. बंधुआ मजदूरी अधिनियम-1979
3. छुआछूत विरोधी कानून-1955
4. हिन्दू विवाह अधिनियम-1955
5. दहेज प्रतिबंध अधिनियम-1961
6. अन्तर-राज्यीय प्रवासी मजदूर कानून-1979
7. भारतीय दण्ड संहिता-1860
8. दण्ड प्रक्रिया संहिता-1973
9. अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम-1956
10. बाल विवाह-अवरोध अधिनियम -1929
11. बालक (श्रम गिरवीकरण) अधिनियम-1933
12. महिलाओं को अशिष्ट रूपण प्रतिषेध अधिनियम-1986
13. सती निवारण अधिनियम-1987
14. ठेका श्रम-1970
15. न्यूनतम मजदूरी अधिनियम-1948.

****

गोविन्द मिश्र के कथा-साहित्य में सामाजिक चेतना

सरिता देवी *

प्रस्तावना – सामाजिक चेतना का तात्पर्य सामाजिक जागरण, विकास एवं सामाजिक उन्नति की भावना से है। अत: जब कोई विचारधारा समाज में प्रविष्ट होती है और निश्चित लक्ष्य की ओर बढ़ती है उस समय जो सामाजिक विचारधारा अस्तित्व में आती है। उसी विचारधारा को सामाजिक चेतना स्वीकारा गया है। इस चेतना का संबंध अर्थ, धर्म, राजनीति और वर्ण व्यवस्था आदि से हो सकता है। इसी सामाजिक चेतना से मनुष्य पशुत्व को छोड़कर दिव्यत्व को प्राप्त करता है। समाज की व्यवस्था में व्याप्त विसंगतियों, विद्रूपताओं, कुव्यवस्था, अनैतिकता, अनौचित्य और साम्प्रदायिकता का पर्दाफाश सामाजिक चेतना से ही होता है। अत: 'जन समूह की ज्ञानात्मक मनोवृत्ति का नाम ही सामाजिक चेतना है। 'समाज की प्रतिकूल परिस्थितियों में जो प्रतिभा आकर्षक दीप्ति बनकर चमक उठे और जिसके प्रभाव से समस्त समाज में जनजागरण की लहर व्याप्त हो जाए उस प्रतिभा को सामाजिक चेतना कहते हैं।'[1]

सामाजिक चेतना विकासात्मक होती है। वह सरिता प्रवाह की तरह विकसित होती रहती है। सामाजिक चेतना में मानव मन में उत्पन्न ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक संपूर्ण मानवतावादी भावनाएँ समाहित होती हैं। अत: देश एवं समाज में प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण हुई अधोगति को उबारने के लिए चेतन मन द्धारा जो चिंतन किया जाता है जिससे समाज एवं देश में नई विचारधारा प्रवेश करने पर जो आकर्षक प्रतिभा दीप्ति बनकर चमक उठती है एवं जिसके प्रभाव से समाज में नव जागरण की लहर व्याप्त हो जाती है उसे सामाजिक चेतना कहते हैं।

गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में सामाजिक पक्ष – एक सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य व समाज एक दूसरे पर आश्रित है। सामाजिक संस्कृति के आधार पर ही हमारे विश्वास मूल्य, प्रवृत्तियाँ आदि बनते हैं। गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में जहाँ व्यक्ति एक दूसरे के साथ सामाजिक संबंध स्थापित करता व समाज के निर्माण और विकास में सहायता प्रदान करता दिखाई देता है। वहाँ समाज व्यक्ति का समाजीकरण कर उसके व्यक्तित्व के विकास में भी योग देता है। व्यक्ति परिवार में रहता है, निर्माण करता है और परिवार समाज की एक इकाई है इसलिए सामाजिक परिवर्तनों का प्रत्यक्ष प्रभाव परिवार पर पड़े बिना नहीं रहता। जिस प्रकार 'पाँच आँगनों वाला घर' उपन्यास के प्रथम भाग में परिवार की जो स्थिति व समाज की जो स्थिति दृष्टिगत होती है, उससे भारतीय परिवार की छवि भी स्पष्ट हो जाती है। इस समय समाज की स्थिति ऐसी है कि सब मिलजुल कर रहते हैं वे संक्रांति, होली जैसे त्यौहार एवं उत्सव आह्लादपूर्वक मनाते हैं। जहाँ हिन्दू, मुसलमानों के संबंध भी हार्दिक हैं। एक-दूसरे के सुख-दुख में काम आते हैं। इस प्रकार की समाज की स्थिति का प्रभाव परिवार पर पड़ता है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण जोगेश्वरी के परिवार से मिलता है। उस परिवार में ऐसे संस्कार मिलते हैं कि बच्चे घर के बाहर के व्यक्तियों को उनके ओहदे से नहीं नापते उनके लिए तो वे सभी जैसे उनके परिवार के ही सदस्य हैं जिस प्रकार 'सवेरे उन्हें रामधुन काका का इंतजार रहता है। रामधुन मौहल्ले की एक मिठाई की दुकान में काम करते थे। जो सवेरे खोमचा लिए बस्ती के एक हिस्से में घर-घर नापते दिखाई देते' 'दुकान में वे भले ही एक मामूली नौकर हो मुंशी राधेलाल के बच्चों में वे रामधुन काका के नाम से जाने जाते हैं।'[2]

शिक्षा के प्रचार-प्रसार ने आत्मनिर्भरता दी है तो स्वछंद जीवन यापन की आकांक्षा ने एकांकी परिवारों को प्रोत्साहित किया। आज परिवार का अर्थ पति-पत्नी और उनके बच्चे तक ही रह गया है। जहाँ पहले सब एक साथ रहते थे परिवार संयुक्त था वहाँ अब स्थिति बदल चुकी है। इस स्थिति के बदलने में अधिकांश योगदान सामाजिक परिवेश का भी है। आज व्यक्ति अधिक आत्मकेन्द्रित हो गया है, सिर्फ अपने लिए ही सोचता है। अपना एक अलग परिवार बना लेता है जहाँ वह स्वच्छंदता पूर्वक जी सके व उन्हें रोकने वाला कोई न हो। यही स्थिति 'पाँच आँगनों वाला घर' उपन्यास की रम्मो की है जो इसी प्रकार का जीवन जीना चाहती है। वह अपने पति राजन को उसके परिवार वालों से अलग किया सम्पन्नता के लिए गलत काम करवाए, अपने सम्मोहक मायाजाल से उसे अपना गुलाम सा बना लिया। इसका संश्लिष्ट चित्र गोविन्द मिश्र ने अपने साहित्य में उपस्थित किया है।

रम्मो के दो चेहरे हैं-एक परिवार वालों के लिए निर्मम, क्रूर, मुँहफट और दूसरा अन्य व्यक्तियों के लिए, सहृदय सहायक व सम्मोहक रम्मों की मूलभूत वृत्ति जीवितेष्णा है। जीवन का रस सब प्रकार से भरपूर भोगने की इच्छा, अपना स्तर ऊँचा करने के लिए किए गए कारनामों का सजीव चित्रण गोविन्द मिश्र ने किया है।

वह इतनी आत्मकेन्द्रित हो जाती है कि अपने पति राजन की माँ को भी अपने घर लाना नहीं चाहती वह कहती है। 'मैं अपने घर में मनहूसियत नहीं चाहती' 'चार दिन जिन्दगी के हैं और उन्हें आहें, कराहें सुनने में काट दो' 'ऊँह।'[3] अत: यह सब समाज का ही प्रभाव है जिससे प्रभावित हुए बिना मानव नहीं रह पाता है।

गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में राजनीतिक पक्ष – स्वाधीनता के बाद भारतीय राजनीतिक चेतना विभिन्न रूपों तथा स्तरों में प्रकट हुई। राष्ट्र के साथ ही साथ इसमें व्यक्ति चेतना का भी उदय हुआ। व्यक्ति और वर्ग दोनों ही अपने-अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होकर अपने हितों के संरक्षण की चिन्ता करने लगे। यह कहने में रंचमात्र भी अतिरंजना नहीं होगी कि स्वातंत्र्योत्तर भारत में राजनीति का सारा स्वरूप ही परिवर्तित हो गया। राजनीति हर व्यक्ति के जीवन का अंग बन गई और 'राजनीति' शब्द का प्रयोग विविध संदर्भों में किया जाने लगा। इसी क्रम में आज स्कूल, कॉलेजों, विभिन्न कार्यालयों, मंदिरों तथा मस्जिदों आदि तक में राजनीति ने अपना

* शोधार्थी (हिन्दी) वनस्थली विद्यापीठ (राज) भारत

शिकंजा इतना जकड़ लिया कि उससे मुक्ति की बात सोची भी नहीं जा पा रही है। जो भी हो हम आज इस बात को नकार नहीं सकते कि राजनीति अब हमारे जीवन के अभिन्न अंग के रूप में नजर आ रही है। लेकिन यह हमारे जीवन का चरम लक्ष्य नहीं हो सकती यह भी निश्चित है। लेकिन विडंबना यह है कि आज की राजनीति में सेवा-कर्म गौण और सत्ता स्पर्धा प्रधान बन गई है। फलस्वरूप आज यह व्यक्ति समूह के द्वारा सत्ता का सही या गलत लाभ उठाने के लिए प्रयत्नशील प्रक्रिया के रूप में दिखाई दे रही है। आज चुनाव-शक्ति, धन, बेईमानी, कूटनीति और जातीयता से लड़ा जा रहा है। इन्हीं राजनीतिक संदर्भों को वास्तविकता और यथार्थता के धरातल पर गोविन्द मिश्र ने अपने कथा साहित्य में अंकित करने का प्रयास किया है।

'हुजूर दरबार' उपन्यास राजनीति पर आधारित उपन्यास है। यह उपन्यास एक धीमी लय में कुल मनुष्य जीवन की ट्रेजेड़ी के बोध को गहराते जाने वाला उपन्यास है। जिसमें राजनीतिक स्थितियों के पार्श्व संगीत के स्वरों के आरोह-अवरोह में असहाय दुर्बल विघटित, मनुष्य की दु:ख गाथा, करूण संगीत का दर्दनाक प्रभाव छोड़ती है। भयावह जिन्दगी के हिस्त्र पंजे में आए मनुष्य की करूणा और उसकी निरर्थक पुकार मन को चीरती जाती है और कुर्सी के सनातन साथ का मूर्त रूप सामने आता है, जिसका परिणाम सांस्कृतिक मूल्यहीनता और मनुष्य के भर भराकर टूटने में होता है इस उपन्यास में गोविन्द मिश्र ने एक विचौली रियासत के सदाशयी राजा के दरबार का और उससे संबंधित और उससे संबंधित व्यक्तियों की विभिन्न स्थितियों का बहुआयामी चित्र प्रस्तुत किया है व उनके धंस की विषादान्त कहानी से परिचित कराया है जिससे पता चलता है कि राजनीति अपना चोला बदलती है लेकिन उसके कारनामें सनातन होते हैं। इस उपन्यास के माध्यम से गोविन्द मिश्र ने हुजूर दरबार की रियासत से बंधे अनेक व्यक्तियों की करूण कथा, राजकीय जीवन में सत्ताधीशों की प्रचंड उन्मत्तता, मूल्यहीनता और सामान्य मनुष्य के जीवन को मसलकर उसे नष्ट करने का अमानवीय प्रयास प्रस्तुत किया है।

इस उपन्यास के सभी पात्रों का संबंध इस रियासत के परिवेश के साथ जुड़ा है, इसीलिए हरीश के साथ-साथ रियासत के राजा को भी अनेक स्तरों पर संघर्ष करना पड़ता है, यह संघर्ष ही राजा को पदच्युत करता है। जनता की सरकार बनाने की इच्छा रखने वाले प्रजामण्डल नामक दल के साथ उसका संघर्ष होता है। राज्य को चलाने की इच्छा होने के कारण प्रजा को कष्ट देने वाले स्वकीय लोगों के साथ राजा का संघर्ष होता है। जिसे गोविन्द मिश्र ने बहुत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। राजा रूद्रप्रताप की रियासत भारत में विलीन हो जाती है व राजा को एक सामान्य नागरिक का जीवन जीना पड़ता है। इस उपन्यास का पात्र खरे जो महात्मा गांधी की भांति आत्मान्वेषण करने वाले तथा मन की प्रेरणाओं को ठोहकर सत्ताकांक्षा की जड़े उखाड़ने के लिए संदैव प्रयासरत रहने वाले नेता थे। परन्तु जब स्वातंत्र्य द्वार पर आया, सत्ता प्राप्त करने का अवसर आया तब उन्हें एक ओर हटना पड़ा व प्रजामण्डल से त्याग पत्र देना पड़ा। इस प्रकार राजनीति का दोगला रूप सामने आता है। जहाँ एक तरफ खरे जैसे नेता के कारण वहाँ राष्ट्रीय भावना नजर आती हैं, वहीं दूसरी तरफ नेताओं की अनैतिकता, राजनीतिक अवसरवाद है जिसमें सत्ताधीश जनतंत्रवाद के रास्ते ऊपर उठते हैं।

अत: 'आज की राजनीति ऐसी है जहाँ भ्रष्ट, खोखली, राजनीति और नेताओं के स्वार्थ भ्रष्टाचार, चारित्रहीनता, अकार्य क्षमता व्याप्त है। नैतिक मूल्य, आदर्श सच्चाई तथा ईमानदारी अब राजनीति में नहीं है व जो नैतिक मूल्य व आदर्श के साथ चलने की कोशिश करता है। उसे कुचल दिया जाता है।'[4] इसका जीवंत चित्रण गोविन्द मिश्र ने अपने कथा साहित्य में प्रस्तुत किया है।

गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में आर्थिक पक्ष – अर्थ मनुष्य जीवन में संपूर्ण बाह्य आवश्यकताओं एवं क्रिया-कलापों पर अपना सर्वाधिक प्रभाव डालता है। इसके अभाव में व्यक्ति और समाज का विकास संभव नहीं है। आज संपूर्ण सामाजिक जीवन अर्थ शक्ति से ही उद्वेलित होता है और समाज की समस्त जीवन प्रक्रिया उसके आर्थिक ढाँचे पर ही आधारित होती है, तो ऐसे में सामाजिक जीवन को सुचारू एवं व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए यह बहुत जरूरी है कि अर्थ का समान रूप से वितरण हो क्योंकि आर्थिक विषमता अनेक सामाजिक विसंगतियों को जन्म देती है। समाज का यूँ वर्गों में बंट जाना इसका मुख्य कारण भी पूंजीवाद ही है। पूंजीपति, निम्न या सर्वहारा वर्ग का शोषण इसलिए कर पाता है क्योंकि समूची उत्पादन व्यवस्था पर उसका एकाधिपत्य होता है।

कूरियन के अनुसार-'अर्थ व्यवस्था एक सामाजिक संस्था है जिसका नियंत्रण मनुष्य करते हैं वह अपने ही अपरिवर्तनशील सिद्धांत से चलने वाला स्वचालित यंत्र नहीं है।'[5]

किसी भी देश की अर्थ व्यवस्था सशक्त या सुदृढ़ तभी हो सकती है जब वह संतुलित रहे और इसके लिए यह बेहद जरूरी है कि मांग, पूर्ति और मूल्यों के बीच सामंजस्य बना रहे। यदि इन तीनों की तारतम्यता में कोई भी गड़बड़ी होती है तो कोई भी अर्थव्यवस्था चरमरा सकती है। उदाहरण के तौर पर अगर पूर्ति की कमी हो जाती है। तो मांग निश्चित रूप से बढ़ेगी। अब अगर मांग बढ़ती है तो मूल्यों का बढ़ जाना स्वाभाविक है। मूल्य के बढ़ जाने पर लोगों की क्रय शक्ति कम हो जाती है। तब लोगों में उपभोग की समता स्वत: घट जाती है। ऐसी स्थिति में लोगों में अभावों की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी और तब लोग आर्थिक रूप से सम्पन्न होने के बजाय विपन्न हो जाएंगे जिससे जनता में क्षोभ और असंतोष की भावना जागती है और यही क्षोभ और असंतोष क्रांति का रूप ले लेते हैं एवं अराजकता उत्पन्न हो जाती है। अत: कुल मिलाकर यह बात स्पष्ट हुई कि 'माँग, पूर्ति और मूल्यों का सामंजस्य गड़बड़ाना नहीं चाहिए। इन तीनों की तारतम्यता में कमी देश को बड़े आर्थिक संकट में डाल सकती है या डाल देती है।'

अत: आर्थिक चेतना को गोविन्द मिश्र ने अपने कथा साहित्य में अत्यन्त ही मार्मिक ढंग से चित्रित किया है। व्यक्ति पूर्णत: अर्थ का दास बन गई है। क्योंकि समाज में उसकी प्रतिष्ठा मान-मर्यादा तथा स्तर का निर्णय अर्थ के आधार पर ही किया जाता है। पूंजी ही वैभव का प्रतीक बन गया है। यही स्थिति 'पाँच आँगनों वाला घर' उपन्यास के कई सदस्यों की है जिनके लिए पूंजी ही वैभव है वह ही सब कुछ है बिट्टा का चरित्र भी इसी प्रकार का है जो इस उदाहरण से स्पष्ट होता है-'पापा के हार्ट अटैक की खबर मिलते ही उसने रम्मो को लिखा कि पापा को अब अपनी 'विल' कर देनी चाहिए ताकि उनके बच्चों में झगड़ा-झंझट न हो' 'चलते-चलते उसने इशारा भी दे दिया कि 'बिल' में उसे इसलिए उपेक्षित न किया जाए कि वह लड़की है।'[6]

वह धन बटोर कर अपने घर भर लेना चाहती है उसने यह भी ख्याल नहीं किया कि 'इससे उसके माँ-बाप से संबंध क्या हुए जा रहे हैं, भाई के साथ भी कैसी कड़वाहट फैलती जा रही है।'[7] अत: आर्थिक चेतना का जीवंत दस्तावेज गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में यथार्थ रूप में प्रकट हुआ है।

गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में धार्मिक एवं सांस्कृतिक पक्ष – भारतीय समाज व्यवस्था को संचालित और सम्पन्न बनाने वाले प्रमुख तत्वों में धर्म और संस्कृति का स्थान महत्वपूर्ण रहा है। इसके सुचारू रूप के संचालन

में समाज व्यवस्था विकसित हो रही है। धर्म एक शक्ति भी है और विश्वास भी है। इसकी धारणा अमूर्त और अति प्राचीन है। सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त पवित्र विश्वास ही धर्म है। जो मानव समाज को पूर्व पीढ़ियों से सामाजिक विरासत के रूप में प्राप्त होते हैं। परन्तु गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में धर्म का जो स्वरूप है उसमें विश्वास श्रद्धा, कल्पना, मान्यता आदि के साथ-साथ अंधविश्वास का भी समावेश है।

सामाजिक बदलाव व चेतना के बावजूद भी लोगों में युगो-युगों से चली आ रही रूढ़िगत मान्यताएँ और अंधविश्वास आज भी कायम है व लोग जी-जान से इसका पालन कर रहे हैं। 'हुजूर दरबार' उपन्यास में अंधविश्वास, अंध श्रद्धा और रूढ़िगत मान्यताओं के कारण लोगों में देवी-देवताओं की पूजा, मंत्र-तंत्र, दान व्रत उपवास, चढ़ावा-चढ़ाना, संतान की प्राप्ति के लिए पूजा अर्चना करना, मनौतियाँ माँगना पाप-पुण्य तथा शकुन-अपशकुन पर विश्वास आदि अंधविश्वास दृष्टिगत होते हैं।

भारतीय लोग धार्मिक रीति-रिवाज और सांस्कृतिक परम्पराओं के बंधन में जकड़े हुए हैं। इसके प्रभाव से ही वे पूजा करते हैं इसी का अनुसरण 'हुजूर दरबार' में हरीश के पिता करते हैं। पहले यह पूजा का कार्य हरीश के दादा के द्वारा सम्पन्न होता था। हरीश के पिता राजमंदिर में पूजा करते थे। महाराज की ईश्वर के प्रति अनास्था प्रकट होती है। 'महाराज मंदिर और मठ से दूर रहते थे। अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा की वजह से अपने पिता जैसी धार्मिक प्रवृत्ति नहीं थी उनकी। फिर भी औपचारिक मौकों पर मंदिर आने-जाने का रस्म बदस्तूर निभाते थे।'[8]

इसी प्रकार 'हुजूर दरबार' के एक अन्य उदाहरण से भी इस उपन्यास का धार्मिक एवं सांस्कृतिक वातावरण का स्वरूप स्पष्ट होता है जैसे 'बरगद के नीचे एक बड़ा चबूतरा था। जिसके तीन तरफ 'यू' की शक्ल में छोटी-छोटी कोठरियाँ फैली हुई थी। यही मठ था दिन को वह इकहरी इमारत कोई धर्मशाला लगती थी और रात को जेल वहाँ ज्यादा उम्र के महात्मा आते जाते रहते थे। कुछ मुस्तकिल तौर पर भी रहे थे। जब कब प्रवचन और सत्संग होते, वेद पाठ चलता।'[9] धार्मिक परिवेश के साथ-साथ पूजा पाठ का कार्य सम्पन्न करने के तरीके का परिचय भी गोविन्द मिश्र ने कलात्मक तरीके से प्रस्तुत किया है। जो इस उदाहरण के माध्यम से ज्ञात होता है-'बस्ती से करीब-करीब कटा हुआ संकटमोचन था-पुराने मंदिरों का एक छोटा सा अहाता। उसकी दीवारों के छोटे-बड़े मंदिर एक पीपर के आसपास सिमटे हुए थे। सभी देवता वहाँ विराजते थे' 'क्योंकि सबसे बड़ा मंदिर हनुमानजी का था। कोई पताका नहीं, मंदिर जैसा कोई चिन्ह भी नहीं। कभी कभार कोई पुराने भक्त आकर झाड़ू लगाता, वरना कूड़ा इकट्ठा होता रहता' 'मंदिरों के बीचों-बीच पीपल का मोटा तना था जिसे मानता करने वाले आकर पीले लाल धागे बांध जात' 'पीले और लाल टीके लगा जाते।'[10]

इसी प्रकार 'पाँच आँगनों वाला घर' उपन्यास में जोगेश्वरी के परिवार में धर्म और संस्कृति का अक्ष दृशित होता है व धर्म से उसका पूर्ण परिवार प्रभावित है वे धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा रखते हैं। जोगेश्वरी एक धर्मपरायण स्त्री है, उसकी पूजा में 'सुख सागर' का नियमित स्वाध्याय शामिल है। वह कार्तिक स्नान के लिए जाती है। राजन भी उन्हीं के साथ जाने के लिए हर पल तैयार रहता है। गोविन्द मिश्र ने राजन के माध्यम से बनारस के कार्तिक स्नान का परिचय दिया है कि- 'बनारस में कार्तिक का अपना आलम था, रात तीन बजे ही गंगा स्नान के लिए औरतों के जत्थे इधर-उधर गलियों से निकलकर छोटी-बड़ी धारा में गंगा की तरफ जाते होते। अधेड़ उम्र की औरतें, नई बहुएँ, लड़कियाँ टोलियों में गाती हुई जाती। मैया तोर दुआरे मैं आइ' 'मैया तोर दुआर .. '[11] इस उपन्यास में गोविन्द मिश्र ने धार्मिक एवं सांस्कृतिक पक्ष के माध्यम से बनारस के कार्तिक स्नान का परिचय दिया है जो हमारी भारतीय संस्कृति का परिचायक है। इस प्रकार इस उपन्यास में पात्रों ने परम्परा व नियमों के अनुसार पूजा किया है। जैसे 'उगती हुई सुबह के अधियारे उजियारे में बतियाने, नहाने और पूजने की मिली-जुली आवाजों में पंचगंगा घाट-चहक रहा है। कहीं स्तुति के स्वर उठ रहे..... देवि सुरश्वरि भगवती गंगे..... या जय-जय भागीरथ नंदिनी .... तो कहीं चलो मन गंगा जमुना तीर की तान हैं, कहीं नमो शिवाय का जाप या जप।'[12]

निष्कर्ष - इस प्रकार गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में सामाजिक चेतना के अंतर्गत अनेक कारकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हे जैसे सामाजिक पक्ष, राजनीतिक पक्ष, आर्थिक पक्ष तथा धार्मिक एवं सांस्कृतिक पक्ष आदि इन सभी परिस्थितियों का वर्णन गोविन्द मिश्र ने अपने कथा-साहित्य में किया है। सामाजिक सरोकारों से गहरे जुड़ाव और बदलाव के प्रयासों में लगातार सृजनरत कथा लेखकों में नि:संदेह आज एक समर्थ एवं महत्वपूर्ण नाम गोविन्द मिश्र का है। विगत कुछ दशकों की सामाजिक विषताओं एवं विद्रुपताओं के बीच तेजी से पनपी अमानवीयता, साम्प्रदायिकता, अव्यवस्था की एवं दोहरे चेहरे या मुखौटे की समस्याओं को इन्होंने प्रभावशाली ढंग से उठाया है। आतंक और असुरक्षा से घिरी आम जनता की हतोत्साहित मानसिकता, अकाल मृत्यु यातनाएँ, भ्रष्टाचार के परिणामस्वरूप दिशाहीनता और गतिहीनता का अपने कथा साहित्य के माध्यम से इन्होंने इसका यथार्थ चित्रण किया है।

गोविन्द मिश्र के लेखन की जो बात सबसे अधिक आकर्षित करती है वह है, लेखक की सामाजिक यथार्थ की पकड़। यह यथार्थ व्यक्ति या मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन से लेकर गांव, शहर और संगठन के भीतर की स्थितियों तक फैला है। कहने का यही अर्थ है कि लेखक ने यथार्थ के अंतर्विरोधों को उजागर करते हुए उसकी मूलभूत समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित करने की हर संभव कोशिश की है। समग्र रूप से कहें, तो गोविन्द मिश्र का लेखन सामाजिक चेतना के विभिन्न स्तरों का स्पर्श कराता एक सार्थक प्रयास है।

साहित्यकार के जीवन को वैश्विक घटनाएँ तीव्रता से प्रभावित करती है। ठीक वैसे ही जैसे वे सामान्य जनजीवन के दर्शन को प्रभावित करती हैं और उन्हीं घटनाओं से प्रेरणा पाकर वह युग साहित्य का सृजन करता है। युग चेतना से संवेदनशील साहित्यकार कभी भी निरपेक्ष नहीं रह सकता है। क्योंकि वहीं लेखक से कलम पकड़वाकर युग चित्र प्रस्तुत करवाती है। गोविन्द मिश्र का साहित्य भी इसी का उदाहरण है। जो सिर्फ कल्पना ही नहीं, वरन् शोषितों एवं उनके संघर्षों का यथार्थ भी दिखाता है। गोविन्द मिश्र के साहित्य में राजनीतिक परिपक्वता और जटिलताओं का बारीकी से और बेबाक निरीक्षण और चित्रण किया गया है। सत्ता के लोभ में स्वार्थवश व्यक्ति का भ्रष्टाचार की राह पर चल पड़ना दूसरों के अधिकारों को छीनना, अपने अधिकारों का गलत प्रयोग करना यह सब आज आम बात हो गई है। निरीह जन का शोषण कर हमेशा से व्यक्ति खुद को बड़ा दिखाता आया है। लेकिन आज यह शोषित वर्ग भी अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो रहा है, उसे अपनी ताकत का अंदाजा होने लगा है और इसलिए मानों वह यह ऐलान कर देना चाहता है कि 'बस, अब और नहीं।' उसकी यही जागरूकता उसका हथियार और रक्षा कवच दोनों हैं। इन सभी संदर्भों को गोविन्द मिश्र जी के लेखन में बखूबी देखा जा सकता है, और इसीलिए इनका साहित्य सशक्त राजनीतिक संदेश देने में पूर्णत: सक्षम हैं।

अर्थ के प्रति जनसाधारण का आकर्षण निरंतर बढ़ रहा है। आज हर

क्षेत्र में अर्थतंत्र घुसकर कुंडली लगाकर बैठ गया है। ऐसे अर्थ प्रधान युग और समाज की नब्ज को लेखक (गोविन्द मिश्र) ने एक अनुभवी वैद्य की तरह पकड़ा है और आर्थिक क्षेत्र में चेतना के स्पन्दनों की पड़ताल की है। आज अर्थ के अभाव में व्यक्ति के आदर्श उसकी अस्मिता उसका स्वाभिमान कैसे जूझ रहे हैं, इस त्रासद विडम्बना के दर्शन हमें सहज ही लेखक के कथा साहित्य में हो जाते हैं। पूंजीपतियों और सर्वहारा वर्ग के बीच फैली आर्थिक विषमता की लगातार चौड़ी होती खाई और प्रतिकार स्वरूप सर्वहारा वर्ग द्वारा छेड़े गए वर्ग संघर्ष को लेखक ने अपने कथा साहित्य में पर्याप्त स्थान दिया है। अत: आर्थिक चेतना के संदर्भ में लेखक के कथा साहित्य में आर्थिक क्षेत्र में आई व्यक्ति चेतना, परिणामस्वरूप व्याप्त वर्ग चेतना को देखने का प्रयास किया गया है।

इस प्रकार गोविन्द मिश्र के कथा साहित्य में सामाजिक पक्ष के साथ-साथ धार्मिक एवं सांस्कृतिक पक्ष भी पूर्ण रूप से विद्यमान है जिसमें साहित्य के पात्रों के माध्यम से उन्होंने देवी देवताओं के प्रति आस्था-अनास्था, श्रद्धा भाव और कर्मकाण्डों का अत्यन्त ही मार्मिक ढंग से विवेचन किया है। इस प्रकार इनकी मानवतावादी दृष्टि ने लगातार बदलती मानवीय सोच और मान्यताओं को समझने का एक नया परिप्रेक्ष्य दिया है और निश्चय ही मिश्र की सोच हम तक उसी रूप में उनकी भाषा की संप्रेषणीयता की वजह से पहुँच पाई है। इस प्रकार हम देखते हैं कि उनके कथा साहित्य में धर्म एवं भारतीय संस्कृति को व्यापक स्तर पर उद्घाटित किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. रत्नाकर पाण्डेय, हिन्दी साहित्य-सामाजिक चेतना, अनुसंधान प्रकाशन, आचार्य नगर, कानपुर, 1962, पृ.सं.-156
2. गोविन्द मिश्र, पाँच आँगनों वाला घर, राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली, 1995, पृ.सं.-76
3. गोविन्द मिश्र, पाँच आँगनों वाला घर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृ.सं.-144
4. गोविन्द मिश्र, हुजूर दरबार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1981, पृ.सं.-21
5. सुरेन्द्र राय, भ्रष्टाचार में अर्थव्यवस्था, समीक्षा प्रकाशन, नई दिल्ली/ मुजफ्फरपुर, 1989, पृ.सं.-28
6. गोविन्द मिश्र, पाँच आँगनों वाला घर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृ.सं.-277
7. गोविन्द मिश्र, पाँच आँगनों वाला घर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृ.सं.-277
8. गोविन्द मिश्र, हुजूर दरबार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1981, पृ.सं.-3
9. गोविन्द मिश्र, हुजूर दरबार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1981, पृ.सं.-5
10. गोविन्द मिश्र, हुजूर दरबार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1981, पृ.सं.-8
11. गोविन्द मिश्र, पाँच आँगनों वाला घर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृ.सं.-8
12. गोविन्द मिश्र, पाँच आँगनों वाला घर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृ.सं.-11

****

Indian Thought And Emerson's 'Brahma'

Dr. Ashwani Kumar Bajpai *

Of the intellectual personalities of American philosophers, writers and poets whose thoughts and philosophical views represent and attempt to assimilate India in to their philosophy of life the names of Emerson, Thoreau and Whitman stand at the top of the list. Occupied by an earnest desire to realize ultimate truth Ralph Waldo Emerson worked hard to see new attitude to life in Indian scriptures. He read throughly with profound spiritual awakening ancient Indian scriptures especially, The Gita, Kathopanishad etc. and found that human destiny will fulfill itself in one and the same way both in east and west horizon of the earth. He saw that life has basic unity and there is a complete identity between Atman and Brahman, that God is "in distribution. God rushing into multiform benefit"[1] Emerson developed his keen interest in Indian philosophy during his childhood days. At the age of 19 in a letter written to his aunt, he expressed his interest and curiosity to read" Hindu mythologies, the treasures of the Brahmins."[2] There were Sir William Jones' Hymn to Narayan' and Southey's 'The Curse of Kehama' that catered Emerson's interest to Hindu lore. Emerson further gives details of his reading of Hindu scriptures which include " Hindu mythologies and Mathematics-Edihburgh Review (1823) De Gerando's Mahabharata (1830), Code of Manu (1836), Kalidasa's 'Meghduta' in the Asiatic Journal' (1837), Sir Jones' 'Translation of Asiatic Poetry' (1838), and Vishnu Sharma's Hitopadesa (1841). " [3]

So far as Emerson's poem 'Brahma' is concerned this reflects many concepts taken from Indian sources. This poem was first published in Nov. 1857 in 'The Atlantic Monthly' later on in the volumes of 1867 and 1876. This poem evoked controversy as critics were of the view that poem contains anti Christian attitude and direct treatment of Indian Upunishadic mystic ideas. Emerson was full aware of this that's why he discussed with his daughter about the controversy of the poem. He said, "Tell them to say Jehovah instead of Brahma" [4] subsequently Emerson was told to change the title of the poem 'Brahma' by the publishers but he refused to do so. This poem was not properly understood and consequently this was not appreciated not only by the contemporaries but even by those who later on could not interpret it in the light of Hindu thoughts. R.L. Rusk aptly commented "Brahma" provoked the laughter of those who were ignorant of Hindu lore and they must have composed most of the readers of the Atlantic."[5] The title of the poem 'Brahma' created confusion as 'Brahma' is mistaken for 'Brahmâ' (the god who creates). F.I. Carpenter comments- ''by 'Brahma' the impersonal creative force of the world is represented as the speaker." [6] Carpenter took 'Brahma' as a 'Brahmâ' (with long a) the creator god of Hindu trinity (Brahmâ, Vishnu, Mahesh). This mistaken idea has been rightly pointed out by K.R. Chandrashekharan- "Brahma actually means the Universal Soul, the Absolute or ''over soul''. The poem doesn't have any reference to 'Brahmâ', the creator god, but it embodies all the attributes and qualities of the Impersonal Ultimate Reality beyond the gods and goddesses, Brhama.' [7]

In fact, Emerson derived the idea for this poem after delving down deep into Katho Upanishad that was included in the Bibliotheca Indica (Calcutta, 1852). The verse from Katho Upanishad clearly indicates the basis of the opening lines the poem-

Hanta can manyate hantum hatas cen manyate hantam,
ubhau tau nav vijanito nâryam hanti na hanyate. [8]

If the slayer thinks I slay, if the slain thinks I am slain, then both of them don't now well. It (the soul) does not slay nor is it slain. we can also see this Upanisadic idea in The Shrimad Bhagwad Gita in 19-20 verses of chapter two. -

Ya evem vetti hantâram yascainam manyate hatam
ubhau tau nav vijanito nâyam hanti na hanyate.
Nâ jayte mriyate va kâdicîn
nâ yam bhutvâ bhavita vâ na bhuyah.
Ajo nityah sâsvato yaur purâno
na hanyate hanyamâne sarire.

He who holds Atman as slayer and he who considers it as slain, both of them are ignorant. It slays not nor is it slain. The Atman is neither born nor does it die. Coming into being and ceasing to be don't take place in it. Unborn, eternal constant and ancient. It is not killed when the body is slain.

Words ''red slayer'' in the opening lines of the poem refer to the slayer whose hands are soaked with human blood. This image reminds us of man who has killed and has smeared his hands with red blood or it may give us an impression of a warrior fighting heroically and killing the enmies with sword subsequently hands smothered with blood.

Emerson has put the words into the mouth of the Absolute or Over-Soul, who is the Supreme (Impersonal) Being, though it would have been more appropriate to have them from the mouth of the speaker of The Bhagwad Gita - Bhagwan Krishna. The poem justifies the transcendent ways of Brahman to man and clearly expresses the higher truth which can't be grasped by ordinary human being.

* **Head (English) Mahatma Gandhi Govt. P.G. College, Kareli, Narsinghpur (M.P.) INDIA**

When we read the second stanza of the poem, crystal clear influence of Upanishadic verse is seen. Upanishads are full of paradoxical descriptions of 'Brahma'. Upanishads declare that Brahman moves and doesn't move. Brahman go too far and He is too close-

Tad ejâti tan naijati tad dure tad vantike
tad antarasya survasa tad u sarvasyâsya, bâhyatah.

Means that He moves, moves not; He is far, is near; He is within all this and is also outside all this.[9] In the Brahman contrasts as distance-nearness, present-past, light-darkness, victory-defeat, happiness-unhappiness, fame-shame, prosperity-poverty does not exist. All the opposites disappear in it. The concept of good and bad, pleasure and pain, success and failure, life and death are dichotomies which appear to be illusory notions. In 'The Bhagwad Gita' lord Krishna talks about moving across these opposites-

Dukhesvanudigna manah sukheshu vigatsparh
veetrag bhay krodha sthit dheermuni ruchyate.
yah sarvatranabhi snehastat prapya shubha shubham
nabhi nandati Na Devasti tasya pragya pratisthita. [10]

Allan Watts explained it in this way -

"The illusion of significant improvement arises in moments of contrast, as when one turns from the left to the right on a hard bed… the vacuum arises because the sensation of comfort can be maintained only in relation to the sensation of discomfort, just an as image is visible to the eye only by reason of contrasting background. The good and evil, the pleasant and the painful, are so inseparable identical in their difference-like the two sides of a coin.''[11] Emerson himself in his very famous poem 'Celestial Love' has talked about this unity in very clear words-

where good and ill,
and joy and moan,
melt into one .
there Past, Present, Future, shoot,
triple blossoms from one root,
substances at base divided,
In their summits are undivided. [12]

If we analyze the third stanza of the poem 'Brahma' we see the influence of The Bhagwat Gita in it. In the tenth chapter of the Gita lord Krishna gives a long list of those things in which he is present as The Supreme Being. That chapter of the Gita is known as 'Vibhuti Yoga' as -

vedânam sâmavedo smi davanamasmi vâsavaih
indriyânam manaschasmi bhutanamasmi chetnâ.[13]

The last line of third stanza is similar to the above shloka. Consequently concluding fourth stanza of the poem again reflects the influence of 'The Bhagwad Gita' and Upnishads. 'The Strong Gods' are possibly Agni'' fire God'' Varuna (the god of water), Yama (the god of death) Indra (the king of god) The Sacred Seven are Saptrishis—Kratu, Pulaha, Pulastya, Atri, Angira, Vashistha and Marichi. These Seven rishis control the Manvantar or the passage of time. The last words of the poem 'turn thy back on heaven" indicates that heaven is not the ultimate abode of peace. The moment punayas (good deeds) are exhausted one is thrown away from heaven down to earth as the Gita declares ''Having enjoyed the vast world of heaven, they return to the world of mortals on the exhaust of their merits; thus abiding by the injunctions of three Vedas, desiring objects of desires they go and come'' [14]

ksheenei punye mritu loke vishanti-

Emerson put this thought in to the last line of this poem 'find me, and turn thy back on heaven.' Thus Emerson was devolved to Indian thoughts envisaged in the Gita, Upnishads and other holy scriptures. Besides, Brahma, Hametreya, Wood-Notes, the Celestial Love, Sphinx and Spirit are some other poems which reflect oriental thoughts. W.T. Harris aptly comments about 'Brahma' "...for him the poem Brahma is a wonderful summary of the spirit of the Indian mind. There is no subject farther from the thought of the average common sense of the modern European or American than the all absorbing unity which the East Indian conceived under the name 'Brahma.'" [15]

References -

1. The Vishvabharti Quarterly Vol. XVIII. (No.3) P.229-30.
2. Cameron; Emerson the Essayist; An Outline of his Philosophical Development Vol. II p.149
3. The Letters of Ralph waldo Emerson (Ed.R.L. Rusk) Columbia University, 1939. p.322
4 Robert L. White ''Emerson's Brahma'' the Explicator, XXI (April,1963)No.8 item 63
5 Ralph L. Rusk, The Life of Ralph Waldo Emerson (Newyork; Scribner,1949) p.396
6 Frederic Ives Carpenter, Emerson and Asia (Newyork; Haskell House) 1968, p.113
7 K.R. Chandrasekharan, ''Emerson's Brahma an Indian Interpretation" the NEQ Vol.33 No.4 (Dec.1960) p.506-12
8 S. Radhakrishnan, The Principal Upnishads (London; Allen & Unwin,1968) 616 (katha12.19)
9 Ibid p.571 (isas)
10 Shrimad Bhagwad Gita, Gorakhpur Gita press chapt .II shlokas 56.57
11 A. W. Watts, The Way of Zen (1957, England; Penguin Books ,1975) p.136-137
12 Complete Works of Ralph waldo Emerson (Bestom;Hougtton, Mifflin,1903) IX,p.195
13 Shrimad Bhagwad Gita, Gorakhpur, Gita press, chapt .X shloka-22
14 Ibid chapter IX shloka-21
15 W.T. Harris, "Emerson's Orientalism" Concord Harvest, ed. K.W. Cameron (Hart ford; Transcendental Books,1970) Ist, pp187-90.

****

Reasoning And Mysticism In Amitav Ghosh's 'The Calcutta Chromosome'

Dr. Saurabh Emmanuel Lal *

Introduction - AmitavGhosh's The Calcutta Chromosome: A Novel of Fevers, Delirium and Discovery is a commendable science fiction. It has won the prestigious Arthur C. Clarke Award. It presents a web of different stories from different times beginning in the precise future in New York. We find an intertwining of science and counter-science in the novel which he skillfully depicts through his characters and plot. His intention in the novel is to dismantle the western sense and superiority through Indian Philosophy. The novel deals with variety of subjects such as medical history, computer applications, and religious sects set against the backdrop of the ending years of nineteenth and twentieth century, and the opening years of twenty first century India. An attempt has been made to analyze and study the boundaries of science and counter science in The Calcutta Chromosome.

The book is about the shadowy story of the discovery of the malaria parasite by a British medical man in colonial India, Dr. Ronald Ross. It begins in twenty first century with Antar an Egyptian computer expert in New York working on his super computer Ava to search for a man whose card appeared like a flash on his Ava. He finds that the lost person is L. Murugan, a colleague and researcher in Life Watch where he works, and is also the one who has done the research on the medical history of malaria. He comes to the conclusion that Ronald Ross who was a noble laureate for his work on the life-cycle of malaria parasite (1898) was brought on the right track by some of the native assistants to head on for such a beneficial discovery to mankind. The story switches places and periods to tell us stories that are connected to Murugan's story. We go back to that period when Ross was doing the research and even before that when Cunningham was attempting the same thing. There are a lot of characters and the story moves back and forth and sometimes there is a story within a story and another within it, we find a number of sub plots interlaced together, another plot we see is about Urmila Roy a journalist in Calcutta who is researching the works of Phulboni, a renowned writer who produced a series of strange "Lakhan stories".

The novel has many layers, numerous personalities, and complex time frames which allow the writer to deal with science, myth, language, silence, society and the individual. It is a web which grows skillfully pairing the most unexpected themes, and fitting into astonishing patterns. If we take the structure and plotting of any Science-fiction novel as a basis to understand AmitavaGhoshs' 'The Calcutta Chromosome' we find the author questioning the identification of knowledge and science through the fictive recreation of 'counter-science'. He presents the story by interlacing science and counter-science together through the plot and characters of the novel .Though one can say that his intention in the novel is to bring down the western sense and superiority through Indian Philosophy which in fact is a counter science in this novel. He tries to establish the authority and control of marginalized lower class Indian people over Western higher class scientists through the fictive activity of counter science in the main plot in an interesting manner – to suggest that someone wanted Ross to identify the cause of malaria in order to hide some other bigger secret. Here Ghosh tries to subvert the Western rationalistic knowledge through counter science which makes Ross' to believe as the conductor of research. Murugan mocks at Ross and comments: "He thinks he's doing experiments on the malaria parasite. And all the time it's he who is the experiment on the malaria parasite. But Ronnie never gets it; not to the end of his life." (Dayal, 67) Ross' research was controlled by the uneducated lower class Lutchman and Mangala.

Ghosh dismantles the domination of West over East by employing magic realism and mysticism as a tool in his narrative to deal with the secret religion of silence as counter science. Mangala and Lutchman are the members of a secret religious society and they believe in the cult of silence, trying to conceal their identity. The novel never clearly identifies the beliefs and aims of this secret society as it could break the code of secrecy. Ghosh through his narrative suggests that this group of people believed in counter science. May be this other team, "started with the idea that knowledge is self-contradictory; maybe they believed that to know something is to change it, therefore in knowing something, you've already changed what you think you know so you don't really know it at all: you only know its history. Maybe they thought that knowledge couldn't begin without acknowledging the impossibility of knowledge." (TCCDayal, 88)

The counter-scientists' silence and secrecy create a hurdle that Murugan and by extension Antar spend the entire novel trying to break through. Murugan especially is interested in the unspoken new information that the counter-scientists are shielding behind their silence. Silence is presented in various relationships to language, including scientific language. A character says about silence: "I see signs of her presence everywhere I go, in images, words, glances, but only signs, nothing more…." It is also a good example of the subgenre of postcolonial science fiction. It

* Assistant Professor (English) Government Degree College, Sailana (M.P) INDIA

has the elements which show colonialism's sharp oppositions between suspect Eastern esotericism and the Western rationality by presenting an inherently coherent and numinous order. In keeping with the sudden appearance of other postcolonial voices in a genre so identified with Western technological dominion, the novel's complex mingling of the two major ways of knowing, Science as scientific effort and language on the one hand and Counter Science as intuition, wisdom, silence, magical realism and mysticism on the other hand, raises questions about the nature of knowledge..

Contradictory to this silence is the "knowledge" that a subject offers up to the authorities. Their knowledge "is recorded and stored" by the creation of categories and systems of names — insane, crank, eccentric, etc. — and used to classify them and define their mode of being; ultimately this 'archive' of knowledge "comes to constitute and uphold a regime of power". In this novel we see that The International Water Commission, through Ava and Antar, are in the process of creating a vast archive of information/ knowledge in the hopes that they will be able to use it to their advantage in the future.Ava's presence, for instance, has some sci-fi connotations, it is certainly more advanced than most computers available to people working out of their homes today. In fifteen minutes, for instance, it is able to trace a lost e-mail by "sifting through about six thousand eight hundred and ninety-two trillion cunabytes, ... roughly eighty-five billion times the estimated sum of every dactylographic act ever performed by a human being,"(TCC Dayal 107) and reconstruct it "by running the retrieved fragments through a Storyline algorithm" in spite its importance, however, many of the crucial events in the story occur in a time and place far removed from Ava's presence.

On the other hand, as mentioned previously the counter scientists take the different approach in dealing with the scientific community. They work in secret and by remaining silent they are able to do their research without any impediments. As Murugan sees it:

"Fact is we're dealing with a crowd for whom silence is a religion. We don't even know what we don't know. We don't even know who's in this and who's not; we don't know how much of the spin they've got under control. We don't know how many of the threads they want us to pull together and how many they want to keep hanging for whoever comes next."(TCCDayal 180)

The observations made by Murugan were not fictitious he had worked hard and with great deftness had documented the development of Ronald Ross's malaria research. Murugan observes that Ross had spent about five hundred days altogether working on malaria, and his obsession for collection, classification and disbursement of knowledge later on called as morbid by the scientific community and even he had been termed as a "crank and eccentric" by them. He chose silence, which becomes one of the only effective means of resistance. Murugan's experiences and those of the counter-scientists illustrate very clearly the probable effectiveness of using silence as a way of counter science.

Thus we see, Ghosh bringing the two very improbable parallel stories against each other. On one hand there is Ross's version of the history of malaria experiment asserting its authenticity through recorded evidence, silencing any competing voice. On the other hand we find Mangala's story bewildering constantly even its own reality, silencing any voice that exposes or threatens to expose even its own existence. One character is a British military officer and a renowned scientist and the other not only a native but a woman belonging to a lower stratum of society. Lakhaan or Lutchman is the assistant who is common to both. Ghosh, like a number of other post-colonial writers, also dislocates the conventional binary between the center and the margin. The 'marginal' and the 'variant' characterize post-colonial views of language and society as a consequence of the process of abrogation. Chromosome subverts the 'centre' by focusing on the actions of otherwise peripheral characters. Murugan, for instance, the character at the centre of the novel, is marginalized in numerous ways by society – as both eccentric and "ex-centric". As already mentioned the scientific community calls Murugan as "a crank and an eccentric" because of his outrageous theories, and the History of Science Society subsequently takes "the unprecedented step of revoking his membership" Throughout the novel his "psychological 'normalcy'" is also called into question .Murugan himself hints that his fits of syphilis and malaria might have somehow affected his brain, and by the end, of course, Antar finds him in an asylum. And yet, despite Murugan's marginality, most of the information and events central to the story's development are filtered through him.

Like Murugan, the group of counter-scientists who are both at the centre of the novel and at the centre of malaria research and discovery operate and exert their control from the margins of society and scientific discourse. The woman in charge, Mangala, is characterized by the colonial scientists as deviating from the psychological norms - "'don't pay her any attention;' Cunningham said to Farley, with a wink, 'she's a little touched ... you know'" (Dayal, 141). Also the work she is overseeing is often set up in binary opposition to the accepted centre. For Murugan, just as there are "matter and antimatter," "rooms and anterooms and Christ and Antichrist," there are "science and counter-science" practiced by "fringe people, marginal types (who are) so far from the mainstream you can't see them from the shore" (Dayal105). The discoveries of the counter-scientists always occur outside of the scientific centre, subversive alternatives to the 'accepted' European scientific experiments. Murugan even uses the "Other Mind" theory to describe their work - a label fraught with post-colonial connotations.

Of particular significance to the relationship Ghosh establishes between the margin and centre in the novel is Farley's visit to Cunningham's lab to test Laveran's theories. Farley, in the lab, becomes a first-hand witness to the counter-scientists' literal displacement of the centre and the shifting of power towards the margins. During his first day in the lab Farley sees, through a reflection in his glass of water, that it is Mangala - the one, according to Cunningham, who is "not all there" — who is choosing the slides and in effect running the lab.Determined to find out what Mangala and Lutchman are doing, he decides to return the following day. Upon arriving the next day, Farley notices "a great deal of activity in a nearby anteroom". Just as on day before he sees nothing of importance in Cunningham's slides, slides that are results of experiments made in what "was once one

of the best-equipped research laboratories in the whole Indian subcontinent". Farley soon realizes that everything of importance going on in the lab is occurring in the anteroom and not in the laboratory proper. After threatening to stay all night he watches Lutchman snatch "up a set of clean slides," then slip "away to the anteroom". Once he was gone, Farley made his way silently across the laboratory. Flattening himself against the wall, he crept towards the door until he had maneuvered himself into a position where he could look into the anteroom without himself being detected. Farley had steeled himself for anything, or so he thought, but he was unprepared for what he saw next. Here, with the separation between room and anteroom,(lobby) the figurative binary opposition between margin and centre becomes literal. This peripheral room and the counter-science occurring within become of central importance and in turn displace the colonial lab and its conventional approaches to science from its position of authority.

When we look into Julius Von Wagner-Jauregg discovery (1927) that artificially induced malaria could cure syphilitic paresis, we find nearly the same had been achieved much earlier than that. Mangla along with her Indian counter scientist group had achieved a remarkable success by developing a particular strain of malaria that could be cultivated in pigeons. And by inducing malaria bug to the patient from the bird she started treating syphilitic patients. The process resulted in transpositions "Mangla began to notice that her treatment often produced weird side effects . . . of randomly assorted personality traits, from the malaria donor to the recipient . . ." (Dayal 206) through the pigeon. It hinted at a freak chromosome which eluded standard techniques of detection and isolation. It was only found in the non-regenerating tissue, the brain, and could be transmitted through malaria. Murugan calls this DNA carrier-the Calcutta Chromosome ". . . a biological expression of human traits that is neither inherited from the immediate gene pool, nor transmitted into it" (Dayal 207). While Ross was rationalist in solving the mystery of malaria, we see Mangala using counter science of faith to treat her syphilitic patients.

This interlacing of reasoning and eastern mysticism comes out more vividly through Mangala's ultimate wish to gain immortality by transferring human traits chromosomatically from one body to another.

"When your body fails you, you leave it, you migrate – you or at least a matching symptomology of yourself. You begin all over again, another body, another beginning. Just think, no mistakes, a fresh start . . . . a technology that lets you improve on yourself in your next incarnation . . ." (Dayal 91-92).

The interlacing of stories with silence thus forms a powerful plea that knowledge be regarded as a dynamic process, rather than a fixed entity. Ghosh is not opposed to knowledge but through his characters and through his intricate way of weaving the plot he indicates that all knowledge, whether concerning science, history, or geography, are in fact provisional, they are stories still being told, still mutating. He suggests that it is only when one recognizes that scientific practice or any claim to knowledge are in fact processes akin to story-telling, that one can actually set off on the evolving course of knowledge. To return to the epigraph, the phrase "the impossibility of knowledge" (Calcutta) indicates Ghosh's other important point that full knowledge is not out there for the taking, there will always be silences and gaps in our narrations of knowledge. As a novelist, no doubt Ghosh foregrounds fiction as an important instrument of knowledge transmission, highlighting in particular the modes open-endedness and ability to encompass many different viewpoints, very effectively. And although his fiction is always grounded in extensive factual research, as in the case of the representations of Ronald Ross, he always returns to the novel as the most apposite literary mode for imparting his non-hegemonic "not-knowledge."

The novel is a science- fiction, where AmitavaGhosh has made an attempt at deconstructing the dichotomy between logic and reasoning i.e. science-the western science (represented by Ross) and counter-science or eastern mysticism (personified byMangla). He has very skillfully depicted the same by creating unexpected points of contact, suggesting their mutual dependence, thus smearing the boundaries of the two. The main themes of question of knowledge, the fading away of the man and machine relationship are allusively anticipated from the very first chapter. The way the secrets of the malaria research are unraveled with the contribution of futuristic high technologies, the way the characters, events and the details echo and resound from one level to the other, limiting the stories to make them elusive the same way the boundaries between Science and Counter-science, between logic and mysticism have been blurred. He has used the technique of flashback, continual shift of time and space are tightly knit together. Its success lies in its blending the post-colonial with science-fiction traditions. Through his characters, as we have seen ,he tries to show that not only the characters of the novel but the whole human race is in search of truth, knowingly or unknowingly, a desire that lays deep inside the secret world of silence. The binary opposition is shown in his dismantling of the western rational notion through Indian irrationality presenting an alternative perspective of truth, the voice of logic and illogic, matter and anti-matter, or Science and Counter-science or Western reasoning and Eastern mysticism.

References -

1. Adhikari, Madhumalati, "The Calcutta Chromosome: A Post-Colonial Novel." Journal of
2. English Literature.Vol. 1.No.1.(2009)
3. Ghosh, Amitav, The Calcutta Chromosome. New Delhi: Ravi Dayal, 2006.
4. http://litthe.oxfordjournals.org/ James.H.Thrall "Postcolonial Science Fiction: Science,
5. Religion and the Transformation of Genre in AmitavaGhosh's The Calcutta Chromosome.
6. http://books.google.co.in/ Ed.Ericka Hoagland, ReemaSarwal, Andy Sawyer, Science Fiction, Imperialism and the Third World : Essays on Postcolonial Literature and Film.

Reflections Of Indian Tradition And Culture In Rama Mehta's Inside The Haveli

Dr. Swati Chandorkar *

Abstract - Rama Mehta is a well- know Indian Novelist who has established herself not only as a champion of women but also a writer who depicts the traditions of motherland . Indian English needs to be discussed from a brighter point of view. Many authors while portraying Indian scenario look at women as weak characters while many of them have transformed them as protagonist. But Inside the Haveli has one more peculiar aspect. It strongly emphasized on the beauty of Indian Culture and Traditions that has made us a unique land and stand apart from World Literature. This paper throws a light on various Indian Traditions as seen in the novel. Through the exhibition of naming convention, hospitality , unique act of contemplating and many others, the paper has tried to study various Indian Traditions thus enhancing the image of India believing that we can emerge as 'Vishwaguru ' not by giving up age old traditions but by following them proudly and whole heartedly.

Introduction - Indian culture has a remarkable history in the world right from B.C. Aryans who had migrated from Mesopotamia, and other countries, settled in India and wrote Vedas. Hence India is also called Vedic land. The very interesting fact about India is that all the Indians, though they belong to different religions and castes, preserve their tradition and culture.

India is a land of undying culture and traditions. The country has witnessed years of slavery. Moghuls, Portuguses and British. But we proudly proclaime that inspite of various invaders, we still stand erect. what makes us so strong? The greatest traditions of Rome or even Greek have ended up. But what is it that India is still successful in maintaining its dignity. It is only through its age old strong culture and traditions!

" A culture is a way of life of a group of people—the behaviors, beliefs, values, and symbols that they accept, generally without thinking about them, and that are passed along by communication and imitation from one generation to the next".

The present paper is an attempt to analyze the features of the country that has always made us ' A Unique Nation.' Rama Mehta's Inside the Haveli presents a world of aristocratic Udaipur. All the characters belonging to and associated with central family in the novel meticulously abide by all customs and traditions prevalent in Indian society.

It is observed that Indian English is discussed mostly in negative terms. Many authors have portrayed the image of women as a meek and poor lady, suppressed by the family and by the society at large. Inside the Haveli is usually read as a study of the gradually changing status of the New Women in India. It can also be read as, an absorbing instance of "feminist" writing, with young girl as the protagonist. As Mrs. Ramnavmiwale Meera opines: "The novel explores the innerself of Geeta who symbolizes the 'New Woman'" (37). Besides having a women protagonist, there is one more peculiarity about the story. The book has a great beauty of Indian culture and traditions and this paper attempts to throw a light on this culture and traditions.

In contrast to western countries, India is remarkable for its strongest family system in the world.

In Indian family system, male is the head of the family. All the other family members, including wife, execute their duties according the wish of the head. The family members develop adjusting mentality. An Indian woman, after marriage, leads her rest of life with the husband along and her parents-in-law. She serves her husband and parents-in-law and brings good name and fame to the family. She never leaks out any small family dispute, even to her own parents. She respects her husband and never back-answers him. She even treats her husband as "Sreevaru" which means Venkateshwara, south Indian god of Hindus. This is the reason why an Indian family lasts for lifetime, when compared to most families of the west.

Let us first give a look on our ' Naming Conventions'. Indian names vary, based upon religion, social class and religion of the country. 'Addresses' often indicate the person's positions in the family. In Indian society hierarchy, the patriarch, usually the father, is considered the leader of the family. In Inside the Haveli Daulat Singhji is the 'Hukkum' means the trump card. The daughter-in-law is called Binniji, the daring one. "Where is Binniji?" asked the wife of Daulat Singhji. Geeta is referred here as Binniji. Daulat Singhji wife addressed her husband 'Hukkum.' Daulat Singhji's wife said with practice dignity," Hukkum, our children are growing up and we must think of their future before we are too old. While we are alive we must try everything to preserve our traditions and maintain the position which we have inherited. . .(161)

In indian society, every relationship has a clear cut hierarchy that must be observed for the social order to be maintianed. All relationship involve hierarchies in indian society and it is clearly reflected in the novel. The use of "We" and "Our" needs a special attention the strong family ties can be seen here. The lady may maintain a Purdah in the society but her sense of worry is seen in the above lines

Hospitality is another very important social behaviour and promentaly seen In inside the Haveli. We all know the Sanskrit adage "Atithi Devo Bhava" meaning that our guest are the gods visiting our homes and the utter respect is

* Head of Deptt. (English), Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

demonstrated by serving him with home made delicacies. The following examples reveals how Indians treat their guests. Bhagat Singhji's wife with her elder relatives went around coaxing the guests, "Have some more rice," "one more puree," "At least a ladoo." There were protests, but finally they were persuaded to take something more.(30)

To quote the web site, which helps researching Indian culture, Customs, Values and wanting to understand India better for there business in modern time speaks "Politely turn down the first offer of tea, coffee or snacks. You will be asked again and again. Saying no to the first invitation is part of the protocol."

To ask for the desires and opinions of the guest is to break the tacit law of Indian hospitality, according to which the host does not try to establish the guest's wishes as far as eating and drinking are concerned. On the contrary, he tries to get the guest to eat and drink as much as pssible and even more. A hospitable Indian host, like Bhagwat Singhji's wife in this case, will not take a negative response for an answer. This why Bhagwat Singhji's wife and her relatives assume that the guests can have some more, and that it would be good for them to have some more purees, ladoos and rice, and therefore that the guest's resistance, which is likely to be due to politeness, should be disregarded.

Another important feature of Indian social etiquettes is the verbal art of complementing. The positive politiness in language is often sincere and spontaneous "Where is Binniji?" asked the wife of Daulat Singhji. "Hukkum, you have been blessed with many things but your daughter-in-law is the haveli's greatest ornament "(161)

Bhagwat Singhji's wife politely accepts this compliment by attributing it to the generosity of Daulat Singh's wife. The art of complenting is beyond just 'thankyou'. Many positive nouns are often used. They may appear exaggerative at first but it is a part of day to day Indian language style. Indian fiction in English displays a diversity of complimets focused on third party belonging to the symphatic sphere of the addressee; for instance Daulat Singh's wife remarks that she cannot see Bhagwat Singh's wife without her grandchildren around her because "They are the joy of the haveli."(173). On hearing that Ajay has been offered a big post in Delhi, Kanta feels that if Ajay "leaves Udaipur the haveli will be empty."(123). What is characteristics of these complement is there exaggerative and emphatic tone but the nouns are positive. The use of such positive complement is a greatest Indian traditions and is well reflected in Inside the Haveli.

Much has been said about the Purdah system of India but the system does not always indicate the supression of women. This is well justified in the statement of Bhagwat Singh. He asks one of his maid servant on one occasion.

"How is Binniji?"

"She is well, Hukkum."….

"Pari, I hope Binniji does not feel lonely. This is a big house and it can be depressing at times especially for someone like her. This time both her mother- in-law and Ajay are away. I hope you are taking good care of her." There was deep concern in his voice as he spoke.(83).

The above lines show a great surge of affection in Bhagwat Singh's words. It reflected the level of concern a father-in-law has for his daughter-in-law. Though the etiquette might have prevented a daughter-in-law from talking freely to her father-in-law, yet the affection and strong bond between them is clearly visible. Our Indian culture has always established family value system and the joint family system is the backbone of our culture. Bondage of love and affection is abundantly found in Indian family system. Parents do not let their child to live independent life until they get a marriage match. However, there are so many joint families found in India.

This indicates a typical Indian culture i.e. strong social solidarity. This is well reflected in Inside the Haveli. Family. Indian parents take full care of children. Irrespective of their age children are children, for the parents and as the creame tastes sweeter than the milk so the grand parents care more for the grand children. To see their grand children well settled is the ultimate dream of every grandpa and grandma and children take full care to fullfill their parent's dreams.

Daulat Singhji's wife said with practiced dignity,

"Hukkum, our children are growing up and we must think of their future before we are too old. While we are alive we must try everythink to preserve our traditions and maintain the position which we have inherited…. You know Vir Singh, my son, has just padded B.A. with a first class…. my father-in-law is getting old; his last wish is to see his only grandson engaged before his eyes in a family of equal status….

Vijay Bai Sa is also growing up; she must be turning thireen now.... Bai Sa, I have come today to ask you to give us Vijay Bai Sa (161-162).

Another example of social solidarity can be seen in the next example below. The prefence for "we" over "I" is indicative of the speakers desire to forget the distance between himself and his maid-servants and a signal of cohesion of distance between them. Though Indian society may observe the hierarchy level between the master and servants yet this indicates that the master is always interested in the well being of their servants:

"Hukkum, Binniji wants to ask you whether Sita should go to school?" "We must think this out carefully. It is an important decision to take. We must not do anything in haste," Bhagwat Singhji said getting up, "Sita is our responsibility ."(84)

Thus the novel Inside the Haveli presents a sociologist's realistic account of a lagre section of Indian soicety. As Sumita Pal rightly comments about it thus: "In Inside the Haveli, Rama Mehta intends to depict the existential dilemma of a large section of the Indian society- the educated class that is influenced by the western belief yet cannot uproot themselves from their age-old traditions" (Writing the Female: Akademi Awarded Novels in English, 92). It is a successful work of art that exhibits age-old Indian culture and traditions which have helped the Nation stand erect amidst all invasions. Let us believe our country shall be Vishwaguru by 2020. The best is yet to come but shall come not by giving up our traditions but by following them whole heartedly. The second coming is at hand. Work Cited

References -

1. Meera, Ramnavmiwale. "Rama Mehta's "Inside the Haveli" A Feminist Perspective." Indian Streams Research Journal. Vol.1.Issue 1/ Feb.2011.
2. Pal, Sumita. "Tradition vs Modernity: The Existential Dilemma in Rama Mehta's Inside the Haveli." Mithilesh K. Pandey ed. Writing the Female: Akademi Awarded Novels in English. New Delhi: Sarup & Sons, 2004.
3. Rama Mehta, Inside the Haveli (Penguin Books, 1996)
4. www.kwintessential.co.uk
5. www.tamu.edu/faculty/choudhury/culture.htm

Impact Of Environmental Pollution On Human Life

Dr. Manjari Agnihotri *

Introduction - The word '*pollution*' is derived from the Latin word *pollutes* which means, made dirty. Pollution can be defined as 'harmful substances produced by human society, which contaminates and degrades the earth's environment and interferes with our health and well being'. The term 'pollution' refers to any change in the natural quality of the environment brought about by chemical, physical or biological factors. Thus, environmental pollution refers to any unfavorable alteration of our surroundings.

But, there are many factors which totally responsible for the polluted environmental conditions in this universe. From the making of the universe this beautiful earth is considered as a paradise. It is a place where Gods reside. God made this earth with five basic elements – air, water, soil, fire and sky. The balance between all of these elements keeps the environment healthy and worth living. But the place where the rivers of milk were flown is polluted due to the selfish nature of human being. His power, greed and politics have affected the precarious balance in nature. The whole geographical and climate change have been made by the imbalance in the nature. So, the environmental pollution has become a burning problem of the world and the creator of this problem is a man himself. Increasing population, industrialization, materialism, mechanized agriculture, deforestation is the main causes of environmental pollution. Being a selfish man, he over exploited the ecosystem to such extent that the existing elements of the nature have become handicapped. When man interrupted the eco-balance of nature then all the elements of the nature like-air, water, soil have to pollute the life style and daily routine of human being.

The effects of pollution may be primary and secondary. The primary effects of pollution occur immediately, just after the contamination takes place. The secondary effects of pollution are delayed effects and may persist in environment in future also.

Nature always wants to remain in the state of equilibrium. So, the nature is always disturbed by the internal forces like storms, floods, earthquakes, fires, volcanoes and above all the external human interferences which force it to maintain in a state of disequilibrium. The result of this imbalance has to be faced by the human beings. Due to the habits of human beings the balance among the components of nature has been disturbed. Even in rainy seasons we notice somewhere suffering from flood which some have to face drought. There are many examples which show this disastrous result. The recent example is before us. Jammu & Kashmir is facing the disastrous condition of flood while some states are lacking in sufficient rainfall. More than 7 lacs people are struggling for saving their lives due to over flooded condition of the state.

On 6 Aug. and 9 Aug. 1945, USA dropped atomic bomb on Hiroshima and Nagasaki respectively. Millions of people were killed and made homeless. But the radio-active pollution resulted in the severe environmental hazard.

Chernobyl disaster took place in Nuclear power plant of Ukraine on April 26, 1986. The disaster released large amount of radioactive debris that drifted over western USSR and Scandinavia. Two explosions blasted the reactor and the roof was blown off. The radioactive material ejected up to a height of 1 Km. More 200,000 people were evacuated and resettled. The environment was severely hit.

An industrial disaster worst of its kind took place on Dec 3, 1984 in Bhopal, India that claimed more than 2000 lives and injuring more than 200,000 people. A defective insecticide storage tank at Union Carbide Plant released tons of deadly gas into the air. Many of the injured permanently damaged their eyes and lungs.

Thousands of the 200,000 injured permanently damaged their eyes and lungs in Bhopal Gas Tragedy besides killing more than 2000 people.

The Indian Ocean earthquake was occurred on Sunday 26 December 2004. It is named as Tsunami, killing over 230,000 people in fourteen countries.

Many terrible earthquakes occurred in Kashmir, Uttarkashi, Bhuj; Kangra, Latur, Assam, Koyananagar moved whole of the world. Billion of people have to pay the cost of their lives due to the imbalance in nature.

In June 2013, the most religious place Kedarnath has to face horrible and awful disaster due to the cloud-burst. Recently the Collector of Sehore has started a campaign of soak pits due to which we may succeed in saving water at the time of water scarcity.Besides all these the climate change is also the single biggest environmental and humanitarian crisis of our time. The earth's atmosphere is overloaded with heat trapping carbon-di-oxide which threatens large scale disruption in climate with disastrous consequences. Forest and agricultural degradation of land, resource depletion (water, mineral, forest, sand rocks etc.) loss of biodiversity, loss of resilience in ecosystem, environmental degradation, loss of public health are witnessed by the people.

* **Assistant Professor (English) Govt. Girls College, Sehore (M.P) INDIA**

There are many environmental issues in India like air pollution; water pollution, garbage and pollution of natural environment are all challenges for India. The situation was worse between 1947 and 1995. According to data collection and environmental assessment studies of World Bank experts between 1995 through 2010, India has made the fastest progress in the world in addition to its environmental issues and improving its environmental quality. The Government has passed various laws and legislations for environmental protection. Government companies, international institutions NGO's and other organizations are attempting to reduce the fatal impact of environmental pollution on human beings by organizing conferences on this issue. Many environmental awareness programs, campaigns are held by not only on administrative level but by NGO's and international level. They conduct many rallies, competitions, plantation programs to make the people aware.

So, the reduction of pollution and improvement in the environment can be achieved by voluntary actions of the individuals and regulations by the Government. We should take oath to improve the environmental conditions around us. We should accept only those things which may be reused and recycled. We must be resolute to plant trees according to horoscope and on auspicious occasions like birthday, anniversary day etc. We must reduce or eliminate the dangerous chemicals in the products we buy, the food we eat and the air we breathe. We should think that what we have received in Heritage and what will we give to our coming generation in Heritage. Unknowingly we are not spoiling the environment but we are crushing our future with our own hands. We have to protect against. It is our moral & social duty to save our precious treasure like nature.

What steps should be taken -

1. Spread awareness about environment.
2. Campaign should be started from our own homes.
3. Some steps should be taken by government and administration.
4. Through practical & experimental knowledge students should be thought.

The seeds of awareness toward environment should be terminated from early childhood because child can teach better than us. So, due to their strength, stamina, memory creativity they can be more helpful in maintaining and saving the beautiful god gifted nature.

References -

1. Sharp, B. M. H. & Bromley, D. W. (1979). Agricultural Pollution: The Economics of Coordination, American Journal of Agricultural Economics 61(4), pp. 591-600.
2. Spassov, A. (1994). Identification of Problem Related to Solid Wastes in Bulgaria-National Report. Central European Journal of Public Health, 2(suppl), pp. 21-23.
3. Spilhaus, A. (1966). Waste Management and Control, Report of the Committee on Pollution, National Academy of Sciences-National Research Council, Washington, D. C.
4. Stein, J., Schettler, T., Wallinga, D. & Valenti, M. (2002). In Harm's Way: Toxic Threats to Child Development, Journal of Developmental & Behavioral Pediatrics, 23(0), pp. S13-S22.
5. Mishra, V. (2003). Health Effects of Air Pollution, Background paper for Population - Environment Research Network (PERN) Cyberseminar, December 1-15. Retrieved from http://www.mnforsustain.org/climate_health_effects_of_air_pollution_mishra_pern.htm

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

बी. एड. प्रशिक्षणार्थियों में प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. सुशीलकुमार शर्मा * जसवंतसिंह **

प्रस्तावना – किसी कार्य की सफलता के लिए व्यक्ति में अपने व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण भाव का होना अति आवश्यक है। शिक्षा क्षेत्र में आने वाली पीढी को योग्य,समृद्ध, और उन्नतिशील बनाने के लिए शिक्षकों को भी इन भावों से युक्त होना चाहिए। अत: प्रशिक्षणरत भावी अध्यापकों में अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर की जाँच के लिए उक्त शीर्शक का चयन किया गया है।

समस्या कथन –बी.एड प्रशिक्षणार्थियों में प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का अध्ययान

अध्ययन के उद्धेश्य –

1. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का पता लगाना।
2. प्रशिक्षण पश्चात् पुरुष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का तुलनात्मक अध्ययान करना।
3. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों व अनुसूचित जाति–जनजाति के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएं –

1. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर में अन्तर होता है।
2. प्रशिक्षण पश्चात् पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर में सार्थक अन्तर नही होता हैं।
3. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों व अनुसूचित जाति–जनजाति के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर में सार्थक अन्तर नही होता हैं।

अध्ययन विधि – इस अध्ययन के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन में उदयपुर संभाग के प्रतापगढ़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर और उदयपुर जिलों के बी.एड. महाविद्यालयों का यादृच्छिक विधि से चयन कर उनमें अध्ययनरत् 450 पुरूष प्रशिक्षणार्थियों व 450 महिला प्रशिक्षणार्थियों को न्यादर्श के रूप में चुना गया।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण –प्रस्तुत शोध अध्ययन के दत्त संग्रहण हेतु मानकीकृत उपकरण उपलब्ध नही होने से अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर की स्वनिर्मित मापनी का उपयोग किया गया है। इस मापनी में कुल 50 कथन दिये गये हैं जिन्हें 5 खण्डों में बांटा गया हैं।

अध्ययन में प्रयुक्त सांख्यिकी – प्रस्तुत शोध अध्ययन में मध्यमान, मानक विचलन, टी परीक्षण और प्रतिशांक का प्रयोग किया गया हैं।

विश्लेशण एवं विवेचन – प्राप्त आंकड़ों का सारणीयन कर विश्लेषण किया गया –

सारणी–1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

व्याख्या – समग्र बी.एड़. प्रशिक्षणार्थियों की व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का विश्लेशण कर प्राप्त दत्तों का मध्यमान, मानक विचलन व 'टी' मूल्य ज्ञात किया गया। प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् प्रशिक्षणार्थियों का समग्र मध्यमान क्रमश: 128.80 व 231.34 आया। जबकि मानक विचलन क्रमश: 28.23 व 16.85 आया। 'टी' तालिका को 1798 डिग्री स्वतंत्रता के अंश पर क्रमश: .05 व .01 सार्थकता स्तर पर देखा गया। 'टी' का मान 76.39 आया,जो कि 'टी' के सारणी मूल्य से अधिक है अर्थात् अन्तर सार्थक कहा जा सकता है। अत: परिकल्पना सं. 1 को स्वीकृत किया जाता है।

सारणी–2 (अगले पृष्ठ पर देखें)

व्याख्या – पुरूष और महिला बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का विश्लेशण कर प्राप्त दत्तों का मध्यमान, मानक विचलन व 'टी' मूल्य ज्ञात किया गया। बी.एड़. प्रशिक्षण बाद पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों के प्राप्त आँकड़ों का मध्यमान क्रमश: 230.32 व 235.70 आया। जबकि मानक विचलन क्रमश: 6.85 व 6.54 आया। यटी तालिका को 898 डिग्री स्वतंत्रता के अंश पर क्रमश: .05 व .01 सार्थकता स्तर पर देखा गया। 'टी'का मान 9.839 आया, जो कि 'टी' के सारणी मूल्य से अधिक है अर्थात् सार्थक अन्तर कहा जा सकता है। अत: परिकल्पना संख्या 3 को अस्वीकृत किया जाता है।

सारणी–3 (अगले पृष्ठ पर देखें)

व्याख्या – प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों और अनुसूचित जाति–जनजाति के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का विश्लेशण कर प्राप्त दत्तों का मध्यमान, मानक विचलन व 'टी' मूल्य ज्ञात किया गया। बी.एड़. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों और अनुसूचित जाति–जनजाति के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर के प्राप्त आँकड़ों का मध्यमान क्रमश: 238.72 व 224.88 आया। जबकि मानक विचलन क्रमश: 6.17 व 6.54 आया। 'टी' तालिका को 448 डिग्री स्वतंत्रता के अंश पर क्रमश: .05 व .01 सार्थकता स्तर पर देखा गया। 'टी'

* रिसर्च गाइड, मेवाड़ विश्वविद्यालय, गंगरार– चितौड़गढ़ ** शोद्यार्थी (शिक्षा) ,मेवाड़ विश्वविद्यालय, गंगरार– चितौड़गढ़ (राज.) भारत

का मान 9.839 आया, जो कि 'टी' के सारणी मूल्य से अधिक है, अर्थात् सार्थक अन्तर कहा जा सकता है। अत: परिकल्पना संख्या 4 को अस्वीकृत किया जाता है।

निष्कर्ष—

1. बी.एड. प्रशिक्षण पूर्व प्रशिक्षणार्थियों की व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का मध्यमान 128.80 रहा, जबकि प्रशिक्षण पश्चात् यह मध्यमान 231.34 रहा। अत: प्रशिक्षणार्थियों पर प्रशिक्षण के प्रभाव से व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर विकसित होना पाया गया।
2. बी.एड. प्रशिक्षण पश्चात् पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में महिला प्रशिक्षणार्थियों में व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर उच्च पाया गया।
3. बी.एड. प्रशिक्षण पष्चात् अनुसूचित जाति-जनजाति के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में सामान्य वर्ग के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों में व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर उच्च पाया गया।

शैक्षिक निहितार्थ -

1. प्रशिक्षण महाविद्यालयों में योग्य शिक्षकों द्वारा नियमित रूप से अध्ययन कराये जाने से प्रशिक्षणार्थियों में व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का विकास संभव होता है, अत: प्रशिक्षणार्थियों की उपस्थिति को नियमित रखने का प्रयास छात्रहित में होगा।
2. महिला प्रशिक्षणार्थियों को बी.एड. प्रशिक्षण में प्रवेश लेने व अपनी व्यावसायिक वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर को अधिकाधिक विकसित करने का अवसर मिलेगा।
3. महिला प्रशिक्षणार्थियों को अध्यापक शिक्षा के लिए प्रेरणा मिल सकेगी।
4 सामान्य वर्ग के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों को बी.एड. प्रशिक्षण में प्रवेश लेने व अपनी व्यावसायिक वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर को अधिकाधिक विकसित करने का अवसर मिलेगा।

सुझाव -

1. विभिन्न स्तरों पर अध्यनरत छात्र-छात्राओं में व्याप्त व्यावसायिक वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का अध्ययन किया जा सकता है।
2. शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के बी.एड. महाविद्यालयों के प्रशिक्षणार्थियों की व्यावसायिक वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
3. राजकीय व निजी बी.एड. महाविद्यालयों के प्रशिक्षणार्थियों की व्यावसायिक वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
4. बी.एड. प्रशिक्षणाथियों में व्यावसायिक वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर बढ़ाने में योग्यताधारी अध्यापकों व योग्यता अप्राप्त अध्यापकों, की भूमिका पर भी अध्ययन संभव है।
5. बी.एड. प्रशिक्षणाथियों की न्यूनतम व अधिकतम उपस्थिति वाले प्रशिक्षणार्थियों की व्यावसायिक वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भानुप्रतापसिंह- (2007)'प्रारंभिक शिक्षा के भावी शिक्षकों की अध्यापन अभिवृत्तियों, मूल्यों, तथा अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का अध्ययन' (प्राथमिक षिक्षा-अक्टूबर 2007)
2. चौधरी प्यारेलाल,- 'शैक्षिक अनुसंधान' स्वाति पब्लिकेशन,जयपुर.
3. माहेष्वरी के. के.(2004)- 'माध्यमिकविद्यालयों के शिक्षकों में व्यावसायिक प्रतिबद्धता की मात्रा व अन्तर का अध्ययन' (एम.एड.लघु शोध प्रबंध एम.डी.एस.अजमेर/शिक्षा चिंतन सितमबर 2011)
4. डॉ. पी.एस.त्यागी-'अनुदानित तथा गैर अनुदानित माध्यमिक विधालयों के शिक्षकों में दायित्वबोध का तुलनात्मक अध्ययान' (शिक्षा चिंतन, अंक-24, अक्टूबर-दिसम्बर 2007 पृष्ठ संख्या-8 से 11)
5. डॉ. शशिकांत त्रिपाठी - 'उच्च शिक्षण स्तर के शिक्षकों में दायित्वबोध का तुलनात्मक अध्ययान' (शिक्षा चिंतन, अंक-14, अप्रैल-जून 2005 पृष्ठ संख्या-17 से 22)
6. डॉ. विष्णु कुमार-'छात्राध्यापकों का अध्यापन के प्रति आत्मबोध का अध्ययान' शिक्षा चिंतन, अंक-24, अक्टूबर-दिसम्बर 2007 पृष्ठ संख्या-16 से 20)
7 journal of Indian education,NCERT Delhi, November-2010
8. शिविरा पत्रिका- राजस्थान, माध्यमिक शिक्षा विभाग, बीकानेर (मार्च-1986)

सारणी- 1: बी.एड. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् समग्र प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर (मध्यमान,मानक विचलन,टी मूल्य) की तुलनात्मक सारणी-

क्र.सं.	क्षेत्र	न्यादर्श बी.एड़. प्रशिक्षणार्थी (N=1800)				'टी' मूल्य	.05 व .01 स्तर परसार्थक (निष्कर्ष)
		प्रशिक्षण पूर्व बी.एड़. प्रशिक्षणार्थी (N=900)		प्रशिक्षण पश्चात् बी.एड़. प्रशिक्षणार्थी (N=900)			
		मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन		
1.	विद्यार्थियों के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	25.80	12.88	44.06	3.90	33.23	अन्तर सार्थक है
2.	समाज के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	27.60	12.57	46.06	3.88	34.37	अन्तर सार्थक है
3.	शिक्षण के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	24.80	12.61	46.82	2.81	41.74	अन्तर सार्थक है
4.	मानवीय मूल्यों के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	26.90	12.85	47.46	2.03	38.71	अन्तर सार्थक है
5.	श्रेष्ठता हासिल करने के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	23.70	12.90	46.94	2.43	43.36	अन्तर सार्थक है
6.	योग	128.80	28.23	231.34	16.85	76.39	अन्तर सार्थक है

- स्वतंत्रता के अंश **(df=1798°)** पर

0.05 स्तर पर सारणीमान - 1.96

0-01 स्तर पर सारणीमान - 2.58

सारणी- 2 : प्रशिक्षण पश्चात् पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर (मध्यमान, मानक-विचलन, टी मूल्य) की तुलनात्मक सारणी-

क्र.सं.	क्षेत्र	न्यादर्श बी.एड़. प्रशिक्षणार्थी (N=900)				'टी' मूल्य	.05 व .01 स्तर परसार्थक (निष्कर्ष)
		बी.एड़. पुरूष प्रशिक्षणार्थी (N=450)		बी.एड़. महिला प्रशिक्षणार्थी (N=450)			
		मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन		
1.	विद्यार्थियों के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	43.24	2.42	45.78	1.72	14.810	अन्तर सार्थक है
2.	समाज के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	45.56	2.53	47.34	1.91	9.725	अन्तर सार्थक है
3.	शिक्षण के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	46.88	2.50	48.24	1.63	7.892	अन्तर सार्थक है
4.	मानवीय मूल्यों के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	46.48	2.96	47.54	2.25	4.937	अन्तर सार्थक है
5.	श्रेष्ठता हासिल करने के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	48.16	1.68	46.80	2.76	7.290	अन्तर सार्थक है
6.	योग	230.32	6.85	235.70	6.54	9.839	अन्तर सार्थक है

- स्वतंत्रता के अंश **(df=898°)** पर

0.05 स्तर पर सारणीमान - 1.96

0.01 स्तर पर सारणीमान - 2.59

सारणी- 3 प्रषिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के पुरूष एवं अनुसूचित जाति-जनजाति वर्ग के पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर (मध्यमान, मानक-विचलन, टी मूल्य) की तुलनात्मक सारणी-

क्र.सं.	क्षेत्र	न्यादर्श बी.एड़. प्रशिक्षणार्थी (N=450)				'टी' मूल्य	.05 व .01 स्तर परसार्थक (निष्कर्ष)
		सामान्य वर्ग के पुरूष . प्रशिक्षणार्थी (N=225)		अनुसूचित जाति- जनजाति के पुरूष प्रशिक्षणार्थी (N=225)			
		मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमान	मानक विचलन		
1.	विद्यार्थियों के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	46.12	1.84	44.60	3.90	4.984	अन्तर सार्थक है
2.	समाज के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	46.68	2.06	45.78	1.72	4.742	अन्तर सार्थक है
3.	शिक्षण के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	47.80	1.95	43.50	2.89	17.442	अन्तर सार्थक है
4.	मानवीय मूल्यों के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	49.28	0.52	45.20	2.89	19.649	अन्तर सार्थक है
5.	श्रेष्ठता हासिल करने के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण	48.84	1.46	45.80	3.39	11.647	अन्तर सार्थक है
6.	योग	238.72	6.17	224.88	6.54	9.839	अन्तर सार्थक है

- स्वतंत्रता के अंश **(df=448°)** पर

0.05 स्तर पर सारणीमान - 1.97

0.01 स्तर पर सारणीमान - 2.59

गोधनं राष्ट्रवर्धनम्

डॉ. नितिन सहारिया * डॉ. उमाशंकर पटेल **

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति के पॉच आधार स्तंभ है, गौ, गंगा, गीता, गायत्री, और गुरू। ये पॉचों चीजें हमारे तन मन में बसी हैं जिस प्रकार वैज्ञानिको ने सृष्टि के रहस्यो को खोज कर आधुनिक पदार्थ विज्ञान का विकास किया है, उसी प्रकार भारतवर्ष के ऋषियो–मनीषियों ने जीवन और सृष्टि दोनों के रहस्यो को खोज कर 'गो विज्ञान' का विकास किया है। वस्तुत: गो विज्ञान सारी दुनिया को भारत की देन है। भारतीय मनीषियो ने संपूर्ण गौवंश को मानव के अस्तित्व, रक्षण , पोषण, विकास और संवर्धन के लिए अनिवार्य बना दिया था। 'गौ दुग्ध' ने जन समाज को विशिष्ट शक्ति, बल व सात्विक बुद्धि प्रदान की है। गोबर–गौ मूत्र ने खेती को पोषण दिया, बैल भर्जा ने कृषि, भारवाहन, परिवहन, तथा ग्रामोद्योग के लिए संपूर्ण टेक्नोलॉजी विकसित करने में मद्द की और मृत चर्म ने चर्मोद्योग सहित अनेक हस्त उद्योग का विकास किया है। इसलिए गौ सेवा व गोचर भारतीय जीवन शैली व अर्थव्यवस्था के सदैव केन्द्र बिन्दु रहे हैं। गॉव प्रधान व कृषि प्रधान जैसी विशिष्टाओं वाले अपने राष्ट्र के लिए इसका कोई विकल्प नही है।

भारत कृषि प्रधान तो है ही, ऋषि प्रधान भी है। कृषि प्रकृति के संतुलन के लिए वही करती है जो ऋषि समाज के लिए। भारत की मूल संपदा उसकी ऋषि प्रदत्त आध्यात्मिक जीवन शैली है। वैदिक संस्कृति– ऋषि संस्कृति का प्रतीक ही ग्रामीण संस्कृति है। ग्रामीण संस्कृति न केवल भौतिक वादी संस्कृति की निरोधक है बल्कि आध्यात्मिक उन्नयन का भी द्योतक है। इतिहास में झॉकने पर पता चलता है कि जो संस्कृतियॉ भोग वादी और अनैतिक रही हैं, उनका नामो निशान मिट गया। भारतीय संस्कृति चिरंजीवी इसलिए रही , क्योंकि यह ग्रामीण संस्कृति है। इसके उत्थान में ही राष्ट्र का उत्थान व कल्याण है। परन्तु दुर्भाग्य से मानव स्वार्थ पर आधारित भोग परायण मनोवृत्ति ने शहरों मे अंधाधुन्ध बढ़ोत्तरी की पर पर्यावरण–संतुलन को बिगाड़ दिया। अपने सुख साधनो को बढ़ाने के चक्कर मे गॉवों को तो उजाड़ फेंका, पर साथ ही परिस्थितिकी संतुलन भी नष्ट हो गया । हम भूल गए कि प्रगति तो समग्रता मे है । विचारशील व बुद्धिमान मनुष्य ने अपने स्वार्थयुक्त बुद्धि व विकृत संकीर्ण मानसिकता से वनस्पति जगत, प्राणिमात्र ही नही संपूर्ण मानवीय अस्तित्व को ही संकट में डाल दिया है ।

हमारे प्राचीन ग्रंथ गौ महिमा से भरे पड़े है। गौ माता सर्वोपरि श्रद्धा का केन्द्र तथा भारतीय संस्कृति की आधारशिला है। वस्तुत: गौ माता सर्वदेवमयी है। अथर्ववेद में उसे रूद्रों की माता, वसुओं की दुहिता, आदित्यो की स्वसा और अमृत की नाभि संज्ञा से विभूषित किया गया है। शास्त्रो के अनुसार गौ मे 33 करोड़ देवताओं का वास है। उसकी पीठ मे ब्रम्हा ,गले मे विष्णु और मुख मे रूद्र आदि देवताओ का निवास है। यथा –

सर्वेदेवा: स्थिता देहे सर्वदेवमयी हि गौ:,
पृष्ठे ब्रम्हा, गले विश्णु, मुखे रूद्र: प्रतिष्ठित:।।

महाभारतकार ने गौ स्तुति करते हुए लिखा है कि –

गावो लक्ष्म्या: सदा मूले गोशू पाप्मा न विद्यते,
मातर: सर्वभूतानां गाव: सर्व सुख प्रदा।।

गौऍ सर्वश्रेष्ठ, पूज्यनीय, पवित्र और संसार भर मे उत्तम है। इनके घी, दुध, दही और गव्य के बिना संसार मे यज्ञ संपन्न नही होते। गौ में सदैव लक्ष्मी निवास करती है। गौ जहॉ रहती है। वहॉ पाप निवास नही करते, ये प्राणी मात्र को सुख–संपदा से विभूषित करती रहती है। गाये को संपूर्ण प्राणियो की माता तथा

'धनं च गौधनं धान्यं स्वर्णादयो वृधैव हि'।।

ही बताकर गौवंश को अर्थशास्त्र का मूलाधार निश्चित किया है महाभारतकार ने यह भी कहा है कि – 'गोधनं राष्ट्रवर्धनम्' प्राचीन काल में जिसके पास जितनी अधिक गायें होती थी, वह उतना ही अधिक धनी माना जाता था। गोपाल चम्पू में उल्लेख है कि नंदबाबा के पास नौ लाख गाये थी। मत्स्यराज विराट के पास साठ हजार गाये थी। गाय विश्व की माता है – 'गावो विश्वस्य मातर: ' सूर्य, वरूण, वायु आदि देवताओ को यज्ञ, होम में दी गई आहूति से जो खुराक, पुष्टि मिलती है, वह गाय के घी से ही मिलती है। होम मे गाय के घी की आहूति दी जाती है, जिससे सूर्य की किरणें पुष्ट होती है। किरणें पुष्ट होने से वर्षा होती है और वर्षा से सभी प्रकार के अन्न, पौधे, घास आदि पैदा होते है, जिनसे संपूर्ण प्राणी जगत् का पोषण होता है।

गाय स्वर्ग और मोक्ष की सीढ़ी है। गायें स्वर्ग मे भी पूज्यनीय है। यह परम् पावन और सबकी कामना पूर्ण करने वाली मंगलदायिनी होती है। गौ माता की सेवा से पुरूषार्थ चतुष्टय(धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति होती है, गौ सेवा से मनुष्य के अगणित कुलो का उद्धार और उनकी यम यातना से मुक्ति होती है। गौ भक्त के लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है। गो भक्त जिस–जिस वस्तु की इच्छा करता है वह सब उसे प्राप्त होती है। स्त्रियो में भी जो गौओं की भक्त है। वे मनोवांछित कामनाए प्राप्त कर लेती है। पुत्रार्थी मनुष्य पुत्र पाता है और कन्यार्थी कन्या। धन चाहने वाले को धन और धर्म चाहने वाले को धर्म प्राप्त होता है। विद्यार्थी विद्या पाता है और सुखार्थी सुख। ऐसा महाभारत के अनु0 83/50–52 मे उल्लेख मिलता है।

गौ दुग्धं का पान कर भगवान कृष्ण ने गीतामृत का संदेश दिया – 'दुग्धं गीतामृतं महत' । रघुवंश भी गाय की सेवा से ही चला था, जिसमें भगवान राम का जन्म हुआ था। गो पालन, गो सेवा, गोदान, हमारी संस्कृति की महान परंपरा रही है। गौ सेवा सुख और समृद्धि का मार्ग प्रशस्त करती है। गौ सर्वदेवमयी और सर्वतीर्थमयी है। गौ दर्शन से समस्त तीर्थो का पुण्य लाभ प्राप्त होता है । गौ के रोम रोम से सात्विक विकिरण विसरित होता है। सच्ची गौ सेवा से तो ब्रम्ह ज्ञान तथा भगवत प्राप्ति भी सहज हो जाती है। एक नई शोध मे पिछले दिनों ताईवान के इलान विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक बेइंजगचेन ने

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय कोतमा, जिला–अनूपपुर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, शासकीय नर्मदा महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

देशी भारतीय गाय के दूध में उपस्थित एक विशेष प्रोटीन लैक्टोफेरीसिन, बी-25 (एल0एफ0सिन0) को मनुष्य के पेट के कैंसर से लड़ने में सक्षम बताया है। अपने अध्ययन मे उन्होने पाया कि पेट की कोशिका मे घुसकर एल0एफ0सिन0 ने कैंसर कोशिका को 24 घंटे मे ही निष्क्रिय कर दिया। अत: इस नई शोध से भारत सहित एशिया के पेट के कैंसर से प्रभावित लोगो को अधिक लाभ मिलने की संभावना है। अध्ययन में उन्होने पाया कि पेट की कोशिका मे घुसकर एल0एफ0सिन0 ने कैंसर कोशिका को 24 घंटे में ही निष्क्रिय कर दिया। अत: इस नई शोध से भारत सहित एशिया के पेट के कैंसर से प्रभावित लोगो को अधिक लाभ मिलने की संभावना है।

महाराष्ट्र स्थित प्राचीन कृषि इतिहास न्यास ने 1996 में वृक्ष आयुर्वेद नामक ग्रंथ को अंग्रेजी मे अनुवाद में प्रस्तुत किया। संस्कृत भाषा में लिखे इस बहुमूल्य भारतीय ग्रंथ की एक मात्र प्रति इंग्लैड के बोडलियन पुस्तकालय की शोभा बढ़ा रही है। इसमे कई ऐसी पद्धतिओ को उल्लेख है जैसे - कपास के पेड़ो से अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए उन पर दही का छिड़काव। इस क्रिया से इल्ली जैसे कीटो पर अंकुश भी लगता है। जातक कथाओ में आम की अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए गौ दुग्ध से सिंचाई का उल्लेख मिलता है। मुगल बादशाह अकबर के एक दरबारी कवि अबुल फजल ने भी अपने ग्रंथ आइने अकबरी में आम के पेड़ की सिचाई गौ दुग्ध से करने का उल्लेख किया है। वाराणसी के इंपीरियल बैक (वर्तमान स्टेट बैक आफ इंडिया) के परिसर मे स्थित लंगड़ा आम का बाग अत्यन्त प्रसिद्ध है, इसके विषय मे कई बार यह सुनने को मिला है कि किसी जमाने में इन पेड़ो की सिंचाई गाय के दूध से की गई थी। इसलिए इस बाग के आम इतने स्वादिष्ट होते है।

एक दो गाय एक परिवार की परिवरिश कर सकती है। एक गाय के गोबर, गोमूत्र एवं गो दुग्ध का समुचित उपयोग करने पर इतनी आय हो सकती है कि एक परिवार की परिवरिश हो सके। पंचगव्य से 108 रोगों का सफल, सरल, इलाज होता है गाय के दूध का सेवन करने से बुद्धि तीक्ष्ण होती है। क्योंकि गाय के दूध मे 'मेधा' तत्व पाया जाता है गाय के दूध का सेवन करने से कोलोस्ट्राल की वृद्धि नही होती क्यो कि उसमें विद्यमान ओरोटिक अम्ल उसे कम कर नियंत्रित रखता है। रात्रि विश्राम के पूर्व गाय के दूध का सेवन रक्त निर्माण के साथ विषैले तत्वो को निष्क्रिय करता है। गाय का घी स्वास्थय वर्धक, बुद्धि, एवं स्मरण शक्ति को शक्ति बढ़ाने वाला और ऑखो के लिए हितकारक होता है। गाय का घी जितना पुराना होता है, उसी स्तर पर उसकी औषधीय उपचार क्षमता में वृद्धि होती है। ज्वर जनित ताप में गाय के पुराने घी की मालिश लाभदायक होती है। भारतीय देशी गाय का घी थोड़ी मात्रा मे जलते हुए कंडे पर डालने पर भारी मात्रा में आक्सीजन का प्रसारण करता है। इसी कारण हमारे प्राचीन वैज्ञानिक पूर्वजो (ऋषि-मुनियों) ने पर्यावरण को स्वच्छ बनाये रखने हेतु 'यज्ञ विज्ञान' (हवन यज्ञ प्रौद्योगिकी) का विकास किया था।

भारतीय गाय औसतन 15 बछड़े/ बछियों को जन्म देती है, लेकिन विदेशी गाय मात्र 10 बार बच्चों को जन्म देती है, अर्थात भारतीय गोधन की उम्र ज्यादा है, और उसका दुग्ध उत्पादन काल लंबा है। भारतीय गायों मे वसा की मात्रा 6.02 से 7.86 प्रतिशत तथा विदेशी गाय मे 3.5 से 4.5 तक पाई जाती है।

गो रक्षा से बढ़कर कोई धर्म नहीं, गो हत्या से बढ़कर कोई पाप नहीं। सत्य सनातन हिन्दू धर्म दया, प्रेम, भ्रातत्व, मानवता और प्राणी मात्र के प्रति स्नेह-सद्व्यवहार सिखाने वाला धर्म है। इसके सभी देवता दयालू, सहृदय, उदार, करूणा और सहायता करने वाले है। फिर वे पशु पक्षियो का खून पीकर प्रसन्न हों, यह कैसे संभव है ? हमारे धर्म ग्रंथो में इस कुकर्म का कहीं समर्थन नहीं है। देवता हमेशा सत्कर्म से प्रसन्न होते हैं और कुकर्मो से अप्रसन्न। जो कुकर्म से हत्या जैसे महान पाप से प्रसन्न हो, वह देवता ही नहीं मानें जा सकते। देवता लोग कुकर्म करने वाले से रूष्ट रहते हैं। और ऐसे मनुष्यो को वरदान देना तो दूर उल्टे हानि एवं दंड की व्यवस्था करते हैं। देवी भगवान की दिव्य शक्ति का नाम है। जब मनुष्य योनि की साधारण स्त्रियॉ अपने बच्चे को प्राण के समान प्यार करती है। उन्हें तनिक सा कष्ट होने पर व्याकुल हो जाती है। तो फिर उस दिव्य माता का-देवी काली की करूणा का तो ठिकाना ही क्या है, इसके अंत:करण से निरंतर स्नेह और वात्सल्य की धारा बहती रहती है। वे मनुष्यो की ही नहीं, पशु-पक्षियो की भी माता है।

चार्वाक सम्प्रदाय के ग्रंथ में उल्लेख आता है कि -

देवोपहार व्याजेन यज्ञा व्याजेन चैथच,
हन्ति जन्तूनगत घृणा घोरां ते यन्ति दुर्गतिम।।

अर्थात- जो लोग देवता पर चढ़ावे या यज्ञ के बहाने पशुओ को मारते है, वह निर्दयी, घोर दुर्गति को प्राप्त होते है।

ऋग्वेद 1/114/8 मे पशु बलि को निषेध करते हुए उल्लेख आता है कि -

'मा नो गोशु मा नो अश्श्रेशु रीरिश:'

अर्थात- हमारी गायों और घोड़ो को मत मार।

महाभारत शांति पर्व, अ0 265 मे पशु बलि के संबंध मे कहा गया है कि-

सुरां मत्स्यान्याधु मांस मासवं कृसरौद्गणम्,
.....यज्ञियाश्चैव ये वृक्षा वेदेशु परिकल्पिता।

अर्थात- सुरा, मत्स्य, शराब, मांस आसव आदि सब ब्यौहार धूर्तो का चलाया हुआ है। उसका वेदों में कोई प्रमाण नहीं है। मान, मोह, योग और जिह्य की लोलुपत्ता के कारण यह बनाया गया है।

विष्णु पुराण 1/7 मे हिंसा जनित अधर्म के परिवार का वर्णन करते हुए उल्लेख आता है कि 'हिंसा भार्या त्वधर्मस्य .....
मृत्योव्याधि जरा षोक तृश्णा क्रोधास्च जज्ञिरे'

अर्थात- अधर्म की पत्नी हिंसा है। इन दोनों के द्वारा असत्य और दुष्कर्म उत्पन्न होते है। फिर उनकी संताने भय, नरक, माया, और वेदना जन्मती है। इनका वंश आगे बढ़ता है तो मृत्यु, दुख, व्याधि , जरा , शोक तृष्णा और क्रोध जैसे क्लेश कारक दुष्परिणाम सामने आ जाते है।

कुरान शरीफ पारा 14 रूकवा 7-15 मे पशु निषेध का उल्लेख करते हुए वर्णन आता है कि - 'अकरमुल बकर फाइनाहा सैयदूल बहाइसॉ'

अर्थात-गाय की इज्जत करो क्यो कि वह चौपायो का सरदार है। गाय का दूध, घी, और मक्खन (शिफा) अमृत है। गोस्त बीमारियों का कारण है।

ईसाई हयाद 66-3 मे वर्णत आता है कि - ' तू किसी को मत मार। तू मेरे समीप पवित्र मनुष्य बनकर रह एक बैल या गाय को मारना एक मनुष्य के कत्ल के समान है।'

महर्षि दयानंद सरस्वती (आर्य समाज) गौ के संदर्भ मे उल्लेख करते है कि - ' गाय की हत्या करके एक समय मे 20 व्यक्तियों को भोजन कराया जा सकता है। जबकि वही गाय अपने पूरे जीवन काल मे कम से कम 20 हजार लोगो को अमृत तुल्य दूध से तृप्ति प्रदान कर सकती है।'

1857 का प्रथम स्वातंत्र्य समर गौमाता की हत्या से उत्पन्न आक्रोश का ही परिणाम था। भारत वर्ष के प्राचीन ऋषियों ने उद्घोष करते हुए कहा कि - गौ हत्या भूकंप की जननी है। इसी तथ्य को दिल्ली यूनिवर्सिटी के

प्राख्यात वैज्ञानिक डॉ. मदन मोहन बजाज ने अपने शोध पत्र 'विष प्रभाव 'में सिद्ध कर दिखाया। यह शोध पत्र जून 1995 में मास्को के सूज डल नामक शहर में एक अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलन मे प्रस्तुत किया गया है। विष प्रभाव वस्तुत: विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक आंईस्टीन की खोज 'दर्द तरंगे' (आंइस्टीन पैन वेव्स) के प्रभाव को रेखांकित करता है। वैज्ञानिको के अनुसार पृथ्वी पर तीन प्रकार की तरंगे चलती है। 1. प्राथमिक तरंगे 2. द्धितीय तरंगे 3. तलीय तरंगे। प्राथमिक व द्धितीय ये दोनों ही तरंगे जीवो की हत्याओं के समय उत्पन्न दारूण वेदना (आह) से नि:सृत होती है। लगातार प्राणियो का वध होने से इस प्रकार की तरंगे उत्पन्न और संकलित (डेन्सीफाई) होती रहती है और जब इन तरंगो की ऊर्जा शक्ति विस्फोटक स्थिति तक बढ़ जाती है तो पृथ्वी में कंपन उत्पन्न होता है। जिसे हम भूकंप के नाम से जानते है। इस शोध से यह सिद्ध किया गया है कि जब बड़े पैमाने पर जीवों की हत्याएँ की जाती है मनुष्य की हो या पशु की उनकी वेदना से वही ई0पी0 तरंगे उत्पन्न होती है। इन तरंगो की जबरदस्त शक्ति से पृथ्वी कॉप उठती है।

भारतवर्ष में वर्तमान में छतीस सौ से अधिक सरकार द्धारा स्वीकृत कत्ल खाने है। जिनमें 10 बड़े यांत्रिक (मशीन युक्त) कारखाने है। जिनमे प्रतिदिन दो लाख पचास हजार पशुधन कटता है। पचास हजार के लगभग गौ वंश कटता है। इनमे 'अलकवीर' हैदराबाद प्राईवेट सेक्टर तथा देवनाथ कत्ल खाना मुम्बई महाराष्ट्र सार्वजनिक सेक्टर के महत्वपूर्ण कत्ल खाने है। इनमे सबसे बड़ा अलकवीर कत्ल खाना हैदराबाद के जिला मेढ़क में स्थित है। दुबई के गुलाम मो0 शेख ने भारत सरकार की 400 करोड़ की सहायता से स्थापित किया है। जो 300 एकड़ भूमि पर फैला हुआ है तथा प्रतिदिन जिसमे साठ हजार के लगभग गौवंश निर्ममता पूर्वक काटा जाता है।

पशु बलि हिन्दू धर्म एवं विश्व मानवता पर एक कलंक है। विश्व मानवता को यदि वर्तमान संकट से बचाना है तो फिर गॉवों की ओर लौट चलें। गौ सेवा को प्रारंभ करे। प्रकृति हमारी स्नेहमयी जननी है, उसी के ऑचल की छॉव मे हम पल, बढ़ सकते है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक आंईस्टीन ने सावधान करते हुए कहा था कि – 'यह वैज्ञानिक विकास तो ठीक है, परन्तु इसे प्रकृति विरोधी नहीं बनना चाहिए।' आज परिस्थितियों ने इस मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया है कि ग्राम्य जीवन को पुर्नजीवित करने, उसका नवोत्थान करने के अलावा और कोई तरीका शेष नहीं बचा है। संयम और सादगी से ओत प्रोत ग्रामीण संस्कृति ही मानव को उसके वर्तमान अंधेरे से निकाल कर उज्जवल भविष्य की डगर पर चला सकती है। अब विश्व भर के विचारशील, वैज्ञानिक, मनीषि अपनी मानसिक संकीर्णता पर पछतावा करने लगे है। उन्हें भी इस सत्य का एहसास हो चला है कि विश्व केवल मनुष्य के लिए ही नहीं है, इसमे मानव मानवेत्तर प्राणी, पशु पक्षी, पेड़-पौधे, एवं पृथ्वी, वायु प्रकाश, आकाश आदि सभी का समायोजन है। अत: कल की दुनियॉ शहरो की नहीं गॉवों की होगी। गौ प्रधान अर्थव्यवस्था होगी।

यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि सत्कर्म से ही सुख मिलता है और दुष्कर्म करने वाले दंड, हानि, नरक और दुगर्ति के भागी बनते है। भगवान के इस अमिट विधान में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। अन्याय करना पाप है, साथ ही अन्याय सहना भी। पशु बली कुछ लोग करे और शेष लोग चुपचाप देखें, उसके विरूद्ध ना कुछ कहे ना कुछ करें, यह सब प्रकार से अशोभनीय है। ईश्वर प्रदत्त वाणी, शक्ति, दया, करूणा का उपयोग अन्याय को रोकने, अधर्म का प्रतिकार करने और दुर्बलो का पक्ष लेने में करना आज का सबसे बड़ा युग धर्म है। पशु बलि भारी भ्रम है, भारी पाप है। जिसका फल दुख और दंड के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। इससे स्वयं बचने और दूसरो को बचाने का प्रयत्न करना प्रत्येक विचारशील एवं मानवता वादी धर्म प्रेमी का परम कर्तव्य है। अहिंसा परम धर्म है।

देश में ये कैसी विडंबना है कि आजादी के 67 वर्ष बाद भी इस गोपाल के देश में हम गौ हत्या बंद नही करा सके। जरा सोचे – ' देश मिटेगा तो बचेगा क्या, देश बचेगा तो मिटेगा क्या।' गौ रक्षा करना हमारा राष्ट्र धर्म है। मनु भगवान ने भी अहिंसा को ही सब कर्मो में श्रेष्ठ बतलाया है। महामना मदन मोहन मालवीय जी के विचार मे – ' गौ वंश की रक्षा मे देश की रक्षा समाई हुई है।' महात्मा गॉधी के अनुसार – ' भारत की सुख-समृद्धि गौ के साथ जुड़ी हुई है।' यदि गौ वध हम लोग बंद ना करे तो आने वाली पीढ़ी को हवा , पानी और भोजन दुर्लभ हो जायेगा। यदि राष्ट्र प्रेमियो ने सार्थक प्रयास नहीं किए, तो भविष्य में गाय के चित्र ही देखने को मिलेगें। भविष्य में लोग अपने आर्ष ग्रंथो में गौ माता की उपयोगिता पढ़ेगें और गाय को अपने बीच नहीं पायेगें, तो वर्तमान पीढ़ी को बार बार कोसेगें कि कैसे लोग थे, जो अपनी माता की रक्षा नहीं कर सके। गोपाल, गोविन्द के मंदिर बनाकर मूर्तियो को पूजते रहे लेकिन उस गोपाल की प्यारी गाय की रक्षा नहीं कर सके। 'दूध भैस का पीना, जय गाय की बोलना' ऐसे दोहरे व्यक्तित्व से बचना चाहिए अत: इस कलंक से बचने हेतु हमें संकल्प करना चाहिए।

आज स्थूल पर्यावरण एवं सूक्ष्म मानव संवेदना दोनों के संरक्षण एवं विकास के लिए गोपाल वृत्ति आवश्यक हो गई है। हम गोपाल के गूढ़ महत्व को भूल गये है। स्वावलंबी 'महान भारत' की स्थापना के लिए महाभारत रचाने वाले योगेश्वर श्रीकृष्ण के सूत्रो मे ही स्वावलंबी ग्राम्य अर्थव्यवस्था का समाधान छिपा है, उसी को अपना कर हम अपने गॉवो व देश को खुशहाल बना सकते है। अत: आवश्यकता आज इस बात की है कि जन मानस,गो दुग्ध, व गो पालन की महत्ता को गहराई से समझें, गो पालन के वर्तमान दृष्टिकोण में परिवर्तन आये। अत: दूध एवं मांस बेचने की अपेक्षा उसके बिना ही पशु धन – गो धन की उपयोगिता गोबर-गौ मूत्र के आधार पर सिद्ध हो, गौ रक्षा व गो संवर्धन के व्यवहारिक सूत्रों का उपयोग कर समाज व राष्ट्र के भविष्य को उज्जवल बनायें। अत: राष्ट्र जागरण के नव अभियान मे समाज के प्राणवान, बुद्धिजीवी, कर्तव्य परायण, धर्मप्रेमीजनों को अवश्य ही जुड़कर अपने युग धर्म, मानव धर्म, राष्ट्र धर्म का निर्वाह करना ही होगा।

औरों के हित जो जीता है, औरों के हित जो मरता है।
उसका हर ऑसू रामायण, प्रत्येक कर्म ही गीता है।।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राष्ट्र के अर्थतंत्र का मेरूदंड गौशाला – श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट शांतीकुन्ज हरिद्धार (उत्तरान्चल), 2002
2. पशुबलि हिन्दू धर्म एवं मानव-सभ्यता पर एक कलंक – पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य, प्रकाशक-युग निर्माण योजना मथुरा (उ0प्र0), 2006।
3. सर्वरोग हारी गौ मूत्र चिकित्सा – डा0 एस0एल0 पार्टीदार, गायत्री शक्ति पीठ एम0पी0 नगर भोपाल, 2003।
4. शास्वत हिन्दू गर्जना – विश्व संवाद केन्द्र, महाकौशल न्यास जबलपुर, अप्रैल 2004।
5. गाव: सर्वसुखप्रदा: – युग निर्माण योजना मथुरा (उ0प्र0) 2004।
6. सेवा प्रेरणा – पत्रिका, जन 2014, संपादक – राजेन्द्र शर्मा, एम0 214 गौतम नगर, गोविन्दपुरा, भोपाल।

****

छिन्दवाडा जिले में आदिवासी विकास परियोजनाओं के आर्थिक एवं सामाजिक प्रभाव का विश्लेषण

डॉ. आलोक यादव *

प्रस्तावना – आदिवासी संस्कृति अर्वाचीन एवं मौलिक है उनकी सामाजिक, आर्थिक.नैतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियॉ अपने आप में अद्धितीय है। मध्य प्रदेश आदिवासी बाहुल्य प्रदेश है। यहाँ का विकास आदिवासी समाज के विकास पर निर्भर है। आदिवासी कल्याण के लिये राज्य शासन अनेकों योजनाओं में आदिवासी उपयोजना को स्वीकार कर योजना बजट में वृद्धि की गई है। वर्तमान में तीव्रगामी आर्थिक विकास के लिये उपयोजना कार्यक्रम व्यापक स्तर पर चलाया जा रहा है। जिसके अन्तर्गत छिन्दवाड़ा जिले में एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना तामिया एवं सौंसर दो वृहद् श्रेणी की परियोजनायें क्रियान्वित है। इन परियोजनाओं की कार्य प्रणाली द्वारा नीतियों एवं निर्णयों के फलस्वरूप जहाँ एक ओर इनके कल्याण, विकास एवं संरक्षण के लिये अनुकूल वातावरण का विकास हुआ है, वही दूसरी ओर विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन को नई दिशा मिली है।

आदिवासी क्षेत्रों की विशेषता है उनका अलगाव, उनकी आर्थिक गतिविधियोंका धीमा संपादन और एक स्वयंपूर्ण सामाजिक संरचना। उनके अलगाव के लिये वहाँ की कठिन भौगोलिक स्थिति ही जिम्मेदार है। इन भौगोलिक अवरोधों ने आदिवासियों को अब तक संरक्षण दिया है और उन्हें अपनी महत्ता कायम रखने में सहायता की है।

उद्देश्य – राज्य का विकास आदिवासी समाज के विकास पर निर्भर है अर्न्तवर्गीय असमानतायें दूर करना विकास परियोजनाओं का प्रमुख उद्देश्य है एक ओर शिक्षा एवं व्यवहारिक स्वार्थ के अभाव में रूढ़िवादी विचारधारा का पूरा-पूरा असर पाया जाता है । छिन्दवाड़ा जिले में आदिवासियों का लक्ष्य अल्पकालीन आवश्यकता की पूर्ति तक ही सीमित रहता है इसलिये उनमें आर्थिक सम्पन्नता के लिये प्रतिस्पर्धा की भावना नहीं पायी जाती है । समाज के सदस्यों को साथ-साथ लेकर चलना आदिवासी जीवन की सबसे बड़ी विशेषता है।सबसे बड़ी समस्या आदिवासी समाज को नये आर्थिक दृष्टिकोण की ओर जागरूक बनाने की है। उन्हें आर्थिक प्रतिस्पर्धा की ओर मोड़ना है। जिससे वे अपना हित ठीक से समझे और पोषक तत्वों को प्रभावहीन कर सकें ।

परिकल्पना – शासन द्वारा क्रियान्वित विभिन्न विकास कार्यक्रमों से आदिवासियों को अपेक्षा अनुसार काम नहीं मिल रहा, साथ ही शोषण के शिकार बने हुए हैं। इन परिस्थितियों में आदिवासी विकास की ब्यूह रचना और कार्यक्रम इस प्रकार तैयार किये जाने चाहिए, जिससे वे मुख्य धारा से जुड़ सके। इसमें शासकीय नीति का पक्ष सुनियोजित होना चाहिए।प्रशासकीय क्षेत्र कार्यकत्ताओं में अपने जीवन मूल्यों, आदर्शों, सिद्धान्तों और सेवा-भावना का उन्नयन आवश्यक है, तभी कार्यक्रमों की प्रशासनिक कठिनाईयाँ समाप्त हो सकेंगी। इसके अतिरिक्त व्यवहारिक दृष्टिकोण भी अपनाना अत्यन्त आवश्यक होगा। जिससे क्षेत्र के आदिवासी लाभान्वित हो सकेंगें उपर्युक्त विचार सामान्यीकरण के पक्ष में है, जिसका परीक्षण अन्तिम निष्कर्ष के आधार पर होगा ।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र में आदिवासी विकास परियोजनाओं का मूल्यांकन आदिवासियों के आर्थिक सामाजिक विकास के परिपेक्ष्य में किया गया है । इस अध्ययन के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया है कि जिले ही नही वरन् सम्पूर्ण प्रदेश में आदिवासियों के विकास हेतु संचालित विभिन्न योजनाओं से उनकी वास्तविक स्थिति में या गुणात्मक परिवर्तन आये है। इसका अध्ययन सर्वेक्षण कार्य के माध्यम से किया गया है। सर्वेक्षण में प्राप्त तथ्यों का मिलान द्वितीयक समंको से भी किया गया।इस विषय पर आदिवासी विकास से सम्बंध रखने वाले अधिकारियों, शिक्षकों, राजनीतिज्ञों, समाजसेवकों, चिकित्सकों एवं वरिष्ठ महिलाओं से चर्चा की गई। इसहेतु जिले के आदिवासी विकास खण्ड तामिया, जुन्नारदेव, हर्रई एवं बिछुआ को चुना गया है। जहाँ प्रश्नावलियों के माध्यम से सर्वेक्षण कार्य पूर्ण किया गया।

जिले में आदिवासी विकास परियोजनाओ से लाभान्वितो की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति का अध्ययन – किसी भी विकास परियोजना कार्यक्रम की सफलता या विफलता के लिये आवश्यक होता है कि उसका क्रियान्वयन समुचित तरीके से किया जाये। जिले में आदिवासी विकास परियोजनाओं के क्रियान्वयन में अपनाई जाने वाली योजना प्रक्रिया हेतु निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाता हैं।

1. जिले में रहने वाली आदिवासी उपयोजना अन्तर्गत समुदायों की आर्थिक सामाजिक स्थिति का सही आकलन किया जाता हैं और जिन सेक्टर की अंतसंरचना को सीधें लाभ पहुचाने की दृष्टि से विकसित करना आवश्यक हैं, उनको प्राथमिकता के आधार पर विकसित करने का कार्यक्रम लिया जाता है।
2. जिले की भौगोलिक स्थिति, सांस्कृतिक परम्परा, प्राकृतिक संसाधनो के अनुरूप आदिवासी विकास परियोजनाओं की योजनाओं का प्रतिवेदन तैयार किया जाता है।
3. जिले में पूर्व से चली आ रही योजनाओं की अनुसूचित जनजाति एवं जातियों के हित संवर्धन की दृष्टि से समीक्षा की जाती हैं तथा अलाभकारी योजनाओं का स्थान लाभकारी योजनाओं द्वारा लिया जाता हैं। योजनाएं अनुसूचित जनजाति जाति व क्षेत्र की समस्याओं पर आधारित हो एवं उनका आपस में तालमेल हो इस बात का विशेष ध्यान रखा जाय।
4. विभिन्न विभागों से जो भी आदिवासी विकास योजनाए प्रस्तावित की

* प्राचार्य, शासकीय पालिटेक्निक कालेज, होशांगाबाद (म.प्र.) भारत

जाती हैं उनमें दस बात को देखा जाता हैं कि वे जिले के क्षेत्र एवं उनमें रहने वाले समुदायों की मूलभूत आवश्यकताओ के अनुकूल है अथवा नही। इसके अतिरिक्त जो 'कोर विभाग' है जैसे कृषि, उद्यानिकी, वानिकी, पशुपालन, सिंचाई इत्यादि विभागों के लिये योजनायें प्रस्तावित की जाती हैं उनमें आपस में तालमेल होता हैं।

5. जिले में आदिवासी उपयोजना क्षेत्र का प्रतिवेदन एकीकृत आदिवासी विकास परियोनावार तैयार किया जाता हैं वर्तमान में जिले में तामिया एवं सौंसर दो परियोजनाएं है। अत: इनका प्रतिवेदन पृथक-पृथक तैयार किया जाता हैं।
6. आदिवासी हरिजन सीमांत कृषक एवं भूमिहीन परिवारो के लिये परिवार मूलक कार्यक्रम लिये जाते है। यह कार्यक्रम परिवार की आर्थिक सामाजिक स्थितियों एवं उनकी समस्याओं को ध्यान में रखकर तैयार किया जाता हैं।
7. जिले में हरिजन बस्तियां वार्ड अन्तनिवास है उनमे वाले अनुसूचित जनजाति की आर्थिक समस्याओ का आकंलन करते हुए उनके लिए विशेष रूप से तैयार किया जाता है। ये कार्यक्रम हर बस्ती हरिजन वार्ड- अन्तर निवास क्षेत्र के लिए अलग- अलग तैयार कर विशेष घटक योजना के तहत संकलित किया जाता है।
8. 20 सूत्रीय कार्यक्रम, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, रोजगार उन्मुख कार्यक्रम जैसे अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्यक्रमो पर विशेष ध्यान दिया जाता हैं।
9. जिला स्तर पर जो परियोजनायें योजनायें विश्व बैक या अन्य ऐसी वित्तीय संस्थाओं की सहायता ये कार्यान्चित की जा रही हे, उनका विस्तृत विविरण भी जिला योजना प्रतिवेदन में दिया जाता हैं।

आदिवासी विकास हेतु विभागीय सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक योजनाएँ :-

1. अस्वच्छ धंधे में संलग्न लोगों के बच्चों के लिये छात्रवृत्ति - विभाग द्वारा कक्षा 1 से 10 वी तक अस्वच्छ धंधे में संलग्न लोगों के बच्चों के लिये छात्रवृत्ति स्वीकृत की जाती हैं। योजनांतर्गत विद्यार्थियों को रूपये 1100 प्रति वर्ष छात्रवृत्ति तथा रूपये 750 एकमुश्त शिक्षा सहायता अनुदान प्रदान किया जाता हैं एवं कक्षा 3 से 10 तक छात्रावासी विद्यार्थियों को रूपये 700 शिष्यवृत्ति रूपये 1000 अनुदान प्रदान किया जाता है। वर्ष 2010-11 में योजनांतर्गत 30511 छात्रछात्राओं को राशि रूप्ये 68758 लाख वितरित की गई।इस योजना में वर्ष2011-12 में 31000 छात्रछात्राओं को छात्रवृत्ति स्वीकृति का लक्ष्य रखा गया हैं जिसके लिये राशि रूपये 79457 लाख का प्रावधान किया गया हैं।

2. अनुसूचित जाति बस्ती विकास योजना :-अनुसूचित बाहुल्य बस्तियां जहा 40 प्रतिशत से अधिक या न्यूनतम 20 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जाति के निवासरत है, में सामुदायिक विकास के कार्य तथा सीमेंट रोड, नाली निमार्ण, पेयजल कूप निमार्ण, सामुदायिक शौचालय एवं स्ट्रीट लाईट आदि निमार्ण किये जाने की योजना संचालित की जा रही हैं।वर्ष 2010-11 में योजनांतर्गत 1414 संरचनाये निर्मित कराई गई है, जिस पर 334944 लाख रूपये व्यय हुआ हैंवर्ष 2011-12 में योजनांतर्गत 1500 संरचनाओं के निमार्ण हेतु राशि रूपये 500000 लाख का प्रावधान रखा गया हैं।

3. अनुसूचित जाति बस्तियों का विद्युतीकरण :-वर्ष 2010-11 में योजनांतर्गत 110095 लाख व्यय हकयक जाकर 245 अनुसूचित जाति बाहुल्य बस्तियों कस विद्युतीरण कराया गया हैं।वर्ष 2010-11 में योजनांतर्गत 300 बस्तियों के विद्युतीकरण हेतु राशि रूपये 11793 लाख का प्रावधान रखा गया हैं।

4. महापुरूषों की स्मृति में पुरूस्कार :-महापुरूष बाबा साहेब अम्बेडकर, संत रविदास, संत कबीर एवं श्री विष्णु कुमार की स्मृति में पुरूस्कारों की घोषणा की है। अनुसूचित जाति संवर्ग के उत्थान तथा कला के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने वाले व्यक्तियों को यह पुरूस्कार दिये जाते हैं। वर्ष 2011-12 में विभिन्न पुरूस्कारों एवं समारोह के लिये रूप्ये 19900 लाख का प्रावधान किया गया है।

5. स्वरोजगार योजनाओं का संचालन :-विशेष केंद्रीय सहायता अंतर्गत अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को स्वरोजगार हेतु मप्र.अनुसूचित जाति वित एवं विकास निगम के माध्यम से ऋणअनुदान प्रदाय की योजना संचालित है। इस योजनांतर्गत अधिकतम राशि रूपये 10,000- या कुल ऋण का 50 प्रतिशत जो भी कम हो प्रदाय किये जाने का प्रावधान है। वर्ष 2010-11 में 6,242 हितग्रहियों को फरवरी 2011 तक लाभांवित कराया गया है। वर्ष 2011-12 में रूपये 125000 लाख का प्रावधान कर 12,500 हितग्रहियों को लाभांवित करने कालक्ष्य रखा गया है। अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को स्वरोजगार हेतु ऋणअनुदानएवं प्रशिक्षण की छह अभिनव योजनायें क्रमश: बहन नवेदिता स्व-सहायता समूह, डॉ.अम्बेडकर प्रशिक्षण, अंत्योदय प्रशिक्षण, अंत्योदय मार्केट प्रशिक्षण, सामाजिक न्याय एवं वसूली प्रोत्साहन, दीनदयाल मार्केट विकास एवं संत रविदास आवास सह कार्यशाला योजना स्वीकृत की गई है। वर्ष 2010-11 में 2600 हितग्रहियों को लाभांवित कराया गया है। वर्ष 2011-12 में 2110 हितग्रहियों को लाभांवित करने का लक्ष्य रखा गया है।

6. कृषकों के कूपों का ऊर्जीकरण :-अनुसूचित जाति के कृषकों के कूपों तक विद्युत लाइनों के विस्तार हेतु विशेष केंद्रीय सहायता मद में जिलों को राशि स्वीकृत की जाती है। वर्ष 2010-11 में योजनांतर्गत 99297 लाख व्यय किये जाकर 405 कूपों का ऊर्जीकरण कराया गया है।वर्ष 2011-12 में योजनांतर्गत 1000 कूपों के ऊर्जीकरण हेतु राशि रूपये 308468 लाख का प्रावधान रखा गया है।

7. कपिलधारा कूपों का उर्जीकरण :-अनुसूचित वर्ग के बी.पी.एल. कृषकों के खेतों पर 18308 कूपों का निमार्ण कपिलधारा योजनांतर्गत कराया गया हैं। इसमें पूर्व के 4443 हितग्रही को मप्र.राज्य अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम द्वारा वर्ष 2010-11 में 1836 हितग्राहियों को लाभन्वित कराया जा चुका हैं। इन कूपों के उर्जीकरण हेतु ग्रामीण विकास विभाग, कृषि विभाग तथा म.प्र.अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम के द्वारा ऋण के रूप में डीजल पम्प विद्युत पम्प बैकों के माध्यम से स्वीकृत कराये जा रहे हैं। वर्ष 2010-11 में योजना के अंतर्गत 1836 हितग्राहियों को लाभान्वित किया गया है, जिसके लिये निगम को रूपये 70000 लाख प्रदाय किये गये हैं। वर्ष 2011-12 के निगम द्वारा 1500 कूपों के लिये डीजल पम्प प्रदाय की योजना तैयार की गई है।

8. कन्या छात्रावास प्रोत्साहन :-कक्षा छटवी में प्रवेश लेने वाली अनुसूचित जाति की प्रत्येक छात्रा को शिक्षा के प्रोत्साहन हेतु राशि रूपये 500 दी जाती हैं। प्रोत्साहन राशि 15 अगस्त तक एक किस्त तें वितरित की जा चुकी हैं।वर्ष 2010-11 में योजना के अंतर्गत 133875 छात्राओं को राशि रूपये 70657 लाख वितरित की जा गई।वर्ष 2011-12 में योजना के अंतर्गत 134000 छात्राओं को छात्रवृत्ति प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया हैं। जिसके लिये राशि रूपये 100000 लाख का प्रावधान किया गया है।

9. विदेश अध्ययन छात्रवृत्ति :–स्नातक पाठयक्रमों के बाद विदेशों में उच्च अध्ययन हेतु छात्रवृत्ति जिसमें फीस के साथ जीवन निर्वाह हेतु राशि भी स्वीकृत की जाती हैं। प्रतिवर्ष इस योजनांतर्गत10 विद्यार्थियों की विदेश अध्ययन हेतु छात्रवृत्ति स्वीकृत करने का प्रावधान रखा गया हैं। चयनित विद्यार्थी को तीन वर्षो के अंदर चयनित कोर्स में विश्वद्यिालय का चयन कर प्रवेश लेना होता हैं। जिस वर्ष विद्यार्थी प्रवेश लेगा उस वर्ष उसे छात्रवृत्ति सवीकृत की जायेगी।वर्ष 2010–11 में योजान्तगर्त 13 विद्यार्थियों को इस योजना में रूपये 69.13 लाख वितरित किये जा चुके हैं। वर्ष 2011–12 में योजनांतर्गत 10 विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति स्वीकृति का लक्ष्य रखा गया हैं नयें तथा पुरानें छात्रों के लिये राशि रूपये 35000 लाख का प्रावधान किया गया हैं। सैनिक स्कूल में प्रवेश भी पब्लिक स्कूल योजना के साथ प्रावधानित हैं।

10–.अपूर्ण भवनों का निर्माण :–अनुसूचित जाति विकास विभाग द्वारा संचालित 1386 छात्रावासआश्रमों में 137 छात्रावासआश्रमों के भवन निर्माणाधीन हैं वर्ष 2011–12 में 161 नवीन छात्रावासों आश्रमों के अपूर्ण भवनों को पूर्ण कराने का लक्ष्य रखा गया हैं, जिसके लिये भवनों के निमार्ण मद में प्रावधानित राशि रूपये 422200 लाख से कार्य कराये जायेगें तथा आवश्यक अतिरिक्त राशि का प्रावधान कराया जायेगा।

11. श्यामाप्रसाद मुखर्जी छात्रवृत्ति:–12 वीं बोर्ड में 80 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले गरीब विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति स्वीकृत की जाती हैं। यह छात्रवृत्ति भारत सरकार की केंद्र प्रवर्तित योजना आदिवासी पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति के प्रावधानों के समान दी जाती हैं।वर्ष 2010–11 में योजनांतर्गत 531 विद्यार्थियों को राशि रूपये 19.10 लाख शिष्यवृत्ति स्वीकृत की गई।वर्ष 2011–12 में पात्रता अनुसार 5000 विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदाय करने का लक्ष्य रखा गया हैं जिसके लिये राशि रूपये 20000 लाख का प्रावधान किया गया हैं। 80 प्रतिशत से अधिक अंक पाने वाले छात्र जो गरीबी रेखा में आते हैं केवल उन्हें ही छात्रवृत्ति एवं फीस प्रतिपूर्ति की पात्रता हैं।आदिवासी क्षेत्रों को अभी भी अत्यन्त दरिद्रता, निरक्षरता और शोषण के गढ़ के रूप में माना जाता है। लगभग 85 प्रतिशत लोग अभी भी गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करते हैं और 84 प्रतिशत अभी भी निरक्षर है। इनमें से अधिकांश सिर्फ गुजारे की अर्थव्यवस्था पर जी रहे है।

आदिवासी विकास परियोजनाओं के दृष्टिकोण से विभिन्न क्रियात्मक समस्याऐं – विषय सें संबधिंत समस्याओं को निम्न बिन्दुओं में विभाजित किया गया है।

1. दुर्गम स्थानों का होना :–अत्यन्त दूरस्थ अंचलों में रहने के कारण जनजातियों के लोगों के जीवनयापन के अधिकांश साधन स्वयं जुटाने पड़ते है जो स्वयं में एक बड़ी समस्या है। आदिवासी सदियो से ऐसे दुर्गम स्थानों के रहते है, वे अन्य जातियों से दूर और एकान्त में रहतें हैं जहॉ पहुँचने के लिये आवागमन के साधनो का अभाव रहता है।

2. रोजगार की गंभीर स्थिति:– वन संपदा की घटती मात्रा बढती जनसंख्या के कारण आदिवासी क्षेत्र मे बेरोजगारी की समस्या पैदा हो रही है। अधिकांश आदिवासी भूमिहीन है जो कि मजदूरी पर ही निर्भर है।

3. भाषा की समस्या :– बाह्य संस्कृति से संपर्क के कारण कई जनजातियों मे दो भाषावाद की समस्या उत्पन्न हुई हैं। एक जनजाति के लोग अपनी भाषा के अलावा किसी बाह्य समूह की भाषा भी बोलने लगते थे वे लोग जिस संस्कृति से अधिक प्रभावित होते है वे अपने स्वंय की भाषा भूलने लगतें है। परिणामस्वरूप सांस्कृतिक विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती हैं।

4. शिक्षा का अभाव :–आदिवासी निर्धनता और जागरूकता के अभाव में शिक्षा प्राप्त नही कर पाते है और पिछड़ते चले जाते है।

5. अनुत्पादक एवं असमतल भूमि– आदिवासी परियोजना क्षेत्र में उबड–खाबड, तीव्र ढलान, रेतीली और पथरीली जमीन मिलती है। जल रोकने की न्यूनतम क्षमता के कारण उत्पादकता का स्तर न्यूनतम हैं। अत: वे भूमि का समतलीकरण, खेतों की मेडबंधी, जल एवं मिटटी संरक्षण की व्यवस्था नही होने से उपज प्राप्त नही कर पातें है।

6. सिंचाई का अभाव– आदिवासीपरियोजना क्षेत्र में ऊंची नीची जमीन पर सिचांई की सुविधा उपलब्ध करना निश्चय ही दुष्कर कार्य हैं। बडे तालाब या बांध बनाकर नहरो से सिचाई की न्यूनतम संभावनाये हैं। भूमि का ढाल भी बहुत नीचे होने और उसका दोहन करके पर्याप्त सिचांई की व्यवस्था करना कठिन है। नदी नालों से पानी का उदवहन कर सिचांई की पर्याप्त व्यवस्था करना कठिन है।

7. सांस्कृतिक विघटन–हिन्दू और इसाई समूह के प्रभाव से जनजातियों ने जब नयी संस्कृति को ग्रहण करना आरम्भ किया तो उसकी अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं का प्रभाव कम होने लगा इसके फलस्वरूप वे व्यवहार प्रतिमान कमजोर पडने लगे जो जनजातियों की सांस्कृतिक एकता को बनाये रखते हैं।

8. जनजातीय धर्म के प्रति उदासीनता– हिन्दू और इसाई समूह के प्रभाव से अनेक जनजातियों धर्म परिवर्तन की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिला। एक ओर गोंड, बैगा, मुरिया तथा सहरिया जनजातियों के बहुत से लोगों ने अन्य धर्म ग्रहण कर लिया तो दूसरी ओर अधिकांश जनजातीय लोगों का हिन्दू धर्म की मान्यताओं में विश्वास बढ़ने लगा। इसके फलस्वरूप एक ही जनजाति में विभेद बढ़ने लगें। इससे उनके जीवन में असंतोष, तनाव, विभेद और विघटन की दशा उत्पन्न होने लगी।

9. अभियोजन की समस्या– परम्परागत रूप से सभी जनजातियों का जीवन संगठित था। सांस्कृतिक विशेषताओं की सहायता जैसे अपनी प्राकृतिक दशाओं, परम्पराओं तथा सामाजिक संस्थाओं से सरलतापूर्वक अनुकूलन कर लेते थे पर संस्कृति ग्रहण के फलस्वरूप एक ही जनजाति के व्यक्ति एक दूसरे को संदेह की दृष्टि से देखने लगें। इससे जनजाति में पारस्परिक अभियोजन की समस्या उत्पन्न हो गयी।

10. अर्न्तजनजातीय सांस्कृतिक अन्तर की समस्या– एक ही जनजाति के लोगों में बाहय सांस्कृतिक संपर्क के परिणामस्वरूप आपस में सांस्कृतिक भिन्नता उत्पन्न हो गयी। जो लोग अपनी संस्कृति से दूर हो गये वे पूरी तरह नवीन सांस्कृति को भी ग्रहण नही कर पाये परिणामस्वरूप उनके जीवन में विघटन पैदा होने लगे।

11. पारिवारिक विघटन की समस्या– अपने गांव से बाहर जाकर नगर में उद्योगों में काम करना आरम्भ किया तो वे अपने परिवार से दूर हो गये परिवार पर उनका नियन्त्रण कम होने लगा। इससे विवाह–विच्छेद, पारिवारिक तनावो तथा बच्चों के प्रति उदासीनता की दशा उत्पन्न होने लगी।

12. बाल विवाह का प्रचलन– अनेक जनजातियाँ हिन्दू समूहों के संपर्क में आने से बाल विवाह को एक उपयोगी प्रथा के रूप में देखने लगे हैं। इससे स्त्रियों के शोषण में वृद्धि होने लगी हैं।

13. पुनर्वास की समस्या– आज जो जनजातियाँ जंगलों से विभिन्न पदार्थो का संग्रह करने से वंचित हो गयी अथवा जिनके पास कोई भूमि नही हैं उन्हें पुनर्वास की कोई सुविधा प्राप्त नही हो सकी। इसके फलस्वरूप ऐसे

लोगों मे उद्योगों एवं खानों में कार्य करने के लिये बाध्य होना पड़ा। इससें जनजातियों में निर्धनता की समस्या पहले से भी गंभीर हो गयी।

समस्याओं के निवारण हेतु सुझाव – उपरोक्त विवरण से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं को उजागर करतें हुये स्पष्ट होता है कि छिन्दवाडा जिलें में आदिवासी विकास परियोजनाओं के अन्तर्गत आदिवासियों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति अत्यन्त दयनीय हैं शासकीय योजनाओं को क्रियान्वित करने की विभिन्न कठिनाइयों के दृष्टिगत निराकरण के मौलिक सुझाव निम्नलिखित हैं –

1. **सांस्कृ तिक विकास–**आदिवासियों की संस्कृति और भाषा के अन्तर्गत उन्हे सम्भव मनोरंजन प्रदान करना आवश्यक हैं। जनजातीय क्षेत्रों में उन्ही अधिकारियों की नियुक्ति की जानी चाहिए जो उनकी भाषा तथा संस्कृति से परिचित हो। इन्हे दी जाने वाली शिक्षा इस तरह की हो जिससे उनके अंधविश्वासों और परम्परागत व्यवहारों में धीरे–धीरे वरिवर्तन लाया जा सकें।

2. **आर्थिक विकास की दृष्टि से–** जिले में जनजातीय आर्थिक समस्याए आज भी बहुत गम्भीर हैं। इनका समाधान करने के लिये रोजगार के अवसरो में वृद्धि करने के साथ ही स्व–रोजगार की सुविधाओ को बढ़ाना आवश्यक हैं। आदिवासी समुदाय आज भी दस्तकारी और विभिन्न प्रकार की कलाओं के लिए प्रसिद्ध हैं। जनजातीय ग्रामों में सहकारी समितियों की स्थापना करने, श्रमिको को उचित व्यवस्था देने, ठेकेदारों और वन अधिकारियों द्वारा उनके शोषण को रोकने एवं कम ब्याज पर कृषि के लिये ऋण की सुविधा देने से भी उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकता हैं।

3. **सामाजिक विकास के दृष्टिकोण से–**जिले में आदिवासियों की समस्या से निपटने के लिये यह आवश्यक हैं कि जनजातीय नेताओं की सहायता से लोगों के के विचारो और मनोवृत्तियों में परिवर्तन लाया जाये। यह कार्य प्रत्येक गांव में जनजातीय परिपेक्ष की स्थापना करके किया जा सकता हैं। इस क्षेत्र में नये कानूनों को भी इस तरह लागू करना आवश्यक हैं जो जनजातीय संस्कृति तथा परम्पराओं के पूरी तरह अनुकूल हों।

4. **शैक्षणिक सुविधाओं का विस्तार–** जिलों के आदिवासी अंचलों में व्यावाहारिक शिक्षा की नितान्त आवश्यकता हैं। यह व्यवहारिक शिक्षा कृषि दस्तकारी, कृषि उपकरणों के निर्माण तथा हस्तशिल्प से संबंधित होनी चाहिए। शोध अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जनजातीय बच्चों को छात्रवृत्ति देना अधिक उपयोगी नही हैं, क्योंकि उनके माता पिता का ध्यान छात्रवृत्ति की राशि पर ही रहता है। इसके बदलें बच्चों को पौष्टिक आहार तथा पुस्तकों की सहायता देना अधिक उपयोगी होगा। इन लोगों को मधुम खी पालन, मुर्गीपालन, पशुपालन और मछलीपालन को भी प्रोत्साहन दिया जा सकता हैं।

5. **स्वास्थय सेवाओं का विस्तार–** जिलों के आदिवासी क्षेत्रों में सचल चिकित्सालयों की व्यवस्था करना अधिक उपयोगी सिद्ध होगा बसों के अन्दर बने हुए चिकित्सालय 10–15 वर्ग किलोमीटर के अन्दर आने वाले सभी गांवों में पहुंचकर प्राथमिक चिकित्सा की सुविधाए प्रदान कर सकते है। जनजातिय गांवों मे पीने के स्वच्छ पानी की व्यवस्था करना, लोगों को स्वच्छता, स्वास्थय के नियमों से परिचित कराना, गन्दे पानी की निकासी की व्यवस्था करना उनका प्रशिक्षण देना भी आवश्यक हैं।

6. **आदिवासी विकास कार्यक्रमों की सतत जांच–** जिले में आदिवासी विकास परियोजनाओं के कियान्वयन में अधिकारियों द्वारा आदिवासियों अनुदान तथा सब्सिडी की व्यवस्था का कोई औचित्य नही रहता हैं। चूंकि सहायता की संपूर्ण कृषि अथवा दस्तकारी के उपकरणों के रूप में वितरित होनी चाहिए। इससे धन का दुरूपयोग रूकेगा तथा योजनाओं का वास्तविक लाभ जनजातियों तक पहुच सकेगा।

7. **आदिवासियों की सक्रिय सहभागिता–** जिले में आदिवासी विकास योजनाओं की सफलता के लिये आदिवासीयों की सक्रिय सहभागिता अनिवार्य तत्व है जो आदिवासियों के विश्वास को जीतकर ही प्राप्त किया जा सकता हैं। आदिवासियों केा विश्वासपात्र बनाने के लिये यह आवश्यक हैं कि नियोजनकर्ता और प्रशासक आदिवासियों की भावनाओं और उनकी मानसिकता को समझे तथा रीति रिवाज, संस्कृति एवं उनकी भाषा से इस तरह परिचित हो कि वे स्वंय आदिवासी समाज के अंग के रूप में उनके समक्ष प्रस्तुत कर सकें। इस तरह विकास कार्यक्रमों में उनकी सहभागिता को प्रशासनिक व्यवस्था में सुनिश्चित किया जा सकता हैं।

8. **प्रर्दशन की वस्तु न बने–**आदिवासी विकास की अलगाववादी नीति के पीछे सबसे प्रबल तर्क यह दिया जाता है कि किसी भी स्थिति में आदिवासी संस्कृति और जीवन विधि को प्रभावित कर दूषित या परिवर्तित नही किया जाना चाहिए। यह नीति कुछ और नही बल्कि मानव विकास प्रक्रिया में आदिवासी समाज का प्रदर्शनी के रूप में बनाये रखने की व्यवस्था हैं। आदिवासी प्रर्दशन की वस्तु बन जाना भी अपमान मानते हैं। अत: आवश्यकता इस बात की है कि शासन उन सभी तथ्यों को रोके जो आदिवासी विकास योजना मे बाधक हैं।

9. **शोषण से मुक्ति–**जिले में आदिवासी समाजका शोषण आदिवासीयों के समक्ष सबसे बडी समस्या हैं इसके समाधान के लिये संविधान में प्रावधान किये गये हैं। अनेको प्रयास के बाद भी शोषण विमूक्त समुदाय की स्थापना नही की जा सकी है। यह भी सत्य है कि कई बार आदिवासियो को शोषण स्वंय आदिवासियों द्वारा ही किया जाता हैं। आवश्यकता इस बात की है कि शोषण मुक्ति के लिये सार्थक कदम उठाये जाये।

10. **प्रांरम्भिक शिक्षा की अनिवार्यता–**शिक्षा विकास की आधारशिला है। शिक्षा एक दर्पण की भांति है। जिसके आधार पर व्यक्ति या समाज अपनी समस्याओं व परिस्थितयों को समझने व हल करने का प्रयास करता हैं।इसी दृष्टिकोण से आदिवासी समाज में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य होना चाहिये।

11. **भ्रष्टाचार का उन्मूलन–** आदिवासी विकास कार्यक्रमों के मार्ग को प्रशस्त करने की दृष्टि से भ्रष्टाचार का उन्मूलन अत्यन्त आवश्यक हैं।मात्र आदिवासी विकास कार्यक्रम ही नही देश के सर्वागीण विकास की दृष्टि से भ्रष्टाचार का उन्मूलन अनिवार्य हैं।

12. **आत्मनिर्भरता की भावना–**आदिवासीयों में यह भावना बन गई है कि विकास कार्यो के लिये बाहरी सहायता अनिवार्य है। यदि प्रारम्भिक अवस्था में बाहरी सहायता की आवश्यकता होती हैं किन्तु आदिवासियों को अपने पैरो पर खडा होना चाहिए जिससें उनमें आत्मनिर्भरता की भावना जाग्रत हो सकेगी।

निष्कर्ष – आदिवासी विकास योजनाओं का मुख्य उद्देश्य जिले में आदिवासी परियोजना क्षेत्र के आदिवासियों के जीवन को कल्याणकारी बनाना है। शासन एवं अन्य एजेन्सियों द्वारा आदिवासियों के आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, स्वास्थ्य संबंधी सम्पूर्ण विकास हेतू विभिन्न योजनाएँ क्रियान्वित की जाती हैं। लेकिन आज भी आदिवासी क्षेत्रों में गरीबी, निरक्षरता एवं अन्य समस्यायें विद्यमान हैं। जो इन योजनाओं की प्रासंगिकता पर प्रश्न चिन्ह लगाती हैं। चूंकि इन योजनाओं के नियोजन के समय जो लक्ष्य निर्धारित किये गयें थे उनकी आंशिक पूर्ति ही हो सकी हैं।जनजातीय शिक्षा अतीत

और वर्तमान के बीच संवाद स्थापित करने वाली होनी चाहिए। आदिवासी क्षेत्रों में अलगाव, अंसतोष और अराजगता का मूल कारण शैक्षणिक विकास के महत्वपूर्ण घटको की उपेक्षा हैं।

निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि योजनाओं से जनजातीय क्षेत्र का विकास तब तक नही किया जा सकती है जब तक कि उनमें स्वयं ही विकास की भावना जागृत नही हो जाती। बहुस्तरीय एवं सूक्ष्म योजनाये केवल यंत्र की भांति हैं। जिनके माध्यम से जनजाति क्षेत्रों में छिपी हुई शाक्ति का विकास किया जा सकता हैं जनजातियों के विकास हेतु सभी संभावनाओं को रोजगारोन्मुख बनाना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आदिवासी विकास- सैद्धान्तिक विवेचन,डॉ बी.डी.शर्मा,हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
2. जनजातीय भारत नदीम हसनेन - जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली।
3. मध्यप्रदेश के वनों की औद्योगिक एवं रोजगार संभावनायें: (शोध प्रबंध) डॉ.एस.सी जैन, सागर विश्वविद्यालय सागर,1988
4. आर्थिक सर्वेक्षण- आर्थिक एवं संचालनालय मध्यप्रदेश शासन, भोपाल।
5. मध्यप्रदेश की आर्थिक समीक्षा- आर्थिक एवं संचालनालय मध्यप्रदेश शासन, भोपाल।
६. मध्यप्रदेश में आदिवासी , सप्तम अधिवेशन मध्यप्रदेश वाणिज्य एवं प्रबंध परिषद, सागर।
7. पंचायिका- पंचायत एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय, भोपाल।
8. पर्यावरण- त्रैमासिक पत्रिका, पर्यावरण एवं मंत्रालय, नई दिल्ली।
9. मध्यप्रदेश में अनुसूचित जाति वर्गो के चहुँमुखी विकास की विशेष पहल, मध्यप्रइेश माध्यम वर्ष 2011।
10. आदिवासी कल्याण के लिये प्रतिबद्ध मध्यप्रदेश सरकार : मध्यप्रदेश जनसम्पर्क द्वारा प्रकाशित बुकलेट।

****

जलसत्ता : वर्तमान युग की मॉग

आर.एन.श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – जल वेदो के अनुसार पृथ्वी पर उपलब्ध अमर पेय है। जल जीवन का अधार जो निरंतर घटता जा रहा है। सबको साफ करने वाला जल लाइलाज प्रदूषण का शिकार। प्रकृति ईश्वर का वरदान: अक्षय दुरूपयोग का पात्र। सूखा या बाड़ हर साल की मार। जल संघर्ष समाज की नीति। उपरोक्त परिदृश्य से स्पष्ट है कि पानी में आग लगी हुई है और मछलियां फाग खेलने कि तैयारी मे है।

यह सब कैसे हुआ ? किसने किया ? यदि इस पर विचार किया जाए तो जन तो जल का सबसे बडा उपभोक्ता है वही इसकी दुर्दशा का कारण है । रहन – सहन, कृषि उद्योग और विलसिता सारे क्षत्रों में जल का अपराधिक दुरूपयोग हुआ है। वास्तव में जल और जन दोनों का अलग – अलग देखा जाना ही समस्या का कारण है। आम जन को जल से कोई संबंध नहीं रहा है। सिवाय उसका विनाश करने के। जल प्रसंध को सदैव ईश्वर/राज्य का सरदर्द मानकर व्यव्स्था को कोसते हुए समय काट देना स्वभाव बनता जा रहा है। वास्वत में जल से जुड़े सारे पहलुओं में जन की सक्रिय भागीदारी होनी चाहिये व जन को जीवन का हर कार्य जल सत्ता से शासित होना चाहिए। जल सत्ता यानि एक ऐसी व्यवस्था जो जल क संपोश्य / टिकाऊ उपयोग पर आधारित हो।

मानव की प्रत्येक गतिविधि जल केन्द्रित हो जाये । जल संरक्षण के हिसाब से इन गतिविधियों में आवश्यक सुधार किये जाये व उन्हें तत्काल लागू भी किया जाये।

जल – सत्ता आधारित कृषि – कृषि मानव के जीवन का आधार है और जल कृषि का आधार है। कृषि में ही जल की सर्वाधिक मांग होती है, अत: सुधार की शुरूवात खेती से ही होनी चाहिए। अनाज उत्पादन व जन संख्या के अनुसार उसमें वृद्धि अनिवार्य है किन्तु अब यह वृद्धि जल की कीमत पर नहीं होना चाहिए अर्थात उच्च उपज देने वाली ऐसी जातियों लानी होगी जो जल का उपयोग न्यूतम करती हों इस हिसाब से शस्य विद और पौध प्रजनकों पर यह गुरूतार दायित्व आता है कि वे ऐसी प्रजातियों विकसति करे क्योंकि यह प्रवृत्ति जल के उपयोग व आपूर्ति में असंतुलन पैदा करती है। उदाहरण: महाराष्ट में सिंचाई जल का 76% भाग गन्ने की फसल पर खर्च होता है जो कि राज्य के फसल क्षेत्र का 4% भाग ही है। परिणाम स्वरूप गन्ना क्षेत्र में मृदाक्षरण हो रहा है व अन्य फसलों में पानी की कमी हो रही है जो जल के समुचित उपयोग का लक्षण नहीं हैं। इसी प्रकार हरियाणा के कैथल जिले के गौहला सब डिविजन में धान की एक अगैती किस्म साठी लेने के कारण जल स्तर 30 – 100 से भी नीचे जा रहा है। धान की इस किस्म मे प्रति किलो चावल की पैदावार के लिए 4000 से 4500 लीटर पानी की आवश्यकता होती है जब की नियमित किस्मों में यह खपत 1500 लीटर रह जाती हैं। जल सत्ता ऐसी सब प्रवृत्तियों पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने की बात करती हैं। प्रत्येक क्षेत्र में केवल वे ही फसले लेनी होगी जिनकी जल आवयकता पुर्नभरण जल संसाधन के बराबर हो ।

कृषि जल का अधिकतर भाग सिचांई में ही व्यय होता है। वर्तमान पृष्ठीय सिंचाई पद्धतियां की औसत दक्षता 50% से अधिक नहीं है अर्थात 50 % जल का विभिन्न हानियां मे अपव्यय हो जाता हैं।

जल स्रोतो का दोहन – सिचांई का बड़ा हिस्सा भूजल के द्धारा पूरा किया जाता है । गिरते स्तर के साथ गहरे और गहरे जाने की प्रवृत्ति भी बढ़ रही है जो कि न्यायोचित नहीं है । वास्तव में जल सभी के नैसर्गिक जल अधिकार की बात करती है। आज एक संपन्न व्यकित 300 मीटर गहरा नलकूप बनाकर बाजु के छोटे किसानों के कुंओं का पानी खींच लेता है। यह एक शक्तिशाली व्यक्ति द्धारा छोटे लोगों के जल अधिकार का हनन है । किस व्यकित को कितना भूजल दोहन करना चाहिए ताकि सभी को जल उपलब्धता बनी रहे? यह जलअधिकार से ही तय हो सकता है जो कि जल सत्ता का एक महत्वपूर्ण अंग है । इसके अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को भूगर्भीय परिस्थितियों के अनुसार जल दोहन का अधिकार होगा व नलकूप से वह प्रथम जलवाही परत (First unconfined aquifer) से पानी नहीं निकाल सकेगा । नलकूप मे केसिंग डालते समय उसे इस मोटाई में खाली पाईप ही डालने होंगे ।

जल प्रदूषण एव जल अपव्यय – कृषि रसायनों से प्रदूषण एक चुनौती है। जल सत्ता के अनुसार ही खाद, कीटनाशक व रोगनाशक दवाएं सभी जल व्यस्था के अनुकुल होनी चाहिए। बाकि सभी को छोड़ना होगा। मनुष्य की दैनिक गतिविधियों को भी जल केन्द्रित करना होगा ताकि वह कम से कम जल की मात्रा व्यय करे व उसके पुन: उपयोग का प्रसास करे । इस दिशा मं पहला प्रयास घरेलू अपव्यय को रोकना होगा। साथ ही साथ जल की विलासता की जीवन शैली को भी बदलना होगा।

जल चेतना एंव जल शिक्षण – समाज की प्रगति व दैनिक आवश्यकताओं के लिये उद्योग आवश्यक है किन्तु जल सत्ता उद्योगों द्धारा जल स्रोत को नष्ट करने व प्रदेशित करने की अनुमति नंही देती है अपितु अपने उपयोग के लिये आवश्यक जल संग्रहण के लिए रूप वाटर टेक्नोलॉजी, रनऑफ कलेक्शन एवं मैनेजमेमंट जैसे कार्य की आवश्यकताओं को प्रतिपादित करती है वास्तव में यक्ष प्रश्न यह है कि जल सत्ता की अवधारणा संभव कैसे हो सकती है ? जल शिक्षा व जल चेतना व जनभागीदारी ही उसके वाहक है और कोइ विकल्प नहीं है। इनके माध्यम से मानव को तत्कालिक लाभ की स्थिति छोडकर संपोष्य जल उपयोग के लिए तैयार किया जा सकता है तभी जल सत्ता की अवधारणा क्रियांवित हो सकती है।

उपरोक्त में से पहली और अनिवार्य आवश्यकता है जल शिक्षण एवं

* सह. प्राध्यापक (मृदा एवंज ल अभियांत्रिकी विभाग) कृषि महाविद्यालय, गंजबासौदा (म.प्र.) भारत

जल चेतना इन दोनो के माध्यम से आगे के सारे सोपान अपने आप तय हो सकते है। रही टेक्नोलॉजी की बात, तो कोई नई टेक्नालॉजी नही ढूढंना है अपितु उपलब्ध सहज, सरल टेक्नालॉजी का अपनाना है। यहॉ जल शिक्षण से तात्पर्य है आम आदमी को जल के बारे में पूरी जानकारी देना। यदि आज सर्वेक्षण किया जाए तो अधिकांश आदमी इतना ही जानता है कि पानी नल में आता है या कुएं से निकलता है। जल क्या है ? क्या उसके स्रोत है ? कहॉ उसका भंडारण है और वह कितना है ? कितना हम खर्च कर रहे है ? कितना उसमे नया जमा हो रहा है ? और अब वह कितने दिन लायक बचा है ? आदि - आदि बातों की सही जानकारी यदि हम सबको हो जाए ता आज जैसा दुरूप्योग हम कर रहे है कदापि नही करेंगे। प्रत्येक मनुष्य अपनी आय व बैंक बैलेंस के हिसाब से ही तो व्यय करता है। क्या आप अपना जब देखे बगैर खर्च करते चले जाएंगे ? शायद नहीं। फिर पानी जैसी दुर्लभ वस्तु के साथ ऐसा क्यों ? इसका कारण है जल शिक्षण का पूर्ण अभाव होना क्योकि यह पाठ्य पुस्तक के माध्यम से दिया जाने वाला शिक्षण नहीं है यह तो घर में व समाज में व्यवहारिक रूप से ज्ञान दिया जाना चाहिए चूंकि यह नहीं है और आज की भागमभाग की जिंदगी मे किसे फुर्सत है इन सवालों मे दिमाग खपाने की। घर की बात करें तो हम आज अपने बच्चों को, बचत के संस्कार नहीं दे रहे है जल हों या पैसा। यह कटु सत्य है जबकि आज से दो पीढ़ी पहले की दादी मॉ मुझसे कहॉ करती थी ज्यादा पानी फैक हो तो मारवाड़ मे जन्म लेने पड़ हे, यह थी घरेलू शिक्षा। जल बचत के संस्कार बचपन से ही डालने होंगे। यह बात जल शिक्षण का ही एक आयाम है। इसके साथ - साथ हमे जल शिक्षण को विभिन्न मंचों के माध्यम से मूर्त रूप देना होगा। शैक्षणिक संस्थान, स्वयं सेवी संस्थान, तकनीकी संस्थान ऐंव सोसायटी इसके लिए आगे आये। विशेषज्ञ स्वत: आगे आयें कि अपने जिस ज्ञान के बोझ से वे दबे जा रह है उसे समाज को बांटे। समाज को मार्गदर्शन दें। उनका सलाह शुल्क उन्हें कई गुना प्राप्त होगा। आखिर जल तो सभी को चाहिए। जब प्रत्येक व्यक्ति इस परिदृश्य को जानेगा तो आगामी भयावहता का उसे स्वत: अंदाज रहेगा।

इसी क साथ जुड़ा पहलु है जल चेतना। पूरे समाज को जगाना होगा। चैतन्य व्यक्ति ही कुछ ग्रहण कर सकता है, ऊंघता हुआ नहीं। इसके लिए प्रचार प्रसार, तंत्र, (Media) पोस्टर नुक्कड़ नाटक, लोक गीत आदि सर्वश्रेष्ठ साधन है।

समाजिक पहलु जल सत्ता के सोपान

समाजिक पहलू	तकनीकी पहलू
अ. समाजिक जागृति	अ. घरेलू उपयोग मे बचत
1. जल शिक्षा दारा	ब. रूफ वाटर टेक्नोलॉजी
2. जल चेतना दारा	स. अपवाह प्रबंधन
ब. जल उपयोग पदतियों में बदलाव	द. जल संरचनाओं का पुनर्रद्धारा
	इ. पारंपरिक सिंचाई पद्धतियों का हाइटेक पद्धतियो से विस्थापन
स. कृषि तरीकों मेमं बदलाव	फ. सीवेज जल को पुन: उपयोग के लायक बनाना
द. जल का न्यायिक उपयोग	ज्ञ. भूजल रिचार्ज
1. जल अधिकार व जल कानून की रचना	
2. उपरोक्त को लागू करना	

सम्पोष्य / टिकाऊ जल उपयोग

जीवन

जल सत्ता की चर्चा, एक कल्पना न रह जाए अत: इसको साकर करने के लिए हमे जल सैनिक/जल विज्ञानी बनना होगा। जन-जन तक रहीम के इस संदेश को पहुंचाना होगा -

रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून।
पानी गये न ऊबरे, मोती मानस चून॥

जल सत्ता क महत्वपूर्णत चरण

जल सत्ता लागू करने के चरण -

अ. जागरूकता अभियान पानी की महत्ता प्रतिपादित करने हेतु

1. जनता में जनता के लिए
2. अधिकारियों के लिए
3. सरकार के लिए
4. इस अभियान को चलाएगा कौन ?
5. जल सैनिक, जल विज्ञानी।

ब. क्षमता सक्षमतीकरण

1. ट्रेनिंग के द्वारा
2. आदर्श प्रारूपों के प्रदर्शन द्वारा
3. व्यवहारिक ज्ञान के दारा

स. ग्राम स्तर पर परियोजना हेतु राशि का निर्धारण कराना

द. जल की उपलब्धता का आंकलन कराना - विशेषज्ञ द्वारा।

इ. जल की आवश्यकता की गणना करना।

फ. जल उपयोगकी प्राथमिकताओं को तय करना एवं उन प्राथमिकताओं के कारण अन्य वंचित रह जाने वाले जनों केा होन वाले लाभ में से युक्तियुक्त लाभांश सुनिश्चित करना अथवा उचित क्षतिपूर्ति का प्रावधान रखना।

ज. उपलब्ध जल के दो तरह के प्लान बनाना

1. जो जल है उसी का समुचित उपयोग
2. उपलब्ध हो सकने वाले जल के लिए प्रावधान एंव उपाय करना एंव समुचित लाभ के लिये योजना बनाना।

क. (ज) - 2 हेतु उचित वित्तीय पोशण (ग्राम स्तर, बैंक स्तर) के उपाय करना एंव लागू करवाना

ख. क्रियान्वयन

ग. सतत् निगाहबीनी ओर बीच - बीच मे आवश्यक सुधार करना

अस्तु जल सत्ता लागू करने ग्राम - ग्राम मे, जन - जन मे जागरूकता लाने एवं पृथ्वी पर अमृत रूप मे उपलब्ध जल के संवर्धन और समुचित उपयोग हेतु प्रस्तावित चरणों पर अग्रसर होने की महती आवश्यकता है। यही समय की मांग है जिसे हमें मानना ही होगा। अन्यथा इस प्राकृतिक धरोहर को आने वाली पीढ़ियों को यथापूरक सौंपना संभव नहीं हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Guideline for Authors/Research Scholars

* This is a national/international refereed **NAVEEN SHODH SANSAR** Research Journal for all subjects.
* The selection and publication of research paper are done after recommendation of referees and subject experts.
* Your research papers should be original and unpublished.
* The research papers should be written according to **RESEARCH METHODOLOGY**. Although this is a national/international registered research journal but in any case or circumstances if any university/college/institute/society denies to accept or recognize author's/research scholar's published research papers in the journal, then it will not be the responsibility of editor, publisher, management, editorial board, referee or subject experts.
* The research papers should have bibliography, footnotes, references, suggestions and findings.
* Only one printed copy of research journal will be sent to the author. No extra or second copy for co-author will be sent but if anybody requires extra copy of issue then in that case individual has to give an amount of Rs. 400/- for each single issue.
* The titles of your research papers should be appropriate.
* If your research paper is not accepted in that case **NAVEEN SHODH SANSAR** will refund your amount without any interest rate within 90 days after rejection of paper.
* You can also send your Research Papers by Website & Email id.
* Authors/Researchers should sent hardcopy of research paper with copyright form at **NAVEEN SHODH SANSAR** official Address.

Double Blind Peer Review Policy

Review System: Every article is processed by a masked peer review of double blind or by three referees and edited accordingly before publication. The criteria used for the acceptance of article are: contemporary relevance, updated literature, logical analysis, relevance to the global problem, sound methodology, contribution to knowledge and fairly good command on language. Selection of articles will be purely based on the experts' views and opinion. Authors will be communicated within Two months from the date of receipt of the manuscript. The editorial office will endeavor to assist where necessary with English/Hindi language editing but authors are hereby requested to seek local editing assistance as far as possible before submission. Papers with immediate relevance would be considered for early publication. The possible expectations will be in the case of occasional invited papers and editorials, or where a partial or entire issue is devoted to a special theme under the guidance of a Guest /Advisor Editor.

Compulsory Guidelines for Research Scholar Lecturers and Professors

* Research paper should be typed in MS Word 2007.
* Paper should be typed in A4 Size paper with standard margins of (2 cm/0.787 inches in all four sides)
* Title of Research Paper should be typed in 14 Size font and Bold with Underline.
* Authors / Research Scholar Names with College Address should be typed in 12 Size Font and Bold.
* Line Space Between should be 1.0 line spaces.
* Reference should be in Vancouver style at End of the paper (Endnote).
* For HINDI and SANSKRIT papers, use only these fonts : Kruti Dev-10 (Font size : 12)
* For ENGLISH papers, use only these fonts : Arial (Font size : 10).

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

RNI No.- MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 8767
Impact Factor - 0.547

COPYRIGHT AGREEMENT FORM

(Photocopy of this form may be used)

For the submission of an research paper.

(mention Title of Manuscript): ----------

Name of Author :----------

Name of Co-Author ----------

I hereby declare, on behalf of myself and my co-authors (if any), that:

[1] I/we have taken due care that the scientific knowledge and all other statements contained in the research paper conform to true facts and authentic formulae and will not, if followed precisely, be detrimental to the user.

[2] No responsibility is assumed by **NAVEEN SHODH SANSAR** and the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR** , its staff or members or the editorial board for any injury and/or damage to persons or property as a matter of products liability, negligence or otherwise, or from any use or operation of any methods, products instruction, advertisements or ideas contained in a publication by **NAVEEN SHODH SANSAR** and by the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR.**

[3] I/we permit the adaptation, preparation of derivative works, oral presentation or distribution, along with the commercial application of the work.

[4] The research paper contains no such material that may be unlawful, defamatory, or which would, if published, in any way whatsoever, violate the terms and conditions as laid down in the agreement.

[5] The research paper submitted is an original work of mine/ours and has neither been published in any other peer-reviewed journal/ news paper/magazine/periodical/book nor is under consideration for publication by any of them. Also, the research paper does not contravene any existing copyright or any other third party rights.

[6] I am/we are the sole author(s) of the research paper and maintain the authority to enter into this agreement and the granting of rights to The Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR** ,Neemuch India and this does not infringe any clause of this agreement.

COPYRIGHT TRANSFER

Copyright to the above work (including without limitation, the right to publish the work in whole, or in part, in any and all forms) is here by transferred to **NAVEEN SHODH SANSAR**, Neemuch and to the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR**, Neemuch proprietary right other than copyright is proclaimed by **NAVEEN SHODH SANSAR** and the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR.**

Under the Following Conditions: Attribution :(i) The services of the original author must be acknowledged; (ii). In case of reuse or distribution, the agreement conditions must be clarified to the user of this work; (iii) Any of these conditions can be ignored on the consent of the author.

SIGN HERE FOR COPYRIGHT AGREEMENT & COPY RIGHT TRANSFER AGREEMENT :

I hereby certify that I am authorized to sign this document either in my own right or as an agent of my employer, and have made no changes to the current valid document supplied by **NAVEEN SHODH SANSAR** and the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR.**

Write Authors Name and Designation :----------

Signature:----------Date:----------Place:----------

Write Co-Authors Name and Designation :----------

Signature:----------Date:----------Place:----------

My/Our above name research paper is originally written by me/us and all information are true. I/we will fully responsible for this research paper.

Name: ----------

College/ University :----------Subject:----------

Signature:----------Date:----------Place:----------

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

RNI No.- MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 8767
Impact Factor - 0.547

MEMBERSHIP CUM AUTHOR'S BIO-DATA FORM

(Photocopy of this form may be used)

Name (Author / Member) : Mr/Mrs/Ms/Prof/Dr : .....

Name of Co-Author(s) : .....

Designation : ..... Subject : .....

Name of College/University/Institution : .....

Home / Official Address : .....

.....

State : .....Pin : ..... Country : .....

Tel. No. (Res. /Office) : .....Mobile : .....

E-mail Address : .....

Sign......

1. MEMBERSHIP will be valid for individual, University/College Institute Library-One Year SUBSCRIPTION RATES For printing/publication of one research paper.
   * Institutions Rs. 1,250/- per annum (without publication of paper)
   * Membership for Author Rs. 750/- for 1 Year.
   * Membership for Co-Author Rs. 750/- for 1 Year.
   * Publication of paper each after membership Rs. 850/- (2000 Words)
2. For Remittances can pay printing amount through DD/Cheque in favor of **'NAVEEN SHODH SANSAR'** payable at Neemuch (M.P) and send it by Registered Post. Fill information regarding Demand Draft.

   D.D. No. : .....Amount ..... Name of Bank .....Date : .....

   OR

   You can cash deposit / Online fund transfer on **NAVEEN SHODH SANSAR** Current A/c.

Bank Detail :-
NAVEEN SHODH SANSAR
Current A/c. no.:- 32768184328
Bank Name :- State Bank Of India
Branch :- Neemuch (M.P)
IFSC code:- SBIN0030055

Editor - Ashish Sharma
Add:- "Shri Shyam Bhawan"
795, Vikas Nagar Extension 14/2, Neemuch
(M.P) - 458441 Mob:- 09617239102
Email ID :- nssresearchjournal@gmail.com
Website :- www.nssresearchjournal.com

Note- Copyright form & Author's Guide line are availble on our web-site
{All disputes are subject to exclusive jurisdiction of NEEMUCH Court Only (M.P.)}